नेक हिन्दी-काव्य में वात्सल्य रस

आगरा विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोधप्रबन्ध)

•

लेखक

डॉ० श्रीनिवास शर्मा

एम० ए०, पी-एच० डी०

सहायक निदेशक (हिन्दी)

पत्राचार पाठ्यक्रम निदेशालय,

दिल्ली विश्वविद्यालय

०

प्रकाशक

अशोक प्रकाशन

नई सड़क, दिल्ली—६

प्रकाशक
अशोक प्रकाशन
नई सडक, दिल्ली—६

प्रथम संस्करण १९६४
मूल्य १२ ५०

मुद्रक
अशोक मुद्रण कला
द्वारा
शिवजी मुद्रणालय

आदरणीय प्रो० भारतभूषण 'सरोज' जी

को

सादर समर्पित

भूमिका

वात्सल्य भाव का विवेचन और उसके साहित्य म हुए प्रयोग की मीमासा अनेक दृष्टियो स बडी रोचक और जिज्ञास्य है। सस्कृत के रसाचार्यों मे से दो एक को छोड कर प्राय सभी ने इसे रस नहा माना। कुछ न तो इसकी सत्ता भी नही स्वीकार की। कुछ न इस भाव कह कर टाल दिया। पर यह देख कर कितना आश्चर्य होता है कि सस्कृत क कवियो और लेखको न ही इसका इतना अच्छा और विस्तृत वर्णन किया है कि वह रस कोटि तक पहुँचा हुआ लगता है। कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तलम और रघुवशम् म क्रमश भरत एव रघु का शैशव वर्णन सक्षप म वात्सल्य रस मे सिक्त वाणी म किया है। भावी सम्राट रघु अपन शैशव काल मे जब धाय की उँगली पकड कर चलता था उसके कहे वचनो का तोतली वाणी मे अनुकरण करता था और सीख मान कर अग्रजो को प्रणाम करता था तो उससे पिता दिलीप का मन बल्लियो उछ जाता था। उसे गोद मे लेकर राजा अगस्पर्श का ऐसा सुख मानता था जैसा किसी ने अमृत छिडक दिया हो। इस सुख का वह आँख मीच कर देर तक पीता रहता था।

शकुतला नाटक म कवि न अपेक्षाकृत अधिक अवसर इसके लिए निकाला है। भरत देर तक सिंह के साथ बाल क्रीडा करता रहता है और राजा दुष्यन्त लालायित नेत्रो स उसे खडा-खडा देखता रहता है। राजा का यह अभिलाष कितना मार्मिक है कि—'जिन शिशुओ के दो दो दात कुछ कुछ दिखाई पडे हो जो बिना कारण के हँसते रहते हो और जो तुतला तुतला कर बोलते हो, उन्ह गोद म बिठाकर उनकी धूल से मैले होने का सौभाग्य किन्ह मिलता है वे धन्य हैं। शास्त्रीय दृष्टि स देखें तो कालिदास के वर्णनो म भाव की रसावस्था व्यक्त हुई है, उसके अवयव विभाव, अनुभाव और सचारियो का स्पष्ट उल्लेख हुआ है। उपान्तसमीलित लोचनो नृपश्चिरात्सुतस्पर्श रसज्ञता ययौ वाक्य म तो रसानुभूति की सम्मोहन अवस्था का भी कवि ने सकेत दिया है।

इसके बाद बाण न कादबरी मे भावी शिशु के प्रति पुत्रहीन पिता तारापीड के अभिलाष को इतना सागोपाग और चित्रात्मक वर्णित किया है कि उसम एक ओर तो वियोग वात्सल्य का सचारी अभिलाष साकार हो उठा है दूसरी ओर जन्म से लेकर किशोरावस्था तक का बालक का क्रमिक विकास सिनेचित्र की भाति पाठक की आँखो स गुजर जाता है। भक्तवर सूरदास न भी यही पद्धति अपनायी है। राजा कामना करता है कि—मैं नवोदित सूर्य स युक्त और बालातप से जगमगाते आकाश की भाँति पीले वस्त्र पहने और पुत्र को गोद म लिए महारानी को देख कर कब आनदित हूँगा? अनेक जडी-बूटियो के लगाने स पीले और उलझे बालो वाले

जिसकी ताल पर अभिमन्त्रित घृत की कुछ बूंदें और सरसों मिली तनिक सी भस्म डाल दी गई हो, जिसके गले में पड़े कठ सूत्र की गाठें गोरोचना से रंगी हुई हों, जो चित्त होकर लेटा हो और अपने दंतविहीन मुख से मंद मंद मुसकरा रहा हो ऐसा पुत्र कब मेरे हृदय में आनन्द का उल्लास भरेगा, आदि आदि। बाण जैसा 'सपूर्ण' का कलाकार है वैसा ही उसने सांगोपांग बाल वर्णन किया है।

ये दोनों वर्णन निःसंदिग्ध रूप से रसमय हैं। इन्हें भाव सीमित कहना अन्याय होगा। फिर भी संस्कृत के काव्याचार्यों ने जो वात्सल्य को रस नहीं माना, उसका कारण मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार प्राचीन परम्परा से मुक्त होने के साहस की कमी है या फिर उन्होंने वस्तु-सापेक्ष दृष्टि से पूर्ववर्ती साहित्य का भाव प्रेरित पर्यालोचन नहीं किया। अलंकारवादियों की दृष्टि काव्य के चमत्कार पर रही, रीतिमार्गियों ने अभिव्यक्ति के गुण दोष देखे और ध्वनिवादियों का आग्रह भाषा की व्यंजकता पर रहा। काव्य के भावों पर दृष्टि इनमें से किसी की नहीं गई नहीं जा सकती थी। भाव की दृष्टि से साहित्य का पर्यालोचन करने के बाद उसका 'दर्पण' जिसने (विश्वनाथ) तैयार किया उसमें वात्सल्य रस का प्रतिबिम्ब वैसा ही उन्हें दिखाई पड़ा जैसा अन्य रसों का। विश्वनाथ ने वात्सल्य रस स्वीकार किया है। अतः संस्कृत समीक्षा का इतिहास यह प्रमाणित करता है कि वात्सल्य भाव का रसात्मक मूल्यांकन जो पहले नहीं किया गया उसका कारण था कुछ कुछ परिस्थितियाँ और कुछ दृष्टि का अन्यथात्व। संस्कृत साहित्य में इसकी अभिव्यक्ति तो रस-कोटि चुम्बिनी हो चुकी थी।

अनन्तर भागवतकार ने भगवान श्रीकृष्ण के बाल-चरितों का जो अपनी प्रौढ शैली में भक्ति समन्वित वर्णन किया उसने इस भाव की श्री संपत्ति को अनन्त गुना बढ़ा दिया। भगवान श्रीकृष्ण का बाल्यकाल अनेक घटनाओं से परिपूर्ण था। इन घटनाओं में उनके बाल चापल्य की भी व्यंजना थी और उनके कर्मठ पौरुष की भी। भागवतकार ने उनके प्रौढ जीवन को जिसने महाभारत की महान् घटनायें समेटों से कर डाली थी भक्ति का आधार नहीं बनाया। वह या तो उनके ब्रज के बाल जीवन पर मुग्ध हुआ या फिर द्वारका के शृगारी गृहस्थ जीवन पर। बाद के भक्त कवियों ने इसमें भी संकोच कर दिया। उन्होंने शृंगार और वात्सल्य दोनों श्रीकृष्ण के ब्रजवास के काल में ही दिखाए और अपनी समस्त भक्ति भावनाएँ उसी नटखटी जीवन पर न्यौछावर कर दीं।

कृष्ण भक्ति के भावुक भक्तों के इस साहित्य में वात्सल्य भाव के सुवर्ण में भक्ति के सुहाग का ऐसा योग बैठा है कि इसमें यह निखर भी गया और अपने मूल उपादानों के बढ़ जाने में बढ़ा भी। आज साहित्य के आलोचक सूर परमानन्द गोविन्दस्वामी आदि की रचनाओं में वात्सल्य रस का पूर्ण परिपाक पाते हैं तो मनोविज्ञान के पण्डित उनमें बाल मनोविज्ञान के तथ्यों का दर्शन करते हैं। यह भक्त

कवियों की भावुक मनीषा ने कृष्ण चरित के अपार सागर में गोते लगा लगाकर जो कोमल रत्न की खोज की उसका परिणाम है।

इस साहित्य की सृष्टि के बाद फिर किसी साहित्याचार्य ने वात्सल्य को स्वीकार न किया हो ऐसा नही लगता। सभी ने इसकी सत्ता और महत्ता को माना, उसका विवेचन किया और अधिकतर उसे रस ही माना।

बस किसी भाव में रसपदवी तक पहुँचने की क्षमता है या नहीं—यह अधिकांश में उसके साहित्य प्रयोग के ऊपर निर्भर है। भाव में यदि स्थायिता है तो वह प्रचुर भावात्मक वर्णन पाकर रमनीय बन ही जायगा। भोज ने तो संचारी भावों को भी रस्य बनाया है। वे भी उदबुद्ध होकर रसयिता की चेतना को आत्मसात कर 'विगलित वेद्यान्तरसस्पर्श' स्य बना सकते है। फिर वात्सल्य में यह योग्यता क्या न होगी? वात्सल्य के रसत्व की मीमांसा करते हुये हम शृंगार रस की सार्व-जनीनता और व्यापकता से अभिभूत हो जाते हैं और रति के दूसरे भेद जैसे वत्सल रति या श्रद्धारति को शृंगार रति में ही अन्तर्भूत मानने लगते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं है। जिस कोमल सात्विकता का आभास हमें वात्सल्य में आता है जो महनीयता और आध्यात्मिकता हम भक्ति में अनुभूत होती है वह ऐन्द्रिय शृंगार में कहाँ है? अस्तु मैं वात्सल्य भाव का रसत्वाह बताकर इसकी महत्ता का अतिदेश नहीं करना चाहता। कोई तत्व रसत्वाह होकर ही साहित्यिक महत्ता प्राप्त करता हो ऐसी बात नही है पाश्चात्य साहित्य और हमारा प्रयोगवादी और प्रगतिवादी हिन्दी साहित्य इस स्थापना की पुष्टि करता है।

वात्सल्य में तो अपने अनेक दूसरे गुण हैं, जिनसे यह भावोपासकों का उपास्य बनता है। भागवतकार ने प्रेम का उत्कृष्ट स्वरूप वात्सल्य को ही बताया है। मित्र जो आपस में एक दूसरे को प्रेम करते हैं उसमें स्वार्थ की मात्रा रहती है, अतः वह न सच्चा सख्य है और न धर्म। लेकिन करुणा सवलित होकर माँ बाप की भांति जो प्रतिपादन न देने वालों से भी प्रेम करते हैं उनका स्नेह निरपवाद धर्म है वही सच्चा सौहृद है।

> मिथो भजन्ति ये सख्य स्वार्थैकान्तोद्यमा हि ते।
> न तत्र सौहृदं धर्मः स्वार्थार्थं तद्धि नान्यथा॥
> भजन्त्यभजतो ये वै करुणाः पितरो यथा।
> धर्मो निरपवादोऽत्र सौहृदं च सुमध्यमा॥ भागवत १०।३२।१८

वात्सल्य भाव की अनुभूति में आश्रय निर्लोभ पावनता प्राप्त करता है और आलम्बन पुष्टि। इसी के सहारे संसार वृक्ष दिग दिगन्त व्यापी होता जाता है। अनुभव साक्षी है कि वात्सल्य की अनुभूति यौवन के उष्ण रक्त वाले हृदयों को उतनी नहीं होती जितनी पकी आयु के निर्मल स्वान्त को होती है। संसार को, उसके सौन्दर्य को भोगने की लालसा जब तक कि हृदय में बनी है तब तक वह वात्सल्य

जस पवित्र भाव का अधिकारी नही हो सकता। जब हम ससार का कुछ देना चाहते हैं तब उसके भावी कर्णधारो को प्यार करने लगते हैं। वात्सल्य कठोर हृदयो को मोम बनाता है वद्धो म शाव भरता है और यौवन की वासना को स्वच्छ बनाता है। एसा उदात्त निमल और सात्विक भाव का साहित्य मे अधिकाधिक प्रयोग होना चाहिए उसकी अधिकाधिक मीमासा हानी चाहिए।

प्रिय डा० श्रीनिवास शर्मा ने बड अध्यवसाय और लगन से समूचे हिन्दी साहित्य म ही नही उसके पूववर्ती संस्कृत और अपभ्र श साहित्य म भी वात्सल्य भाव का प्रयोग देखा परखा है और उसकी सतत प्रवहमान धारा का एक इतिहास प्रस्तुत किया है। उनका यह प्रयास आधुनिक हिन्दी साहित्य को विशेषाध्य से लभ्य बनाकर चला है। इस काल के हिन्दी साहित्य म रसात्मकता के साथ-साथ और कभी उसके स्थान पर जीवन मीमासा ने जो प्रवेश किया वह इस काल की सर्वाधिक और व्यापक विशेषता मानी जायगी। इसी विशेषता ने वात्सल्य भाव के स्वरूप पर भी प्रभाव डाला। देश प्रम के आभोग म सोहनलाल द्विवेदी अयोध्यासिंह उपाध्याय, मथिलीशरण गुप्त आदि कवियो ने जो शिशु जीवन का वणन किया है उसमें न केवल उनकी रूपमाधुरी का सम्मोहन उपस्थित हुआ है अपितु उससे भविष्य की आशाए देशोद्धार के स्वप्न और प्राचीन महापुरुषो की छाया के भी दशन उसमें प्राप्त होते हैं। तुलना करें तो यह सकते हैं कि यह उज्वलता आधुनिक हिन्दी साहित्य के शृ गार रस में नही आ सकी भले ही देश की परिस्थिति इसकी माँग करती थी। इससे सिद्ध है कि अन्य रसा की अपेक्षा वात्सल्य मे सामाजिकता और स्वस्थता अधिक है। हास्य आलम्बन की लघुता और अजनबीपन पर आधृत है। वीर का परिणाम युद्ध या सहार होता है। अद्भुत का आलम्बन हमारा ग्राह्य नही बन सकता क्योकि वह लोकोत्तर होता है। सुखात्मक भावो मे किसी म यदि अकलुष पावनता है तो वह वात्सल्य मे ही है। इस प्रकार अनेक दृष्टियो से वात्सल्य भाव साहित्यिक मनीषियो समाजिक शुभचिन्तको और मनोविज्ञान के पडितो के लिये अध्येतव्य विषय है।

प्रस्तुत प्रबन्ध जो आगरा विश्वविद्यालय म पी एच० डी० की उपाधि के लिये स्वीकृत हुआ और परीक्षको ने जिसकी भूरि भूरि प्रशसा की थी हिन्दी साहित्य *की समीक्षा निधि म एक अभाव की पूर्ति करता है।* डा० शर्मा हिन्दी पाठको की अभिनन्दना क पात्र हैं कि उन्होने एक भावधारा को अनेक शताब्दियों के साहित्य में विकासमान होते देखा है उसके स्वरूप का विवेचन किया है और उसकी इस समय क्या स्थिति है यह बताया है। मैं उन्हें बधाई देता हू।

मनोहरलाल गौड
एम ए पी एच डी आचार्य

अध्यक्ष हिन्दी विभाग
धम समाज कालिज अलीगढ

प्राक्कथन

भारतीय काव्य शास्त्रियों ने रस को काव्य का सारभूत तत्व स्वीकार किया है। इसी कारण अधिकतर काव्य मर्मज्ञो ने उसे काव्य शरीर की आत्मा माना है। हिन्दी काव्य के सूक्ष्म अनुशीलन के लिये उसमे अभिव्यक्त रस का सूक्ष्मेक्षणपूर्वक अध्ययन अपेक्षित है। अनेक शोधकर्ताओं का ध्यान अनुसंधान के उस आवश्यक पक्ष की ओर गया था। उन्होने श्रृगार वीर करुण और हास्य पर अनेक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये जिनमे से कई प्रकाशित हो चुके हैं। गौरव की दृष्टि से हिन्दी साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओ पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रृगार वीर और करुण के बाद चौथा स्थान वात्सल्य रस का ही है। अतएव हिन्दी अनुसंधान की यह महती आवश्यकता थी कि हिन्दी काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य रस का भी गवेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाय।

वात्सल्य रस का विचार मध्यकालीन कविता—विशेषकर भक्तो की कविता के प्रसग मे तो पर्याप्त हुआ है परन्तु वह धारा वही सूख गई या आगे बढी और बीसवी शताब्दी के हिन्दी काव्य मे उस भाव धारा की क्या स्थिति रही इस दृष्टि से सागोपाग विवेचन अब तक नही हुआ। प्रस्तुत प्रबन्ध इसी दिशा मे एक लघु और विनीत प्रयास है। आधुनिक हिन्दी कविता पर अनेक उपाधि निरपेक्ष और उपाधि सापेक्ष ग्रन्थ लिखे गये हैं। किन्तु उन ग्रथो मे वात्सल्य रस का विवेचन या तो सर्वथा उपेक्षित है या उसका प्रासगिक रूप से सामान्य कथन करके ही सतोष कर लिया गया है। किसी भी स्वतन्त्र ग्रथ या शोध प्रबन्ध मे उसका विधिवत सागोपाग और वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत नही किया गया है। आधुनिक साहित्य ही नही वरन् मध्यकाल के सूर तुलसी के साहित्य का भी केवल वात्सल्य भाव की दृष्टि से स्वतन्त्र अध्ययन नही किया गया उनकी अनेक दूसरी विशेषताओं के साथ साथ इसका भी प्रासगिक अध्ययन हुआ। इस दिशा मे सबसे अच्छा और मौलिक प्रयास डा० मुन्शीराम शर्मा ने अपने 'सूर सौरभ' मे किया है। लेकिन वह भी प्रासगिक है। प्रस्तुत निबन्ध मे वात्सल्य रस के प्रारम्भ से लेकर अब तक के साहित्य मे बहने वाली धारा का अध्ययन हुआ है। यही इसकी विशेषता है।

इस प्रबन्ध मे पाँच अध्याय हैं। प्रथम अध्याय मे वात्सल्य रस का शास्त्रीय विवेचन किया गया हैं। उसमे सर्व प्रथम रसो की सख्या की मान्यता के विषय मे काव्य शास्त्रियो के मतो का प्रतिपादन हैं। वात्सल्य रस को अस्वीकार करने वाले, उसका अन्य रसो मे पर्यवसान करने वाले और स्वतन्त्र रूप मे रस मानने वाले आचार्यों के सिद्धान्तो का भी विश्लेषण किया गया है। तत्पश्चात भक्ति के आचार्यों के मत वात्सल्य के विविध रूप विविध दशाएं और अन्य रसो से सम्बन्ध आदि देकर हिन्दी के आचार्यों की वात्सल्य रस विषयक मान्यताओ का समीचीन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अत मे वात्सल्य रस का मनोविज्ञानाश्रित अध्ययन भी प्रस्तुत

किया गया है। इस अध्ययन की सामग्री प्राचीन आचार्यों के आधार पर ही निरद्ध की गई है अत उसमें केवल प्रतिपादन शैली ही लेखक की अपनी है।

द्वितीय अध्याय में विवेच्य काल से पूर्व के साहित्य में व्यक्त वात्सल्य रस का स्वरूप विवेचन किया गया है। इसके अन्तर्गत संस्कृत प्राकृत और प्राचीन हिन्दी काव्य से वात्सल्य वर्णन करने वाले प्रसंगों का विधिवत् अनुसन्धानात्मक विवेचन है। भक्तिकाल के भक्त कवि सूर और तुलसी के साहित्य का विशेष अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार वात्सल्य रस का पूर्ण परिप्रेक्ष्य उपस्थित करने का प्रयास किया गया है। वात्सल्य रस का जो रूप हम विवेच्य काल में मिलता है उसकी धारा पहले कैसी थी, यह यहाँ स्पष्ट हुआ है।

तृतीय अध्याय में आधुनिक हिन्दी काल के कवियों की कृतियों में अभिव्यक्त वात्सल्य रस व्यंजना का वैज्ञानिक रीति से विश्लेषण और विवेचन किया गया है। उनमें महाराज रघुराजसिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा नवीन, अनूप शर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान, द्वारका प्रसाद मिश्र, गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश, रामानन्द तिवारी, रामकुमार वर्मा और आरसीप्रसाद सिंह आदि लगभग ३० कवियों की कृतियों में अभिव्यक्त वात्सल्य रस व्यंजना के साथ साथ बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित लगभग ८० कवियों की रचनाओं का सामूहिक अध्ययन भी समुचित वर्गीकरण और विश्लेषण के साथ प्रस्तुत किया गया है। प्रबन्ध का यह अंश मुख्यतया विवेच्य है।

चतुर्थ अध्याय में विवेच्य काल के वात्सल्य रस का शास्त्रीय विवेचन किया गया है। इस विवेचन में शास्त्रीय प्रणाली अपनाई गई है अर्थात् भावों की शास्त्रीय परख की गई है। जिस प्रकार विभाव, अनुभाव और संचारी भाव आदि के विभाजन द्वारा दूसरे रसों का आचार्यों ने विश्लेषण किया है उसी प्रकार लेखक ने प्रस्तुत रस का पर्यालोचन किया है।

पंचम अध्याय में आधुनिक हिन्दी काव्य के और उससे पूर्व के प्राचीन हिन्दी काव्य में अभिव्यक्त हुए वात्सल्य भाव की परस्पर में तुलना प्रस्तुत की गई है। यहाँ हमें स्पष्ट होना है कि अनेक शताब्दियों से चली आ रही वात्सल्य भाव धारा का बीसवीं शताब्दी के राजनीति प्रधान एवं विज्ञानप्रधान युग में क्या स्वरूप बना। इस प्रकार अतीत से लेकर वर्तमान तक के हिन्दी और तत्सम्बन्धी साहित्य के वात्सल्य भाव का पूर्ण चित्र उपस्थित करने का हमने प्रयास किया है। आशा है इसके द्वारा हिन्दी के भाव विवेचन सम्बन्धी साहित्य के भण्डार में एक और वस्तु बढ़ जायगी।

यह शोधप्रबन्ध आदरणीय डा० मोहनलाल गौड़ अध्यक्ष हिन्दी विभाग धर्म समाज कालेज अलीगढ़ के निर्देशन में सम्पन्न हुआ है। हिन्दी के और अनेक मर्मज्ञ विद्वानों ने भी समय समय पर अनेक प्रकार से मेरी सहायता की है। मैं इन सबके प्रति हृदय से कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

श्रीनिवास शर्मा

विषय सूची

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्याय

चतुर्थ अध्याय

पंचम अध्याय

उपसंहार

परिशिष्ट

ग्रन्थ-सूची

अध्याय १

वात्सल्य रस का शास्त्रीय विवेचन

रसो की सख्या—

'रस' शब्द का अनेक अर्थों मे प्रयोग किया गया है। उदाहरण के लिए वृक्षा से निकलने वाला एक प्रकार का सार, तरल पदार्थ जल अन्य मदिरा आसव, स्वाद मजा चटनी स्वादिष्ट पदार्थ, रुचि, प्रीति, मनोनता भाव मुदा, शरीरस्थ पदार्थ विशेष, वीर्य पारा जहर, दूध, तेल, फल का जूस, मकरद, शवत, शीरा, छ की संख्या, कोई भी खनिज पदार्थ रासायनिक भस्म ऐन्द्रिय सुख, विनोद, आनन्द आध्यात्मिक आनन्द और साहित्य म आनन्दात्मक चित्तवृत्ति आदि के लिए 'रस' शब्द का प्रयोग होता है। काव्य मे प्रयुक्त 'रस का अभिप्राय भावक की आनन्दात्मक चित्तवृत्ति अथवा काव्यानन्द से होता है।

रस मूलत एक है अखड है। शृगारादि रसा का विभाग विभावादि के आधार पर किया गया है। रस की एकता के कारण ही आचार्यों ने मूल रस की कल्पना की है। कुछ आचार्यों ने अन्तत रस का एक मानकर उसका नामकरण भी स्वमतानुसार किया है। इन्होने उस अभीसिप्त रस को प्रधानत्व देकर अन्य रसो को उसी म अभिपरिप्लुत माना है। आचार्यों के मतक्य राहित्य के कारण मव सम्मति से किसी एक ही रस म प्रधानत्व का अत्यताभाव सहज स्वाभाविक है।

रस को एक मानने वाले आचाय दो प्रकार क हैं। एक तो व जो किसी एक को ही एक मात्र रस मानते हैं, जस भोज शृगार को भवभूति करुण को और साहित्य दपणकार क प्रपितामह अदभुत को। दूसरे किसी एक रस को प्रधान और शेष रसा को अप्रधान मानत हैं। ऐसे लोगा की सख्या बहुत है और इनम जो प्रधान माना गया है वह शृगार ही है।

रस स तात्पय आनन्द से है। आनन्द की समता किसी से नही दी जा सकती। आनन्द के समान तो आनन्द ही है। आनन्द एक है अविभाज्य है। इसलिए बहुत से विद्वाना न काव्यानन्द अथवा रस को एक ही माना है। उनकी सम्मति से मनत रस एक ही है। यह दूसरा बात है कि मूल रस को नाम क्या दिया जाय। इस विषय म विद्वान एकमत नही हैं। उनकी अपनी अलग अलग मान्यताए हैं। भोज न

इस मूल रस का नाम एक मात्र शृंगार दिया है।[1] वस उन्होंने यह भी कहा है कि रस के ममार तो रस ही है और उसका शृंगारादि की तरह कोई नाम नहीं है। फिर भी यदि कुछ नाम देना चाहे तो वह शृंगार ही हो सकता है। शृंगार का भोज ने बडे व्यापक अर्थ में प्रयोग किया है। उनके लिए अभिमान और अहंकार ही शृंगार है और यह एक है। शृंगार के अतिरिक्त विद्वानों ने जिन दूसरे वीरादि रसों के नाम दिये हैं उनको भोज रस नहीं मानते। उनकी दृष्टि में वे भाव हैं। फिर उनको यदि रस मान लें तो रस इतने ही क्यों मानें। यदि भाव को रस मानने लगे तो कोई भी भाव रस हो सकता है और रसों की संख्या उतनी ही कही जा सकती है जितने कि भाव हो सकते हैं। वस्तुतः भोज की सम्मति में रस एक ही है और वह शृंगार है।

भवभूति मूल रस का नाम करुण देते हैं।[2] उनकी सम्मति में रस मूलतः एक है और वह करुण ही है। भवभूति ने करुण को ही एक मात्र रस मानने में कोई स्पष्ट तर्क नहीं दिया है। यह बात वे प्रसंगवश ही कह गये हैं। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने करुण को ही एक मात्र रस इसलिए माना है कि इसमें चित्तवृत्ति बडी उदात्त हो जाती है। इतना हृदय कहीं भी द्रवित नहीं होता जितना कि करुण रस की अनुभूति पर होता है। हृदय की यह द्रुतावस्था प्रत्येक रस की अनुभूति में अनिवार्यतः रहती है। अतः सब रसों के मूल में करुण है यह कवि भवभूति का तात्पर्य लगता है।

अद्भुत को एक मात्र रस मानने का उल्लेख साहित्य दर्पणकार ने किया है। उन्होंने लिखा है कि उनके प्रपितामह प० नारायण अद्भुत को एक मात्र रस मानते थे।[3] धर्मदत्त ने भी अपने ग्रंथ में यही बात कही है। उनकी सम्मति यह है कि रस में चमत्कार होना चाहिए। चमत्कार ही रस का प्राण रूप है। चमत्कार का सार विस्मय है जो कि अद्भुत रस का स्थायी भाव है। अतः सर्वत्र अद्भुत रस का ही प्रभाव है और वही मूलतः एक मात्र रस है।

---

१ आम्नासिषुदश रसान् सुधियो वयं तु शृंगारमेव रसनाद्रसमामनामः
—शृंगार प्रकाश १।६

२ एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्भिन्नः
पृथक्पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।
आवर्त बुद्बुद तरंगमयान् विकारान्
अम्भो यथा सलिलमेव हि तत् समस्तम्॥
—उत्तर रामचरित ३।४७

३ रसे सारश्चमत्कारः सर्वत्राप्यनुभूयते।
तच्चमत्कारसारत्वे सर्वत्राप्यद्भुतो रसः।
तस्मादद्भुतमेवाह कृती नारायणो रसम्॥ —साहित्यदर्पण पृ० ७०

डा० वी० राघवन ने यह उल्लेख किया है कि शान्त को भी विद्वानों ने एक मात्र रस माना है ।[1] उनका अभिप्राय अभिनवगुप्त से है । अभिनवगुप्त के विचार से शान्त रस सर्वश्रेष्ठ है ।[2] कारण यह है कि इसका सम्बन्ध मोक्ष से है और मोक्ष मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है । दूसरी बात यह है कि शान्त रस में सत्व गुण का उद्रेक और रसों की अपेक्षा अधिक रहता है और रस के सामान्य लक्षण में यह बतलाया गया है कि रस की अनुभूति सत्व के उद्रेक से ही होती है । इसलिए सत्वोद्रेक के नाते शान्त रस शेष रसों में अनुस्यूत रहता है और इसीलिए वह प्रधान रस कहा जा सकता है ।

कवि कर्णपूर गोस्वामी ने प्रेम को रस रूप में सर्वोपरि अधिष्ठित किया है । वे प्रेम रस में सभी रसों के अंतर्भाव को सम्भव मानते हैं । अपने मत के विषय में वे इस प्रकार कहते हैं कि जिस प्रकार समुद्र की तरंगें उसमें से उठती हैं और निमज्जित होती रहती हैं उसी प्रकार प्रेम रस में सारे रस और भाव उठते और विलीन होते रहते हैं ।[3]

किसी रस विशेष को उत्तम स्वीकार करने के साथ साथ आचार्यों ने अन्य रसों के नाम भी गिनाये हैं । वे उनके मत से गौण रस ठहरते हैं । रसों की संख्या की मान्यता के क्रम के अनुसार यदि हम चलें तो एक से अधिक रस संख्या दो मानी गई है । श्रीकृष्ण कवि ने अपने 'मन्दारमरन्दचम्पू' नामक ग्रन्थ में रसों के अलौकिक और लौकिक दो भेद माने हैं ।[4] दो के पश्चात रस संख्या के छः होने का उल्लेख मिलता है । कुछ अलंकारमार्गी विद्वानों द्वारा वैद्यक शास्त्र सम्मत षड्रसों की तरह काव्य में भी षड्रसों की मान्यता स्वीकृत की गई है ऐसा डा० वी० राघवन ने अपनी 'दि नम्बर आफ रसज' नामक पुस्तक में बताया है । साथ ही उन्होंने यह भी कहा है कि इस कथन का कोई विशेष आधार नहीं है ।[5] छः के पश्चात रस संख्या के आठ होने की स्वीकृति का पुष्ट प्रमाण मिलता है । भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में रसों की संख्या के विषय में उल्लेख किया है और उनकी संख्या आठ मानी है । वे इस प्रकार हैं—शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स और

१ दि नम्बर आफ रसज पृ० ८३ ८४

२ 'सर्व रसानां शान्तप्राय एवास्वादः'

अ० भा० प्रथम भाग, पृष्ठ २४०

३ उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति प्रेम्ण्यखण्ड रसत्वतः ।
सर्वे रसाश्च भावाश्च तरंगा इव वारिधौ ॥

—दत्तो भोज का शृंगारप्रकाश डा० वी० राघवन पृ० ८२७

४ मन्दारमरन्दचम्पू पृ० १००

५ 'षड् रसा इति रसना भिषजः तदनुसारिणः केचिदलंकारमार्गिणा अपि ।'

—दि नम्बर आफ रसज पृ०, १०७

सम्भृत।[1] तदनन्तर टीकाकारों के प्रसंग में उद्भट ने भी आठ रसों का उल्लेख किया है।[2] आठ के पश्चात् रस संख्या नौ स्वीकार की गई। आचार्य उद्भट ने शान्त को नवां रस सबसे पहले माना है।[3] तदनन्तर लोल्लट, शंकुक, भट्टनायक, अभिनवगुप्त और मम्मट आदि आचार्यों ने शान्त के रसत्व को स्वीकार किया। इस प्रकार परवर्ती आचार्यों ने रसों की संख्या प्रधानतः नौ ही मानी और ये ही काव्य में नवरस नाम से अभिहित किये जाते हैं।

रस संख्या की इति नवरस के परिगणन मात्र से ही नहीं हो जाती। परम्परा प्रचलित नवरसों के अतिरिक्त आचार्यों ने और बहुत से रस गिनाए हैं। नवरस के अतिरिक्त कुछ आचार्य रस संख्या दस बतलाते हैं और दसवां रस वात्सल्य को स्वीकार करते हैं। इस प्रसंग में आचार्यों में सबसे पहले की ओर श्रीरूप कवि[4] और भोज[5] ने संकेत किया है। रुद्रट ने भी इस रस की मान्यता का समर्थन किया है पर इसका रस प्रेयान् का बताया है।[6] प्रेयान् शब्द वात्सल्य का पर्यायवाची है। रसों की संख्या एकादश मानने वालों में कवि कर्णपूर गोस्वामी ने भोज का उल्लेख करते हुए कहा है कि उन्होंने नवरस दो रस—वत्सल और प्रेम—को मानकर रस संख्या एकादश माना है— 'भोजस्तु वत्सल प्रेमभ्याम् एकादश रसानाचष्टे'। किन्तु कवि कर्णपूर गोस्वामी का कथन निराधार है। भोज ने रस संख्या में इस प्रकार एकादश स्वीकार करने का कहीं भी उल्लेख नहीं किया।[7]

एकादश के पश्चात् रसों की संख्या द्वादश बतलाई गई है। आचार्य गोविन्द ने द्वादश रसों की ओर संकेत किया है और उसकी टीका करते हुए पद्मनाभ तर्कसत ने नवरस के साथ भक्ति, वात्सल्य और श्रद्धा को अन्तर्गणित द्वादश रस संख्या का स्पष्टीकरण किया है।[8] द्वादश के पश्चात् रसों की संख्या के अनन्त स्वीकार करने

१ शृंगार हास्य करुणरौद्र वीर भयानकाः ।
बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः ॥
—नाट्य शास्त्र ६।१५

२ काव्यादर्श २।२८०-२९१

३ दी थ्योरी आफ रसज पृ० ४२

४ अन्ये तु करुणस्थायी वात्सल्य दशमो पि च —मन्दारमरन्दचम्पू पृ० १००

५ शृंगार प्रकाश १।६

६ शृंगार वीर करुण बीभत्सभयानकाद्भुता हास्य ।
रौद्र शान्त प्रेयानिति मन्तव्या रसाः सर्वे ॥
—देखो हिस्टरी आफ दि थ्योरी आफ रस पृ० ३२

७ भोज का शृंगार प्रकाश ले० वी० राघवन पृ० ४२७

८ काव्यमाला प्रदीप पृ०।७४

का उल्लेख मिलता है। हरिपालदेव ने रससंख्या मर्यादा स्वीकार की है और नवतर रसों में वात्सल्य, सम्भोग, विप्रलम्भ और ब्रह्म रस का नाम लिया है।[1] अनेक रसों का नामोल्लेख करते हुए भोज ने अपने शृंगार प्रकाश में रसों की संख्या बीस मानी है और उनकी गणना में इन रसों को रखा है—रति, उत्साह, व हर्ष, धृति, उत्कंठा, आवेग, विस्मय, मति, वितर्क, चिंता चपलता, हास, उत्साह स्तम्भ, गद्-गद उन्माद व्रीडा, अवहित्थ, भय और शंका।[2] इसके अतिरिक्त कुछ और लगभग २३, रसों के नामों का उल्लेख डा० वी० राघवन ने किया है। उनके नाम इस प्रकार हैं—प्रयस् प्रीति, स्नेह, लाल्य, मृगया, मद, व्यसन दुःख सुख, उदात्त, उद्धत माधुर्य, माया, कार्पण्य, क्रीडनक स्वातन्त्र्य, आनन्द प्रशम, पारवश्य, साध्वस विलास अनुराग और सम्भ्रम।[3] भोज ने अपने शृंगार प्रकाश में बीस रसों की गणना करके भी कुछ और रसों के नाम दिए हैं। वे लावण्य, भ्रमप विषाद, जुगुप्सा, निर्वेद शोक, क्रोध रोप और लज्जा आदि हैं।[4] विद्दुला उन्होंने सभी व्यभिचारी और सात्त्विक भावों के रस हो जाने का भी कथन किया है।[5]

वास्तव में भोज का तात्पर्य यह है कि रस दो प्रकार के हो सकते हैं—मूल भूत रस और फलित रस। मूलभूत रस एक ही है जिसे शृंगार कहना चाहिए और उसमें फलित रसों की संख्या अनेक हो सकती है २० भी और २३ भी। इन फलित रसों को भोज ने भाव कहा है और ये भाव दूसरे आचार्यों के द्वारा माने हुए ९ १० आदि रसों के समकक्ष हैं। भोज की मान्यता यह है कि यदि हम रसों के मूल में जाय तब तो एक ही है और यदि आलम्बन आदि विषयों के कारण उनकी विभिन्नता पर दृष्टि डालें तो रस की संख्या कोई भी हो सकती है। रुद्रट ने ४९ भावों का रसदशा तक पहुंचने का कथन किया है। तदनुसार भोज का मत है। वे अपने शृंगार प्रकाश में लिखते हैं कि रति आदि ४९ भाव सभी विभाव, अनुभाव

---

१ शृंगारो हास्य नामा च वीभत्सकरुणस्तथा
वीर भयानकाह्वानो रौद्राख्या दभुत सनक
शान्तो ब्राह्मभिष पश्चाद् वात्सल्याख्यमत परम
सम्भोगो विप्रलम्भ स्यात रसात्वेते भयादश।

देखा—दि नम्बर आफ रसज प०, ५५

२ रसास्तु रत्युत्साह हर्षधृत्युत्कण्ठावेग विस्मय मति वितर्क चिन्ता प्रचलता
हासोत्साह स्तम्भ गदगदोन्माद व्रीडावहित्थ भय शंका विंशति।

—भोज का शृंगार प्रकाश
ले० वी० राघवन पृ० ४२४

३ दि नम्बर आफ रसज ले० वी राघवन प० १०७ १६२

४ भोज का शृंगार प्रकाश ले० वी राघवन प० ४२२ ४२४

५ वही पृ० ४२३

और व्यभिचारी भावों के संयोग से उत्कर्ष को प्राप्त होकर रस दशा को प्राप्त हो जाते हैं।[1]

रसों की संख्या के उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि वैसे तो सभी स्थायी, संचारी और सात्त्विक भावों का रसत्व कुछ आचार्यों ने सम्भव माना है परन्तु अधिकांश आचार्य नवरस के ही पक्षपाती हैं। जिन आचार्यों ने नवेतर रसों की गणना की है उन्होंने वात्सल्य को विशेष रूप से गिना है। कुछ आचार्य तो नवेतर रसों की गणना करते हुए सर्व प्रथम वात्सल्य को ही लेते हैं। यहां पर यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि रसों की संख्या में वृद्धि हुई है। कुछ विद्वानों की रस संख्या विषयक सम्मति देखने से बीच में रसों की संख्या का ह्रास भी लगता है। इससे यह सिद्ध होता है कि रसों की संख्या की वृद्धि किसी काल क्रम के अनुसार नहीं हुई। कभी वृद्धि और कभी ह्रास किसी आचार्य विशेष की मान्यता विशेष के आधार पर ही रहा। वात्सल्य रस का विकास प्रायः बीच में हुआ है।

वात्सल्य के रसत्व का अस्वीकार

संस्कृत के आचार्यों में सर्वप्रथम भरत मुनि आते हैं। इन्होंने रस आठ ही माने हैं।[2] इस प्रसंग में यह भी कहा गया है कि ये ही आठ रस ब्रह्मा द्वारा बतलाये गये हैं।[3] इससे यह भी स्पष्ट होता है कि आठ रस मानने की परम्परा अज्ञात अतीत से चली आ रही थी। भरत के पश्चात बहुत समय तक रस संख्या आठ ही मानी जाती रही। महाकवि कालिदास ने एक स्थान पर रसों के विषय में कहा है और आठ ही रस बतलाये हैं।[4] वररुचि द्वारा भी आठ रसों की ही परिगणना कराये गये हैं।[5] दण्डी[6] और शारदातनय[7] ने भी आठ रसों का ही उल्लेख किया है। इन आठ रसों में वात्सल्य का नाम नहीं है।

---

१ स्थायिनामेकानपञ्चाशतो पि विभानुभाव व्यभिचारी
संयोगात् परं प्रकर्षाधिगमे रस व्यपदेशार्हता।

—भोज का शृंगार प्रकाश
डा० वी० राघवन पृ० ४७०

२ नाट्य शास्त्र पृ० १५.१७

३ एते ह्यष्टौ रसाः प्रोक्ता द्रुहिणेन महात्मना

—नाट्य शास्त्र पृ०, १७

४ 'मुनिना भरतेन यः प्रयोगो भवतीष्वष्टरसाश्रयो नियुक्त

—विक्रमोर्वशी २।१८

५ पद स्थानानि गति द्वयम (त्रयम) अष्टौ रसा'

—उभयाभिसारिका पृ० १३

६ काव्यादर्श २।२९२

७ भावप्रकाश ५१।६।१०

वैसे भरत के नाट्य शास्त्र में भी शान्त और वात्सल्य रस[1] का नाम लिया गया है।[2] किन्तु विद्वान कतिपय कारणों से इसे प्रक्षिप्त मानते हैं। भरत ने दृश्य-काव्य में आठ रस माने हैं। उनके मत से श्रव्य-काव्य में कितने रस हैं, कुछ नहीं कहा जा सकता। उत्तर काल में उद्भट ने नाटक में भी नवरस की मान्यता की पुष्टि की और नवां रस शान्त माना, वात्सल्य नहीं।[3] आचार्य वामन ने दीप्तिरसत्व के प्रसंग में इन्हीं नव रसों की गणना की है।[4]

इसी प्रकार आनन्दवर्धन[5] मम्मट[6] जगन्नाथ[7] भानुदत्त[8] और अभिनव कालिदास[9] आदि आचार्यों ने अपनी रस सम्बन्धी मान्यताओं में वात्सल्य रस को कोई स्थान नहीं दिया।

१ मात्राध्यात्मसमुत्थस्तत्त्व नानाथ हेतु संयुक्त ।
नैः श्रयसोपदिष्टः शान्त रसो नाम सम्भवति ॥
—हिन्दी अभिनवभारती षष्ठो ध्याय पृ०, ६०६

२ तत्र हास्य शृंगारयो स्वरितोदात्तवीररौद्राद्भुतरुदात्त कम्पित, करुण वात्सल्यभयानकेष्वनुदात्तस्वरित कम्पितवर्णो पाठ्यमुपपादयति।"
—नाट्य शास्त्र अध्याय १७ पृ० १८७
निर्णयसागर की प्रति १८९४

३ शृंगारहास्यकरुणारौद्रवीर भयानका ।
बीभ माद्भुत शान्तश्च नव नाट्ये रसा स्मता ॥
—काव्यालंकारसार संग्रह ४।५

४ काव्यालंकारसूत्राणि पृ० ८६ ६०

५ ध्वन्यालोक तृतीय उद्योत पृ०, ३१५

६ तद्विदापानाहु—
शृंगार हास्य करुणारौद्र वीर भयानका ।
बीभत्साद्भुत संज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसास्मृता ॥
—काव्यप्रकाश पृ०, १०६

७ शृंगार करुण शान्ता रौद्रो वीरोद्भुतस्तथा ।
हास्या भयानकश्चैव बीभत्सश्चेति ते नव ॥
—रसगंगाधर पृ० २६

८ शृंगार करुण शान्तो रौद्रो वीराद्भुतस्तथा ।
हास्यो भयानकश्चैव बीभत्सश्चेति त नव ॥
—रस मंजरी पृ० ४

९ शृंगार हास्य करुण रौद्र वीर भयानका ।
बीभत्साद्भुत शान्तश्च रसा पूर्वैरुदाहृता ॥
—नंजराजयशोभूषण—रसनिरूपण, चतुर्थ विलास पृ०, ३७

बराबर वालो की पारस्परिक रति का नाम स्नेह है। अनुत्तम की उत्तम मे रति प्रसक्ति कहलाती है, इसे ही भक्ति कहते हैं। उत्तम की अनुत्तम के प्रति जो रति है वह वात्सल्य है।'[1] इनका उन्होंने भावमात्र ही माना है रस नही।[2] इसी को रस-कलस म सोमेश्वर की रस विषयक सम्मति बतलाया गया है।[3]

यह भी उल्लेखनीय है कि एक अज्ञात नाम संस्कृत विद्वान ने वात्सल्य को रति के अंतर्गत ही समाविष्ट माना है। इसका उल्लेख हरिऔध न अपने रस कलम मे किया है।[4]

इस प्रकार ऐसे आचार्यों की संख्या भी कम नही रही जो वात्सल्यानुभूति को रस कोटि तक अधिरूढ तो मानते हैं पर उसका अंतर्भाव किसी न किसी पूर्व प्रनिष्ठित रस म कर लेते हैं। इस मान्यता के विकास मे भी किसी प्रकार का काल क्रम नही प्राप्त होता।

प्राचीन आचार्यों द्वारा वात्सल्य-रस की स्वीकृति

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है संस्कृत के अनेक आचार्यों ने वात्सल्य को रस नहीं माना। जिन रुद्रट आदि आचार्यों न वात्सल्य रस को माना भी है तो उस स्वतन्त्र रूप स न मान कर उसका रति आदि मे अंतर्भाव उचित समझा है। इसके अतिरिक्त संस्कृत के ऐसे आचार्य भी है जिन्होंने वात्सल्य का स्वतन्त्र रूप स रस माना है। इन आचार्यों म सर्वप्रथम भोज (११वीं शताब्दी) का नाम आता है। इन्होंने किसी दूसरे रस अथवा भाव म अंतर्भूत न मानते हुए वात्सल्य-रस का कथन किया है। परन्तु इस भोज की निजी सम्मति नहीं कह सकते। उन्होंने वात्सल्य रस का अन्य रसो के साथ परिगणन मात्र किया है। उनकी स्वयं की सम्मति तो केवल मात्र शृंगार को ही रस मानने की है परन्तु अनात नाम विद्वानो की वात्सल्य रस विषयक मान्यता की ओर इनका जो संकेत है वह अधिगम्य है। वे कहते हैं—शृंगार वीर करुण, अद्भुत रौद्र हास्य वीभत्स वत्सल भयानक और शान्त नाम के दश रसा

[1] स्नेहा भक्तिर्वात्सल्यमिति रतेरेव विशेषा। तुल्ययो या परस्पर रति स स्नेह। अनुत्तमस्य उत्तमे रति प्रसक्ति सव भक्तिपद वाच्या। उत्तमस्य अनुत्तमे रति वात्सल्यम।'

—दिनम्बर आप रसज्ञ पृ० १११ पर उद्धृत

[2] एवमाद्यो च विषय भावस्यैव आस्वाद्यत्वम

—वही पृ०, १११

[3] रस कलस पृ०, १६०

[4] स्नेहोभक्तिर्वात्सल्य मैत्री आबध इति रतेरेव विशेषा तुल्ययोमि थोरति स्नेह प्रेयति यावत्। तयातयारेव निष्कामतया मिथो रति मैत्री। अवस्यवरे रतिभक्ति रतिरा ब ध इति।

—रस कलस पृ० १६० पर उद्धृत

प्रश्न—दास्य सख्य वात्सल्य नाम के तीन रसों की विद्वानों द्वारा अनुभूति होती है तो फिर नौ ही रस क्यों माने जाने चाहिये ?

उत्तर—सच है। फिर भी यहां उनका निरूपण नहीं है। रस नौ ही हैं शेष तो भाव हैं। कारण कि स्वतन्त्र इच्छा वाले मुनि ने भी ऐसा ही कहा है। 'वात्सल्य रस को स्वीकार करने वाले विद्वानों में राजा अल्लराज का नाम उल्लेखनीय है। अपनी 'रसरत्न प्रदीपिका' नामक पुस्तक में उन्होंने वात्सल्य रस की चर्चा की है। उन्होंने वात्सल्य को रस रूप में स्वीकार करने वाले विद्वानों के मत का भी संकेत किया है परन्तु उन्होंने इस रस को रति के अन्तर्गत ही समाविष्ट माना है। इस विषय में उन्होंने इस प्रकार कहा है— कुछ लोग वत्सल को रस कहते हैं परन्तु यह रति ही है।[1] इसके पश्चात वह और स्पष्टीकरण करते हैं। इससे वात्सल्य रस की थोड़ी व्याख्या भी हो जाती है जो इनसे पूर्व और किसी आचार्य ने नहीं की। पूर्ववर्ती आचार्यों ने तो वात्सल्य के नाम का परिगणन या स्थायी भाव आदि का कथन मात्र ही किया है। वात्सल्य रस का स्पष्टीकरण करते हुये अल्लराज कहते हैं—'माता पिता का सन्तान के आलिंगन में जो आनन्द उत्पन्न होता है विद्वान उसे रति कहते हैं और वही वात्सल्य है।[2]

कवि कर्णपूर गोस्वामी का नाम भी वात्सल्य को रस स्वीकार करने वाले विद्वानों में परिगणित किया जाता है। उनके वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार करने की बात डा० वी० राघवन ने कही है। उनके अनुसार कवि कर्णपूर गोस्वामी वात्सल्य को रस मानते हैं और उसका स्थायी भाव ममकार मानते हैं।[3]

वात्सल्य को रस स्वीकार करने वाले आचार्यों की परम्परा में अन्तिम आचार्य विश्वनाथ हैं। इन्होंने अपने साहित्य दर्पण में वात्सल्य के रसत्व को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है। उसकी सांगोपांग व्याख्या भी की है। वात्सल्य के स्थायीभाव, विभाव अनुभाव संचारीभाव वर्ण और देवता आदि का भी कथन किया है। उसकी व्याख्या करते हुए वे इस प्रकार लिखते हैं—

आचार्य वत्सल को भी रस मानते आये हैं क्योंकि इसमें भी अन्य रसों की भांति चमत्कार स्पष्ट रूप से विद्यमान है। यही नहीं इसके अंग उपांग भी पूर्ण रूप से विद्यमान हैं। जैसे वत्सलता स्नेह इसका स्थायी है, पुत्रादि आलम्बन हैं। उनकी चेष्टा, विद्या शौर्य, दया आदि उद्दीपन विभाव हैं। बच्चे का आलिंगन अंगस्पर्श,

---

१ वत्सलं तु रसं प्राहुरन्ये सा रतिरेव हि।

—रसरत्न प्रदीपिका पृष्ठ ८२

२ अपत्यलिंगने भावो यः पित्रा रूप जायते।
सा रति कथिता तज्ज्ञैर्वात्सल्यं तच्च कीर्तितम् ॥

—रसरत्न प्रदीपिका ६।८८

३ दबो दि आफ रसज पृष्ठ, १०६

शिर चुम्बन, उसकी ओर देखना रोमांचित होना आनन्द के आसू भर लाना आदि इसके अनुभाव हैं। शिशु के प्रति अनिष्ट की शंका हर्ष गर्व आदि इसके संचारी हैं। इसका वर्ण कमल के गर्भ के समान है और ब्राह्मी आदि माताएं इसकी अधिष्ठात्री देवियां हैं।"[1]

इस प्रकार य वात्सल्य के रसत्व की पूर्ण निष्पत्ति को स्वीकार करके उसका विधिवत व्याख्यान करने वाले प्रथम काव्य शास्त्री है। इनमे अतिरिक्त वात्सल्य रस को स्वीकार करने वाले अन्य आचार्यों मे वात्सल्य के रसत्व की मान्यता के विषय मे बहुधा अज्ञात नाम आचार्यों के मतो की ओर संकेत किया है। उनकी एतद्विषयक क्या मान्यता है यह प्राय उनके ग्रन्थो मे निरूपित नही रहा। जिन आचार्यों ने स्पष्टत उसे स्वीकार भी किया है तो उसका सांगोपांग विवेचन उन्होने कहीं भी नही किया। साराश यह है कि वात्सल्य के रसत्व विधिवत स्वीकृति का श्रेय आचार्य विश्वनाथ को ही है।

इस स्थान पर यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि वात्सल्य की सांगोपांग विवेचना करने से पूर्व आचार्य विश्वनाथ ने वात्सल्य रस का मुनीन्द्र सम्मत बतलाया है।[2] और यह भी लिखा है कि उनकी (मुनीन्द्र की) मति के अनुसार वत्सल यह दसवा रस है।[3]

उपर्युक्त सभी आचार्यो के मतो का अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी आचार्यो ने वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार करने मे अन्य विद्वानो के मत की ओर संकेत किया है। इससे सिद्ध होता है कि अन्य आचार्यो ने वात्सल्य को विधिवत स्वीकार करके उसको रस परिणति के योग्य माना होगा। अब ऐसे विद्वानो का कोई प्रामाणिक लक्ष्य हमारे हाथ मे नही है। पर यह अवश्य है कि वात्सल्य को रस रूप मे मानने वाले आचार्य प्राचीन काल से रहे है। भोज ने

---

१ स्फुटं चमत्कारितया वत्सलं च रसं विदुः।
स्थायी वत्सलतास्नेहः पुत्राद्यालम्बनं मतम्॥
उद्दीपनानि तच्चेष्टा विद्याशौर्यादयः।
आलिंगनांगसंस्पर्श शिरश्चुम्बन मीक्षणम्॥
पुलकानन्दवाष्पाद्या अनुभावाः प्रकीर्तिताः।
संचारिणो निष्ट शंका हर्षगर्वादयो मताः॥
पद्मगर्भच्छविवर्णो दैवतं लोकमातरः।

—साहित्य-दर्पण ३।२५१-२५४

२ अथ मुनीन्द्र सम्मतो वत्सल

—साहित्य दर्पण पृ० २६२

३ वत्सलश्च रस इति तेन स दशमो मत'

—साहित्य दर्पण पृ० २६२

११वीं शताब्दी में जो 'आम्नासिंधु' आदि कह कर वात्सल्य रस का नाम लिया है वह इसी दिशा की ओर इंगित है। अत ११ वीं शताब्दी से पहले भी आचार्य वात्सल्य को रस मानते थे। विश्वनाथ ने भी 'विदु' शब्द का प्रयोग कर इसकी परम्परा का सकेत दिया है। हो सकता है भविष्य में ऐसे किसी विद्वान के विचार लिखित रूप में कहीं प्राप्त हो सकें।

निष्कर्ष यह है कि हमें तीन तरह के आचार्यों का पता मिलता है। (१) वे आचार्य जिन्होंने वात्सल्य को रस नहीं माना। (२) वे आचार्य जिन्होंने वात्सल्य को रस माना है परन्तु उसका अंतर्भाव पूर्व प्रचलित शृंगार आदि रसों में किया है। (३) वे आचार्य जिन्होंने वात्सल्य को रस माना है। इसमें कुछ लोगों ने इसके रसत्व का केवल उल्लेख किया है और दूसरे लोगों ने इसके अंग उपांगों का विधिवत व्याख्यान किया है।

ऐतिहासिक पर्यालोचन करने से एक निष्कर्ष यह निकलता है कि वात्सल्य का रस मानने या न मानने की परम्परा किसी काल क्रम के अनुसार नहीं है बल्कि अपनी रुचि और सिद्धान्तों के अनुसार आचार्यों ने इसके रसत्व को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत किया है।

भक्ति रस के आचार्यों द्वारा वत्सल भक्ति रस की महिमा

भक्ति के अंग वात्सल्यादि भाव और लौकिक साहित्य में वर्णित भाव स्वरूपत समान है। अतएव भक्ति के रसत्व की साहित्यिक ढंग से चर्चा सर्वथा समीचीन है। यह और बात है कि भक्त लोग साहित्यानुभूति को लौकिक होने के नाते भक्ति से हेय मानते हैं। भक्ति आसक्ति विकारादि से रहित है। वह मधुर है उज्ज्वल है। भक्ति सम्प्रदायों में भक्ति भाव के अंतर्गत वत्सल भक्ति का भी कथन किया गया है। नारद भक्तिसूत्र में भावुक भक्त द्वारा ईश्वराभिमुख होने की जो ग्यारह आसक्तियाँ महर्षि नारद ने बतलाई हैं उनमें वात्सल्यासक्ति भी एक है।[1]

भक्ति के आचार्यों ने भक्ति के पांच विशिष्ट भाव माने हैं—शान्त वत्सल, सख्य दास्य और शान्त। ये भाव क्रमानुसार भक्ति सोपान के वशिष्ट्य व्यापकता और उत्कृष्टता बाहुल्य के द्योतक हैं। वत्सल भक्ति भाव के औन्नत्य को सभी भक्ताचार्यों ने अपनाया है। रूपगोस्वामी ने भक्ति रस को प्रधान रस माना है। भक्ति-रस के मुख्य और गौण दो भेद किये हैं। मुख्य भक्ति रस के पुन भेद करके उनमें शान्त प्रीति, प्रेयान, वत्सल और मधुर का परिगणित किया है। गौण भक्ति रस के भेदों में हास्य अद्भुत वीर करुण, रौद्र भयानक और वीभत्स को लिया है।[2] वत्सल भक्ति रस की उन्होंने पूर्ण व्याख्या भी की है। वे कहते हैं—'स्थायी भाव

---

१ नारदभक्तिसूत्र प०, ८२

२ हरिभक्तिरसामृतसिन्धु ५।१९५ ६८

११वी शताब्दी मे जो 'आम्नासिपु' आदि कह कर वात्सल्य रस का नाम लिया ह वह इसी दिशा की ओर इगित है। अत ११ वी शताब्दी से पहले भी आचाय वात्स य का रस मानते थे। विश्वनाथ ने भी 'विदु' शब्द का प्रयोग कर इसकी परम्परा का सकेत दिया है। हो सकता है भविष्य मे ऐसे किसी विद्वान के विचार लिखित रूप म कही प्राप्त हो सकें।

निष्कष यह है कि हम तीन तरह के आचार्यों का पता मिलता है। (१) वे आचाय जिन्होने वात्सल्य को रस नही माना। (२) वे आचाय जिन्होने वात्सल्य को रस माना हैं परन्तु उसका अतभाव पुन प्रचलित शृगार आदि रसो म किया है। (३) वे आचाय जिन्होन वात्सल्य को रस माना है। इनमें कुछ लोगा ने इसके रसत्व का केवल उल्लेख किया है और दूसरे लोगा ने इसके अग उपागो का विधिवत व्याख्यान किया है।

ऐतिहासिक पर्यालोचन करन स एक निष्कष यह निकलता है कि वात्सल्य का रस मानन या न मानने की परम्परा किसी काल क्रम के अनुसार नही है बल्कि अपनी रुचि और सिद्धान्ता के अनुसार आचार्यो ने इसके रसत्व को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत किया है।

भक्ति रस के आचार्यों द्वारा वत्सल भक्ति रस की महिमा

भक्ति क अग वात्सल्यादि भाव और लौकिक साहित्य म वर्णित भाव स्वरूपत समान है। अतएव भक्ति के रसत्व की साहित्यिक ढग म चचा सवथा समीचीन है। यह और बात है कि भक्त लाग साहित्यानुभूति का लौकिक होने के नाते भक्ति से हेय मानते है। भक्ति जागतिक विकारादि स रहित, है। यह मधुर ह उज्ज्वल है। भक्ति सम्प्रदाया म भक्ति भाव के अन्तगत वत्सल भक्ति का भी कथन किया गया है। नारद भक्तिसूत्र मे भावुक भक्त द्वारा ईश्वराभिमुख होन की जो ग्यारह आसक्तिया महर्षि नारद ने बताई है उनम वात्सल्यासक्ति भी एक है।[१]

भक्ति के आचार्यों ने भक्ति के पाच विशिष्ट भाव माने हैं—शान्त, वत्सल, सख्य दास्य और शान्त। ये भाव क्रमानुसार भक्ति-सोपान के वशिष्ट्य व्यापकता और उत्कृष्टता बाहुल्य के द्योतक हैं। वत्सल भक्ति भाव में औन्नत्य को सभी भक्ताचार्यों ने अपनाया है। रूपगोस्वामी न भक्ति रस को प्रधान रस माना है। भक्ति-रस के मुख्य और गौण दो भेद किये हैं। मुख्य भक्ति रस के पुन भद करके उनमे शान्त प्रीति प्रेयान वत्सल और मधुर का परिगणित किया है। गौण भक्ति रस के भेदा म हास्य अद्भुत, वीर करुण रौद्र भयानक और वीभत्स को लिया है।[२] वत्सल भक्ति रस की उद्दाम पूर्ण व्याख्या भी की है। वे कहते हैं—'स्थायी भाव

---

१ नारदभक्तिसूत्र प०, ८२

२ हरिभक्तिरसामृतसिन्धु ५।६५ ६८

वत्सल रति मे पुत्रादि विषयक पाल्य पालक भाव रहता है। पाल्य पालक भाव की वत्सल रति ही वत्सल भक्ति रस है।[1]

वैष्णव भक्ताचार्यो ने विभिन्न रसो की शत्रुता और मैत्री आदि का कथन करते हुए वात्सल्य के शत्रु और मित्र रसो का भी कथन किया है। इसका निर्देश गुलाबराय ने अपने नवरस मे किया है और वात्सल्य के मित्र रसो मे हास्य करुण और भयानक का तथा शत्रु रसो मे युद्धवीर, रौद्र और प्रीत की परिगणित कराया है।[2] इसी प्रसंग मे वैष्णव मत के अनुकूल वत्सल भक्ति रस के अंग प्रत्यंगो का कथन करके उन्होने उसके देवता और वर्ण आदि का भी कथन किया है।[3]

निष्कर्ष यह है कि वात्सल्य की स्वीकृति भक्ति के आचार्यों ने भी की है। वत्सल भक्ति रस की महिमा अनेक भक्त्याचार्यो ने गाई है। और उसकी भली भाति व्याख्या करके निरूपण भी किया है। भक्ति-साहित्य इस विषय मे बड़ा विस्तृत है। इसमे सन्देह नही कि वात्सल्य रस का सर्वाधिक निरूपण वैष्णव भक्त्याचार्यों ने ही किया है। उनका प्रभाव हिन्दी साहित्य पर विशेष रूप मे पड़ा है। हिन्दी के भक्त कवि इसका उदाहरण है। इसके पश्चात उत्तरकालीन विद्वानो ने शायद ही उनसे प्रभावित होकर वात्सल्य रस के औचित्य का स्वीकार किया। उसकी विवेचना भी की और काव्य अभिव्यक्ति भी। एतत्सम्बन्धी विस्तृत विवेचन आगे चलकर किया जाएगा।

---

१ पाल्य पालक भावेन सा वत्सल रतिर्मता।

—श्री मदभगवदभक्ति रसायन

२ वत्सल के हित हास्य अरु करुन भयानक तीन। (११ ६, २४)
युद्ध वीर शुचि रौद्र अरु प्रीत बैर मन कीन॥

—नवरस पृ० ६९८

३ देखा—नवरस पृ० ६१८ १६ पर निम्नलिखित तालिका

रस —तदनुकूल —देवता —रग —स्थायीभाव—विभाव —सचारी
—सात्विकभाव मनासिक प्रवत्ति आलम्बन उद्दीपन अनुभाव
वात्सल्य विकास नसिंह श्वेत स्नेह कृष्ण श्रीकृष्ण खिला मस्तक —स्तम्भ
व गर्ग रति एव की मधुर विषाद आघ्राण आदि
कृष्ण बाना निर्वेद हस्तद्वारा—वे
के ऋाडा जडता अग माजन अति—
गुरुजन आदि दैन्य लालन रिक्त
चापल्य आशीर्वाद दुग्धस्राव
उन्माद हितोपदेश—
मोह प्रश्न

वात्सल्य रस के अंग

वात्सल्य रस—अनुकम्पेय के प्रति जो अनुकम्पा करने वाले की स्नेहपूर्ण भावना होती है उसे वात्सल्य कहते हैं। और जब काव्य में उसकी अभिव्यक्ति होती है और उससे आनन्दानुभूति होती है तो उसे वात्सल्य रस कहते हैं।

वात्सल्य-रस का स्थायीभाव

कवि कर्णपूर गोस्वामी ने वात्सल्य का स्थायीभाव ममता बतलाया है।[1] मन्दारमरन्दचम्पू में करुणा को वात्सल्य का स्थायी भाव बतलाया गया है।[2] वस्तुत वात्सल्य रस का स्थायी भाव वत्सलता है।[3]

वात्सल्य रस के आश्रय

वात्सल्य रस के आश्रय माता पिता गुरुजन पारिवारिक व्यक्ति तथा अन्य सहृदय हैं। वात्सल्य रस के आश्रय आलम्बन से आयु में अधिक होते हैं।

विभाव

(१) आलम्बन—वात्सल्य रस के आलम्बन पुत्र पुत्री शिष्य शिशु आदि अनुकम्पय हैं।

(२) उद्दीपन—उद्दीपन विभाव के दो भेद हैं—आलम्बनगत और आलम्बन बाह्य। आलम्बनगत में आलम्बन की तीन बातें उद्दीपन करती हैं—गुण चेष्टा और प्रसाधन। वात्सल्य रस के आलम्बन के गुणों में बच्चे का शारीरिक सौन्दर्य विद्या बुद्धिचातुर्य, शूरता दया आदि आते हैं। चेष्टाओं में बालकेलि हँसना किलकारना तुतलाना और ठुमककर चलना आदि आते हैं। प्रसाधन में वसन आभूषण और मण्डन आदि आते हैं।

आलम्बन बाह्य में आलम्बन से अलग की वस्तुएँ आती हैं जो कि वात्सल्य को उद्दीप्त करती हैं। जैसे खाना खाने के समय का वातावरण, मेले या बाजार जाते समय बच्चों को आनन्दित करने के लिये उनकी आवश्यकता अनुभव कराने वाला वातावरण, बच्चे के खाद्य भोजन वस्त्रालंकार उसके खेलने के खिलौने और साथी आदि ये सभी आलम्बन बाह्य उद्दीपन के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं।

अनुभाव

आलिंगन करना, शरीर को स्पर्श करना सस्नेह देखना पुलक, आनन्दाश्रु स्मित, गोद में लेना चूमना आदि वात्सल्य रस के अनुभाव हैं।

इसके अतिरिक्त विशेषत यह द्रष्टव्य है कि अन्य रसों में ■ सात्विक भाव बतलाये गये हैं। शुद्ध वात्सल्य रस में नवां सात्विक भाव स्तनस्राव और होता है।

---

१ अत्र ममकार स्थायी देखो दि नम्बर आफ रसज पृ० १ ६

२ अयंतु करुणा स्थायी वात्सल्य दशमो पि च —म० म० पृ० १००
—देखो दि नम्बर आफ रसज पृ० १ ६

३ साहित्य दर्पण पृ०, २६२

सचारी भाव

आशका, हर्ष, गर्व आवेग पुलक, स्मृति, विस्मय आदि वात्सल्य रस के सचारी भाव हैं।

वात्सल्य के विविध रूप

स्थायी व्यभिचारी और सात्त्विक चित्तवृत्तिया जब किसी रस विशेष की आस्वादात्मक अनुभूति कराती हैं तो उस दशा को भाव कहते हैं।[1] सुख दुख आदि को भाव इसीलिए कहा गया है क्योंकि इनसे हृदय तन्मयीभूत होते हैं।[2] भाव रस से निम्न कोटि का आनन्दानुभव है। उच्च कोटि की आनन्दानुभूति होगी तो वह स्थिति रस दशा की होगी। वात्सल्य की भी दोनो स्थितिया—भावदशा और रसदशा की होती है। निष्कर्ष यह है कि वात्सल्य के प्रथमत दो भेद हुए—वात्सल्य भाव और वात्सल्य रस। फिर इन दोनो के तीन तीन रूप है—शुद्ध वात्सल्य मिश्रित वात्सल्य और वत्सल भक्ति। वत्सल भक्ति भी शुद्ध और मिश्रित दोनो प्रकार की होती है। वात्सल्य के विविध रूपो को निम्नलिखित वृक्ष की सहायता से भली भाति समझा जा सकता है।
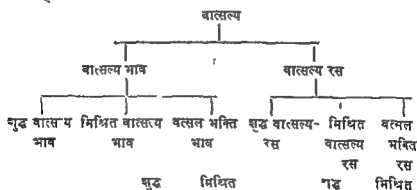
वात्सल्य भाव

शुद्ध वात्सल्य भाव—जहा वात्सल्य भाव की किसी अन्य भाव से अव्यामिश्रित आस्वादात्मक अनुभूति होती है वहा शुद्ध वात्सल्य भाव होता है। जैसे—

यह मेरी गोदी की शोभा,
सुख सुहाग की है लाली।

---

१ साहित्य दर्पण ३। १८१

२ सुख दुःखादिभिर्भावैस्तद्भावनम्
—हिंदी सा० दर्पण पृ० २२९

दाहो मान भिखारिन की है,
मनोकामना मतवाली ।[1]

—सुभद्राकुमारी चौहान

उपर्युक्त कविता में कवयित्री ने अपने शुद्ध वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है जिसमें हास आदि किसी भी अन्य भाव का मिश्रण नहीं हुआ है। किन्तु यह अभिव्यक्ति भावक को रसानुभूति की उच्च दशा तक नहीं पहुंचाती केवल भाव दशा तक ही पहुंचाती है। इस प्रकार इन पंक्तियों में शुद्ध वात्सल्य भाव है।

मिश्रित वात्सल्य भाव

जहाँ पर वात्सल्य भाव का मिश्रण किसी और दूसरे भाव के साथ होकर आस्वादात्मक अनुभूति होती है वहां मिश्रित वात्सल्य भाव होता है। उदाहरणार्थ—

यह छोटा सा छौना !
कितना उज्वल कितना कोमल, क्या ही मधुर सलौना।
क्यों न हंसूं—रोऊं गाऊं मैं, सखा मुझे यह टौना,
आर्यपुत्र, आओ सचमुच में कूजो चन्द खिलौना।[2]

—मैथिलीशरण गुप्त

इस स्थान पर वात्सल्य भाव के साथ वियोग शृंगार का मिश्रण है। यशोधरा वात्सल्य भाव से आपूरित होने के साथ साथ स्वामी के वियोग से भी व्यथित है। अतः यहां पर मिश्रित वात्सल्य भाव है।

इसी प्रकार वात्सल्य और हास का मिश्रण भी द्रष्टव्य है—

'मां कह एक कहानी
बेटा, समझ लिया क्या तूने
मुझको अपनी नानी ?"
'कहती है मुझसे यह बेटा
तू मेरी नानी की बेटी
कह माँ कह लेटी ही लेटी
राजा था या रानी ?"[3]

—मैथिलीशरण गुप्त

उपर्युक्त पद में यशोधरा और राहुल के कथोपकथन में वात्सल्य भाव है पर बच्चे के मुख से भोली बातें सुनकर हंसी का भाव भी आता है। अतः यहां पर वात्सल्य भाव और हास का मिश्रण है।

---

१ मुकुल पृ०, ४७ छठा संस्करण
२ यशोधरा पृ०, ४७
३ यशोधरा पृ०, ५६

वत्सल भक्ति भाव

जहा पर भगवान को वत्स रूप म मानकर भक्त क भक्तिभाव अभिव्यक्त किय जाते हैं और उसका आस्वादात्मक अनुभूति होती है वहाँ पर वत्सल भक्ति भाव होता है। उपयुक्त कथन के अनुसार वत्सल भक्ति भाव भी शुद्ध और मिश्रित दो प्रकार का हो सकता है।

शुद्ध वत्सल भक्ति भाव

शुद्ध वत्सल भक्ति भाव वह है जहा भगवान को वत्स रूप म आलम्बन मान कर भक्ति भाव की अभिव्यञ्जना की जाय। निम्नाङ्कित पद्य म शुद्ध वत्सल भक्ति भाव है—

पालने गोपाल झुलाव
सुर मुनि देव कोटि तेतीसो कौतुक अम्बर छाव
जाको अन्त न ब्रह्मा जान सिव सनकादि न पाव
सो अब देखो नद जसोदा हरषि हरषि हलराव
हुलसत हसत करत किलकारी मन अभिलाष बढाव
सूर स्याम भक्तनि हित कारन नाना भेष बनाव।[1]

—सूर

यहा पर भक्ति क उदगार अभिव्यक्त किय गय हैं। परन्तु आलम्बन है शिशु रूप भगवान श्रीकृष्ण। अत यहा पर शुद्ध वत्सल भक्ति भाव है।

मिश्रित वत्सल भक्ति भाव

मिश्रित वत्सल भक्ति भाव वह है जहा वात्सल्य भक्ति क साथ ही हास आदि रस या किसी अन्य भाव का भी मिश्रण हो। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पक्तियाँ देखिये—

भोजन करत बोल जब राजा।
नहिं आवत तजि बाल समाजा॥
कौसल्या जब बोलन जाई।
ठुमुक ठुमुक प्रभु चलहिं पराई॥
निगम नेति सिव अन्त न पावा।
ताहि धर जननी हठि धावा॥[2]

—तुलसी

यहाँ पर पहले राम क प्रति वात्सल्य भाव है। साथ ही 'प्रभु' के रूप म मानने स वात्सल्य भक्ति भाव भी है। अत यहाँ पर मिश्रित वत्सल भक्ति-भाव है।

---

१ सूरसागर १०।६६३
२ रामचरितमानस १।२०२ २ ३

एक उदाहरण और लीजिए—

हरि किलकत जसुमति की कनियाँ।
मुख मे तीनि लोक दिखराये चकित भई नंदरनियाँ।
घर घर हाथ दिखावति डोलति बाँधति गरे बघनियाँ।
सूर स्याम की अद्भुत लीला नहि जानत मुनि जनियाँ।[1]

—सूर

उपर्युक्त पद में कृष्ण के प्रति वात्सल्य भाव और भक्ति भाव दोनों का मिश्रण होने से यहाँ पर मिश्रित वत्सल भक्ति भाव है।

वात्सल्य रस

शुद्ध वात्सल्य रस—जहाँ पर केवल वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति रसानुभूति कराती है वहाँ पर शुद्ध वात्सल्य रस होता है। शुद्ध वात्सल्य रस में अन्य रस या भावादि का सम्मिश्रण नहीं होता। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पद उद्धृत है—

माई री! मोहि कोउ न समुझावै।
राम गवन साँचो किधौं सपनो मन परतीति न आवै॥
लगेइ रहत मेरे नैननि आगे राम लखन अरु सीता।
तदपि न मिटत दाह या उर को बिधि जो भयो बिपरीता॥
दुख न रहै रघुपतिहि बिलोकत तनु न रहै बिनु देखे।
करत न प्रान पयान सुनहु सखि अरुझि परी यहि लेखे॥
कौसल्या के बिरह बचन सुनि रोइ उठीं सब रानी।
तुलसिदास रघुबीर—बिरह की पीर न जाति बखानी॥[2]

—तुलसीदास

इस पद में कौशल्या माँ का राम के प्रति शुद्ध वात्सल्य भाव अभिव्यक्त किया गया है। केवल मात्र वत्स के लिए माता के विरह व्यथित हृदय की मार्मिक अभिव्यक्ति रसानुभूति कराती है। अतः यहाँ शुद्ध वात्सल्य रस है।

शुद्ध वात्सल्य रस का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ प्रेम मगन तन की सुधि भूली॥
बाहिर ते तब नन्द बुलाये देखो धौं सुन्दर सुखदाई।
तनक तनक सी दूध दँतुलिया, देखो नैन सफल करौ आई॥

---

१ सूरसागर १०।७०१

२ गीतावली २।५३

आनद सहित महर तब आये मुख चितवत दोउ नन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यो मनो कमल पर बिज्जु जमाई।।[1]

इस स्थान पर बालक कृष्ण के प्रति नन्द यशोदा का केवल वात्सल्य भाव रसानुभूति कराता है। आराध्य के रूप म कृष्ण नहा है। अत यहा शुद्ध वात्सल्य-रस है।

मिश्रित वात्सल्य-रस

जहा पर वात्सल्य रस के साथ किसी अन्य रस का मिश्रण होता है वहा पर मिश्रित वात्सल्य रस होता है।

उदाहरण—

आजु सखी मनि-खभ निकट हरि जह गोरस कौं गोरी।
निज प्रतिबिम्ब सिखावत ज्यो सिसु प्रगट कर जनि चोरी।।
अरध विभाग आजु त हम-तुम भली बनी है जोरी।
माखन खाहु कतहि डारत हौ छाडि देहु मति भोरी।।
बाट न लेहु सब चाहत हो यहै बात है थोरी।
मीठौ अधिक परम रुचि लाग तो भरि देउ कमोरी।।
प्रेम उमगि धीरज न रह्यो तब प्रगट हसी मुख मोरी।
सूरदास प्रभु सकुचि निरखि मुख भजे कुज की खोरी।।[2]

—सूर

यहाँ पर बालक कृष्ण के प्रति वात्सल्य और बाल स्वभाव की हास्यमयी उक्तिया के कारण हास्य रस है। अत यहाँ वात्सल्य और हास्य का मिश्रण होने से मिश्रित वात्सल्य रस है।

वत्सल भक्ति रस

जहा पर भगवान का वत्स रूप म मानकर अभिव्यक्ति की जाती है और उसस आनन्दानुभूति हाती है वहा पर वत्सल भक्ति रस हाता है। इनके भी दो रूप हो सकत है—शुद्ध वत्सल भक्ति रस और मिश्रित वत्सल भक्ति रस।

शुद्ध वत्सल भक्ति-रस

जहा पर भगवान वत्स रूप मे आलम्बन होत है और व सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी जगन्नियन्ता के रूप मे अभिव्यक्त किय जाते ह वहा शुद्ध वत्सल भक्ति रस हाता है। इसम अन्य रस का व्यामिश्रण नही होता। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पद को देखिये—

कर पग गहि अगुठा मुख मेलत।
प्रभु पौढ़े पालन अकेले हरषि हरषि अपने रग खेलत।।

१ सूरसागर १०।७००
२ सूरसागर १०।८८५

सिव सोचत विधि बुद्धि विचारत घट बाढ्यो सागर जस भरत।
विडरि चले घन प्रलय जानि कै दिगपति दिग दतीनि सरसत॥
मुनि मन भीत भये भुव कंपित सेष सकुच सहसौ फन पेसत।
उन ब्रज बासिनि बात न जानी, समझे सूर सकट पग ठेलत॥[1]

—सूर

उपर्युक्त पद में बाल रूप कृष्ण का भगवान के रूप में वर्णन किया गया है और प्राधान्य भक्ति भाव का है। अतः यहां पर शुद्ध य भक्ति रस है।

मिश्रित वत्सल भक्ति रस

जहां पर वत्सल भक्ति रस के साथ-साथ वात्सल्य रस का भी सम्मिश्रण होता है वहां पर मिश्रित वत्सल भक्ति रस होता है। जैसे—

जद्यपि नाथ तात! माया बस सुख निधान सुत तुम्हहिं बिसारे।
तदपि हमहिं त्यागहु जनि रघुपति दीनबन्धु दयाल मेरे बारे॥[2]

—तुलसी

इस स्थान पर कौशल्या का राम के प्रति वात्सल्य और भक्ति भाव दोनों मिश्रित हैं। अतः यहां पर मिश्रित वत्सल भक्ति रस या वात्सल्य रस मिश्रित वत्सल रस है।

इसी प्रकार का एक पद और द्रष्टव्य है—

बाल विनोद खरो जिय भावत।
मुख प्रतिबिम्ब पकरिवे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत॥
अखिल ब्रह्माड खंड की महिमा सिसुता माहिं दुरावत।
सबद जोरि बोल्यो चाहत हैं प्रगट बचन नहिं आवत॥
कमल नैन माखन मागत है करि करि सेन बतावत।
सूरदास स्वामी सुखसागर जसुमति प्रीति बढ़ावत॥[3]

उपर्युक्त पद में कृष्ण के प्रति वात्सल्य और भक्ति भाव का मिश्रण है। पाल्य पालक भाव और भगवद् भक्ति का मिश्रण होने से यहां मिश्रित वत्सल भक्ति रस है।

वात्सल्य की दो दशायें

रति भाव के अन्य रूपों की भांति वात्सल्य के भी दो विभाग होते हैं—संयोग वात्सल्य और वियोग वात्सल्य। जो बालक हमारे सामने होता है हम उसे हंसते, बातें करते, खेलते, कूदते और किलकारी मारते देखकर आनंदित होते हैं वहां

१ सूरसागर १०।६८१
२ गीतावली २।४
३ सूरसागर १०।७२०

दशा सयोग वात्सल्य की है। जहा उपयुक्त प्रकार से सयोग के सुख की अनुभूति नही होती वहा वियोग वात्सल्य होता है। यशोदा और कौशल्या के कृष्ण एव राम के सयोग और वियोग काल म व्यक्त किये गये भावो म वात्सल्य के सयोग वियोग के अनेक दृष्टान्त मिल जाते हैं।

वात्सल्य का अन्य रसो से सम्बन्ध

वात्सल्य का कुछ रसो से घनिष्ट सम्बन्ध है। बहुत से विद्वानो ने रति के व्यापकत्व म वात्सल्य को भी समाविष्ट करके इसे रति का ही विशेष रूप माना है।[1] उस स्थिति म शृगार रस से वात्सल्य की घनिष्टता स्वत सिद्ध है। फ्रायड आदि विद्वान तो वात्सल्य म भी काम भावना को मानते हैं। बच्चे का मा का दूध पीते समय स्तन को पकडना और लडके का माता की ओर तथा लडकी का पिता की ओर अधिक स्नेह होना विपरीत जाति के प्रति आकर्षण के रूप मे काम के अन्तर्गत ही लोग मानते ह। काव्य म भी वात्सल्य के साथ मिश्रित शृङ्गार की अभिव्यक्ति पाई जाती है।

> यह छोटा-सा छौना।
> कितना उज्ज्वल, कैसा कोमल क्या ही मधुर सलौना।
> क्यों न हृदय रोऊ गाऊ म, लगा मुझे यह टौना,
> प्राय पुत्र आओ सचमुच म दूगी चन्द्र खिलौना।[2]

वात्सल्य रस का भक्ति रस से भी सम्बन्ध है। इसी से नारद ने भक्ति की ग्यारह आसक्तियो म से वात्सल्यासक्ति को भी एक आसक्ति माना है। और रूप-गोस्वामी आदि ने भक्ति के विभिन्न रूपो म वात्सल्य को भी इतना महत्वपूर्ण स्थान दिया है। वात्सल्य भक्ति की महिमा प्राय सभी भक्त्याचार्यो ने गाई है। भक्ति और वात्सल्य के व्यामिश्रण की चर्चा वात्सल्य के विविध अगो का वर्णन करते समय की गई है। यहा उसके विस्तार की आवश्यकता नही।

इसी प्रकार वात्सल्य म अन्य रस और भावो का मिश्रण भी पाया जाता है। प्रेम, कारुण्य, अतृप्त अकाक्षा, वीर और हास्य आदि का मेल भी वात्सल्य मे देखा जाता है।[3] निम्नोद्धत पक्तियो म वात्सल्य और हास्य का मेल दृष्टव्य है—

> कहत श्याम म जमुना तीरा। खेलत रहेउ सग बलवीरा।
> सहसा मोहिं गहेउ कोउ धायो। फेंकेउ जमुना मांहि भवायो॥
> उघरे दग देखेउ अहिराई। पूछत आये कहाँ कहाई ?"॥
> म बोलेउ—'मोहि कस पठावा। कमल लेन तोरे घर आवा'॥
> कस नाम सुन उरप डरायो। कमल सहित मोहिं गयेउ पठाई'॥

---

१ यशोधरा पृ०, ८७
२ काव्यदर्पण पृ०, ११८

सिव सोचत विधि बुद्धि विचारत बट बाढ्यो सागर जल झेलत।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै दिगपति दिग दंतीनि सकेलत॥
मुनि मन भीत भये भुव कम्पित सेष सकुचि सहसौ फन पेलत।
उन ब्रज बासिनि बात न जानी समुझे सूर सकट पग ठेलत॥[1]

—सूर

उपर्युक्त पद में बाल रूप कृष्ण का भगवान के रूप में वर्णन किया गया है और प्राधान्य भक्ति भाव का है। अतः यहां पर शुद्ध वत्सल भक्ति रस है।

मिश्रित वत्सल भक्ति रस

जहां पर वत्सल भक्ति रस के साथ-साथ वात्सल्य रस का भी सम्मिश्रण होता है वहां पर मिश्रित वत्सल भक्ति रस होता है। जैसे—

जद्यपि नाथ तात! माया बस सुख निधान सुत तुम्हहिं बिसारे।
तदपि हमहि त्यागहु जनि रघुपति दीनबंधु दयाल मेरे बारे॥[2]

—तुलसी

इस स्थान पर कौशल्या का राम के प्रति वात्सल्य और भक्ति भाव दोनों मिश्रित हैं। अतः यहां पर मिश्रित वत्सल भक्ति रस या वात्सल्य रस मिश्रित वत्सल रस है।

इसी प्रकार का एक पद और द्रष्टव्य है—

बाल विनोद खरो जिय भावत।
मुख प्रतिबिम्ब पकरिबे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत॥
अखिल ब्रह्मांड खंड की महिमा सिसुता माहि दुरावत।
सबद जोरि बोल्यौ चाहत है प्रगट बचन नहिं आवत॥
कमल नैन माखन मांगत है करि करि सैन बतावत।
सूरदास स्वामी सुखसागर जसुमति प्रीति बढ़ावत॥[3]

उपर्युक्त पद में कृष्ण के प्रति वात्सल्य और भक्ति भाव का मिश्रण है। पाल्य पालक भाव और भगवद् भक्ति का मिश्रण होने से यहां मिश्रित वत्सल भक्ति रस है।

वात्सल्य की दो दशायें

रति भाव के अन्य रूपों की भांति वात्सल्य के भी दो विभाग होते हैं— संयोग वात्सल्य और वियोग वात्सल्य। जो बालक हमारे सामने होता है हम उसे हंसते बोलते खेलते, कूदते और किलकारी मारते देखकर आनन्दित होते हैं वहां

१ सूरसागर १०।६८१
२ गीतावली २।४
३ सूरसागर १०।७२०

दशा सयोग वात्सल्य की है। जहा उपयुक्त प्रकार से सयोग के सुख की अनुभूति नहीं होती वहा वियोग वात्सल्य होता है। यशोदा और कौशल्या के कृष्ण एव राम के सयोग और वियोग काल मे व्यक्त किये गये भावो मे वात्सल्य के सयोग वियोग के अनेक दृष्टान्त मिल जाते हैं।

वात्सल्य का अन्य रसो से सम्बन्ध

वात्सल्य का कुछ रसो मे घनिष्ट सम्बन्ध है। बहुत से विद्वानो ने रति के व्यापकत्व म वात्सल्य का भी समाविष्ट करके इस रति का ही विशेष रूप माना है।[1] उस स्थिति म शृगार रस मे वात्सल्य की घनिष्टता स्वत सिद्ध है। फ्रायड आदि विद्वान तो वात्सल्य म भी काम भावना को मानते हैं। बच्चे का मा का दूध पीते समय स्तन का पकडना और लडके का माता की ओर तथा लडकी का पिता की ओर अधिक स्नेह होना विपरीत जाति के प्रति आकर्षण के रूप मे काम के अलावा ही नोग मानत हैं। काव्य म भी वात्सल्य के साथ मिश्रित शृङ्गार की अभिव्यक्ति पाई जाती है।

> यह छोटा-सा छौना ।
> कितना उज्वल, कैसा कोमल क्या ही मधुर सलौना।
> क्यों न हसू रोऊ गाऊ म, लगा मुझे यह टौना,
> प्राय पुन आओ सचमुच म दूगी चन्द खिलौना।[1]

वात्सल्य रस का भक्ति रस से भी सम्बन्ध है। इसी से नारद ने भक्ति की ग्यारह आसक्तिया म से वात्सल्यासक्ति को भी एक आसक्ति माना है। और रूप-गोस्वामी आदि ने भक्ति के विभिन्न रूपों म वात्सल्य को भी इतना महत्वपूर्ण स्थान दिया है। वात्सल्य भक्ति की महिमा प्राय सभी भक्त्याचार्यों ने गाई है। भक्ति और वात्सल्य के व्यामिश्रण की चर्चा वात्सल्य के विविध अगो का वर्णन करते समय की गई है। यहा उसके विस्तार की आवश्यकता नही।

इसी प्रकार वात्सल्य म अन्य रस और भावो का मिश्रण भी पाया जाता है। प्रेम कारुण्य, अतप्त अकाक्षा, वीर और हास्य आदि का मेल भी वात्सल्य में देखा जाता है।[2] निम्नोद्धृत पक्तियो मे वात्सल्य और हास्य का मेल द्रष्टव्य है—

> कहत स्याम म जमुना तीरा। खेलत रहेउ सग बलबीरा।
> सहसा मोहि गहेउ कोउ धायो। फेंकेउ जमुना माहि भवायो॥
> उधरे दग देखेउ अहिराई। पूछत 'आये कहां कन्हाई?'॥
> म बोलेउ—'मोहि कस पठावा। कमल लेन तोरे घर आवा'॥
> कस नाम सुन उरग डरायो। कमल सहित मोहि पठाई'॥

१ यशोधरा पृ० ८७
२ काव्यदर्पण प०, ११८

दोहा— हसी यशोमति सुन कथा हस राकस ब्रज सारा।
कहत कान्ह। तुव कुडली परेउ भूठ कर योग॥[1]

प० रामदहिन मिश्र ने वात्सल्य म और भावा का भी मिश्रण माना है। इस विषय म कहते है— वात्सल्य म सौन्दय भावना कामलता, आशा शृगारभावना, आत्मतभिमान आदि अनेक भाव रहते हैं जिनके सम्मिश्रण स वात्सल्य अत्यन्त प्रबल हो उठता है।[2]

कभी कभी स्थायी भाव भी अन्य रसो म सचारी भाव बनकर आते हैं। वात्सल्य भी हास्य और शृगार आदि म व्यभिचार भाव क रूप म आते है।[3] इसी तरह उजियारे कवि ने करुण रस म वात्सल्य के सचारण की बात कही है।[4]

रसो की पारस्परिक शत्रुता और मत्री का भी विद्वानो ने कथन किया है। वात्सल्य रस के भी शत्रु और मित्र रस है। युद्ध वीर व रौद्र आदि वात्सल्य क शत्रु रस हैं। और हास्य करुण तथा भयानक इसके मित्र रस हैं।[5] इसके अतिरिक्त शृगार रस भी वात्सल्य का मित्र रस है।

अर्वाचीन आचार्यों द्वारा वात्सल्य रस की मान्यता

हिन्दी साहित्य के विविध अगो पर सस्कृत साहित्य का अत्यधिक प्रभाव था यह सर्वस्वीकृत सत्य है। काव्य शास्त्र का विषय इसका अपवाद नहीं है। हिन्दी साहित्य म सत्रहवी शताब्दी तक शास्त्रीय ग्रन्थो का प्रणयन प्राय उपेक्षित रहा है। वीरगाथा काल मे सम्भवत कोई भी शास्त्रीय ग्रथ नही लिखा गया। हा काव्य म वर्णित एकाध शास्त्रीय विचार प्रसगानुसार मिल सकते हैं। जस चन्द्रवरदाई नवरस वर्णन की बात अभिव्यक्त करते है—

'उक्ति धर्म विशालस्य। राजनीति नव रस।
षट भाषा पुराण च। कुरान कथित मया॥'[6]

भक्ति काल म भी लगभग यही हाल रहा है फिर भी कुछ शास्त्रीय ग्रथ मिल जाते हैं—जसे कृपाराम की हिततरगिणी गोपा का रामभूषण मोहनलाल

---

१ कृष्णायन प० ६२ ६३

२ काव्यदपण प० २१७

३ 'स्थायिनामपि व्यभिचारित्व भवति। यथा रते देवादिविषया (या) हासस्य शृगारादौ देखो भोज का शृगार प्रकाश (वी० राघवन) प० ४।२

४ ये सचारी भाव है अब सुनि लेहु सरूप।
वत्सलता करुणा विष हास चपलता रूप॥
—रस चन्द्रिका देखो का० ना० का इ० प० १५०

५ नवरस प० ५६८

६ पृथ्वीराज रासो पहला समय प० २३

मिश्र का 'शृगार सागर' नन्ददास की 'रसमजरी' और करनेस के 'करणाभरण', श्रुतिभूषण और भूपभूषण'।[1] इन ग्रन्थो मे वात्सल्य के रसत्व की चर्चा कही भी नही की गई है।

रीतिकाल मे काव्य शास्त्र सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ लिखे गए हैं। इनमे अधिकाश सस्कृत ग्रन्थो के अनुवाद से हैं। कुछ सस्कृत शास्त्रीय ग्रन्थो से पूर्णत प्रभावित हैं। अत यो कह सकते हैं कि रीतिकालीन आचार्यों ने सस्कृत काव्य शास्त्र को हिन्दी भाषा भाषी लोगो के अध्ययन-सारल्य के लिये भाषाबद्ध करने का प्रयत्न किया। फलत, नवीन सिद्धान्तो का उपस्थापन प्राय इनके ग्रन्थो मे दुष्प्राप्य है। इन आचार्यों की एतद्विषयक आलोचना करते हुए डा० भागीरथ मिश्र ने कहा है—'इनमे नवीन सिद्धान्त निरूपण तो है ही नही, प्राचीन सिद्धान्तो की पूर्णत व्याख्या भी नही है।'[2]

निष्कर्षत कह सकते हैं कि रीतिकालीन आचार्य के रस सम्बन्धी विषयक मत भी प्राय वही रहे हैं जो सस्कृत के आचार्यों के हैं। और जिस भाति वात्सल्य के रसत्व के विषय मे साधारण कथन अथवा पूर्ण प्रतिष्ठा के रूप मे सस्कृत के आचार्यों ने उल्लेख किया है वैसे ही रीति काल के कतिपय आचार्यों ने भी वात्सल्य रस-विषयक अपनी स्वीकृति प्रदर्शित की है।

रीति-काल के प्रथम आचार्य चिन्तामणि त्रिपाठी है। इन्होने रस वर्णन प्रसग मे अन्य रसो के साथ वात्सल्य रस का उल्लेख किया है और उसे पुत्र विषयक रति के अन्तर्गत समाविष्ट करके उसका उदाहरण भी दिया है।[3]

देव ने प्रेम के पाच प्रकारो का कथन करते हुए उसके अन्तर्गत वात्सल्य का परिगणन किया है।[4] भिखारीदास ने आचार्यों द्वारा अभिमत प्रेयान सौरय और भक्ति के साथ वात्सल्य के रसत्व की स्वीकृति का उल्लेख किया है।[5] शम्भुनाथ मिश्र ने अपनी रसतरंगिणी मे वात्सल्य और सख्य रसो का वर्णन किया है।[6] इसी प्रकार

---

१ काव्य शास्त्र का इतिहास पृ०, ४६ ८८

२ काव्य शास्त्र का इतिहास द्वितीय स० पृ० ३४

३ कविकुल कल्पतरु ८।२२२ सन १८७५ ई० का सस्करण

४ सानुराग सौहाद पुनि भक्ति और वात्सल्य।
प्रेम पाच विधि कहत हैं कारपन्य वक्तव्य॥
—देखो काव्यनिर्णय पृ० ६८

५ काव्य निर्णय पृ०, ६७ ६८

६ देखो हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, षष्ठ भाग पृष्ठ, ४०२
स० डा० नगेन्द्र

कुमारमणि भट्ट[1] ने अपने 'रसिक रसाल' ग्रन्थ में और प्रतापसाहि[2] ने अपने काव्य-विलास में परम्परा प्रथित नवरसों के अतिरिक्त वात्सल्य को दसवां रस स्वीकार किया है। अन्य आचार्यों के रस ग्रन्थों में वही नव रस-सम्बन्धी चर्वित चर्वण है।

इसी परम्परा में अंतिम आचार्य ब्रजेश कवि का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने आचार्य विश्वनाथ को अपना पूर्वज माना है और उन्हीं की भांति वात्सल्य रस को भी स्वीकार किया है। वात्सल्य रस की सांगोपांग विवेचना इन्होंने अपने रस रत्नाकर निर्णय नामक ग्रन्थ में की है।[3] परन्तु अनेक प्रयत्न करने पर भी इनके रस रत्नाकरनिर्णय की प्रति प्राप्त न हो सकी। अतः अधिक विवेचन सम्भव नहीं है।

निष्कर्ष यह है कि रीति काल के कुछ आचार्यों ने वात्सल्य रस विषयक अपनी मान्यता दी है। परन्तु उन्होंने वात्सल्य के रसत्व का कथन मात्र ही किया है। उसकी सांगोपांग पूर्ण प्रतिष्ठा किसी भी आचार्य को प्राप्त नहीं होती।

आधुनिक-काल में वात्सल्य रस का विवेचन विस्तार के साथ हुआ है। उसकी भाव मात्र के रूप में स्वीकृति अथवा अन्य रसों में अन्तर्भाव की स्थिति से आगे बढ़ कर रस रूप में स्वीकृति हुई। सांगोपांग विवेचना हुई। रस की कसौटी पर कसकर परख की गई और भेदोपभेद कथन सहित सोदाहरण प्रतिपादना की गई। कतिपय साहित्य मनीषियों के विचार जिन्होंने वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार किया है नीचे दिये जाते हैं।

आधुनिक काल के विद्वानों में से वात्सल्य के रसत्व की स्वीकृति सर्वप्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने की है। इन्होंने रस चौदह माने हैं और उनमें वात्सल्य का भी नाम है। भारतेन्दु ने जिन चौदह रसों को माना है वे इस प्रकार हैं—शृंगार हास्य करुण, रौद्र वीर भयानक अद्भुत वीभत्स शान्त भक्ति वा दास्य प्रेम वा माधुर्य सख्य वात्सल्य प्रमोद वा आनन्द।[4]

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध ने अपने रस कलस में वात्सल्य रस के पक्ष में सविस्तार कथन किया है। वात्सल्य को भाव मात्र मानने वाले अन्य रति आदि के अन्तर्गत मानने वाले और स्वतन्त्र रस रूप में स्वीकार करने वाले आचार्यों का मतोल्लेख करके उन्होंने स्वतः भी सबल शब्दों में वात्सल्य रस की मान्यता स्वीकार की है। इसके अतिरिक्त इन्होंने नवरसों में से हास्य और वीभत्स के साथ वात्सल्य की तुलना करके यह भी दिखाया है कि व्यापकता और सञ्चरणशीलता की दृष्टि से इन रसों से वात्सल्य रस श्रेष्ठ है क्योंकि इसकी स्थिति मानवेतर प्राणियों में भी पाई

१ देखो काव्य शास्त्र का इतिहास पृ० ११२
२ वही पृ० १७२
३ (अ) राजीवलोचन अग्निहोत्री के सौजन्य से सूचना प्राप्त हुई
(ब) देखो का० ना० का इतिहास पृ० २३६
४ देखो रस कलस पृ० १६६

जाती है।[1] काव्य प्रकाशकार के मतानुसार रसों के जो लक्षण होते हैं उन पर वात्स को कस कर अपने मत निर्देश करते हुए निम्नलिखित शब्द कहे हैं—'जो कसौ मैंने वात्सल्य रस के कसने की ग्रहण की थी मेरे विचार से उस पर कस जाने वात्सल्य रस पूरा उतरा।'[2] उन्होंने यह भी संकेत किया है कि हिन्दी भाषा विद्वानों ने प्राय वात्सल्य को रस रूप में स्वीकार नहीं किया। इसलिये जिन भारते आदि विद्वानों ने वात्सल्य को रस माना था है उनकी कविता में भी वात्सल्य रस अभिव्यक्ति उन्हें प्राप्त नहीं हो सकी।[3] हरिऔध की यह मान्यता असंगत ही सम क्योंकि भारतेन्दु के काव्य में वात्सल्य रस की कविताएँ हैं। इसका विवेचन आ चलकर किया जायेगा।

बिहारीलाल भट्ट ने वात्सल्य रस को स्वीकार किया है। उन्होंने यह निर्णय किया है कि भरत ने आठ रस माने थे पर कालान्तर में कवियों ने नवा शान्त भी माना। वे भक्ति के पांच विशिष्ट भाव—शृंगार वात्सल्य सख्य दा और शान्त के रसत्व का उल्लेख करके और उस नवीन भक्त्याचार्यों द्वारा मान्य क कर वात्सल्य को रस रूप में स्वीकृति करते हैं।[4]

कन्हैयालाल पोद्दार ने भी वात्सल्य को रस माना है। इनको उन विद्वा की मान्यता स्वीकार्य है जिनके अनुसार वात्सल्य रति के अंतर्गत एवं स्वतन्त्र रस ह इन्होंने वात्सल्य रस के उदाहरण भी दिये हैं।[5] साथ ही वत्सल भक्ति की शाम से भिन्नता भी स्वीकार की है।

गुलाबराय ने वात्सल्य की व्यापक पर्यालोचना की है। मुनीन्द्र सम्मत शृंग की परिभाषा देकर[7] वात्सल्य का रति से पार्थक्य भी स्वीकार किया है।[8] इन्ह वात्सल्य के स्थायीभाव की कोमलता और तन्मयता को अन्य रसों की भांति स्वीक करके जाति रक्षा और प्राणिमात्र में उसका सम्बन्ध मानकर रसत्व की स्वीकृति

१ रसकलश पृ० २१४

२ रसकलश पृ०, २१८

३ रसकलश पृ० २१५

४ साहित्य सागर प्रथम भाग पंचम तरंग पृ०, १६२

देखो—का० शा० का इतिहास पृ० २...

५ रसमंजरी पृ० २८२

६ रसमंजरी पृ० २८३

७ 'शृंग हि मन्मथोद्भेदस्तदागमन हेतुक

(अर्थात् शृंग मन्मथ या कामदेव को कहते हैं, उसके आगमन का कार शृंगार कहलाता है।)

देखो—सिद्धान्त और अध्ययन पृ० १...

८ सिद्धान्त और अध्ययन पृ०, १२२

है।[1] वात्सल्य की रस रूप में स्थिति इनको उसकी पवित्रता, प्रगाढ़ता एवं प्राबल्य के कारण और भी मान्य है।[2] इन्होंने वात्सल्य के स्थायीभाव आलम्बन, उद्दीपन अनुभाव और संचारी भावों का सोदाहरण स्पष्टीकरण करके वात्सल्य के रसत्व की पूर्ण प्रतिष्ठा की है।

पं० रामदहिन मिश्र भी वात्सल्य को रस मानते हैं। उन्होंने वात्सल्य में अन्य रस[3] और भावों[4] के समावेश का भी कथन किया है। माता के वात्सल्य पूर्ण हृदय के औन्नत्य को स्वीकार करते हुए वे यह भी कहते हैं कि माता के वात्सल्य भाव की वृद्धि गर्भस्थ शिशु की अभिवृद्धि के साथ साथ होती है।[5] ये वात्सल्य भाव की उत्कटता जाति रक्षा सामर्थ्य और आस्वाद के कारण साग्रह उसका रसत्व स्वीकार करते हैं।[6] प्राचीन आचार्यों के वात्सल्य विषयक मतों का उल्लेख करके वात्सल्य रस की सांगोपांग परिभाषा भी इन्होंने दी है।[7]

पं० हरिशंकर शर्मा ने पूर्ववर्ती आचार्यों और विद्वानों के वात्सल्य की मान्यता विषयक विचार अभिव्यक्त करके अपत्यानन्दानुभव की महत्ता को स्वीकार किया है।[8] कवियों द्वारा काव्यान्तर्गत वात्सल्य की अभिव्यक्ति का कथन करके वात्सल्य के रसत्व का स्वीकार किया है।[9] और उसके स्थायीभाव विभाव अनुभाव और संचारी आदि का उदाहरण सहित स्पष्ट किया है।[10] सामान्य रति से वात्सल्य का वैशिष्ट्य स्वीकार करके बल देकर वात्सल्य को रस परिणति के योग्य ठहराया है।[11] इन्होंने वात्सल्य भाव के आश्रयों को तीन वर्गों में विभाजित किया है—

(१) अपनी संतान के अलावा अन्य बच्चों को भी प्रेम करने वाले।
(२) अपनी संतान तक ही वात्सल्य की सीमा रखने वाले।
(३) अपनी संतान से भी कम प्रेम करने वाले[12]।

---

१ सिद्धान्त और अध्ययन पृ० १२२
२ नवरस पृ० ५४४
३ काव्यदर्पण पृ० २१८
४ वही पृ० २१७
५ वही पृ०, २१७
६ वही पृ० २१७
७ वही पृ० २१८
८ रसरत्नाकर पृ०, ६०७ ८
९ वही पृ० ६०८
१० वही पृ० ६०८
११ वही पृ०, ६०८ ९
१२ वही पृ० ६१० ११

तत्पश्चात् इन्होंने वात्सल्य के तीन प्रकारों का कथन किया है—

(१) अपत्य स्नेह।

(२) वात्सल्य भाव।

(३) स्व संतति प्रेम।[1]

अंत में वात्सल्य रस की परिभाषा, देवता, वर्ण, स्थायीभाव, आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव और संचारी भावों का कथन करके वात्सल्य रस का उदाहरण प्रस्तुत किया है।[2]

डा० नगेन्द्र ने भी वात्सल्य भाव के रसत्व को स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि वात्सल्य का सम्बन्ध पुत्रैषणा से है जिसके औन्नत्य की अवहेलना जीवन में सम्भव नहीं है। वात्सल्य के पोषण के लिए मानवृत्ति की व्यापकता को उन्होंने मनोविज्ञान सम्मत माना है। वात्सल्य के उत्कर्ष का स्पष्टतः स्वीकार करके उन्होंने थोड़े से शब्दों में ही वात्सल्य के रसत्व पर बहुत कुछ कह दिया है। एतत्सम्बन्धी उनके निम्न लिखित विचार द्रष्टव्य हैं— "परन्तु वात्सल्य को रस परिणति के अयोग्य मानना बहुत ज्यादती होगी। क्योंकि वात्सल्य भाव का सम्बन्ध तो जीवन की एक सर्व प्रधान एषणा पुत्रैषणा से है। विदेश के सभी मनोवैज्ञानिकों ने भी मातृवृत्ति को एक अत्यन्त मौलिक एवं प्रधान वृत्ति माना है। वात्सल्य मानव जीवन की एक बहुत बड़ी भूख है जो तीव्रता और प्रभाव की दृष्टि से केवल काम से ही न्यून कही जा सकती है।"[3]

वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार करने वाले आधुनिक विद्वानों में डा० मुंशी राम शर्मा मुख्य हैं। उन्होंने इस रस का विशेष रूप से प्रतिपादन किया है। उनकी सम्मति में सूरदास इस रस के प्रतिष्ठापक हैं।[4] इन्होंने वात्सल्य रस के दो भेद किये हैं—संयोग और वियोग। वियोग वात्सल्य के पुनः चार भेद किये हैं—

(१) प्रवास को जाते हुये

(२) प्रवास में स्थित

(३) प्रवास से आते हुए

(४) करुण विप्रलम्भ[5]

इन्होंने वात्सल्य रस के स्थायीभाव, आश्रय आलम्बन, उद्दीपन अनुभाव और संचारी भावों का भी स्पष्टीकरण किया है और सूर के काव्य में उनके उदाहरण

१ रस रत्नाकर पृ० ६११

२ वही पृ० ६११

३ रीति काव्य की भूमिका पृ०, ७२

४ सूर-सौरभ चतुर्थ संस्करण पृ०, २११

५ वही २११ १२

दिये हैं ।[1] बाल दशा, बाल छवि, (बाल विनोद) और मातृ आदि वात्सल्य रस के महत्त्वपूर्ण अंगों का सोदाहरण परिचय दिया है ।[2] वियोग वात्सल्य में वियोग की दस दशाओं अभिलाषा, चिन्ता, स्मरण, गुणकथन उद्वेग प्रलाप, व्याधि, जड़ता मूर्च्छा और मरण का उदाहरण सहित कथन किया है[3] । सारांश यह है कि इन्होंने वात्सल्य रस की सांगोपांग विवेचना करके वात्सल्य की रस परिणति के सम्बन्ध में सिद्ध किया है और स्पष्ट रूप से स्वतन्त्र उसका रसत्व स्वीकार किया है ।

पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र की सम्मति भी वात्सल्य को रस स्वीकार करने की है।[4] हिन्दी के और भी अनेक विद्वानों ने वात्सल्य को रस माना है । रामदहिन मिश्र[5], किशोरीदास वाजपेयी[6], लीलाधर गुप्त[7] और राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी[8] ने वात्सल्य के रसत्व की मान्यता पर अपने विचार अभिव्यक्त किये हैं । अब तो प्रायः सभी विद्वान् वात्सल्य को रस मानने के पक्ष में हैं । चाहे भक्ति में समन्वित करके स्वीकार करें[9] चाहे शृंगार में[10] पर निराकरण आजकल के विद्वानों ने नहीं किया ।

फलतः आज के संस्कृत और हिन्दी के प्रायः सभी कोष निर्माताओं ने वात्सल्य के अर्थ निर्देशन के समय यह भी अभिव्यक्त किया है कि यह कतिपय विद्वानों द्वारा मान्य दसवां रस है । उदाहरण के लिए वाचस्पत्य चिन्तामणि[11] हिन्दी शब्द सागर[12] प्रामाणिक हिन्दी कोश[13], वृहत् हिन्दी कोष[14] और साहित्य कोष[15] द्रष्टव्य हैं ।

निष्कर्ष यह है कि बीसवीं शताब्दी में लक्षण ग्रन्थ लिखने वाले हिन्दी के विद्वानों ने वात्सल्य को रस मानकर ही अन्य रसों के साथ संगृहीत किया है । और

---

१ सूर सौरभ चतुर्थ संस्करण पृ० २१२
२ वही २१६ २२१
३ वही २२६ ०
४ वाङ्मय विमर्श पृष्ठ, १२६
५ काव्यानुशासन की भूमिका पृ० ८८
६ माधुरी श्रावण १९८६ वि० पृ० ५
७ पाश्चात्य साहित्यालोचन पृ० ७८
८ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० १५४
९ सूर और उनका साहित्य पृ० २४४
१० पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ०, १५८
११ वाचस्पत्य चिन्तामणि पृ० १६३ ४८
१२ हिन्दी शब्दसागर पृ० ३११७ १८ ३०८३ ८४
१३ प्रमाणिक हिन्दी कोष पृ० ११४८ ४९
१४ वृहत् हिन्दी कोष पृ० ११३३
१५ साहित्य-कोष पृ० ७०७ ८

यह स्वाभाविक भी है। इनसे पहले सूर आदि वैष्णव कवियों का वात्सल्य प्रधान साहित्य बड़ी प्रचुर मात्रा में बन चुका था। इस विशाल और श्रेष्ठ साहित्य को आँखों से ओझल करना संभव नहीं था। कवियों ने वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति को अब और अधिक गौरव दिया।

उपर्युक्त हिन्दी विद्वानों के समान संस्कृत साहित्य के पारगत विद्वान डा० राघवन ने भी वात्सल्य भाव की रसनीयता महत्ता और व्यापकता स्वीकार की। इसके रसत्व को स्वीकार करने वाले प्राय सभी पूर्वाचार्यों का मतोल्लेख किया है। उसके भावत्व रसत्व अथवा अन्य रसों में अन्तर्भूतत्व विषयक विभिन्न मत भी दिये हैं। उन्होंने इन सभी बातों का समीचीन परीक्षण किया है। अन्त में साहित्य में वात्सल्य विषयक प्रसंगों की व्याप्ति का कथन करके वात्सल्य को रस में स्वीकार किया है। इस विषय में उनके निम्नलिखित विचार द्रष्टव्य है—

'साहित्य भी इस प्रकार के अनुरागों से भरपूर है। राम से वियुक्त होकर दशरथ ने प्राण त्याग दिये। यह उदाहरण इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि वात्सल्य एक प्रमुख भाव है यह रस की पुष्टि और आस्वादानुभूति कराने के योग्य है।'[1]

वात्सल्य रस का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

मानव जगन्नियन्ता की सर्वोत्कृष्ट सृष्टि है। उसका निर्माण कुछ इस प्रकार का है कि वह अपनी कुछ ऐसी आन्तरिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहता है जो सभी मानवों में समान रूप से पाई जाती है। इतना ही नहीं विकास क्रम के अनुसार मानव से मिलते जुलते पशुओं में भी साधारणत उनकी प्राप्ति देखी जाती है। इसी के आधार पर मनोविज्ञान-वेत्ताओं ने मूलप्रवृत्त्यात्मक सिद्धान्त निर्धारित किये हैं।[2]

मूल प्रवृत्तियों को मनोविज्ञानवेत्ताओं ने कई प्रकार से वर्गीकृत किया है। ड्रेवर और थार्नडाइक ने अपने अपने मतानुसार दो वर्गों में विभाजित किया है।[3] वुडवर्थ ने तीन विभाग किये है।[4] कर्क पैट्रिक ने मूल प्रवृत्तियों की संख्या पाँच

१ 'Literature is only too full of these types of attachments The instance of Dasaratha s death due to separation from Rama is ample proof for the existence of Vatsalya as a major mood fit to be developed and fit to be relished"

—The Number of Rasas Page 112.

२ Social Psychology by M c Dougall Page 406-7

मनोविज्ञान व शिक्षा पृ०, १३४

४ वही पृ० १३५

को इसका कारण बतलाया है[१] कुछ मन शास्त्री वृद्धावस्था मे अपत्य द्वारा की जाने वाली सेवा की कल्पना को इसका मूल कारण मानते हैं ।[२] कुछ भी हो मानव का मूलभूत स्वभाव है कि उसका मन अपने जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं के साथ आनन्दानुभव करता है और उनकी ओर एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया होती है जिसे हम स्नेह कहते हैं ।[3]

अपत्य एक ऐसी मूलभूत आवश्यकता है जिसकी इच्छा प्रत्येक दम्पति के हृदय मे रहती है ।[४] बल्कि यो कहा जाय तो और अच्छा है कि जितने भी स्नेह बन्धन हैं उनके भावी विकास के जीवाणु वात्सल्य मे समाहित रहते हैं ।[५] वात्सल्य स्नेह वश का आधार है ।[६] वस्तुत यह शुद्ध और निष्काम भाव है । नव विवाहिता दम्पति से ही इसका प्रारम्भ नही होता वरन विवाह से पहले और आजीवन अविवाहित लोगो मे भी इस भाव की वृद्धि देखी जाती है । बच्चे अपने खिलौना को प्यार करते हैं । उनका वस्त्र विन्यास, भोजन शयन और विवाह आदि तक बच्चे आपस के खेलो मे करते हैं । लडकियों म इस प्रकार की भावना प्राय अधिक होती है पर होती लडको मे भी है । ये सब वात्सल्य भाव के ही बीज हैं जो आगे चलकर अपने वास्तविक रूप मे प्रस्फुटित हो जाते हैं । इसकी व्यापकता मानवेतर प्राणियो मे भी है और बन्दरा की जाति इसका उत्कृष्ट उदाहरण है । बन्दर के बच्चे के मर जाने पर माँ तब तक उस मरे हुए बच्चे का हाथ से क्षण भर को भी अलग नही करती जब तक उसके दूसरा नही हो जाता । मनोवैज्ञानिको को भी यह बात मान्य है ।[७]

वात्सल्य भाव ऐसा भाव है जिसमे निष्काम रूप से आनन्द आता है । जिसके प्रति यह भाव पैदा होता है उनकी हमारे प्रति क्या भावना है इसकी भावक

१ See Social Psychology by M C Dougall, Page 60

२ —Do— „ „

३ 'Now it is a fundamental tendency of the mind to experience pleasure in connection with and generally to appreciate those objects which administer to or are associated with, the basic needs and requirements of the organism, i e the mind tends naturally to react towards these objects in a manner which at a higher level of development we should designate as love

—The Psycho Analytic Study of the family by Flugal P 185

४ Psycho Analysis To day Edited by Sandar Lorand P 117

५ Psycho Analytic Study of the family Page 8

६ The parental instinct is the foundation of the family'

—Social Psychology by M C Dougall Page 230

७ Social Psychology by M C Dougall Page, 58

कभी सोचता भी नहीं।[१] वात्सल्य में अन्य की भावना नहीं होती। जिसका हृदय वात्सल्य से ओत प्रोत होता है वे इसे अच्छी भाँति समझते हैं। वात्सल्य में गहन अनुभूति के विषय होते हैं अभिव्यक्ति के नहीं। जिसको उसका व्यक्तिगत अनुभव नहीं होता वह उसकी वास्तविकता को समझ नहीं सकता। वात्सल्य का सच्चा ज्ञान कराया नहीं। मेक्डूगल ने कहा है कि जिस प्रकार किसी वर्णान्ध को रंग का प्रत्यक्षानुभव नहीं कराया जा सकता उसी प्रकार बिना अनुभव के किसी व्यक्ति को वात्सल्य भाव के गुणों से अवगत नहीं कराया जा सकता।[२]

संतान से प्रिय संसार में और कुछ नहीं है। व्यक्ति संतान में अपनी ही आत्मा को देखता है। 'आत्मा वै जायते पुत्रः' इसी में कहा गया है। इसी से संतान को आत्मज कहते हैं। वात्सल्य की पराकाष्ठा होने से बच्चे की क्रमानुगत उन्नति और विकास में माता पिता को उतना ही आनन्द आता है जैसे कि उनकी अपनी स्वयं की अभिवृद्धि हो रही हो।[३] पिता संतान के प्रति व्यापक प्रेम (नार सिसिस्टिक लव) करता है क्योंकि अपने जीवन में जिन महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति वह नहीं कर सका उनकी पूर्ति संतान में देखना चाहता है।[४]

बच्चा अपने आप में भी हमारे स्नेह का पात्र है। उसका भोलापन सरलता सुकुमारता और दोषहीनता सबको अपनी ओर आकर्षित करता है। तुतली वाणी सुधा बरसाती है। उसके साथ रम कर सब अपने को भूल जाते हैं। बालक भगवान

---

१ Social Psychology by M C Dougall Page 61

२ 'Like the other primary emotions the tender emotion can not be described a person who had not experienced it could no more be made to understand its quality than a totally colour blind person can be made to understand the experience of colour—sensation

Social Psychology by M C Dougall Page 61

३ This factor consists of the process where by the parent identifies himself with his child as it were incorporates the child in to his larger self and is thus able to take pleasure in the increasing powers of the child as if they were his own

Flugel Psycho A Study of the family Page 168

४ The parent who seeks in his child the achievement of his own frustrated ambitions is expressing in his parental love a form of narcissistic love

—Psycho analysis and social work P 71

का रूप है। वह भगवान का जीता जागता खिलौना है।[1] यदि संसार इसी रूप मे बडा होकर भी रहे तो यह दुनिया स्वर्ग बन जाय।[2] बालक और बालक के गुणो की प्रशंसा बार बार की गई है और जितनी की जाय उतनी थोडी है। प० हरिभाऊ उपाध्याय ने तो यहाँ तक कहा है कि—"जिस घर म बालक नही जिसके जीवन मे बालक नही जो स्वयं जीवन म बालक नहीं, वह अभागा है, भगवान की कृपा से वंचित है।[3]

बालक वैसे तो सभी के स्नेह का पात्र है पर मनोविज्ञानवेत्ताओं ने वात्सल्य-भाव की मात्रा स्त्री म अधिक मानी है।[4] मग्डूगल ने तो यह भी माना है कि किसी किसी पुरुष म वात्सल्य भाव बिल्कुल भी नही होता।[5] परन्तु स्त्रियो मे एसी बात नही है। कुछ विद्वानों की राय म स्त्रियो म यह प्रवृत्ति इसलिए अधिक होती है क्योकि उनका ससर्ग बच्चे म अधिक रहता है और उनकी देखरेख की जिम्मेदारी उन्ही पर रहती है।[6]

माता वास्तव मे वात्सल्य भाव की अधिकारिणी भी है। स्त्री का गौरव उसके मातृत्व म ही है। इसी से सन्तान लाभ से वंचित स्त्रियाँ स्वत तो दुखी रहती ही है समाज म भी उनकी उपेक्षा रहती है। माता के मानस स जो दूध के रूप म ममता टपकती है उसके आनन्द का अनुमान कोई वात्सल्यमयी माता ही लगा सकती है। सावित्री देवी वर्मा ने लिखा है—'प्रत्येक माँ को अपने बच्चे को दूध पिलाने म एक स्वर्गीय आनन्द आता है। उसके रोम रोम से ममता फूट उठती है और इसी वात्सल्य प्रेम के आवेग से दूध बहने लगता है।'[7]

मा का हृदय अपनी सन्तान के प्रति कितना होता है यह सभी जानते है। माता बडा महिमाशाली शब्द है। यह वह शब्द है जिसम कु (कु+माता) नही लगता। माता कुमाता नही होती—यह अक्षरश सत्य है। यदि वह वात्सल्य की सर्वाधिक अधिकारिणी मानी जाय तो इसमें संशय ही क्या है ?

---

१ आपका मुन्ना द्वितीय भाग, प० १६८
२ बालक का भाव विकास पृ० २३
३ देखो—आपका मुन्ना द्वितीय भाग, प० २४
४ Psycho Analytic study of the family by Flugal Page 186
५ "This instinct and its emotion are in the main decidedly weaker in men than in women and in some men perhaps altogather lacking'

—Social Psychology P 59

६ मनोविज्ञान व शिक्षा प० १६
७ आपका मुन्ना प्रथम भाग पृ० २६

वात्सल्य भाव का विकास क्रम

जिस मूल प्रवृत्ति से वात्सल्य रस का सम्बन्ध है (पुत्र-कामना मूल प्रवृत्ति) वह ससार चक्र की धुरी है। यदि यह भाव न हो तो सृष्टि कैसे चले ? सृष्टि के सूक्ष्मतम और आदि जीव अमीबा से ही इसका प्रारम्भ होता है। अमीबा के स्वत ही दो टुकडे हो जाते हैं—एक स्त्री का और दूसरा पुरुष का, फिर उनके सयोग से आगे सृष्टि चलती है। काम भावना के पश्चात वात्सल्य भाव स्वाभाविक है। काम वृक्ष का फल वात्सल्य है। इसी से मानव इतिहास के विकास मे इसका बडा महत्त्व है।[1]

मानव सभ्यता के विकास मे वात्सल्य का बडा योग दान है। अपनी सन्तान तक ही यह भाव सीमित नही है। असहाय और दुखी व्यक्ति को देखकर, यदि हम वास्तव मे सभ्य व्यक्ति है तो सहायता के लिए दौडते हैं। मनोवैज्ञानिको का कहना है कि इस प्रकार के सहायता के भावो का उत्पन्न होना वात्सल्य भाव के ही अन्तर्गत है।[2] वस्तुत यह वात्सल्य भावनाओ का उन्नयन है जिससे अपनी सकुचित सीमाओ को त्याग कर व्यक्ति प्राणिमात्र के प्रति सहृदय और कर्त्तव्यनिष्ठ हो जाता है। इस भावना के उन्नयन के पश्चात ससार मे सभ्यता का चरम विकास देखा जा सकता है। जितना ही इसका शोधन होगा उतना ही मानव का विकास होगा। अपने चरम विकास पर व्यक्ति का हृदय शुद्ध होकर इतना उदार हो जायेगा कि उसमे विश्व बन्धुत्व की भावना स्वाभाविक रूप से आ जायगी। 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' यह कथन वात्सल्य भावनाओ के परिशोधित रूप को हृदयगम करने वाले व्यक्तियो के लिए सहज सभव हो सकता है।

ज्यो ज्यो सभ्यता का विकास होता जाता है त्यो त्यो भाव और विचारो का परिशोधन होता जाता है। यही बात वात्सल्य के विषय मे भी कही जा सकती है। जो व्यक्ति जितने कम सभ्य होगे उनमे वात्सल्य भावना तो होगी पर उसका परिशोधित रूप नही। जगली आदमी बच्चे की सुख सुविधा, भाव और विकास आदि की ओर इतना चिन्तित नही होता। सर्पिणी अपने बच्चो को क्षुधा निवृत्ति के लिए खा लेती है। दण्डी ने लिखा है कि धनक धान्यक और धन्यक अपनी सन्तानो को बच बच कर खा गये।[3] ये सब वात्सल्य भाव के अनुदात्तीकरण के उदाहरण हैं।

आधुनिक काल मे मानव सभ्यता अपनी उच्चता के बहुत ऊचे आसन पर है। इस समय वात्सल्य भावना का शोधन अच्छे रूप मे होता दिखलाई देता है। लोग देश और राष्ट्र की सकुचित सीमाओ से पर अन्तर्राष्ट्रीयता की पुकार करते

---

१ मनोविज्ञान व शिक्षा पृ० १६१
२ वही पृ० १६०
३ दशकुमार चरित उच्छ्वास ६ पृ० २१८

हैं। नाना भाँति के शान्ति स्थापित करने वाल सघ "वसुधैव कुटुम्बकम्" की ओर ले जाने के प्रयास हैं। उदाहरण के लिए प० नेहरू का पचशील-योजना तथा अन्याय शान्ति स्थापित करने वाले विचार वात्सल्य भावना के शोधन के प्रतिफल हैं। एक ओर 'चाचा नेहरू' के रूप म उनके विस्तृत वात्सल्य-मय हृदय का आप्लावन दश के बच्चो की ओर है दूसरी ओर वह भाव और परिशोधित होकर विश्व-बधुत्व की भावना के रूप मे प्रकट हो रहा है। महात्मा बुद्ध ईसा, मुहम्मद और गाधी के उदार हृदय को देखकर मनोवैज्ञानिक उनम वात्सल्य भावना के शोधन की पराकाष्ठा मानते हैं।[1]

पुत्र कामना मूल प्रवृत्ति का शोधन एक और रूप म भी होता है। जो व्यक्ति पुत्र की कामना नही करते वे अपना अभीष्ट जो कुछ और रखते हैं उसम ही उस शक्ति और प्रवृत्ति को लगा देते हैं। जिनके सन्तान नही होती वे गोद लेना चाहते हैं। कुत्ते बिल्लियाँ को पालते हैं या नाना भाँति के फूल पौधे लगा कर उन्हे सीचते हैं। यह वास्तव म वात्सल्य भाव ही हैं। इसम भी पाल्य पालक भाव है और फिर रूढे स रूढ व्यक्ति भी निष्पक्ष भाव से बच्चे के महत्त्व की अवहेलना नही कर सकते। जिन व्यक्तियो को अपनी परिस्थिति विशेष या मान्यता विशेष के कारण बच्चा की कम इच्छा या बिल्कुल इच्छा नही होती व भी दूसरे के बच्चा को घृणा की दृष्टि से नही देखते। उनका वात्सल्य भाव बालतर समाज म क्षमा, दया, सहायता देश प्रेम, देशोन्नति आदि के रूप म वात्सल्य भाव की परि शुद्धि का परिणाम होता है। निष्कर्षत हम कह सकते हैं कि वात्सल्य भाव बडा व्यापक है। सभी इससे प्रभावित है। आधुनिक युग म सभ्यता के विकास के साथ इस भाव का विकास होकर शोधित रूप देखने म आ रहा है। वात्सल्य भाव के मानदण्ड बदल भी सकते हैं पर भाव नही। उसकी व्यापकता सवत्र है और रहेगी।

---

१ मनोविज्ञान व शिक्षा, पृ० १६०

द्वितीय अध्याय

सस्कृत काव्य मे वर्णित वात्सल्य-रस

वात्सल्य एक उत्कट और सार्वजनीन सार्वकालिक भावना है। मानव आदि काल से ही न्यूनाधिक मात्रा म इस भावना से युक्त रहा है। काव्य म भी इसीलिए आदि काव्य स लेकर अब तक वात्सल्य वर्णन मिलता है। सस्कृत काव्य म वात्सल्य वर्णन का बाहुल्य तो नही कहा जा सकता परन्तु एक दम उसका अभाव भी नहा है। बहुत से काव्यकारो न अपनी कृतिया म वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति बडी अच्छी की है।

वाल्मीकि

वाल्मीकि आदि कवि हैं। उनकी रामायण आदि काव्य है। महर्षि वाल्मीकि के इस पुरातन ग्रन्थ म अनेक स्थला पर वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की गई है। दशरथ अपने गुरु और पुरोहिता के आगे पुत्र कामना करते हुए पुत्र सुख की प्राप्ति के लिए अश्वमेध यज्ञ करने की इच्छा प्रकट करते हैं।[1] विश्वामित्र जब यज्ञ रक्षार्थ राम का मागने क लिए दशरथ के पास आते हैं तो बड भाग्य स प्राप्त, पुत्र क वियोग के दुःख की कल्पना करके व मूच्छित होकर सिंहासन से गिर पडते हैं।[2] पचदश वर्षीय राम को भयकर राक्षसा से युद्ध करने के लिए देने मे उनका वात्सल्यपूर्ण हृदय विदीर्ण हो जाता है। वे पुत्र प्रम से कातर हुए अपने वचना को विस्मृत करके विश्वामित्र से कहने लगते है— हे मुनियो म श्रेष्ठ ! राम तो मेरे जीवन हैं तुम इन्हें ले मत जाओ। यदि रामचन्द्र को ल जाना ही चाहते हो तो चतुरगिणी सेना और मेरे सहित ले चलो। साठ हजार वर्ष के व्यतीत हो जाने पर बडे दुःखा के बाद पुत्र

---

१ मम लालप्यमानस्य पुत्राथ नास्ति व सुखम।
तदर्थं हयमेधेन यक्ष्यामीति मतिमम ॥

—वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड ८।८

२ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड १९।२३

उत्पन्न हुए हैं। राम पर मेरी चारो पुत्रों से अधिक प्रीति है इसे नही दे सकता।"[1]

इसी प्रकार रामवनगमन के समय कौशल्या पुत्र वियोग के दुख से बहुत दुखी होती है। वे अपने प्राणो से भी प्रिय राम को कैसे वन जाने दें? राम को सम्बोधित करते हुए वे अपने वात्सल्य भरित मानस से द्रवित हुई कहती हैं—हे चन्द्रमा के समान मुख वाले राम, तुम्हारे बिना मेरा जीवन अब है भी क्या? वह व्यर्थ है। और मैं तुम्हारे साथ ही वन को चली जाऊंगी जैसे पुत्र वात्सल्य से कातर बनी गाय बछड़े के पीछे चली जाती है।[2]

रामवनगमन के पश्चात जब सूत लौटकर आते हैं और सारा समाचार कौशल्या को सुनाते है तो पुत्र विरह से व्यथित कौशल्या के हृदयगत वात्सल्य की वाल्मीकि ने बड़ी ही मर्मस्पर्शी अभिव्यञ्जना की है—फिर भी सत्य बोलने वाले सारथी ने उन्हें रोका, फिर भी पुत्र के वियोग से कृश बनी कौशल्या विलाप से विरत नही हुईं हे प्रिय! हे पुत्र! हे राघव आदि कहती रही।[3]

उपर्युक्त वर्णन मे स्पष्ट है कि वाल्मीकि ने राम के संयोग वात्सल्य का वर्णन नही किया। उसका कारण यह है कि उन्होंने प्रौढ़ राम को ही लेकर कथा प्रारम्भ की है। राम के जन्म आदि की कथा उत्तर काल मे प्रक्षिप्त हुई बताई जाती है। इसी से प्रौढ़ राम के वियोग से सम्बद्ध ही स्थल देखने मे आते हैं। दूसरी बात यह है कि इस काव्य पर कवि के प्रकृतिगत भाव का गहरा प्रभाव पड़ा है। वाल्मीकि करुण भाव के कवि हैं। वाल्मीकि रामायण का यही मुख्य रस है। इसका प्रभाव वात्सल्य पर भी पड़ा है। उल्लास की साक्षात्-मूर्ति वात्सल्य रस करुण की छाया में वियोग वात्सल्य हो गया है।

---

१ जीवितु मुनिशार्दूल न राम नेतुमर्हसि।
यदि वा राघव ब्रह्मन्नेतुमिच्छसि सुव्रत॥
चतुरंगसमायुक्त मया च सहित नय।
षष्टिवर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक॥
दुःखेनोत्पादितश्चाय न राम नेतुमर्हसि।
चतुर्णामात्मजाना हि प्रीति परमिका मम॥ —वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड २०।८–११

२ अथापि किं जीवितमद्य मे वथा
त्वया विना चन्द्रनिभाननप्रभ।
अनुव्रजिष्यामि वन त्वयव गौ,
सुदुर्बला वत्समिवानुकाङ्क्षया॥ —अयोध्याकाण्ड २१।५४ ५५

३ तथापि सूत न सुयुक्तवादिना
निवार्यमाणा सुतशोककर्शिता।
न चैव देवी विरराम कूजितात्,
प्रियेति पुत्रेति च राघवेति॥ —अयोध्याकाण्ड ६०।२३

व्यास

महाभारत म अनक कथा उपाख्यानो मे प्रसगवश यत्र तत्र वात्सल्य की भी अभिव्यक्ति महर्षि व्यास न की है। जिस समय पाण्डु को ब्रह्मा जी के दशन को जाते हुए ऋषि महर्षि मिलते हैं तो उनसे अपनी पुत्र-कामना प्रकट करते हुए निस्सन्तानता म सतप्त होन क कारण हृदयादगार प्रकट करते हैं।[1] देवयानी को पुत्रवती देखकर शर्मिष्ठा पुत्र की उत्कट कामना करती है।[2] शकुन्तलोपाख्यान म शकुन्तला और दुष्यन्त के पारस्परिक वातालाप म शकुन्तला के मुख से वात्सल्य रस की अच्छी अभिव्यक्ति की गई है। वह पुत्र सुख का कथन करके दुष्यन्त को प्रबोधित करती हुई कहती है—दुष्यन्त समझो तो जब धरती की धूल मे लिपटा हुआ पुत्र पिता के अगो स लिपट जाता है तो उसके सुख से अधिक और कौन सुख होगा। लेकिन तुम तो स्वय प्राप्त हुए पुत्र को जो तुम्हे कटाक्ष स देख रहा है किसलिए तिरस्कार करते हो ?[3]

शकुन्तला की नाना भांति स पुत्र का महत्व प्रतिपादित करन वाली[4] और पुत्र के स्पश सुख आदि की विशेषता बतलाने वाली[5] और भी बहुत सी उक्तिया वात्सल्य रस से ओत प्रोत है।

इसी प्रकार वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति अन्यत्र भी द्रष्टव्य है। सत्यवती भीष्म से सम्मति लेकर विचित्रवीय की पत्नियो से सन्तानोत्पत्ति के लिए व्यास जी का चिन्तन करती है। व्यास जी सत्यवती के पराशर ऋषि क सम्बन्ध से उत्पन्न कन्या वस्था के पुत्र थ। अत चिरवियुक्त पुत्र व्यास को दखकर माता का चिरसचित वात्सल्य एकदम उमड पडता है। उसका वणन महाभारत म इस प्रकार आया है—अकस्मात ही बिना जाने क्षण भर मे ही कुरु पुत्र व्यास प्रकट हो गए। सत्यवती ने अपने पुत्र की विधिवत् पूजा की और उसका आलिंगन करके उमडते हुए स्तन्य से उसे अभिषिक्त कर दिया और चिरकाल के अनन्तर पुत्र को दखकर आंखो स

---

१ महाभारत, आदि पव ११६।१५-१७

२ वही आदि पव ८२।८ ६

३ प्रतिपद्य मन्गसूनुधरणी रेणु गुण्ठित ।
पितुराश्लिष्यनाऽङ् गानि किमस्त्यभ्यधिक तत ॥
सत्व स्वयमभिप्राप्त साभिलाषमिम सुतम ।
प्रेक्षमाण कटाक्षण किमथमवमन्यसे ॥

—आदि पव ७४।५३-५४

४ आदि पव ७४।३८ ३६ ४८

५ आदि पव ७४।५६ ५८

आनन्दाश्रु निकलने लगे।"[1]

यहाँ पर शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति है। स्तनस्राव जो नवाँ सात्विक भाव है और जिसकी निबंधना शुद्ध-वात्सल्य रस में ही होती है यह भी अभिव्यक्त किया गया है।

श्रीमद्भागवत

श्रीमद्भागवत भक्ति का ग्रन्थ है। ग्रन्थकार का लक्ष्य वात्सल्य वर्णन नहीं है। फिर भी प्रसंगवश वात्सल्य का वर्णन आया है, उसका विवरण यहाँ दिया गया है। श्रीमद्भागवत में दशम स्कन्ध में अध्याय ५ से २८ तक श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का वर्णन है। उसी में कुछ प्रसंग वात्सल्य के भी हैं। उनमें से श्रीकृष्ण के जन्म के समय का आनन्दोल्लास तथा उनकी और बलराम की बाल क्रीडा का चित्रण विशेषतः हुआ है।

श्रीकृष्ण के जन्म के समय वसुदेव और देवकी वात्सल्याभिभूत नहीं होते। वे उनके चतुर्भुज रूप को देखकर भक्तिभाव से श्रद्धान्वित और आश्चर्यचकित होते हैं। गोकुल में नन्द के घर इस रहस्य को कोई नहीं जानता है अतः वहाँ पुत्र प्राप्ति की प्रसन्नता का अनुभव करके आनन्दोत्सव मनाया गया है। उस समय नंद, यशोदा गोपी और गोप सभी प्रसन्न होते हैं। नंद जातकर्म संस्कार कराकर ब्राह्मणों को गौएं वस्त्र आदि अनेक प्रकार के दान देते हैं। लोग मंगलगान करते हैं और पुत्र को आशीर्वाद देते हैं। गाँव भर में स्वच्छता, सुगन्धि और सजावट की जाती है। गाँव वाले व्यक्ति सुसज्जित होकर तरह तरह की भेंट लेकर नन्द के घर आते हैं। गोपियाँ भेंट लेकर यशोदा के पास आती हैं मंगलगान करती हैं और शिशु को आशीर्वाद देती हैं। गोप आनन्द से भरपूर हुए एक दूसरे पर दधि, दूध, घी और पानी उड़लते हैं। सारांश यह है कि व्रज में सर्वत्र आनन्द और उल्लास छा जाता है।[2]

बाल क्रीडा करते हुए कृष्ण और बलराम दोनों सुशोभित होते हैं। यशोदा और रोहिणी दोनों ही अपने पुत्रों की क्रीडा को देखकर आनन्दित होती हैं। बाल क्रीडा के साथ साथ उनके स्वभाव की व्यंजना भी होती गई है। इसके साथ ही मातृ-मनोभावों और उनके सुखानुभवों का भी वर्णन हुआ है। दोनों बालकों की

---

१ प्रादुर्बभूवाविदितः क्षणेन कुरुनन्दन।
तस्मै पूजां ततः कृत्वा सुताय विधिपूर्वकम्॥
परिष्वज्य च बाहुभ्यां प्रस्रवैरभ्यषिचत।
मुमोच बाष्पं दाशेयी पुत्रं दृष्ट्वा चिरस्य तु॥

—आदि पर्व १०४।२५, २६

२ श्रीमद्भागवत १०।५।१ १८

बालक्रीडा का वर्णन करते हुए भागवतकार इस प्रकार लिखते हैं—

'दोनों भाई अपने नन्हे नन्हे पाँवों को गोकुल की कीचड़ में घसीटते हुए चलते। उस समय उनके पाँव और कमर के घुँघरू रुनझुन बजने लगते। वह शब्द बड़ा भला मालूम पड़ता। वे दोनों स्वयं वह ध्वनि सुनकर खिल उठते। कभी कभी वे रास्ते चलते किसी अज्ञात व्यक्ति के पीछे हो लेते। फिर जब देखते कि यह कोई दूसरा है, तब चक से रह जाते और डर कर अपनी माताओं—रोहिणी जी और यशोदा जी के पास लौट आते। माताएँ यह सब देखकर स्नेह से भर जाती। उनके स्तनों में दूध की धारा बहने लगती। जब उनके दोनों नन्हे-नन्हे से शिशु अपने शरीर में कीचड़ का अंगराग लगाकर लौटते तब उनकी सुन्दरता और भी बढ़ जाती। माताएँ उन्हें आते ही दोनों हाथों से गोद में लेकर हृदय से लगा लेतीं और स्तन पान कराने लगतीं। जब वे दूध पीने लगते और बीच बीच में मुस्करा मुस्करा कर अपनी माताओं की ओर देखने लगते तब उनकी मन्द मन्द मुस्कान, छोटी छोटी दँतुलियाँ और भोला भाला मुँह देखकर आनन्द के समुद्र में डूबने उतराने लगतीं।'[1]

बलराम और कृष्ण के बाल चापल्य के प्रसंग में उनके कौतुकों का भी वर्णन है। वे कभी किसी बछड़े की पूँछ पकड़ लेते और उसके पीछे घिसटते हुए चलते। कभी सींगों वाले पशुओं के पास तो कभी काटने वाले कुत्तों के पास दौड़ जाते। कभी किसी कुएँ या गड्ढे में गिरते गिरते बचते। माताएँ इससे अपना काम छोड़कर इनकी ओर आशंकित रहती।[2] कृष्ण की बहुत सी करतूतों को देखकर गोपियाँ उलाहने लेकर भी आती हैं। उनमें वे कृष्ण के बछड़ों को छोड़ देने, माखन चुराने और बन्दरों आदि को बाँटने बर्तन फोड़ने और छींके पर रखे हुए बर्तनों में छेद करके मक्खन गिरा देने आदि बातों की शिकायत करती हैं। यशोदा उलाहने सुनकर कृष्ण को धमकाती भी है। इस सम्बन्ध का एक प्रसंग अत्यन्त मार्मिक है। एक बार यशोदा ने कृष्ण को माखन चोरी करते हुए देख लिया। उन्होंने उन्हें दौड़कर

---

१ तावङ्घ्रियुग्ममनुकृष्य सरीसृपन्तौ
घोषप्रघोषरुचिरं व्रजकर्दमेषु।
तन्नादहृष्टमनसावनुसृत्य लोकं
मुग्धप्रभीतवदुपेयतुरन्ति मात्रोः॥
तन्मातरौ निजसुतौ घृणया स्नुवन्त्यौ
पङ्काङ्गरागरुचिरावुपगुह्य दोर्भ्याम्।
दत्त्वा स्तनं प्रपिबतोः स्म मुखं निरीक्ष्य
मुग्धस्मिताल्पदशनं ययतुः प्रमोदम्॥
—श्रीमद्भागवत १०।८।२२ २३

२ श्रीमद्भागवत १०।८।२४ २५

पकड़ लिया और हाथ में सांटी लेकर धमकाने लगी। उस समय बालक कृष्ण की मुद्रा अत्यन्त भावपूर्ण हो जाती है। वे माता के सामने भयभीत हो रहे हैं। इससे स्पष्ट हो रहा है कि उन्होंने अपराध किया है। आँखों में आंसू आ रहे हैं और उन्हें मलकर ऊपर की ओर देख रहे हैं मानो वे प्रकट करना चाहते हैं कि उन्होंने कुछ नहीं किया। जब माता ही पीटने को तैयार है तो फिर रक्षा कौन कर सकता है? इससे उनकी भयविह्वलता और भी अधिक बढ रही है। इस प्रकार भयभीत बालक का साक्षात चित्र आंखों के सामने उपस्थित हो जाता है। भागवतकार ने इसकी अभिव्यक्ति निम्नलिखित शब्दों में की है—"श्रीकृष्ण अपराध करने पर रोने लगे। अपनी काजल वाली आंखों को हाथों से मलने और भयविह्वल होकर माता यशोदा की ओर देखने लगे। यशोदा ने उन्हें पकड़ कर रस्सी से बांध दिया।"[1]

परन्तु शीघ्र ही यशोदा अपने पुत्र की भयविह्वल आकृति को देखकर द्रवित हो जाती हैं। वे जान लेती हैं कि उनका पुत्र अब बहुत डर गया है। बस उनका वात्सल्य उमड़ पड़ता है। वात्सल्यातिरेक के कारण वे सब कुछ भूल जाती हैं और छड़ी को फेंक देती हैं।[2]

इसी प्रकार और भी प्रसंग हैं जिनमें कृष्ण के प्रति यशोदा के वात्सल्य का वर्णन किया गया है जैसे खेलते हुए बहुत देर हो जाने पर बुलाते समय अनेक उत्पातों से उबरते समय गोवर्धन धारण करते समय और दावानल आदि से व्रज की रक्षा करते समय।

संयोगसुख के अतिरिक्त कृष्ण के प्रति वियोग वर्णन भी हुआ है। वह दो अवसरों पर हुआ है—कृष्ण के कालीदह में कूद पड़ने पर और कृष्ण का मथुरा से संदेश लेकर उद्धव के आगमन पर। इन प्रसंगों में नन्द और यशोदा के पुत्र वियोग से व्यथित होने का संक्षिप्त कथन है। कृष्ण के कालीदह में कूद पड़ने पर यशोदा अतीव व्यथित होती हैं। उनका मानस अनिष्ट की आशंका से अभिभूत हो जाता है और वे करुणाक्रन्दन करने लगती हैं। बचन होकर वे स्वयं भी जल में कूदने को उद्यत हो जाती हैं। श्रीमद्भागवत में कृष्ण के मथुरा जाने के समय नन्द और यशोदा की वियोग-वात्सल्य से व्यथित दशा का चित्रण नहीं है। हाँ उद्धव जब उनका संदेश लेकर गोकुल आते हैं तब नन्द और यशोदा दोनों ही व्यथित होते हैं। कभी

---

१ कृतागसं तं प्ररुदन्तमक्षिणी
कषन्तमञ्जन्मषिणी स्वपाणिना।
उद्वीक्षमाणं भयविह्वलेक्षणं
हस्ते गृहीत्वा भिषयन्त्यवागुरत्॥

—श्रीमद्भागवत १०।९।११

२ श्रीमद्भागवत १०।९।१२

न द उद्धव से कृष्ण के विषय म अनेक बातें पूछने लगते हैं और कभी यगान। दोनो को कृष्ण क बाल्य जीवन की स्मृति आ जाती है और उनक चरितो का स्मरण उनको और भी अधिक वियोगाभिभूत कर देता है।[1] कृष्ण क वियाग का इन दोनो प्रसगो पर सक्षप म ही कथन है।

श्रीमद्भागवत म कृष्ण क बाल चरित का वात्सल्यमय वर्णन प्रासगिक रूप से हुआ है। भागवतकार दर्शन का पडित है। उसका मन भक्ति का दर्शन उपस्थित करने म अधिक तल्लीन है। इसी स इसने बहुत से स्थल भक्ति क हैं। कृष्ण के बाल जीवन का वर्णन करते समय भी भागवतकार को उनकी वीरता और ईश्वरता दिखलाने का बहुत ध्यान रहता है। इसलिए ये प्रसग वत्सल भक्ति की कोटि म ही आते हैं। परन्तु यह वर्णन वात्सल्य वर्णन की परम्परा का एक महत्वपूर्ण अग है। श्रीमद्भागवत के इन थोड़े से स्थल को लेकर ही सूर न उसका इतना विस्तार और रसात्मकता प्रदान की है।

बाणभट्ट

हर्षचरित—'हर्षचरित बाणभट्ट की पहली कृति है। इस ग्रन्थ म वात्सल्य वर्णन के स्थल बहुत कम हैं। फिर भी एकाध स्थल पर इस प्रकार का वर्णन हुआ है और वह प्रभाकरवर्धन का अपने पुत्र 'हर्ष' के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य का उदाहरण है। ज्वर-पीडित भूपाल जिस समय दूर से आये हुए हर्ष को देखते हैं तो वात्सल्यातिरेक स ज्वर पीडा को विस्मृत करके उठने लगते हैं। व हर्ष को छाती से लगा लेते हैं। उस समय उन्हे ऐसा आनन्द आता है मानो अमृत के सरोवर म स्नान कर रहे हो।[2] उनकी उस समय की दशा का जो वर्णन बाण ने किया है वह वात्सल्य रस से सराबोर है किसी बडे हरिचन्दन के रस के पियाले मे मानो उसने स्नान कर लिया। तुषाराद्रि के द्राव से मानो उसका अभिषेक हो गया। अपने अगो को हर्ष के अगो से रगडता हुआ, कपोलो से कपोलो को रगडता हुआ आँसुओ से भीगे पलको वाले नेत्रो को बन्द करता हुआ अपने ज्वर के वेग को भूल कर राज्यवर्धन हर्ष का बहुत देर तक आलिंगन करता रहा।[3]

पिता अपने पुत्र को प्राप्त करके अपनी चिन्ता नही करता। ज्वराक्रान्त हुआ भी अपनी दशा को तो भूल जाता है और 'वत्स कृशोऽसि' कह कर पुत्र क सुख के

---

१ श्रीमद्भागवत १०।४६।२७ २८

२ हर्ष चरित ५।१६६ पृ० ४६२

३ स्नात इव महति हरिचन्दन रस प्रसवणे अभिषिच्यमान इव तुषाराद्रि द्रवेण पीडयन अगे अगानि कपोलेन कपोलम अवघट्टयन, निमीलयन पक्ष्माग्रग्रथिता जलासविसाविणी विलोचने विस्मृत ज्वर सज्वर सुचिर आलिलिंग।
—हर्ष चरित ५।१६६, पृ० ४६२ ६३

लिए चिंतित होता है। यहाँ पर बाण ने पिता के हृदय की बहुत श्रेष्ठ अभिव्यक्ति की है।

कादम्बरी—कादम्बरी' बाण की उत्कृष्ट रचना है। इसमें बाण का वर्णन नपुण्य प्रतिविम्बित है। जिस विषय का ग्रहण लिया है उसको विस्तार के साथ लिखा है। 'कादम्बरी' में वात्सल्याभिव्यक्तिपूर्ण भी अनेक स्थल हैं और उनकी अभिव्यक्ति भी विस्तार के साथ की गई है। प्रारम्भ में तारापीड और विलासवती के सम्वाद में तारापीड अत्यन्त मार्मिक ढंग से अनपत्यता से दुःख की विशद अभिव्यंजना करता है। गर्भस्थ शिशु से लेकर युवराज होने तक की पुत्र की सभी अवस्थाओं का सुखानुभव करने की राजा की उत्कट अभिलाषा है। पुत्रैषणा का ऐसी छटपटाहट वाला इतना मार्मिक वर्णन संस्कृत और हिन्दी साहित्य में किसी ने भी नहीं किया। राजा विलासवती से कहता है—"देवि प्रफुल्ल गर्भ के भार से मन्द हुई, फीके मुखवाली और जिसमें पूर्ण चन्द्र उदय होने को हो ऐसी पूनो की रात्रि के समान तुमको मैं कब देखूंगा ? पुत्र-जन्म के महोत्सव के आनन्द में मग्न हुए मेरे परिजन कब मुझसे पूर्णपात्र ले जायेंगे ? उदय हुए सूर्य मंडल से युक्त, बालातप से प्रकाशित आकाश के समान पीले वस्त्र पहन कर पुत्र को गोद में लिए तुमको मैं देख कर कब आनन्दित हूंगा ? सर्वौषधि लगाने के कारण जिसके बाल उलझ गये हों, जिसके तालु पर मन्त्रित किये हुए घी की बूंदें डाल कर फिर उस पर सरसों मिली हुई थोड़ी सी विभूति डाली हो जिसके कंठ सूत्र की गांठ गोरोचन से रंगी गई हो जो चित्त सोता हो और बिना दांत के मुंह से मन्द-मन्द मुस्कुराता हो ऐसा पुत्र कब मेरे हृदय को प्रसन्न करेगा ? गोरोचन के समान पीली कान्तिवाला, रनवास में एक से दूसरी के हाथ में बारबार जाता और सब जनों से वंदित मंगल प्रदीप के समान, पुत्र कब मेरे नेत्रों के शोकान्धकार को मिटावेगा ? धरती की धूल के लग जाने से मटियाला होकर वह कब मेरे हृदय और दृष्टि के साथ ही घूमता घूमता महल के आंगना को शोभायमान करेगा ? घुटनों के बल चलने के योग्य होने पर वह कब स्फटिक मणि की दीवारों में से दीखते पालतू हिरनों के बच्चों को पकड़ने की इच्छा से सिंह के बच्चे के समान इधर उधर दौड़ेगा ? रनवास की स्त्रियों के पायजेबों की झनझनाहट का अनुसरण करते पालतू कलहंसों के पीछे एक से दूसरी बगल में दौड़ कर सोने की तागड़ी के बोरों के शब्द के पीछे भागती अपनी धात्री को वह कब कष्ट देगा ? काले अगरु की रेखाओं से शोभित गंडस्थलवाला, धात्री के मुख से निकली हुई डमरू की सी आवाज से प्रीति करता, हाथ ऊपर उठा कर उछाले गये चन्दन के बुरादे से धूसर हुआ, धात्री के—अपनी उंगलियों को मोड़ कर—आगे पीछे चलाने पर सिर कंपा कर वह कब लीला दिखावेगा ? माता के चरण रंगने से बची हुई महावर को वह कब बूढ़े कंचुकी के मुंह से चुपड़ेगा ? कुतूहल से चंचल नेत्रों वाला वह मणि भूमि की ओर दृष्टि करके ठोकर खाता

विलासवती घोर अनिष्ट की आशंका से व्यथित होकर जो विलाप करती है वाण ने उसका भी चित्रण बड़ा, मार्मिक किया है। माँ के स्तनों से दूध बह रहा है और वह बार-बार बेटा-बेटा कहती हुई चन्द्रापीड से कह रही है—

'पुत्र चन्द्रापीड तुम स्नेह के कारण ही इतनी दूर आये अपने पिता के पास जाकर उनके चरणों को प्रणाम कर अथवा जिस तरह तुमको सुख हो उस तरह रह। इस विषय में हम कुछ नहीं कहना चाहते।

इस प्रकार अति प्रलाप करती-करती पास जाकर बार-बार उसके अंग का गाढ़ आलिंगन कर, सिर सूंघकर गालों का चुम्बन कर उसके चरण मस्तक पर रख कर सिसक सिसक कर रोने लगी।'[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि बाणभट्ट ने कादम्बरी में वात्सल्य की जो अभिव्यक्ति की है वह महत्वपूर्ण है। उसमें विस्तार भी है। रस परिपाक भी है। इस कोटि के साहित्य को देखकर यदि वात्सल्य को रस परिणति के योग्य ठहराने का समर्थन किया जाय तो इसमें अत्युक्ति ही क्या है? और फिर सातवीं शताब्दी का ऐसा परिपक्व वर्णन देखकर लगता है कि वात्सल्य के महत्त्व को प्राचीन कवि और आचार्यों ने अवश्य स्वीकार किया होगा। यद्यपि उन प्राचीन विद्वानों का कोई तथ्य इस समय सुलभ नहीं है। पर इस वर्णन को देखकर इस प्रकार अनुमान लगाने में कोई अनौचित्य नहीं है।

दण्डी

दण्डी के गद्य-काव्य 'दशकुमार चरितम्' में नाना भाँति के वर्णनों के प्रसंग में कुछ प्रसंग वात्सल्य की अभिव्यक्ति के भी मिल जाते हैं। अर्थपाल जब आप बीती राजवाहन को सुनाते हैं तो उस समय का वर्णन करते हैं जबकि उन्होंने अपने पिताजी का साँप के काटे का विष उतार दिया था और उनकी माता ने अपने चिर वियुक्त पुत्र (अर्थपाल) को प्राप्त करके अपना वात्सल्य प्रदर्शित किया था। अर्थपाल के मुख से स्वानुभूत वात्सल्य की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार कराई है—'माता ने मेरा बार बार आलिंगन किया। वात्सल्य प्रेम के कारण उसके स्तनों से दूध निकल रहा था। हर्ष के अश्रु टपक रहे थे और उसमें उनकी वाणी गदगद हो रही थी। वे बोलीं— पुत्र मुझ पापिन ने तो तुमको जन्मते ही छोड़ दिया था। मैं अत्यन्त घृणित हूँ मुझे तुमने क्या सहारा दिया आ! इधर आ! तुझे छाती से लगा लूं।' "ऐसा

---

१ पुत्र चन्द्रापीड प्रणय तावत्प्रत्युदगम्य त्वत्स्नेहादवातिदूरमागतस्यापि पितुः पादौ अथवा यथा ते सुखं तिष्ठ वयमुदासीनहृदया त्वयि इति वृत्तान्त प्रलापा मनुपसृत्य पुनः पुनर्गाढमालिग्याघ्राय शिरः समाघ्राय कपोलौ चुम्बित्वा चन्द्रापीडस्य चरणौ वृत्तमाग कृत्वो मुक्त कण्ठमरोदीत।

—कादम्बरी, पृ० ६६८

कहकर बार बार सिर को सूँघा और गोदी में खिंच लिया। वात्सल्यवती का बुरा हाल था वह रो रही थी। मेरा आलिंगन करती रही और प्रेमाश्रुओं से मुझे भिगाती रही। उसका शरीर काँप रहा था और उसकी दशा अवर्णनीय हो रही थी मानो पुत्र मिलन रूपी पुनर्जीवन को प्राप्त हुई हो।''[1]

इसी प्रकार जब प्रमति राजवाहन को अपनी बीती सुनाते हैं, तो अकस्मात अपनी चिर वियुक्ता माता से मिलने का वृत्तान्त बतलाते हैं। उनकी माँ जब उनको अपने पुत्र के रूप में पहचान लेती है तब वात्सल्यातिरेक के कारण उसकी जो दशा होती है उसका प्रमति इस प्रकार कथन करते हैं—

मैंने उसे प्रणाम किया। उसकी प्रसन्नता के मारे बार बार काँपने लगी और मुझे उठाकर अपने पुत्र की तरह छाती से लगा लिया। सिर को सूँघा। उसके दोनों स्तनों से दूध की धारा इस प्रकार बहने लगी मानो वात्सल्य रस ही प्रवाहित हो रहा हो। उसकी आँखों से अश्रु बहने लगे और गला भर आया। स्नेह से गद्गद हुई वह बोली— वत्स! मैंने हाथ जोड़े। उसने मुझे बार बार छाती से लगाया, सिर पर हाथ फेरा, गालों को चूमा और वात्सल्य-स्नेह के मारे कातर सी हो गई।[2]

कालिदास

संस्कृत के सर्वोत्कृष्ट कवि कालिदास ने भी अपनी काव्य-कृतियों में वात्सल्य की अभिव्यंजना की है। उनके लगभग सभी ग्रन्थों में न्यूनाधिक मात्रा में वात्सल्य रस का वर्णन मिलता है। वह इस प्रकार है—

रघुवंश—रघुवंश में राजा दिलीप का रघु के प्रति वात्सल्य प्रेम प्रदर्शित कराया गया है। दिलीप के जब सन्तान नहीं होती है तो संतति कामना से प्रेरित हुए वे सपत्नीक गुरु वशिष्ठ के आश्रम में जाते हैं और उनके समक्ष बड़े मार्मिक शब्दों में पुत्रैषणा की अभिव्यक्ति करते हैं।[3] जब उनको पुत्र की प्राप्ति हो जाती है तो

---

१ 'मा च मुहुर्मुहुः प्रस्नुतस्तनी परिष्वज्य सहर्षबाष्पगद्गदमगदत —पुत्र! यो सि जात मात्र पापया मया परित्यक्त, स किमथमेव मामतिनिघृणामनुगृह्णासि एहि परिपरिष्वजस्व ' इति भूयोभूय शिरसि जिघ्रन्त्यङ्कमारोपयन्तीस्तारवली गृह्णन्त्यालिंगन्त्यश्रुभिरभिषिञ्चन्ती चोत्कम्पिताग यष्टिरत्यादर्णीय क्षणम जनिष्ट।
—दशकुमार चरित उच्छ्वास ४ पृ० १८३ ८४

२ "प्रणिपतन्त मा प्रहर्षोत्कम्पितेन भुजलताद्वयेनोत्थाप्य पुत्रवत्परिष्वज्य शिर स्युपाघ्राय वात्सल्यमिव स्तनयुगलेन स्तन्यच्छलात्प्रक्षरन्ता शिशिरेणाश्रुणा निरुद्धकण्ठी स्नेह गद्गद व्याहार्षीत—' वत्स! ' इति प्राजलि मा भूयोभय परिष्वज्य शिरस्युपाघ्राय कपोलयोश्चुम्बित्वा स्नेहविह्वला गतासीत्।'
—दशकुमार चरित, उच्छ्वास ५, पृ० १९७ ९९

३ रघुवंश १।६५ ७१

असीम सुख का अनुभव करते हैं।[1] कवि ने राजा के सुखानुभव का नाना भाँति से वर्णन किया है। पुत्र-स्पर्श सुख का वर्णन करते हुए व राजा के आनन्द के विषय मे इस प्रकार की अभिव्यक्ति करते हैं—'शरीर के योग से उत्पन्न होने वाले सुखों द्वारा अपनी त्वगिन्द्रिय पर अमृत सा सींचते हुए उस रघु को दिलीप ने गोद मे बिठा लिया और आनन्दातिरेक से नेत्र बन्द करके पुत्र के स्पर्श रस का आस्वादन किया।[2]"

रघु की शिशु क्रीडा राजा को और भी अधिक आनन्दवर्द्धक प्रतीत होती है। उसकी बाल सुलभ क्रीडाओं की अभिव्यक्ति वात्सल्य रस से ओत प्रोत है। इसका चित्रण करते हुए कवि ने लिखा है—

"वह बालक रघु धाय के कहे हुए वचनों को तुरन्त कह देता था। उसकी उँगली पकडकर चलता था और प्रणाम करने को कहते ही नम्र हो जाता था। इससे पिता दिलीप के आनन्द को परिवर्धित करता था।"[3]

शाकुन्तलम—शाकुन्तलम् मे वात्सल्य वर्णन के दो स्थल हैं। प्रथम तो शकुन्तला के प्रति कण्व का पुत्री प्रेम प्रदर्शित किया गया है। और दूसरे दुष्यन्त का सर्वदमन के प्रति। शाकुन्तलम के चतुर्थ अङ्क के प्रसिद्ध चार श्लोकों मे से एक श्लोक वात्सल्य रस से युक्त है। जिस समय शकुन्तला कण्व के आश्रम से दुष्यन्त के पास जा रही है उस समय चिरलालिता पुत्री के विरह से कण्व अत्यन्त कातर हो जाते हैं। उनके वात्सल्य वरिष्ट मानस के उद्गार अत्यन्त स्वाभाविक, मार्मिक और प्रतिविशिष्ट हैं—'आज शकुन्तला जाएगी यह जानकर हृदय को उत्कण्ठा ने छू लिया है। कंठ वाष्प के द्वारा रुँध गया है। दृष्टि चिन्ता के द्वारा जडीभूत हो गई है। स्नेह के कारण अरण्य में रहने वाले मुझ जैसे तपस्वी को भी यदि इतनी

---

१. रघुवंश ३।१७

२ तनकमाराप्य शरीर योगजै।
मुखैर्निषिञ्चन्निवामृतं त्वचि॥
उपान्त सम्मीलित लोचनो नृप।
चिरात् सुतस्पर्शरसज्ञतां ययौ॥
—रघुवंश ३।२६

३ यदाह धात्र्या प्रथमोदितं वचो।
ययौ तदीयामवलम्ब्य चाङ्गुलीम्॥
अभूच्च नम्र प्रणिपात शिक्षया।
पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः॥
—रघुवंश

व्याकुलता है तो गृहस्थी लोग नये नये पुत्रियों के वियोगों से क्या न पीड़ित होते होंगे।"[१]

इस स्थान पर यह द्रष्टव्य है कि बाबू गुलाबराय ने अपने 'नवरस' नामक ग्रन्थ में उपयुक्त श्लोक को उद्धृत करके उसमें करुण रस बतलाया है।[२] हमारा उनसे मतभेद है। क्योंकि यह वियोग वात्सल्य की श्रेणी में आएगा। कारण स्पष्ट है। करुण रस तो तब हो सकता था जब कि शकुन्तला के मिलन की भविष्य में कण्व को कभी आशा ही नहीं रहती। परन्तु ऐसी बात नहीं है। शकुन्तला कण्व से पूछती है कि पिता जी मैं इस आश्रम को फिर कब देखूँगी (तात ! कदा नु खलु भूयस्तपोवनं प्रेक्षिष्ये ?)[३] कण्व उसे बतलाते हुए कहते हैं—

भूत्वा चिराय चतुरन्त महीसपत्नी।
दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य॥
भर्त्रा तदर्पित कुटुम्ब भरेण साधं।
शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्॥[४]

अर्थात् तुम बहुत दिनों तक चतुरन्त पृथ्वी का राज्य करके और बाद में अपने पुत्र को, जो एक छत्र सम्राट होगा सिंहासन पर बिठाकर उस राज्य का समस्त भार सौंप कर अपने पति के साथ इस शान्त आश्रम में फिर आओगी।

अतः शकुन्तला के पुनर्मिलन की आशा स्पष्ट है फलतः यहाँ पर करुण रस न होकर वियोग वात्सल्य ही जानना चाहिए।

शाकुन्तलम् में शकुन्तला के प्रति अन्यान्य भाँति से भी कण्व के वात्सल्यपूर्ण हृदय की अभिव्यक्ति हुई है। कण्व अपनी पुत्री के स्नेह के कारण दुष्यन्त को शिष्यों द्वारा संदेश भिजवाते हैं कि आप ऊँचे कुल के हैं। हमारी इस कन्या को स्वीकार करना। हमारे पास है ही क्या ? केवल संयम मात्र ही धन हम रखते हैं।[५] फिर शकुन्तला को भी समझाते हैं कि वहाँ बड़ों की सेवा करना सपत्नियों का सखी

---

१ यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया,
कण्ठः स्तम्भित वाष्प वृत्ति कलुषश्चिन्ता जडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकस
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखनवैः॥
—अभिज्ञान शाकुन्तलम् ४।८

२ नवरस, पृ० ४५१

३ अभिज्ञान शाकुन्तलम् अंक ४ पृ० २२४

४ अभिज्ञान शाकुन्तलम् ४।२०

५ अभिज्ञान शाकुन्तलम् ४।१७

के समान समझना स्वामी के नाराज होने पर भी उसके विपरीत व्यवहार न करना आदि।[1]

शाकुंतलम् के सातवें अंक म दुष्यन्त कश्यप के आश्रम मे बालक सर्वदमन को क्रीडारत देखते हैं। उसे देखकर उनका स्वाभाविक रूप से हृदय उसकी ओर आकर्षित हो जाता है और वह सोचते हैं कि इस बालक की ओर मेरा सगे पुत्र की तरह मन आकर्षित होता है। इसका कारण यह है कि मेरे सन्तान न होने से ऐसा स्नेह इसस कर रहा हूँ।[2] अपत्य हीनता की स्मृति उन्हे व्यथित बना देती है। उन्हें बच्चे की चचलता से ईर्ष्या होती है क्योंकि उनके पुत्र न होने से उन्होने उसका अनुभव नही किया। वे निश्वास लेते हैं। कवि ने दुष्यन्त के सोच्छ्वास कथन मे अनपत्यता का हृदय को छूने वाला चित्र प्रस्तुत किया है—

'बिना कारण के ही हँस पडने से जिनके दाँत कुछ कुछ दिखाई पड जाते हैं जिनकी वाणी तुतलाने के कारण विशेष रमणीय लगती है और जो गोद मे बैठने के विशेष इच्छुक होते हैं। ऐसे पुत्रों को गोद में उठाने वाले माता पिता धन्य हैं जो बच्चों की धूल से धूसरित हो जाते हैं।[3]

सर्वदमन की बाल क्रीडा मे उनकी अनपत्यता के भाव और भी उद्दीप्त हो जाते हैं और वे कहते हैं—

"यह किसी के वंश का अंकुर है और मेरे अंगों मे स्पर्श मात्र से इसने इतना सुख दिया फिर यह उसके चित्त मे कितना भरता होगा जिसकी गोद से यह बढा है।"[4]

यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है और वह यह है कि कालिदास ने अपने अन्य भावों की तरह मनुष्य पशु पक्षी और वनस्पति आदि समस्त जड चेतन प्रकृति मे

१ अभिज्ञान शाकुंतलम् ४।१८

२ किं न खलु बाले स्मिन् औरस इव पुत्रे स्निह्यति मे हृदयम् नूनम् अनपत्यता मा वत्सलयति। —अभिज्ञान शाकुन्तलम् अंक ७, पृ० १७७

३ आलक्ष्यदन्त मुकुलाननिमित्त हासै,
रव्यक्त वर्ण रमणीय वच प्रवृत्तीन्।
अकाश्रयप्रणयिनस्तनयान्वहन्तो
धन्या स्तदगरजसा कलुषी भवन्ति॥
—अभिज्ञान शाकुन्तलम् ७।१७

४ अनेन कस्यापि कुलाकुरेण
स्पृष्टस्य गात्रेषु सुख ममैवम्।
का निर्वृत्ति चेतसि तस्य कुर्याद्
यस्यायमगात् कृतिन प्ररूढ॥
—अभिज्ञान शाकुन्तलम् ७।१९

वात्सल्य रस का व्यापक स्पन्दन अभिव्यक्त किया है। अभिज्ञान शाकुन्तलम से इसके उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते है। शकुन्तला जब वृक्षो को जल से सींच रही है तो कहती है कि इनमे मेरा आत्मीय प्रेम है।[1] मृग को शकुन्तला ने पुत्र की तरह पाला था। कण्व भी अपनी पुत्री शकुन्तला की तरह ही मालती लता को भी वात्सल्य प्रेम करते हैं। और जब शकुन्तला जाती है तो कहते हैं कि तुमने अपने पुण्यो से अपने योग्य स्वामी को पा लिया और मालती लता आम के साथ लिपट गई है इस तरह तुम दोनो से ही मैं निश्चिन्त हो गया।[2] कण्व के लिए दोनो मे कोई भेद नहीं है कालिदास की ऐसी अभिव्यक्ति से वात्सल्य भाव की व्यापकता सिद्ध होती है।

कुमारसम्भव—जिस समय मेना और हिमालय के यहा पार्वती का जन्म होता है तो वे बड़े सुख का अनुभव करते हैं। पार्वती जब कुछ बड़ी होती है तो कवि ने उसके बालिका सुलभ क्रीडाओ म रत होने का वर्णन किया है—

यह पार्वती मन्दाकिनी नदी की बालू से बनी वेदियो पर गेंदो से और अपने हाथ की बनी गुडियो से सहेलियो के बीच म खेल खेलकर बाल्य क्रीडा का रस लेती थी।[3]

इसी ग्रन्थ मे और अच्छी वात्सल्य की अभिव्यक्ति शकर और पार्वती की अपने पुत्र कार्तिकेय के प्रति कराई गई है। पार्वती और शकर ने जिस समय गगा जी अग्नि और छहो कृत्तिकाओ के साथ परम रूपवान बालिका कार्तिकेय को देखा तो उनका हृदय स्वभावत द्रवित हो गया।[4] जब पार्वती को शकर जी ने यह बतला दिया कि यह अलौकिक पुत्र वस्तुत तुम्हारा ही है तो वे अत्यन्त आनन्दित हुई और पुत्र-स्पर्श सुख के साथ साथ वात्सल्य की अजस्र धारा प्रवाहित होने लगी—

'आनन्दाश्रुओ से जिसके नेत्र भर गये वह पार्वती कार्तिकेय को सामने आने पर भी न देख सकी और किसी लोकोत्तर सुख को प्राप्त करके अपने हाथ से उसको वात्सल्यपूर्वक सहलाने लगी। आश्चर्य और आनन्द स वे खिल उठी। आखो म आसू तरगित हो गये। और उनका वात्सल्य रस उत्ताल होकर बढ गया ऐसी पार्वती की

१ वही अक १, पृ० ११

२ अभिज्ञान शाकुन्तलम ४।१३

३ मन्दाकिनी सैकत वेदिकाभि सा कन्दुकै कृत्रिमपुत्रकैश्च।
रेमे मुहुर्मध्यगता सखीना क्रीडा रस निर्विशतीव बाल्ये॥

—कुमारसम्भव १।२६

४ कुमारसम्भव ११।५

दृष्टि बहुत देर बाद शिशु को देख सकी ।"[1]

पार्वती ने पुत्र को सस्नेह गोद में ले लिया । उस समय के उनके वात्सल्य भावाभिभूत आनन्द का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—"सहज वात्सल्य रस से सिक्त होकर और आनन्दामृत के रस से पूर्ण बनी जगद्धात्री पार्वती का उस अद्वितीय पुत्र को गोद में लेकर स्तन स्राव हो गया ।"[2]

जब तारक दैत्य से युद्ध के लिए कार्तिकेय जाते हैं तो शंकर, पुत्र प्रेम प्रदर्शित करते ।[3] पार्वती उसको गोदी में बिठाती है अच्छी प्रकार छाती से लगाती हैं और सिर सूंघकर शत्रुओं को जीतने के लिए भेजती हैं ।[4]

विक्रमोर्वशीयम्—विक्रमोर्वशी नाटक में भी कवि ने राजा पुरूरवा के अपने पुत्र आयु के प्रति स्वाभाविक वात्सल्य स्नेह का वर्णन किया है । पुत्र को देखकर राजा प्रेम पूरित मन से उसका आलिंगन करना चाहते हैं । वे कहते हैं—"इसे जब मैं देखता हूँ तो मेरी दृष्टि वाष्पापूर्ण हो जाती है । हृदय वात्सल्य में बंध जाता है । चित्त प्रसन्न हो जाता है । शरीर में कम्पन होने से धैर्य छूट गया है । मैं इसे अपने अंगों से गाढ़ आलिंगन करना चाहता हूँ ।"[5]

भवभूति

भवभूति के उत्तररामचरित में राम द्वारा लव और कुश के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति की गई है । जिस समय लव राम का अभिवादन करता है तो वे वात्सल्या

---

१ प्रमोदवाष्पाकुल लोचना सा न तं ददर्श क्षणमग्रतोऽपि ।
परिस्पृशन्ती करकुड्मलेन सुतान्तरं प्राप्य विमृश्यपूर्वम् ॥
मुविस्मयानन्दविवस्वराया शिशुगलद्वाष्पतरंगिताया ।
विबद्ध वात्सल्य रसोत्तराया दृष्ट्या ददर्शोचिरता जगाम ॥
—कुमारसम्भवम् ११।१८-१६

२ निसर्ग वात्सल्य रसौघसिक्ता सान्द्र प्रमोदामृतपूरपूर्णा ।
तमेक पुत्रं जगदेकमाताऽभ्युत्संगिनं प्रस्नवणीबभूव ॥
—कुमारसम्भवम् ११।२२

३ कुमारसम्भवम् १३।३

४ तमकमारोप्य सुता हिमाद्रेराश्लिष्य गाढं सुतवत्सला सा ।
शिरस्युपाघ्राय जगाद शत्रुं जित्वा कृतार्थी कुरु वीर सूमाम् ॥
—कुमारसम्भवम् १३।४

५ वाष्पायते निपतिता मम दृष्टिरस्मिन् ।
वात्सल्य बन्धि हृदयं मनसः प्रसादः ॥
सजात वेपथुभिरुज्झित धैर्यवृत्ति ।
इच्छामि चैनमदयं परिरब्धुमङ्गैः ॥
—विक्रमोर्वशीयम् ५।९

तिरेक के कारण बार बार उनका आलिंगन करना चाहते हैं और उनके स्पर्श को आनन्द चन्द्रमा अथवा चन्दन से निकले अमृत जैसा अनुभव करते हैं ।[1] इसी प्रकार जब कुश का आलिंगन करते हैं तो उनका अन्तर्मन वात्सल्य से पूर्णतः आप्लावित हो जाता है और वे आलिंगन-स्पर्श का अनुभव इस प्रकार करते हैं—

'यह स्नेह का सार मानो मेरे अंग अंग से बाहर निकल कर आया है मानो मेरी ही चेतना बाहर प्रकट होकर अवस्थित हो गई है। प्रगाढ़ आनन्द से क्षुभित मन हृदय के द्रव से मानो इसकी सृष्टि हुई है शरीर में आलिंगन द्वारा यह अमृत रस से सिंचन करता है।[2]

राम को अभी यह बात भी नहीं है कि ये बच्चे आत्मज हैं किन्तु फिर भी उनका हृदय उधर अत्यंत आकर्षित होकर आनन्दानुभव करता है। सत्य है कि आत्मिक सम्बन्ध अपने आप ही वास्तविकता का ज्ञान करा देते हैं।

दिङ्नाग

आचार्य दिङ्नाग के कुन्दमाला नामक नाटक में राम का लव कुश के प्रति नैसर्गिक वात्सल्य प्रदर्शित कराया गया है। राम को लव कुश के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है किन्तु आत्मा का सम्बन्ध बरबस ही मनुष्य को अपने प्रिय की ओर आकर्षित कर देता है। लव कुश को देखकर राम की आँखों में स्वभावतः आँसू आ जाते हैं और वे सविस्मय कहते हैं—

'न तो मैं इसको जानता हूँ और न इसकी कुछ पहचान है। फिर भी देखने मात्र से मेरी आँखों में आँसू आ गये हैं।[3]'

इसके पश्चात् जब वे लव कुश का आलिंगन करते हैं तो उनको जो सुख प्राप्त होता है उसकी तुलना अपत्यालिंगन के सुख से ही की जा सकती है। राम को यद्यपि पुत्र के आलिंगन के सुख का निजी अनुभव नहीं है परन्तु आत्मिक सम्बन्ध के

---

१ परिणत कठोर पुष्करगर्भच्छदपीन मसृण सुकुमार ।
नन्दयति चन्द्र चन्दननिष्यन्द जडस्तव स्पर्श ॥

उ० रा० ६।११

२ अंगादंगात्सृत इव निजस्नेहजो देहसार
प्रादुर्भूय स्थित इव बहिश्चेतना धातुरेव ।
सान्द्रानन्दक्षुभित हृदय प्रस्तवनेव सृष्टो,
गात्र श्लेषे यदमृतरस स्रोतसा सिंचतीव ॥

उ० रा० ६।२२

३ न चतदभि जानामि नाकृतमपि किंचन ।
तथाप्यापात मात्रेण चक्षुरुद्बाष्पता गतम् ॥

—कुन्दमाला अंक ५।१६

कारण वे ऐसे ही सुख का अनुभव कर रहे हैं जैसा कि पुत्र के आलिंगन करने में प्राप्त होता है। वे कहते हैं—

'यद्यपि मैंने पुत्र के आलिंगन का सुख पहले प्राप्त नही किया है फिर भी उस जैसा ही यह सुख लगता है।'[1]

राम लव कुश को देखकर यह सोचते हैं कि यदि उनकी गर्भवती पत्नी से कोई सन्तान उत्पन्न हुई हो तो उसकी आयु भी उन बालको के बराबर ही होगी। इससे अपत्य की आयु की उन बालकों के साथ समता का अनुमान करके ही उनका हृदय अलक्षित स्वसंतति की स्मृति करके द्रवित हो जाता है। कवि ने राम के मुख से उनकी अवस्था का कथन इस प्रकार कराया हैं—

'प्रवासी जिस जिस अवस्था मे अपने पुत्र की कल्पना करता है उस अवस्था मे आये हुए किसी दूसरे बालक को देखकर वह वात्सल्य से द्रवीभूत हो जाता है।'[2]

दिङनाग आचार्य के इस ग्रन्थ मे एक स्थान पर मिश्रित वात्सल्य का उदाहरण द्रष्टव्य है। यह मिश्रित वियोग शृंगार और वात्सल्य का है। राम लव कुश को देखकर वात्सल्य भाव से आपूरित होते हैं और उन्हें देखकर सीता की याद करके द्रवीभूत हो जाते हैं। वे कहते हैं—

"इन दो कुमारों की वय वर्ण श्यामोन्नत वपु और यह विपत्ति देखकर सीता की पुत्र सम्भवनी दशा का स्मरण कर मेरा हृदय अत्यन्त तरल हो जाता है।"[3]

कवि शेष कृष्ण

कवि शेष कृष्ण ने 'कंस वध' नामक नाटक मे नंद यशोदा तथा वसुदेव और देवकी का कृष्ण और बलराम के प्रति वात्सल्य वर्णित किया है। दोनों बच्चों के अक्रूर के साथ चले जाने पर नन्द और यशोदा की अत्यन्त व्यथित स्थिति हो जाती

---

१ अनभिज्ञो ह्यं तनयपरिष्वंग सौख्यस्य, यद्यपि ता तुलामारोहे।

—कुन्दमाला अंक ५, पृ० ११२

२ यां यामवस्थामवगाहमान,
मुत्प्रेक्षते स्वं तनयं प्रवासी।
विलोक्य तातांश्च गतं कुमारं
जातानुकम्पो द्रवतामुपैति।

—कुन्दमाला ५।१३

३ एतत्कुमार युगलं वयसा वयेन,
श्यामोन्नतेन वपुषा विपन्नया च।
तां मैथिली तनय सम्भवनीमवस्था,
मादाय मामति तरां तरली करोति।

—कुन्दमाला ५।१२

है। नन्द की मति भ्रमित हो जाती है।[1] बलराम और कृष्ण की स्मृति आकर उनको बार-बार व्यथित कर रही है।[2] यशोदा को तो पुत्रों के विरह के कारण सृष्टि के सभी कार्य कलाप निर्जीव से लगते हैं।[3]

वसुदेव और देवकी चिरवियुक्त पुत्रों से मिलकर समान सुख प्राप्त करते हैं। वसुदेव को पुनर्जन्म का सा सुख मिलता है। वे असीम सुख को प्राप्त करते हैं।[4] इसी स्थान पर कवि ने देवकी का बचपन में अपने पुत्र का लालन पालन न कर सकने के कारण जो पश्चात्ताप प्रदर्शित कराया है वह अपूर्व है। इसमें पुत्र वत्सल मातृ हृदय का स्पष्ट परिचय मिलता है। कृष्ण और बलराम के बाल्य-काल के सुख से वंचित रह जाने पर वह बड़ी छटपटाती है। कवि ने उसकी व्यथा की मार्मिक अभिव्यंजना इन शब्दों में की है—

न कभी गोद में सुलाया और न उनको पकड़ कर भूमि पर चलाया न अपने स्तनों का दूध पिलाया और न कभी मधुर लोरियों से लालन किया। प्रेम भरी दृष्टि से कभी देखा नहीं और न कभी तुतलाती वाणी से बुलवाया इस तरह तुम्हें जन्म देकर भी मेरे दिन वन्ध्या की तरह ही बीते।[5]

अपभ्रंश-काव्य में वात्सल्य रस

अपभ्रंश साहित्य बहुत अस्त-व्यस्त और बिखरा हुआ पड़ा है। अपभ्रंश का व्यावहारिक रूप से प्रयोग न होने के कारण बहुत बड़ी संख्या में पड़ा हुआ अमुद्रित साहित्य दीमक और अन्य कीटाणुओं का भोज्यपदार्थ होकर विलुप्त होता जा रहा है। जो ग्रन्थ अध्यवसायी व्यक्तियों ने प्रयत्न करके प्रकाशित भी कराये हैं वे संख्या में अत्यल्प हैं। अपभ्रंश साहित्य के विषय में किसी प्रकार की चर्चा करना यहाँ पर हमारा लक्ष्य नहीं है। कहना यह है कि इस साहित्य में भी वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की उपेक्षा नहीं है। और ऐसे उदाहरण मिल जाते हैं जो वात्सल्य रस वर्णन करने की प्राचीन परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किये जा सकते हैं। साहित्य चाहे कोई भी हो, कहीं का भी हो, पुत्र के जन्म

---

१ कंसवध ४।१८

२ कंसवध ४।१९

३ कंसवध ४।२०

४ कंसवध ७।७

५ नोत्सङ्गे परिशायितौ न च कराङ्गुल्यापि संचारितौ।
न स्तन्यं परिपायितौ न मधुरं गीतं च संलालितौ॥
सस्नेहं न निरीक्षितौ स्खलितया वाचापि नोल्लापितौ।
वन्ध्याया इव वासरा मम गता लब्ध्वा भवन्तौ सुतौ॥

—कंसवध ७।८

के समय के आनन्दोल्लास, उसे खिलाना और उसके विषय में नाना भाँति की अभिलाषा करना स्वाभाविक है। यह देश काल और साहित्य विशेष की परिधि से बहिर्गत वस्तु है। सन्तति की उत्पत्ति का समय अतीव मार्मिक होता है उसकी उपेक्षा प्राय सम्भव नहीं है। अपभ्रंश काव्य इसका अपवाद नहीं है। अपभ्रंश के निम्नोद्धत दो ग्रन्थों में अभिव्यक्त वात्सल्य का वर्णन उपर्युविष्ट कथन की पुष्टि करता है।

श्री सार कवि का 'जिनराजसूरि'

अपभ्रंश भाषा का एक काव्य ग्रंथ जिनराजसूरि नामक है। इसकी रचना मुनि श्रीसार कवि ने की है। इसमें वृत्तान्त आया है कि बीकानेर के बोथरा कुल में उत्पन्न हुये धरमसीशाह थे। उनकी पत्नी का नाम धारल देवी था। इनका 'खेतसी' नामक पुत्र हुआ। खेतसी ही इस काव्य कृति में अपनी माता धारल देवी के वात्सल्य का आलम्बन है। कवि ने 'खेतसी' के जन्म और उसके बड़े होने के समय का वात्सल्य-रस युक्त वर्णन किया है।

जिस समय खेतसी का जन्म होता है वह अपनी माता के साथ पलंग पर लेटा हुआ परम शोभा को प्राप्त होता है। उसके तेज के सामने चन्द्र और सूर्य भी कुछ नहीं। उसकी शोभा तो ऐसी है जैसे रत्नों की राशि देदीप्यमान हो रही हो। कवि ने 'खेतसी' के जन्म के समय के सौन्दर्य का वर्णन करते हुये इस प्रकार भावाभिव्यक्ति की है—

> चन्द्र अनइ सूरिज थकी, सुत नउ अधिकउ तेज।
> रतन पुंज जिमि दीपतउ, सोहइ माता सेज॥[1]

पुत्र जन्म की शुभ सूचना सुनाने के लिए धरमसीशाह के पास दासी दौड़कर जाती है और मन में बड़ी उमंग के साथ वह पुत्रोत्पत्ति के लिये बधाई देती है। अब पूर्व जन्म के कोई पुण्य उदय हो गये जिससे इतनी बड़ी अभिलाषा पूर्ण हो गई। जब इस प्रकार का कथन दासी के मुख से राजा सुनते हैं तो उनका सारा दुख दूर हो जाता है और वे प्रसन्न होकर नाना भाँति के उत्सव कराने की आज्ञा देते हैं। फलतः कसाल दमामा थाली और ढोल आदि बाजे बजने लगते हैं और गायन वादन के सहित भाँति भाँति से पुत्र-जन्म महोत्सव होने लगता है। उसका वर्णन करते हुये कवि ने इस प्रकार लिखा है—

> सुत दीठइ दुख वीसर्या ए बाजइ ताल कसाल।
> दमामा दुडवडी ए, बाजइ वनर मास॥

---

१ श्री जिनराजसूरिरास
देखो ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह पृ० १५५

वाजइ थाली प्रति भली ए, वाजइ जामी ढोल ।
हवइ उच्छव घण ए गीता रा रमझोल ॥[1]

राजा के पुत्र हुआ है अत प्रजाजन भी बडी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। लोग नाना भाँति का आशीवाद देते हैं कि धरमशीशाह का पुत्र करोड वष का हो। उधर राजा पुत्र जन्म के उत्सव को दिल खोलकर करता है। जिस प्रकार वषा की बूँदें अच्छा बुरा स्थान न दखत हुए सब जगह पडती हैं वसे ही राजा जन्म महोत्सव करने मे खच करते समय उत्साह का प्रदशन करता है—

जन्म महोच्छव इम करइ ए खरचइ परघल दाम।
सजल जलधर परइ ए न गिणइ ठाम कुठाम ॥[2]

इस प्रकार के आनन्द प्रमोद के होते होते दस दिन व्यतीत हो जाते हैं। उस समय राजा भोजन, स्नान आदि को करते हुए पुत्र का दष्ठौन करता है—

हिव दिन दसमइ आवियइ ए करइ वसूट ठण प्रेम।
सण सहि निहतरइ ए, असुचि उतारइ एम ॥[3]

रमणीय उत्सव के पश्चात राजा पुत्र का मुख देखता है। फिर नामकरण सस्कार होता है और उसका नाम खेतसी रखा जाता है। राजा उस समय इतना आनन्दित होता है माना उसके सामने परमेश्वर ही प्रत्यक्ष हो गये हो क्योकि उसके यहाँ कुल दीपक पुत्र का जन्म हुआ है। कवि ने उस समय की प्रसन्नता का निम्नो द्धत पक्तियो म वणन किया है—

करि उच्छव रलियामणउ पुत्र तणउ मुख जोय।
श्री खतसी नामउ दियउ, वीठा वउलति होय ॥
सहुको लोक इसउ कहइ, सपण तणइ समवख (ख)।
धरमसी साह प्रतइ हूयउ परमेसर परतक्ख ॥[4]

अब पुत्र धीरे धीरे बडा हाने लगता है। जस चन्द्रमा धीरे धीरे बढकर भासमान होता जाता है वस ही चन्द्रमा की कला के समान पुत्र को बढते देखकर माता और पिता को बडा आनन्द होता है। उनके लिए तो माना देवलोक का इन्द्र ही वहाँ आ गया हो। इस आनन्द की अभिव्यक्ति श्री सार कवि ने इस प्रकार की है—

बीज तणउ जिम वाधइ चन्द तिम वाधइ धारलदे नद।
मात पिता उमणइ आणद देव लोक नउ जिम माकन्द ॥[5]

---

१ श्री जिनराजसूरिरास देखो ऐतिहासिक जन काव्य सग्रह पृ० १५५
२ श्री जिनराजसूरि' एतिहासिक जन काव्य सग्रह पृ० १५५
३ श्री जिनराजसूरि एतिहासिक जन काव्य सग्रह पृ० १५६
४ वही पृ०, १५६
५ वही पृ० १५७

इस प्रकार पुत्र की प्राप्ति पर राजा रानी की असीम प्रसन्नता का वर्णन करके कवि ने खेतसी' के प्रति प्रदर्शित मातृ-मनोभावों का और उसकी बाल क्रीडा का भी वर्णन किया है। माता अपने पुत्र को लाड लडाती है और उसे बेटा-बेटा कहकर बुलाती है। हर्ष के आँसुओं में उसे भिगो देती है और मन में बडा आनन्दानुभव करती है। कभी उसम कहती है आ तुझे गोद खिलाऊ, कभी आँख में काजल घालती है और कभी सखिया को खिलाने के लिये दे देती है। कवि के इन भावों की अभिव्यक्ति में वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति मिलती है। उनका वर्णन निम्नाङ्कित पक्तियो में द्रष्टव्य है—

माता सुत नइ ले थयरावइ, बटा बेटा कहिय बुलावइ,
उन्हउ नीर लेइ न्हरावइ, इम माता मनि आणद पावइ।
आउ मेरा नन्दन गोदि खिलावु, वयु लट टू तुनइ अणावु,
केलवि काजल घालइ अखियाँ, खोलइ ले खलावइ सखिया ॥[1]

वाल रूप का वर्णन करने में कवि कहता है कि धारलदे अपने पुत्र का भाँति भाँति से शृगार करती है। वह उसके कानो मे मुडगनिया (कान का आभूषण विशेष) पहनाती है। परो मे जूती पहनाती है और बजने वाले घुघरू बाधती है। सिर पर पगडी आदि को पहनाकर उसे सुसज्जित करती है—

कानि मुडगनिया पाइ पहइयां धमकइ पय घूघरिया बनिया।
चढलउ करि आगउ बहिरावइ सिरिक सबी की पाग बनावइ।[2]

जहाँ बालक हैं वहाँ बाल क्रीडा है। बच्चे का स्वभाव और चापल्य उसे सतत क्रियाशील बनाये रखता है। वह प्रबोध होकर कुछ भी करने लगता है। वही उसकी क्रीडा है और माता पिता को उसमे बडा आनन्द आता है। कवि ने 'खेतसी की बाल क्रीडा का बडा सुन्दर चित्रण किया है। वह बडा चचल है। कभी वह माता के गले लगता है तो कभी उसके आगे लोटता है। कभी घडे से पानी डाल देता है कभी हँसकर माता के मन को मोहित करता है, कभी हिंडोले पर चढता है कभी डरता हुआ माता के पास छिपता है कभी माता की कचुकी उतारता है और कभी कधे पर चढता है कभी सामने हँसता है और कभी रूठकर रोता है। इस प्रकार की नाना भाँति की क्रीडा से माता के मन को आनन्दित करने वाले खेतसी की बाल क्रीडा का इस पुस्तक में चित्र सा उपस्थित हो जाता है। उसकी कुछ पक्तियाँ यहाँ द्रष्टव्य हैं—

कइयइ माता कठइ लागइ कइयइ लोटइ माता आगइ।
कइयइ घडा ना पाणी ढोहइ कइयइ हसि माता मन मोहइ॥

---

१ श्री जिनराजसूरि रास, ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह, पृ० १५७
२ वही पृ० १५७

कइयइ बूयनी बोहणी ढोलइ, कइयइ हो चइ चढ़ि हीं डोलइ।
कइयइ भालइ मालण तरतउ, कइयइ छिपइ माता थी डरतउ॥
कइयइ मा नउ कचूअउ ताणइ, कइयइ काँपइ चढ़िय पलाणइ।
कइयइ हसि मा साम्हउ जोयइ, कइयइ रूसण मांडी रोयइ॥[1]

इस प्रकार पुत्र की क्रीडा से माँ अत्यन्त आनन्दित होती है। कुछ और बडा होने पर बालक अपने अनग सल मेला करते हैं। 'खेतसी चकई और लट्टू आदि का खेल खेलता है। कभी उसे खेलते हुए देर हो जाती है तब माँ उसे स्वयम बुलाती है और उसका शृगार करने लगती है। इस प्रकार के आनन्द का भी कवि ने वर्णन किया है—

फरइ चकरडी माता अरइ, बालूडा बलिहारी तेरइ।
वगू लन्टू फरइ चगा, हाथइ गोटा त्यइ चचरगा॥
ऊँचउ उपाडइ ले बोहडियां, माता कहइ आउ मेरा नान्हडिया।
हाथे घालइ सोना कडियां, गू थी सइ फूलनी वडिया॥[2]

खेतसी का बाल्यकाल इसी भाँति की अनेक क्रीडाओं के साथ व्यतीत होता रहता है। कुछ और बडा होने पर उसका विद्याध्ययन आदि प्रारम्भ कराया जाता है। साराश यह है कि इस काव्य में कवि ने पुत्र के प्रति प्रदर्शित नाना भाँति के वात्सल्य का वर्णन किया है। उसमे काव्यत्व भी है और कुछ स्थलों पर वात्सल्य भाव रम दशा को भी पहुँच गया है।

इसके अतिरिक्त यह भी द्रष्टव्य है कि कवि ने पुत्र के वियोग से व्यथित जननी का चित्रण करके वियोग वात्सल्य की अनुभूति भी कराई है। खेतसी जब सयम भार लेकर मुनि बनना चाहता है और एतदर्थ अपनी माता से अनुमति मांगता है तो माँ को अत्यन्त दुःख होता है। उसे मूर्छा आ जाती है और पृथ्वी पर गिर पडती है—

पुत्र वयण इम सम्भली सजम मति सुविशाल।
मूर्छागत माता थइ पडी धरणी तत्काल॥[3]

उसके पश्चात् जब कुछ चेतना आती है तो वह कहती है कि तू मेरा नन्हा बच्चा है, मेरे जीवन का प्राण है, तेरे बिना मुझे एक घड़ी भी दिन के समान लगता है। वह पुत्र की सुकुमारता का ध्यान करती है और फिर उसके द्वारा अभीप्सित सयम की दारुणता को सहन किया जाना वह सम्भव नही समझती। वह नाना भाँति

१ श्री जिनराजसूरि रास ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह पृ० १५७
२ वही, पृ० १५८
३ वही, पृ० १६२

से पुत्र का मदन मार देने से निवारण करती है। पुत्र विरह से व्यथित जननी के करुण क्रन्दन को कवि ने इस प्रकार चित्रित किया है—

तु नाहडियउ माहरइ तु मुझ जीवन प्राण।
एक घडी पिण दिन समो तोरइ विरह सुजाण॥
तु सुकुमाल सोहामणउ दोहिलउ सजमभार।
बोल बिचारी बोलयइ सजम दुक्कर कार॥[1]

निष्कर्षत इस काव्य ग्रंथ में थी सार कवि ने सयोग के साथ-साथ वियोग वात्सल्य की अभिव्यजना भी की है। सयोग वर्णन म जन्मोत्सव, नामकरण दष्ठौन आदि विभिन्न सस्कारो, पितृ मनाभाव, मात मनोभाव, बालछवि और बाल क्रीडा आदि का चित्रण विशेष रूप से हुआ है। वियोग वर्णन मे माता का ही विरह अभिव्यक्त है पिता का नही। सक्षेप मे हम कह सकते हैं कि अपभ्रश भाषा म प्राप्त यह वात्सल्य वर्णन उल्लेखनीय है और वात्सल्य वर्णन की परम्परा की कडी को जोडता है।

स्वयम्भूदेव का पउम चरिउ

कविराज स्वयम्भूदेव का 'पउम चरिउ' अपभ्रश भाषा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसम राम के चरित्र का चित्रण किया गया है। इस पुस्तक मे भी वात्सल्य का वर्णन मिलता है। सयोग वात्सल्य वर्णन तो उपेक्षित ही है परन्तु वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति हुई है। वियोग के आलम्बन राम हैं, आश्रय कौशल्या है। जिस समय राम वन को जाते हैं तो कौशल्या की वियोगाभिभूत दशा का चित्रण किया गया है।

कौशल्या ने दुमने आते हुए राम को देखकर उनसे पूछा कि तुम्हारा मुख मलान क्यो है? स्वाभाविक है कि माता को पुत्र के विषय मे बडी चिन्ता रहती है। यह सुनकर राम ने कौशल्या से कहा कि राजा ने भरत को राज्य अर्पित कर दिया है और मैं वन को जा रहा हूँ अत तुम अपना हृदय दृढ कर लो। पुत्र के वन जाने की बात सुन कर कौशल्या बहुत दुखी होती है। वे हा पुत्र! हा पुत्र! कहकर रोती हुई व्यथित होकर पृथ्वी पर गिर पडी। पुत्र का विरह उन्हे असह्य हो गया। कवि ने उसका वर्णन करते हुए इस प्रकार लिखा है—

ज आउच्छिय माय हा हा पुत्त भणन्ती।
अपराइय महएवि महिपलें पडिय रुयन्ती॥[2]

कौशल्या राम के वन जाने पर बार बार व्यथित होकर विलाप करती है। उनके विलाप म पुत्र विरह से व्यथित जननी का चित्र उपस्थित हो जाता है। व

१ श्री जिनराजसूरि रास ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह पृ०, १६२
२ पउम चरिउ भाग २, पृ० ३४

राम से कहती हैं— हे बलभद्र तुमने यह सब क्या कहा। दशरथ कुल के दीपक जग सुन्दर राम तुम्हारे बिना अब कौन पलंग पर सोयगा। तुम्हारे बिना कौन अब दरबार में बैठेगा? तुम्हारे बिना कौन अब हाथी घोड़े पर चढ़ेगा? तुम्हारे बिना गेंद कौन खेलेगा? तुम्हारे बिना राजलक्ष्मी को कौन मानेगा? तुम्हारे बिना ताम्बूल का आनन्द कौन करेगा? तुम्हारे बिना कौन शत्रुओं का परास्त करेगा? तुम्हारे बिना अब कौन मुझे सहारा देगा? इस प्रकार कौशल्या का करुण क्रन्दन सुन कर समस्त अन्तःपुर का मुख म्लान हो गया। राम और लक्ष्मण के वियोग में वह अन्तःपुर डाढ़ मार कर रो पड़ा।[१]

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'पउम चरिउ' में चाहे अत्यल्प मात्रा में वियोग वर्णन हुआ है परन्तु वह है बड़ा कवित्वपूर्ण। यद्यपि इसमें संयोग-वात्सल्य वर्णन नहीं है परन्तु फिर भी इनकी ये कतिपय पंक्तियाँ ही उल्लेखनीय हैं और हम इनके महत्त्व को नहीं भुला सकते।

प्राचीन हिन्दी काव्य में वात्सल्य-रस की अभिव्यक्ति

आदिकाल

चन्दबरदाई

संस्कृत काव्य परम्परा की अक्षुण्ण गति से प्रवाहित होती हुई वात्सल्य रस धारा हिन्दी काव्य में अबाध गति से अग्रसर हुई। हिन्दी के आदिकाल से ही काव्य में वात्सल्याभिव्यक्ति मिलती है। आदिकाल का एतद्विषयक ग्रन्थ चन्दबरदाई का पृथ्वीराज रासो है। पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज के जन्मोत्सव नामकरण आदि का वर्णन कवि ने किया है।[२] बालक पृथ्वीराज की बाल छवि का वर्णन करते समय कवि वात्सल्य भाव में पूर्णतः ओत प्रोत प्रतीत होता है। उन्होंने पृथ्वीराज के रूप का वर्णन करने के साथ साथ बच्चे के अनुरूप आभूषणों की भी अभिव्यक्ति की

---

१ हा हा काइं वुत्तु पइ हलधर। दसरह वंस दीव जग सुन्दर॥
पइ विणु को पल्लंग सुवेसइ। पइ विणु को अत्थाणे वइसइ॥
पइ विणु को हय-गयहु चडसइ। पइ विणु का भिन्दुएण रमसइ॥
पइ विणु राय लच्छि को माणइ। पइ विणु को तम्बोल समाणइ॥
पइ विणु को पर वलु भजेसइ। पइ विणु का मइं साहारेसइ॥

घत्ता

तं कूवारु सुणेवि अन्तेउरु मुहु वुण्णउ।
लक्खण राम विओए धाह मुएवि परुण्णउ॥

—पउम चरिउ अयोध्याकाण्ड भाग २ पृ० ३५ ३६

२ पृथ्वीराज रासो पहिला समय पृ० १५१

है। रूप वर्णन म पृथ्वीराज के बाल, मधुरवाणी तिलक और दांता आदि की शोभा का वर्णन है। आभूषणा म शेर क नाखूनो क साथ मणियो का कठुला विशेष रूप से लिया है। इस वर्णन के साथ शिशु स्वभाव और क्रीडा का भी वर्णन ह। शिशु की चचलता और उठ उठ कर गिरना तथा हसना आदि उनक उदाहरण हैं। उनके उपयुक्त भावा की अभिव्यक्ति निम्नलिखित प क्तियां मे द्रष्टव्य ह—

मनिगन कठला कठ। मद्धि मेहरि मध सोहत॥
घूघर वारे चिहुर। रुचिर बानी मन मोहन॥
केसर सुभट्टि सुभ वास छवि। दसन जोति हीरा हरत॥
नह ललप इक्क वह धिन रहत। हुलसि हुलसि उठि उठि गिरत॥[1]

कवि ने पृथ्वीराज के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य म मातृ-मनोभावो की भी व्यजना की ह। पृथ्वीराज जब शिशु स्वभाव वश धूसधूसरित घुटना के बल पृथ्वी पर डोल रहा ह ता माता का वात्सल्य उमड पडता ह—व वात्सल्यातिरेक क कारण गोदी म लकर शिशु का मुख चूमती हैं और आनदित होती हैं। कवि के इन भावा की अभिव्यक्ति निम्नाकित प क्तियां म द्रष्टव्य ह।

'रज रजित अजित नयन। घुटरन डोलत भूमि।
लेत बलया मात लयि। भरि कपोल मुख चूमि॥[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि आदिकाल के इस ग्रथ मे वात्सल्य की अभिव्यक्ति की गई है। दूसरी बात यह कि वह इतनी व्यापक और सर्वांगीण नही है। परन्तु वात्सल्य रस वर्णन की शृ खला की पूर्ति अवश्य कराती है। यद्यपि वात्सल्य वर्णन के ये स्थल अत्यन्त सक्षिप्त हैं परतु इनम का यत्व है और ,इनका एतद्विषयक महत्व भी है।

भक्तिकाल

मलिक मुहम्मद जायसी

भक्तिकाल के निगु ण भक्त कवियो न वात्सल्य की अभिव्यक्ति बहुत कम की है। उनम भी ज्ञानमार्गी भक्त तो वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति म शून्यवत रहे हैं। जो कुछ थोडा बहुत वात्सल्य वर्णन मिलता है वह प्रेममार्गी सूफी कवियो के काव्य म अभिव्यक्त है। जायसी इनम स प्रथम और प्रमुख है। जायसी के 'पदमावत' मे कुछ स्थल वात्सल्य रस से पूर्ण है।

पद्मावत म वात्सल्य रस का आलम्बन रत्नसेन हैं। आश्रय रत्नसेन की माता है। कवि की वात्सल्याभिव्यक्ति मे मातृ अनुभूति की अभिव्यक्ति हुई है। वह भी वियोग के समय माता के वात्सल्यपूर्ण हृदय क उदगार हैं। कही-कही कवि की

---

[1] पृथ्वीराज रासो पहिला समय, पृ० १२१

[2] पृथ्वीराज रासो पहिला समय, पृ० १२१

अभिव्यक्ति बडी मनोवैज्ञानिक हैं। माता अपने पुत्र का लालन पालन उसी अवस्था से करती है जबकि वह अतीव कोमल और ईषत्विकसित अवस्था म होता है। पुत्र के बडे हो जाने पर भी उसके प्रति वसे ही भाव रखती है कठोर काय सम्पादन की आशा पुत्र से नही रखती। इसी भाव को प्रदर्शित करने वाले वचन रत्नसेन के जोगी बनने के समय उसकी माँ जोगी के काय के लिए रत्नसेन की अक्षमता की कल्पना करके उससे कहती है। वह यह सोचकर व्यथित होती है कि रत्नसेन का कोमल शरीर तप के कष्टमय जीवन को किस प्रकार सहन कर सकेगा। कवि ने माता के उन भावो को बडी स्वाभाविकता के साथ निम्नलिखित पक्तियो म चित्रित किया है—

"नित चन्दन लग जिहि देहा। सो तन देखु भरन अब खेहा
सब दिन रहत करत तुम भोगू। सो कसे साधन तप जोगू
कसे धूप सहज बिनु छाहों। कसे नींद परिहि भुइ भाँहीं
कसे ओढब कावरि कथा। कसे पाउ चलव तुम्ह पथा
कसे सहज खिनहि खिन भूखा। कसे खाएब कुरकुटा सूखा'[1]

मात अनुभूति का पदमावत म एक और भी उदाहरण है और वह भी इसी प्रकार माँ की व्यथित दशा का चित्रण है। बादल के युद्ध गमन के समय उसकी माँ बादल का युद्ध करने की दक्षता म अभिज्ञ समझकर उसे जाने से रोकती है। वह अपने पुत्र को तरह-तरह की बाते कहकर उसे समझाती है और उसे युद्ध से रोकने का प्रयत्न करती है—

'बादिल केर जसोव माया। आइ गहे बादल के पाया
बादिल राय मोर तू बारा। का जानसि क्स होइ जुभारा'[2]

प्रवास मे स्थित होने पर माँ की व्यथित दशा का कथन भी जायसी ने किया है। वह उस समय की गई है जब रत्नसेन चला जाता है। उसकी माँ को पुत्र के विरह से बडी व्यथा होती है। उसे ससार म पुत्र के बिना अधरा ही अधरा लगता है और वह बारम्बार विलाप करती है। उसका वणन कवि न इस प्रकार किया है—

रोव माता न बहुरै बारा। रतन चला जग भा अँधियारा
बार मोर रजिया उर रता। सो लै चला सुवा परबता।[3]

प्रवास से लौटते समय का वणन भी जायसी न किया है। रत्नसेन जब लौट कर आता है तब सवत्र आनन्द छा जाता है। वह अपनी माता स मिलता है माता

१ पदमावत १२।१२६।८ ७
२ पदमावत ५२।६१३।१ २
३ पदमावत १२।१३३।१ २

को असीम आनन्द प्राप्त होता है। माता और पुत्र के मिलन का कथन करते हुए उन्होंने इस प्रकार लिखा है—

'बिहँसि आइ माता कह मिला। जनु रामहिं भेंट कोसिला ॥'[1]

जायसी के पदमावत मे वियोग वात्सल्य का ही वर्णन है। वियोग का वर्णन प्रवास को जाते हुए प्रवास मे स्थित और प्रवास से आते हुए तीनो अवसरो पर किया है। वात्सल्य की अनुभूति केवल माता को ही होती है। जायसी ने यद्यपि अत्यन्त संक्षिप्त रूप से ही वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है परन्तु उसमे मातृ हृदय की मार्मिक व्यजना है।

उसमान कवि

उसमान कवि ने 'चित्रावली मे वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। चित्रावली' मे नेपाल के राजा धरनीधर के पुत्र सुजान और रूपनगर के राजा चित्रसेन की कन्या चित्रावली की प्रेमकथा का वर्णन किया गया है। इसमे सुजान के प्रति उसके माता पिता की वात्सल्याभिव्यक्ति की गई है।

इस प्रकार के स्थल वैसे बहुत थोडे हैं और उनका सक्षेप मे ही वर्णन है परन्तु वे बडे मार्मिक हैं। इनके सक्षेप वर्णन मे ही सयोग और वियोग वात्सल्य दोनो की अभिव्यक्ति हुई है। सयोग वात्सल्य वर्णन मे पुत्र जन्म की प्रसन्नता का मुख्य रूप से उल्लेख किया गया है। राजा और रानी की प्रसन्नता का वर्णन करते हुए कवि ने इस प्रकार की अभिव्यक्ति की है—

'सुत सुनि राजा मन भयो रोम' रोम सन्तोष।
रानी रहसी देखि मुख, भई सपूरन कोष ॥'[2]

पुन जन्म के उपरान्त पुत्र सुख की अनुभूति के बहुत से अवसरों का भी कवि ने कथन किया है। उनमे से ज्योतिषियो को कुण्डली दिखाना[3], छठी[4], इच्छानुसार सवप्रथम उत्तम दूध पिलाना[5] विद्याध्ययन[6] और व्यायाम[7] आदि मुख्य हैं। इनका कवि ने सक्षेप मे वर्णन किया है।

वात्सल्य के सयोग सुख का और अधिक वर्णन नहीं है। इसके पश्चात कवि ने पुत्र के प्रवास से दुःखी माता पिता की अनुभूति का वर्णन किया है। सुजान चित्रावली व कौलावती के साथ जब अपने घर आता है उस समय राजा अत्यन्त

---

१ पदमावत ३५।४२ ६।१
२ चित्रावली, पृ० २१
३ चित्रावली पृ० २१
४ चित्रावली पृ० २१
५ चित्रावली, पृ० २२
६ चित्रावली पृ० २३
७ चित्रावली पृ० २३

प्रसन्न होते हैं। अब तक पुत्र के विरह म जो निर्जीव स पढ थ उन्हें जीवन दान सा मिलता है। कवि ने राजा की प्रसन्नता की अभिव्यक्ति इस प्रकार की है—

"सुनतहिं नाऊ राउ रहसाना। जानहु मतक तन प्रान समाना।
राती नन जोति सुनि पाई। घर घर बाज लाग बधाई।"[1]

वात्सल्यमयी माता को जो आनन्द पुत्र के मिलन पर प्राप्त होता है उसका वर्णन नही हो सकता। वात्सल्यातिरेक स माँ के स्तनो से छीर प्रस्रवित होन लगता है। कवि ने सुजान की माँ के वात्सल्य का मार्मिक चित्रण किया है। व पुत्र का मुख चूमती है और उसे गले से लगाती हैं पुत्र क पुनर्मिलन से अपने को धन्य समझती हैं। कवि ने माता और पुत्र के मिलन का चित्रण निम्नलिखित पंक्तियो मे किया है—

"कुअर परे लइ मातु पगु भरि लोचन दोउ नीर।
मातु मया चरहिं पुनि, उतरा अस्तन छीर॥
माता ल सुत कठ लगावा।
चूमि बदन कर आरति लावा॥
कहिसि कि धनि दिन धनि यह घरी।
पूतहिं भेंटेउ अक मे भरी॥"[2]

उसमान कवि ने वात्सल्य के सयोग सुख और प्रवास से लौटकर आत हुए मिलन का वर्णन किया है। उसम माता पिता दोनो की अनुभूति दोनो अवसरो पर अभिव्यक्त की गई है। माता और पुत्र के मिलन के समय की जो अभिव्यक्ति कवि ने की है उसमे वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति है।

सूरदास

सूरदास वात्सल्य रस के अग्रतम कवि है। शृगार के साथ उन्हे वात्सल्य-रस का भी सम्राट् कहा जाता है। वस्तुत वात्सल्य को रस दशा तक पहुचान का श्रेय सूर को ही है। वात्सल्य रस का प्राचीन काल म विशष निरूपण न होने से प्राय विद्वानो न उसे भाव ही माना है। सूर ने वात्सल्य का वर्णन एक तो अन्य विषयो की भांति बडे अधिकार पूर्वक किया है और दूसर इतनी प्रचुर मात्रा म किया है कि उसे आखो स ओझल नही किया जा सकता। और फिर रसनीयता की दृष्टि से भी यह वर्णन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी स कुछ विद्वान तो सूर को ही वात्सल्य रस का प्रथम स्रष्टा कहते हैं।[3] सूर ने बाल-कृष्ण की लीलाओ का वर्णन इतना विस्तृत और सर्वांगपूर्ण किया है कि उनके परवर्ती कवियो क लिए यही एक

---

१ चित्रावली अभिषक खण्ड पृ० २३५
२ चित्रावली अभिषक खण्ड पृ० २३५
३ सूर सौरभ पृ० ४६५

आदर्श और प्रेरणा स्रोत के रूप में रहा है। सूर के पश्चात् ऐसा शायद ही कोई कवि हुआ हो जिसने कृष्ण चरित्र का वर्णन करने में सूर से प्रभाव ग्रहण न किया हो। शुक्ल जी ने इसी से इन कवियों की उक्तियों को सूर की जूठी बतलाया है।[1] कुछ व्यक्ति इन्हें सूरदास से उधार ली हुई कहते हैं।[2] कुछ कवियों ने तो कृष्ण का बाल चरित्र वर्णन करने में स्पष्टतः सूर से सहायता लेने का उल्लेख किया है।[3]

सूर के द्वारा वात्सल्य की सहजाभिव्यंजना इसलिए और भी अधिक अनूठी हो गई है क्योंकि उनके विषयालम्बन उनके इष्टदेव भी हैं। भक्तिभाव से अभिभूत होने के कारण उनके वर्णन अपेक्षाकृत मार्मिक हो गये हैं, परन्तु भक्ति भाव वात्सल्य के मानवीय भावों की उद्भावना में बाधक नहीं हुआ है। कृष्ण चरित्र वर्णन की सूर की यह मौलिकता है। उनकी वात्सल्य भावना इतने सार्वजनीन रूप से अभिव्यक्त हुई है कि वह चिरन्तन है और सत्य है। इसी से सूर का वात्सल्य-वर्णन अत्यन्त मनोवैज्ञानिक प्रतीत होता है और सूर की अन्तःप्रवेशिनी दृष्टि इस क्षेत्र में बहुत गहरी पहुँची है। सूर के वात्सल्य भाव की प्रतिविशिष्टता के विषय में प्रभू दयाल मीतल के ये शब्द द्रष्टव्य हैं—'भगवान श्रीकृष्ण की बाल-लीला तथा नंद और यशोदा की मानसिक वृत्तियों एवं चेष्टाओं का ऐसा स्वाभाविक वर्णन हुआ है कि वात्सल्य भाव के उदाहरण के लिए वह संसार भर में बेजोड़ रचना है।'[4]

सूरदास ने 'सूरसागर' के दसम स्कन्ध में श्रीकृष्ण की लीला का गान किया है। उसके पूर्वार्द्ध में श्रीकृष्ण की लीला-क्षेत्र व्रज रहा है। व्रज लीला दो स्थानों पर हुई है—गोकुल में और मथुरा में। गोकुल रहने पर कृष्ण के संयोग सुख का वर्णन है और मथुरा जाने पर वियोग दुःख का। सूर ने संयोग और वियोग दोनों दशाओं की वात्सल्य और शृंगार रस की मार्मिक व्यंजना की है। सूरसागर की पद-संख्या ६२२ से लेकर १२३७ तक ६१६ पदों में श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का वात्सल्यमय चित्रण है। उसके पश्चात् मुरली स्तुति प्रारम्भ हो जाती है और शृंगार रस की व्यंजना होती है। इनमें से ४३६ पद वात्सल्य रस वर्णन के हैं। लगभग २५ पदों में कृष्ण के अलौकिक रूप का चित्रण है और शेष साधारण कथा प्रसंग को चलाने के हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रसंगों के वर्णन में भी वात्सल्य

१ सूरदास पृ० १९८

२ अष्टछाप परिचय, पृ० १०७

३ सूरदास पद ज्योति सहारे।
बरने बाल चरित्त मैं सारे॥

—कृष्णायन १।३।४

४ अष्टछाप परिचय, पृ० १०७

की अभिव्यक्ति हुई है और इस प्रकार के पदो की सख्या लगभग ५२ है।[1]

सूर ने वियोग वात्सल्य का भी विस्तार के साथ वर्णन किया है। वियोग वात्सल्य मे, कृष्ण के कालीदह म कूद पडने के समय के ७ पद, मथुरा चले जाने के समय के ७२ पद और उद्धव के आगमन के समय के १० पद कुल मिलाकर ८६ पद है। इस प्रकार सयोग और वियोग वात्सल्याभिव्यक्ति के सूर ने कुल मिलाकर लगभग ५८० पद लिखे है। इनका समीचीन अध्ययन करने के लिए स्थूल रूप से निम्नलिखित शीर्षकों म विभाजित कर सकते हैं—

	पद
१—पुत्र जन्म के आनन्दोल्लास का वर्णन	४४
२—विभिन्न सस्कारो के अवसरो पर सुखानुभूति	१०
३—बाल छवि वर्णन	३८
४—बाल स्वभाव का चित्रण	४६
५—बाल क्रीडा और चेष्टाए	७६
६—उलाहन	८२
७—मातृ हृदय	१६५
८—वियोग-वात्सल्य	८६
	५८०

पुत्र जन्म के आनन्दोल्लास का वर्णन

कृष्ण के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य के आश्रय नन्द यशोदा और व्रज की गोपियाँ तथा गोप है। वात्सल्य सुख की अनुभूति वस्तुत उन्ही को होती है। वसुदेव और देवकी तो उनके रूप को देखकर भक्ति और आश्चर्य से अभिभूत हो जाते है।[2]

1

क्रम सख्या	प्रसग	वात्सल्य वर्णन के पदो की सख्या
१	होड लगाकर गोदोहन करते समय	३
२	यशोदा से खिलौने सभाल कर रखने का आग्रह	३
३	भौरा चकडारी का खेल	१
४	गोवर्धन पूजा तथा गोवर्धन धारण	१६
५	वरुण से नन्द को छुडाना	१
६	वृषभासुर वध	८
७	पनघट के उलाहने	१५
८	राधा के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य	५
		५२

२ सूरसागर पद सख्या ६२२

नद क यहा पुत्र-जन्म होने से हर्ष की पयस्विनी प्रवाहित हो जाती है। सूर न उस समय के सानन्द वातावरण का विस्तार के साथ वर्णन किया है। यशोदा, नद, गोपी गोप और सेवक सभी आनन्दित होते है। भक्ति भाव के कारण सूर ने देवताओं के आनन्दित होन का भी वर्णन किया है। सबके आनन्द प्रदर्शन के अलग अलग ढग हैं। यशोदा पुत्र का मुख देखकर अत्यन्त आनन्द को प्राप्त होती है और उस आनन्द को स्वत सभाल भी नही सकती है, अत नद को बुलाकर उन्हे अपने सुख के साथ सुखानुभव कराती है। नद अपनी प्रसन्नता को नाना भाति के दान देन स प्रकट करत हैं। गायें, वस्त्र, आभूषण नग, हीरे और नाना भाँति की वस्तुए दान देन हैं तथा ब्राह्मण और गुरुजनो का भाति भाति से सत्कार करते हैं। गोपिया मगल गान करती हैं। वे दधि दूव रोचन आदि मागलिक वस्तुओं को सोन क थाना म भर कर लाती है यशोदा का भाग्य सराहती ह, बधाई देती है, सोहल गाती है और शिशु का आशीर्वाद दती हैं। कुछ गोपियाँ यशोदा से प्रेम परिहास करती हैं। गोप भी इसी तरह म आनन्द मनाते हैं। व तरह तरह के वाद्य यन्त्र बजाते हैं नाचत गात है और प्रसन्नतावश एक दूसर पर हल्दी दूध और दधि आदि छिडकत हैं। सेवक भी इस समय अत्यन्त प्रसन्न हैं। व नग के लिये झगडते है। ढाढी जगा सूत मागध आदि भी प्रसन्नता प्रकट करते आर है और नाना भाँति स दान पाकर आशीर्वाद देते हैं। देवता भी व्रज के आनन्द का देखत है। प्रसन्न होकर पुष्पा की वर्षा करत है। इस उल्लासमय वातावरण का और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कवि ने व्रज के गाव की सजावट का भी वर्णन किया है। यहाँ आबाल वृद्ध नर नारी सब प्रसन्न है। सवत्र वन्दनवार बधे हुए हैं, मगल सूचक केले के पौधे लगाये गये है और सवत्र मागलिक ध्वनि गूज रही है। कहने का तात्पर्य यह है कि पुत्र जन्म पर शोभा की कोई सीमा नही है और वह सारे व्रज मे व्याप्त हो रही है—

सोभा सिंधु न अंत रही री।
नद भवन भरपूर उमगि चलि व्रज की बीथिन फिरत बही री॥[1]

पुत्र जन्म के आनन्दोल्लास के पश्चात कवि ने उनके सुख सुविधा प्रदान करने का वात्सल्य स पुष्ट वर्णन किया है। शिशु के लिय सवप्रथम पालन की आवश्यकता होती है। यशोदा बढई स चन्दन का रत्न जटित पालना बनवाती है। उसमे डोरी रेशम की होती है। ऐसे पालने पर मगल गान करत हुए कृष्ण को सुलाकर यशोदा बडी आनन्दित होती है। वह आनन्द स मधुर मधुर गाती है। कृष्ण भी कभी पलक मूदते हैं कभी अधर फडकाते है उन्हें जागा हुआ मानकर

---

१ सूरसागर पद ६४७

यशोदा फिर उसी भाँति मधुर मधुर गाने लगती है। कृष्ण को पालने मे झुलाती हुई वात्सल्यमयी यशोदा का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

जशोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ-सोइ कछु गावै॥
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै।
तू काहे नहिं बेगहिं आवै तो कौं कान्ह बुलावै॥
कबहुँ पलक हरि मूँद लेत हैं कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै रहि रहि करि करि सैन बतावै॥
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुर गावै।
जो सुख सूर अमर मुनि दुरलभ सो नन्द भामिनी पावै॥[1]

विभिन्न संस्कारों के अवसर पर सुखानुभूति

पुत्रोत्पत्ति के पश्चात होने वाले संस्कारों का भी सूर ने विस्तार के साथ वर्णन किया है। उन अवसरों पर माता पिता की सुखानुभूति का वात्सल्यपूर्ण चित्रण किया है। इनमें से मुख्य मुख्य नामकरण, अन्नप्राशन, वर्षगाठ और कर्णछेदन हैं। नामकरण और अन्नप्राशन पर ज्योतिषी और ब्राह्मण को बुलाया जाता है और कृष्ण को स्नान आदि कराकर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित किया जाता है। सूर ने उस समय भी गोपी, गोप, चारण, वंदी आदि का वैसा ही सुन्दर वर्णन किया है जैसा जन्मोत्सव के समय किया था। कृष्ण की एक वर्ष की आयु हो जाने पर वर्षगाठ का उत्सव भी उसी प्रकार मनाया जाता है। सूर का निम्नलिखित पद इस भाँति के अवसरों के आनन्दमय वातावरण का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है—

आजु भोर तमचुर के रोल।
गोकुल मे आनन्द होत हैं, मंगल धुनि महराने ढोल॥
फूले फिरत नन्द अति सुख भयौ हरषि मगावत फूल तमोल।
फूली फिरत जसोदा तन मन उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल॥
तनक बदन दोउ तनक तनक कर तनक चरन पोंछति पट भोल।
कान्ह गरे सोहति मनि माला अंग अभूषन अंगुरिनि गोल॥
सिर चौतनी डिठौना दीन्हौं आँखि आँजि पहिराइ निचोल।
स्याम करत माता सौं झगरौ अटपटात कलबल करि बोल॥
दोउ कपोल गहि कैं मुख चूमति बरस दिवस कहिं करति कलोल।
सूर स्याम ब्रज-जन मोहन-बरष-गाँठि को डोरा खोल॥[2]

कृष्ण के कर्ण-छेदन संस्कार का वर्णन अपेक्षाकृत अधिक मनोवैज्ञानिक है। यशोदा को अन्य संस्कारों की भाँति प्रथमतः तो बड़ा आनन्द प्राप्त होता है परन्तु

---

१ सूरसागर पद ६६१
२ सूरसागर प॰ ७१२

जब यह स्मरण आता है कि कर्ण छेदन करने से बालक कृष्ण को दुख होगा तो उनके हृदय मे धुकधुकी होने लगती है। वे उस समय कृष्ण की ओर देख भी नही सकतीं और मुख मोड लेती हैं। जब कृष्ण रोने लगते हैं तो बडी बेचैन हो जाती हैं और कृष्ण को जिससे कुछ धैर्य आ जाये इसलिये कर्ण-छेदन करने वाले नाई को धमकाने लगती हैं कि बच्चे के कानो को क्यो छेद रहा है ? इस वर्णन मे बाल-स्वभाव की परख मातृ हृदय की अनुभूति और कर्ण छेदन के समय का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है—

कान्ह कुवर को कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की।
बिधि बिहसत हरि हसत हरि हेरि जसुमति की धुकधुकी सु उर की॥
लोचन भरि भरि दोऊ माता कन छेदन देखत जिय मुरकी।
रोवत देखि जननि अकुलानी दियौ तुरत नौआ कौ घुरकी॥[1]

बाल छवि वर्णन

बाल-कृष्ण की शोभा का वर्णन सूर ने विशेष रूप से किया है। है भी बात सही। यदि बाल रूप से सूर इतने अधिक प्रभावित न होते तो स्यात् इतना जीता जागता वर्णन न कर पाते। वैसे तो प्रत्येक बालक अपने माँ बाप के लिए अनिंद्य सौंदर्य से सम्पन्न होता है पर सूर के कृष्ण उनके अनन्त सौंदर्य से युक्त, लोकातीत प्रभु हैं। इसी से सूर ने और भी अधिक तन्मयता से उस रूप का इन चर्म चक्षुओ के बन्द रहने पर ज्ञान चक्षुओ से देखा है। यशोदा कृष्ण का सुन्दर मुख देखती हैं उन्हें उनके दूध के दाँत दिखाई देते हैं, इस शोभा का अवलोकन करके वे अत्यन्त आनन्दित होती हैं। वे अपने हृप को स्वय सभाल नही सकती अत नन्द को बुलाती हैं। इस प्रकार की रूप माधुरी पर मुग्ध हुई यशोदा की सुखानुभूति की अभिव्यजना सूर ने अत्यन्त मार्मिक शब्दो मे की है। उनकी इस अभिव्यक्ति मे वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति होती है—

'सुत मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दतियाँ प्रेम मगन तन की सुधि भूली।
बाहिर तें तब नन्द बोलाए देखौ धौं सुन्दर सुखदाई।
तनक तनक सी दूध दतुलिया देखौ नैन सफल करौ आई।
आनन्द सहित महर तब आये मुख चितवत दोउ नैन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यौ, मनो कमल पर बिज्जु जमाई।[2]

कृष्ण की बाल छवि के वर्णन मे छ बात द्रष्टव्य हैं—(१) आयु के क्रम के अनुसार छवि वर्णन (२) विभिन्न स्थानो पर कृष्ण की शोभा (३) अग प्रत्यग

---

१ सूरसागर पद ७९८
२ सूरसागर पद ७००

की छवि का वर्णन ,(४) वस्त्र और आभूषणों का वर्णन (५) शृंगार और (६) चेष्टाएं।

बाल छवि का वर्णन कृष्ण की आयु के विकास के अनुसार किया है। सूर उनकी आयु का कथन भी करते गए हैं जैसे 'सात दिन'[1], 'एक पाख त्रय मास'[2] 'कछु दिन घटि षटमास'[3], 'वर्ष दिवस'[4], 'पाँच बरस और कछुक दिनन'[5] आदि। कृष्ण की छवि का वर्णन गोद, पालने, पलका, भूमि पर घुटना चलन तथा भली भाँति घूमने फिरने आदि का किया गया है। अंग प्रत्यंग की छवि का वर्णन करने में सूर ने उनके समस्त शरीर के अंगों की शोभा का नाना भाँति से वर्णन किया है और उसमें उनके नख से लेकर शिखा पर्यन्त इन अंगों की शोभा का वर्णन है—पग, एड़ी, उंगली, नख, कर, चिबुक, भुजा, कंठ, ओष्ठ, मुख, जीभ, दाँत, नाक, नेत्र, कान, भौंहें, भाल, बाल और समस्त शरीर। कवि ने पजनी, किंकिणी, पहुँची, बघनखा, कठुला, रंग बिरंगी मणियां, प्रवाल, शेर का नख और मोती आदि आभूषणों से कृष्ण के विविध अंगों के अलंकृत करने का वर्णन किया है। वस्त्रों में पिछौरी, झंगुलिया और कुलही आदि मुख्य हैं। शृंगार के उपकरणों में स्नान कराना, बिन्दी, डिठौना, तिलक और काजल आदि का वर्णन है। इसके साथ ही बाल छवि चित्रण में कवि ने कृष्ण के हंसने, किलकने, तुतलाने, लड़खड़ाकर चलने, धूल धूसरित होने, माखन खाने, लपटाने और प्रतिबिम्ब को पकड़ने, खेलने और नाचने आदि की विविध चेष्टाओं का बार बार वर्णन किया है। इस वर्णन में सूर का कवि रूप अधिक जागृत हुआ है। अतः कभी कभी तो वे 'तनक तनक' शब्द की आवृत्ति करके उनके अंगों की लघुता का सौन्दर्य वर्णन करते हैं और कभी उनके अंग प्रत्यंग का नाना वस्त्राभूषणों सहित उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास और पुनरुक्तिप्रकाश आदि अलंकारों से पुष्ट वर्णन करते हैं—

> छोटी छोटी गोड़ियां अंगुरियां छबीली छोटी,
> नख ज्योति मोती मानो कमल दलनि पर।"[6]

अत्यन्त अलंकृत वर्णन करने के उपरान्त इसी पद में कवि यशोदा के वात्सल्य पूर्ण हृदय की अभिव्यक्ति करता है। कृष्ण का बाल छवि का आनन्दानुभव यशोदा इस प्रकार करती है—

---

१ सूरसागर पद ६६०
२ सूरसागर पद ६८६
३ सूरसागर पद ७०६
४ सूरसागर पद ७१२
५ सूरसागर पद ६१०
६ सूरसागर पद ७६६

"चुटकी बजावति नचावति जसोदा रानी,
बाल केलि गावति मल्हावति सुप्रेम भर
किलकि किलकि हस द्वै द्वै दतुरिया लस,
सूरदास मन बस तोतरे वचन वर ॥"[1]

कृष्ण की रूप माधुरी का सूर ने नाना भाति से वर्णन किया है। अन्त में कवि अत्यन्त भावुक हो जाता है और कृष्ण की छवि के वर्णन में अपनी असमर्थता दिखलाता है। क्योकि यह तो भाव का समुद्र है जो अकथ्य और अथाह है। हाँ यदि इन आँखो के जिह्वा होती तो स्यात उस रूप का वर्णन कर सकती, क्योंकि उस रूप का वस्तुत ज्ञान तो इन आखो को ही है जो कि उन्हे देखती है। सौन्दर्य की यही सीमा है। सूर ने कृष्ण के अनन्त सौन्दर्य के औन्नत्य को स्वीकार करके उस सौन्दर्य के वर्णन की असमर्थता स्पष्ट रूप से स्वीकार की है—

"बरनौ कहा अग अग सोभा भरी भाव जल रास री।
लाल गोपाल बाल छवि बरनत कवि कुल करि है हास री।
जो मेरी अखियन रसना होती कहती रूप बनाय री।
चिरजीवहु जसुदा को ढोटा सूरदास बलि जाय री।"[2]

बाल स्वभाव का चित्रण

सूर ने बाल स्वभाव का वर्णन बडी बारीकी से किया है। बच्चो की प्रकृति के भीतर जितनी पैठ सूर ने लगाई है उतनी हिन्दी के किसी कवि ने नही लगाई। शुक्ल जी के मत से सूर का बाल हृदय का कोना कोना झाक आने वाली उक्ति इसी आधार पर कही गई है। सूर ने साधारणत बच्चा का जो स्वभाव होता है उसका तो कथन किया ही है साथ ही किसी परिस्थिति विशेष पर बच्चे की किस प्रकार की अनुभूति और तदनुरूप प्रतिक्रिया होती है यह भी सूर से ओझल नही रहा। इनका बाल-स्वभाव चित्रण बडा मनोवैज्ञानिक है। बाल मनोविज्ञान से सूर का घनिष्ट परिचय लगता है। इतनी अधिक मात्रा मे मनोवैज्ञानिक चित्र हिन्दी के किसी कवि ने अकित नही किये।

स्पर्धा का भाव बालक म स्वाभाविक रूप से होता है। यशोदा कृष्ण को दूध पिलाती हैं और कहती हैं कि इससे तुम्हारी चोटी बढ जायगी। कृष्ण दूध पीते ही चोटी को देखते है और कहते हैं कि यह तो बढती ही नही। बलराम के साथ स्पर्धा करके वे भी अपनी चोटी बढाना चाहते हैं और उसका तत्कालीन प्रभाव न देखकर माता से पूछते है कि उनकी चोटी कब बढेगी ?—

---

१ सूरसागर पद ७६६
२ सूरसागर पद ७५७

"मया कबहि बढ़गी चोटी।
किती बार मोहि दूध पियत भय यह अजहू है छोटी॥"[1]

सूर ने बाल जिज्ञासा मे वातावरण का देखते हुए भाव लिया है। व्रज म कृष्ण बच्चो को गाय दुहत या गाय चराते देखते हैं फलत वे भी वसा ही करने का प्रयत्न करते हैं। ग्वालिन को दूध दुहते देखते हैं तो वही वठ जाते हैं कि मुझे भी दुहना सिखा दो। ग्वालिन मना भी करती है तो बार-बार गोदोहन सिखाने का आग्रह करते हैं। जब गाय दुहना सीख लेते है तो माँ से बडी नम्रतापूर्वक विनय करते हैं कि मुझे दुहना आ गया है मुझ दोहनी दे दो। वस्तुत ठीक प्रकार से उन पर दुहना नही आता। उनकी उस क्रिया से प्रत्येक पाठक आनन्द मग्न हो जाता है—

'तनक तनक सी दोहनी द द री मया।
तात दुहन सीखन कह्यो मोहि धौरी गया।
अटपट आसन बठि के गोथन कर लीन्हो।
धार अनत ही देखि क ब्रजपति हसि दीन्हो।"[2]

इसी प्रकार गाय चराने के लिए वे नया अनुभव करने का आग्रह करत हैं। माता से आज्ञा माँगते हैं कि मैं अब गाय चराने जाऊँगा। मैं अब बडा हो गया हूँ डरूगा नहीं। रेता पता मना मनसुखा और हलधर के सग जाकर वही वशीवट के नीचे खेलूँगा। जब ग्वाल चलते हैं तो उनके सग चल पडते हैं। गाय चराने के प्रसग मे कवि ने अनेक मानवीय चित्र वर्णित किय हैं। छाक आने पर कृष्ण वक्ष पर चढ कर सुबल, श्रीदामा आदि को बुलाते हैं आओ गाय इधर ल आओ और छाक खा लो। शिला पर वठकर सभी भोजन करते हैं। एक दूसरे से कौर छुडाकर झूठा खाते हैं।

कभी कभी ऐसा होता है कि बच्च एक दूसरे को डरा देत हैं। उन डर वाली वस्तुओ म हाऊ बडा प्रसिद्ध है। हाऊ है क्या इसका कुछ पता नही पर बच्चे आज भी इससे डरत हैं। कृष्ण छोट है उनको बलराम ने इसी प्रकार डरा दिया। बस कृष्ण अपनी मा से शिकायत करत हैं। बच्चे का स्वभाव है कि वे अपनी माँ को सवगुण-सम्पन्न और सवशक्तिमान समझता है। अत उसे माँ से बहुत बडी आशा होती है। कृष्ण बाल-स्वभाव वश बलराम के डराने के कृत्य की यशोदा से शिकायत करते हैं—

मया बहुत बुरो बलदाऊ।
कहन लग्यो बन बडो तमासो सब मोडा मिलि आऊ।

---

१ सूरसागर पद ७६३
२ सूरसागर पद १०२७

मोहू कौं चुचकारि गयौ लै जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चल्यौ कहि, गयौ उहाँ तें काटि खाइ रे हाऊ।
हौं डरपौ कांपौ अरु रोवौं कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौं नहिं भाग सकौं, व भागे जात अगाऊ।
मोसों कहत मोल को लीन्हौं आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बडौ चवाई तसेहि मिले सखाऊ॥"[1]

सूरदास ने बाल-स्वभाव के और भी बहुत से चित्र प्रस्तुत किये हैं—उनमें से मुख्य मुख्य ये हैं—मिट्टी खाना, अपनी इच्छा पूरी न होने पर लोट जाना, नहाने के लिये मना करना, कहानी सुनने का चाव रखना, खाना खाते समय कुछ खाना और कुछ गिराना, मिथ्या जगना और नाना भांति के कौतुक करना आदि सभी का सूर ने बड़े विस्तार के साथ वर्णन किया है।

बाल स्वभाव का एक चित्रण और भी द्रष्टव्य है। बच्चे के स्वाभाविक गुण, में हठ बहुत प्रसिद्ध है। वह जिसको हठ ठान ले माता पिता की क्या मजाल है जो उसकी बात पूरी न करें। नन्हा सा बच्चा इतने बडे माँ बाप को कभी-कभी नचा देता है। कृष्ण चन्द्रमा को देखते हैं। वह उन्हें अति प्रिय लगता है। बच्चे का निश्छल मन बडा सौंदर्य प्रेमी होता है। बडे होकर बुद्धि और विवेक के आगे यह सौन्दर्य प्रियता कम या परिवर्तित हो जाती है। कृष्ण को तो चन्द्रमा एक खिलौना लगता है। वे उस खिलौने को लेने के लिये मचल जाते हैं। बच्चे की सौन्दर्य, हठ और क्षण भर में भाव परिवर्तन की प्रवृत्ति से समन्वित सूर का निम्नोद्धृत पद बाल स्वभाव का उत्कृष्ट उदाहरण है। वात्सल्य रस से यह पद पूर्णत ओतप्रोत है साथ ही अन्तिम पंक्ति में वात्सल्य और हास्य का मिश्रण भी द्रष्टव्य है—

"मैया मै तो चन्द खिलौना लहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं, तेरी गोद न ऐहौं।
सुरभी को पय पान न करिहौं, वेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वै हौं पूत नन्द बाबा को तेरौ सुत न कहैहौं।
आगे आउ बात सुनि मेरी बल देवहिं न जनैहौं।
हँसि समुझावति कहति जसोमति नई दुलहिया दैहौं।
तेरी सौं मेरी सुनि मैया अबहिं बियाहन जैहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती, गीत सुमंगल गैहौं॥"[2]

---

१ सूरसागर पद १०९६
२ सूरसागर पद ८११

बाल क्रीडा और चेष्टाएँ

जहाँ बालक है वहाँ बाल क्रीडा भी है। सूरदास ने कृष्ण की बाल क्रीडा पर भी अनेक पद लिखे हैं बाल क्रीडा वात्सल्य रस को उद्दीप्त करने वाली होती है। अत यह वात्सल्य रस का महत्वपूर्ण अंग है। बालक्रीडा के बहुत से पदों मे वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति हुई है।

कवि ने कृष्ण के शिशु रूप और बाल रूप दोनों की क्रीडा का वर्णन किया है। शिशु क्रीडा के सुख की अनुभूति नन्द और यशोदा दोनों को होती है और वे शिशु-क्रीडा का बडा आनन्द लेते हैं तथा कृष्ण को नाना भाँति से खिलाते हैं। इस प्रकार के नाना चित्र सूर ने प्रस्तुत किये हैं। कृष्ण के आँगन मे क्रीडा करने का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—कृष्ण आँगन में घुटनों के बल चल रहे हैं नन्द और यशोदा उन्हें देख रहे हैं कृष्ण किलकारी मारते हैं और कभी पिता की ओर तो कभी माता की ओर देखते हैं। नन्द और यशोदा के लिये कृष्ण खिलौना बन गये हैं। कभी नन्द अपनी ओर बुलाते हैं तो कभी यशोदा अपनी ओर। कृष्ण शीघ्रता करने में कभी गिर भी पडते हैं। फिर उठते हैं और दौडते हैं। घुटनों चलते हुए कृष्ण कभी कभी अस्फुट शब्द बोलते हैं धूल मे शरीर सना हुआ है इससे वे और भी सुन्दर लगते है। उनके इस सौन्दर्य पर माँ न्यौछावर हुई जाती है वे कभी किलकारी मारते है और कभी मणियों के आँगन में अपने मुख का प्रतिबिम्ब देखकर उसे पकडना चाहते हैं।[1]

कृष्ण कुछ और बडे होते हैं तो यशोदा उन्हें चलना सिखाती है। उन्होंने कृष्ण की उँगली पकड रखी है। वे लडखडाते हुए पैर रखते हैं। कभी नन्द उँगली पकड लेते हैं। जब कृष्ण गिर पडते है तो उन्हें नन्द फिर हाथ से सहारा देकर उठा देते हैं—

> *"गहे अँगुरिया ललन की नंद चलन सिखावत।*
> *अरबराइ गिरि परत हैं कर टेकि उठावत।"*[2]

कृष्ण के पैर में पैजना बँधी हुई है। चलते समय वह बजती है। कृष्ण को उनके बजने से बडा आनन्द आता है। वे उस चाव में और भी प्रसन्नता से चलते हैं और अपने पैरों की ओर भी देखते हैं कि कैसी अच्छी बजनी चीज है? यशोदा कृष्ण को आँगन में नचाती हैं और नाचते हुए कृष्ण की शोभा देखकर प्रसन्न होती है। वे ताली देती हैं तो कृष्ण और भी अधिक नाचते हैं—

> 'आँगन स्याम नचावहीं जसुमति नदरानी।
> तारी दै दै गावहीं मधुरी मृदु बानी।।'[3]

---

१ सूरसागर पद ७२८
२ सूरसागर पद ७४०
३ सूरसागर पद ७५२

कभी-कभी बालक अपने स्वाभाविक चाचल्य के कारण भी बडा विनोद करता है। यशोदा दूध बिलो रही हैं उनकी रई की घुमड घुमड ध्वनि हो रही है। कृष्ण जसे जसे रई की ध्वनि होती है वसे ही वसे नाचते हैं और अपनी किंकनी तथा नूपुरा की ध्वनि को उसमे मिला देते हैं। यशोदा भला इस क्रीडा पर क्यो न निछावर होगी फिर कौन सहृदय है जो इस क्रीडा से आनन्दित न होगा ?

त्यो त्यों मोहन नाच ज्यों ज्यों रई घमरकौ होइ (री)।
तसिये किंकिनि धुनि पग नूपुर सहज मिल सुर दोइ (री)।"[1]

अब कृष्ण कुछ और बडे हो गये हैं। नाचने मे किसी की सहायता की आवश्यकता नही रही। वे कभी गाया को बुलाते हैं और कभी घर मे आते हैं। हाथ मे मक्खन लेकर आते है और कुछ खम मे प्रतिबिम्ब देखकर उसे खिलाना चाहते हैं।

सूर ने कृष्ण के माखन चुराने के प्रसग मे उनकी क्रीडा और कौतुकों की अनेक प्रकार से अभिव्यक्ति की है। इस सम्बन्ध मे उनके प्रथम बार माखन चुराने का उदाहरण बडा सुन्दर है। कृष्ण प्रतिबिम्ब को दूसरा माखन चोर बालक समझ कर उसे माखन खिलाते हैं और उनके इस ढग को एक गोपी देख लेती है और आनन्दित होती है। सूर की दृष्टि से इस प्रकार के भाव भी छिपे हुए नही रहे। तभी व बाल हृदय के सबसे बड पारखी कहे जाते हैं। इस प्रकार के उदाहरणों के चित्रण सूर की प्रतिभा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं—

प्रथम आजु म चोरी आयौ भलौ बन्यौ है सग।
आपु खात प्रतिबिम्ब खवावत गिरत कहत का रग।
जौ चाहौं सब देऊ कमोरी अति मीठो कत डारत।
तुमहि देत म अति सुख पायौ तुम जिय कहा विचारत।
सुनि-सुनि बात स्याम के मुख की उमगि हसी ब्रजनारी।
सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि-मुख तब भजि चले मुरारी।[2]

बालकों के पारस्परिक खेल का भी सूर ने वर्णन किया है। श्रीकृष्ण छोटे हैं परन्तु जब सुबल हलधर और श्रीदामा को खेलते हुए देखते हैं तो स्वय भी खेलना चाहते हैं। हलधर मना करते हैं कि तुम छोटे हो तुम खेलोगे तो तुम्हारे चोट लग जायेगी। परन्तु कृष्ण खेल का आग्रह करते हैं। खेल में जब उन्हे छू लिया जाता है तो किस प्रकार अपना बुद्धि चातुर्य दिखलाते हैं—

'जान क म रह्यौ ठाडो छुवत कहा जु मोहि'[3]

---

१ सूरसागर पद ७६६
२ सूरसागर पद ८८३
३ सूरसागर पद ८३१

बच्चा के खेल के वातावरण का चातुर्य क्रीडा खीझ और प्रसूभ का वात्सल्य रस-पूर्ण वर्णन सूर ने किया है। कृष्ण को गल म बलराम खिझा देत हैं कि तुम यशोदा के पुत्र नहीं हो तुमको तो उन्होंने मोल लिया है। कृष्ण अपने माता पिता स बलराम की शिकायत करते हैं। सूर ने इसका अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया है।

मया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीन्हो तू जसुमति कब जायो।
कहा करों इहि रिसि के मारे खेलन हौं नहिं जात।
पुनि पुनि कहत कौन है माता को है तेरो तात।
गोरे नन्द जसोदा गोरी तू कत स्यामल गात।
चुटकी द द ग्वाल नचावत हसत सब मुसकात।
तू मोही को मारन सीखी दाउहि कबहु न खीझ।
मोहन मुख रिसि की ये बातें जसुमति सुनि सुनि रीझ।
सुनहु कान्ह बलभद्र चवाई जनमत ही को धूत।
सूर स्याम मोहि गोधन की सौं हौं माता तू पूत।"[1]

कुछ बड होकर कृष्ण बालको के साथ म चौगान भी खेलते हैं। कभी-कभी उन्हें चौगान नहीं मिलता तो माता से पूछते हैं कि मेरा चौगान कहां गया है। मां सम्भाल कर रख दिया करती है तो उसे बता देती है कि अमुक स्थान पर रखा है।[2] कभी भौरा और चकडोरी का खेल बालको म चलने लगता है तो कृष्ण सबके साथ जाने के लिये माता स भौरा और चकडोरी मागते हैं—

"द मया चकडोरी"[3]

उलाहने—

कृष्ण के उत्पातो स तग आकर गोपियाँ उलाहन लाती हैं। ये उलाहने माखन चोरी के हैं पर कुछ पनघट के भी हैं। गोपियो के उलाहनो मे आन्तरिक क्रोध या द्वेष नहीं है। बल्कि व तो उलाहने के बहाने कृष्ण को देखने आती है। कृष्ण इन उत्पातो द्वारा उनके वात्सल्य के और आगे चलकर प्रम के और अधिक निकट पहुचते हैं। उलाहना के भी सूर ने बहुत से पद लिखे हैं और उनके साथ कृष्ण के बुद्धि चातुर्य का भी अच्छा परिचय मिलता है।

एक दिन किसी गोपी ने अकेले कृष्ण को माखन चाखने के लिये भाजन मे हाथ डालते ही पकड लिया। कृष्ण तुरन्त अपनी बुद्धि के चातुर्य स इस प्रकार बात

---

१ सूरसागर पद ८३३
२ सूरसागर पद ८६१
३ सूरसागर पद १२८७

मिलाते हैं कि मने समझा था कि अपना घर है इसी स यहा आ गया। इसम चीटी दिखलाई दे रही थी तो निकालने का हाथ डाला है—

"म आयो यह घर मेरो है या धोखे में आयो।
देखत हों गोरस में चींटी काढन को कर नायो।"[1]

कृष्ण का माखन चोरी करना नित्य का काय हो जाता है। उनके साथ मे पूरी टोली रहती है। माखन के भाजन फोडना, बदरो को माखन खिलाना, दूध मे पानी मिलाना, बछडे छोड देना आदि कार्यों स गोपिया तग आ जाती हैं और वे कृष्ण की करतूता के उलहाने लेकर यशोदा के पास आती हैं। यशोदा पुत्र प्रेम-वश यह स्वीकार नही करती और उनसे कृष्ण का पक्ष लेकर लडने लगती है—

मेरो गोपाल तनक सो कहा करि जान दधि की चोरी।
हाथ नचावत आवति ग्वालिनि जीभ कर किन थोरी।[2]

एक दिन किसी गोपी के यहा कृष्ण न माखन चुराना शुरु किया तभी वह गोपी आ गई। कृष्ण पहले ही उल्टा उस गोपी को उलाहना देने लगते हैं कि तेरा लडका मेरी मुरली लेकर भाग गया और रोने जसी सूरत बना लेत हैं अब गोपी भला क्या करे ?—

"माखन चुराइ बठ यों तौ लो गोपी आई।
देखे तब बोल्यौ कान्ह, उतर यों बनाई॥
आखें भरि लीनो उराहनौ देन लाग्यौ।
तेरो ही सुवन मेरी मुरली ल भाग्यो॥"[3]

झूठ कब तक चलेगा ? यशोदा के सामने एक दिन गोपी कृष्ण को पकडकर ल आई। कहने लगी, यशोदा झूठ मानती है अब पहचान कर ले कि यह तेरा ही पुत्र है या किसी और का ?—

"जसुमति धौं देखि आनि, आग ह्व ल पिछानि।
बहियां गहि ल्याई कुवर, और को कि तेरो।"[4]

सूर ने यशादा के आगे भी कृष्ण के मुख से नाना भाति की चतुराई दिखला कर उन्हे निर्दोष सिद्ध किया है। परन्तु बहुत स बहाने बनान पर भी एक बार कृष्ण के माखन चुराने पर यशोदा को विश्वास हो जाता है। कृष्ण उस समय माता के आग रोने लगते हैं। माता पुत्र के अश्रु प्रवाह का कब तक सहन कर सकती है ? व तुरन्त स्नेहार्द्र होकर कृष्ण को प्यार करती हैं और उनके सारे दोष भूल जाती हैं। माता

---

१ सूरसागर पद ८६७
२ सूरसागर पद ६११
३ सूरसागर पद ६०२
४ सूरसागर पद ८६४

"जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरो लाल घुटुरुवन रेंगे कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दांत दूध के देखौं कब तोतरे मुख बचन भरै।
कब नंदहिं कहि बाबा बोलै, कब जननी कहि मोहि ररै।
कब मेरो अंचरा गहि मोहन जोइ सोइ कहि मोसों झगरै।
कबधौं तनक तनक कछु खैहै अपने कर सो मुखहिं भरै।
कब हंसि बात कहैगो मो सों जा छवि ते दुख दूरि हरै॥'[1]

शिशु स्वभावतः चंचल होता है। अपनी चञ्चलता करते-करते वह थकता नहीं। जब सो जाता है तो माँ को सन्तोष होता है कि अब बालक चैन में है। बालक की तनिक सी बेचैनी माँ को असह्य है। कृष्ण कहानी सुनते सुनते जब चौंक पड़ते हैं तो यशोदा कुछ पढ़ पढ़ के उसके दुख को दूर करने का प्रयत्न करती है। सोचती हैं *किसी ने खेलन में नजर लगा दी है* इसलिए राई और नमक को उतारा करती हैं। उसके लिए कुल के देवताओं की मनौती करती हैं।

कभी जब कृष्ण खेलते होते हैं तो यशोदा बुला लेती हैं। कृष्ण घुटनों के बल आते हैं। शरीर में धूल भरी हुई है। वैसे ही वे उन्हें उठा लेती है। अंचल से धूल झाड़ती हैं और कहती हैं कि यह धूल कहाँ से भर लाया ?[2] कृष्ण सोये होते हैं तो यशोदा उन्हें जगाती हैं कहती हैं देखो सारे बच्चे उठकर तुम्हें देखने आ गये। अब तो सवेरा हो गया मुख धोओ और माखन रोटी मेवा आदि खाओ।[3] वे भी ठीक माँ ही बच्चे का लालन पालन करती हैं। उसका हृदय स्वभावतः बच्चे की सुख सुविधाओं की ओर रहता है।

बालक को राजी करना बड़ी टेढ़ी खीर है। कृष्ण अब बड़े हो गये हैं। माँ स्तन्य को छुड़ाना चाहती है तो कहती हैं कि तुम्हें जब ब्रज के बालक दूध पीता देखते हैं तो हँसते हैं। अब तुम बड़े हो गये हो फिर भी दूध पीते हो तुम्हें शर्म नहीं लगती। फिर कहती हैं कि ये तुम्हारे दांत जो बड़े अच्छे हैं अब दूध पीने से बिगड़ जायेंगे—'*जै हैं बिगरि दांत ये आछे ता ते कहि सुमुझावति*'[4]। कृष्ण लजा जाते हैं और आंचल में मुख छिपा लेते हैं। यह माता का हृदय है। वह बालक को राजी करने में क्रोध और रौब द्वारा कष्ट नहीं देना चाहती। दे भी कैसे वह उसी की ही तो आत्मा है। इसी से कृष्ण को स्तन्य छुड़ाने के लिए उसकी प्रिय वस्तु दांत बिगड़ जाने का बहाना करके समझाती है। इस प्रकार मातृ हृदय की अभिव्यक्ति के सूर ने *अनेक चित्र खींचे हैं।*

---

१ सूरसागर पद ६६४
२ सूरसागर पद ७२६
३ सूरसागर पद ८२५
४ सूरसागर पद ८४०

कभी-कभी यशोदा बच्चा के साथ बच्चा बन जाती है । कृष्ण को वह एक पल भी अलग होने देना नही चाहती । व सूय की मणि की भाँति उन्हे देखती रहती हैं । अत कहती हैं कि खेलना है तो सभी बालको को बुलाकर तुम और बलराम यही खलो । खेल मे आँख मुदने की बात आती है तो कृष्ण यशोदा स मुदवाने हैं । कृष्ण सब बच्चा मे छोटे है । यशोदा छोटे होने के नाते चाहती हैं कि कृष्ण जीत जाए तो चुपके चुपके बता देती है कि बलराम इस घर म है । कृष्ण की जोडी तो श्रीदामा स है । अत वह उस पकड लेते है । सब ग्वाल ताली देकर हँसत है कि श्रीदामा चोर हो गया और यशोदा कृष्ण की जीत पर आनन्द मनाती है—

'हसि हसि तारी देत सखा सब भये श्रीदामा चोर ।
सूरदास हसि कहत जसोदा जीत्यौ है सुत मोर ।'[1]

माखन चोरी के प्रसग मे यशोदा के मातृ हृदय की अभिव्यक्ति और अधिक हुई है । गोपिया उलाहने लेकर आती है तो विश्वास ही नही करती । कभी कृष्ण को भी समझाती हैं । यदि कभी ताडना देती हैं तो कृष्ण की आँखो म आँसू देखकर द्रवित हो जाती हैं । एक बार बहुत से उलाहन सुनकर यशोदा नाराज हो गइ और कृष्ण को ऊखल स बाँध दिया । कृष्ण हिचकियाँ भरकर रोन लगे तो अन्य गोपियो का हृदय भी द्रवित हो गया । व यशोदा स कहन लगी कि इतने अच्छे पुत्र पर इतना क्रोध क्या करती हो ? क्या हो गया ? कहा तो माखन अपने घर से हम ल आयें ? उनकी उक्तियाँ सुनकर यशोदा का पुत्र पर किया गया निष्ठुर व्यवहार गोपिया पर उमड पडता है । अब उन्हे कृष्ण की कोई गलती नही लगती । गोपिया न क्या बार-बार शिकायत की जिसस कृष्ण को बाधना पडा । इसका कारण तो य गोपियाँ ही हैं । क्या हो गया यदि माखन लडके न खा भी लिया ? यशोदा के इन शब्दो म मातृ-हृदय की सच्ची अनुभूति होती है—

"कहन लगीं अब बढि बढि बात ।
ढोटा मेरो तुमहि बधायो तनकहि माखन खात ॥"[2]

माता कृष्ण के पहले बडे होने के विषय म नाना अभिलाषायें करती था । अब बड होकर कृष्ण जो काय करत हैं उनस बडी प्रसन्न होती हैं । कृष्ण गाय चरान जाते हैं तो वे कितनी प्रसन्न होती है—

"आजु गयो मेरो गाय चरावन कहि कहि मन हुलसावत ।'[3]

कभी-कभी कृष्ण बिना कलेऊ किये चले जाते है तो माँ को उनके भूखे रहन पर धय नही रखता । वह किसी दूसरी ग्वालिन के हाथ छाक भेज देती है । कभी

१ सूरसागर पद ८५८
२ सूरसागर पद ९७३
३ सूरसागर पद १०४

पूछती हैं कि तुमने कहाँ कहाँ गाय चराई कहाँ कहाँ खेले ? एक बार कृष्ण ने शिकायत कर दी कि मैं गाय नही चराऊ गा क्योंकि सारे ग्वाले मुझ पर ही गाय घिरवाते हैं। मेरे तो पैर भी दुखने लगे। बस फिर क्या था यशोदा एकदम क्रोधित हो जाती हैं। माँ यह कैसे सहन कर सकती है कि उसके बेटे पर गाय चराने मे ऐसी मुसीबत आये। वह सारे ग्वालो को गाली देने लगती हैं। यशोदा के इन शब्दों म मातृ हृदय की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है—

> "यह सुनि माइ जसोदा ग्वालिनि गारी देत रिसाइ।
> म पठवति अपने लरिका को आव मन बहराइ।
> सूर स्याम मेरो अति बालक मारत ताहि रिंगाइ।"[1]

माता के हृदय की अभिव्यक्ति गोवर्धन धारण के प्रसंग म भी हुई है। गोवर्धन धारण के पश्चात् माता यह आश्चर्य करती हैं कि इतना बडा पहाड कैसे उठा लिया ? माता के लिये तो पुत्र सदैव कोमल और शक्तिहीन रहता है। यशोदा कृष्ण का हाथ छाती से लगाती हैं। वे कृष्ण के कोमल हाथ को दबाती हैं। यह है माता का असली हृदय। भला जिन हाथो ने इतने बड पर्वत को उठा लिया उनका यशोदा के दबाने से दुख दूर हो सकता है ? पर मातृ हृदय ऐसा ही होता है—

> गिरिवर कसैं लियौ उठाइ।
> कोमल कर दाबति महतारी यह कहि लेत बलाइ ॥"[2]

मातृ हृदय की अभिव्यजना के प्रसंग म यह भी अवेक्षणीय है कि सूर ने यशोदा के अतिरिक्त राधा की माता के हृदय को भी परखा है। व्रज मे यह वृत्त फैल गया है कि राधा और कृष्ण का बडा प्रेम है। राधा की माता को इसका पता चलता है। वे राधा से कहती हैं कि तू इस तरह घूमती है। क्या अब भी छोटी है? तुझे लाज नही आती। तेरे पिता तुझस नाराज हो रहे थे और गाली द रहे थे। तेरे भाई भी तुझ मारने का कह रहे थे। खेलना है तो बेटियो के साथ खेले कृष्ण के साथ नही। इस बात को सुनकर राधा क्रोधित हो जाती है। सन्तान का माता पर क्रोध खूब चलता है। वह कहती है मेरे सामने बुलाओ किसने ये बातें कही हैं मेरे आगे कहे तो देखू। पिता नाराज होते है और भाई मारने को कहते हैं। ये बातें निराधार है—

> "कहौ कौन बात बोलियौ तिहि मात मेरे आगे कहे ताहि देखौं।
> तात रिस करत भ्राता कहै मारि हौं भीति बिनु चित्र तुम करति रेखौ।"[3]

बस अब मैं खेलने कही भी नही जाऊ गी। और सब लडकियां घर घर खेलती हैं बस तू मुझको ही कहती है। उनके माता पिता थोडे ही हैं जो यहाँ वहाँ खेलती

---

१ सूरसागर पद ११२८
२ सूरसागर पद १५८५
३ सूरसागर पद २३२५

फिरती हैं। तू कभी मुझसे कुछ कहती है कभी कुछ। कभी कहती है कहीं भी मत जाओ। इस पर माता का हृदय दुखित हो जाता है और राधा का क्रोध देखकर सब लोगों की बातें झूठ लगती हैं। वह राधा को छाती से लगा लेती हैं मुख चूमती हैं और मारा क्रोध दूर हो जाता है—

मन ही मन रीझत महतारी।

कही भई जो बाढ तनिक गई अब ही तौ मेरी है बारी।"[1]

माता का हृदय ऐसा ही होता है। सन्तान के अपराधों की गिनती करना माता को नहीं आता। राधा की माता का यही डर है कि राधा यदि मचल गई तो कैसे मनाऊंगी। इसलिए राधा के सामने वह अपनी हार मानकर मातृ हृदय का प्रसन्नपन प्रदर्शित करती है—

अबहिं मचलि जायेगी तब पुनि कैसें जाति बुझाई।

मानी हारि महरि मन अपने बोल लई हँसि कै बुलराई॥"[2]

माता हँसकर प्यार करती है। किसलिए? अब तक गुस्से में बात हुई। स्यान उसका बेटी का कुछ ख्याल हो। सारी बात दूर हो जायें इसलिए हँसकर प्यार करती है।

वियोग वात्सल्य

कृष्ण के वियोग वात्सल्य में मातृ हृदय की और भी उत्कृष्ट अभिव्यंजना की गई है। कृष्ण के वियोग के दो अवसर आते हैं—यमुना में कूद पड़ने पर और मथुरा जाने पर। सूर ने दोनों अवसरों के वियोग का वर्णन किया है। यमुना में कूदने के समय का वियोग थोड़े समय का है। यह इतना विस्तृत और मार्मिक नहीं है। इस समय कवि ने करुण वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। कृष्ण के अनिष्ट की बलवती आशंका से नन्द यशोदा और ब्रज के सभी लोग अभिभूत हो जाते हैं। सूर ने उस समय का वातावरण भी ऐसा ही वर्णित किया है। यशोदा का आंतरिक प्रेम उसे स्वभावतः आशंकित कर देता है। बिल्ली के सामने आने छींक होने बायें कौए और गाय खर का स्वर होने पर माथे से होकर कौए के उड़ने से उनका हृदय पहले से ही बड़ा व्याकुल हो जाता है। कवि ने यशोदा की उस समय की आतुरता का वर्णन इस प्रकार किया है—

"खन भीतर खन बाहिर आवति खन आगम इहि भांति।

सूर स्याम को टरत जननी, नेकु नहीं मन सांति।"[3]

कृष्ण के कालीदह में कूदने की सूचना से यशोदा बहुत व्याकुल होती हैं। वे कृष्ण को नाना भांति से पुकारती हैं। अनिष्ट की आशंका से अभिभूत होकर शोक

१ सूरसागर पद २३२८
२ सूरसागर पद
३ सूरसागर पद ११५८

के समुद्र म डूब जाती हं। व्याकुल हो पथ्वी पर गिर पडती हैं और शरीर की सुध बुध खो देती हैं। नन्द भी करुण विलाप करने लगत है—

> "सुनो गोकुल कियो स्याम तुम यह कहि लोग उठ सब रोइ।
> नन्द गिरत सबहिन धरि राख्यो पोछत बदन नीर ल धोइ॥"[1]

वियाग का दूसरा अवसर कृष्ण के मथुरा गमन के समय आता है। वियोग की व्यापक अनुभूति इसी समय होती है। सूर का वियोग वणन भी इतना ही मार्मिक है जितना उनका सयोग वणन। सूर के शृंगार और वात्सल्य दोनो प्रकार के वियोग की अभिव्यजना हिन्दी साहित्य का महत्वपूर्ण अग है। वियोग वात्सल्य की रस व्यजना का विवेचन करने से पूव एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है और वह यह कि आचाय रामचन्द्र शुक्ल ने दो चार कोस पर रहन वाले कृष्ण के प्रति अभिव्यक्त वियोग पर व्यग्य किया है कि वह वियाग वियाग के लिए है या ठाली बठ का काम है।[2] वस्तुत यह बात नही है। प्रथमत तो वियोग का अनुभूति के लिए स्थान की दूरी का कोई प्रश्न नही होता। सयाग सुख की अनुभूति न होने पर वियोग हाता है। इसलिए एक स्थान पर एक ही साथ बठ हुए भी वियोग की अनुभूति हा सकती है। दूसरी बात यह है कि कृष्ण के वियोग की परिस्थिति भी किसी प्रकार कम ममाहत करने वाली नही है। उसके कई कारण है—

(१) *कृष्ण क साथ गोपियो का दीघकालीन साहचय रहा है। उनका एक एक* चरित्र उनके उर की पुस्तक पर लिखा हुआ है। अत उस भुलाना उनके लिय सम्भव नही।

(२) स्नेह म अनिष्ट की आशका प्रधान हाती है। कस क यहा जान म यह भाव और भी अधिक अधीर बना देता है।

(३) कृष्ण क वियाग का एक मनोवज्ञानिक कारण भी है। कृष्ण क राजा हो जाने पर उनम और गाप म बहुत बडा अन्तर हा गया हैं। उनक अपन गोपाल राजा कृष्ण हा गये हैं। इसम कृष्ण का वियाग उनके मम का छू लता है।

(४) कृष्ण का राजनतिक सम्बन्ध बढ जान म व्यावहारिक रूप स उनकी ममता ब्रजवासियो क लिय और भी अधिक बढ गई है।

(५) कृष्ण वियाग का एक और महत्वपूर्ण कारण है वह यह कि भक्त लागो क लिय ईश्वर क विरह म व्यक्ति अपन मानसिक उद्गारो को अभिव्यक्त करन का यह एक माध्यम हो गया। भक्त लागो न इसको प्रतीक मानकर भक्त की वियोग जन्य दशा का वणन किया है। जिस प्रकार जायसी के नागमती के वियाग म

---

१ सूरसागर प० ११९२

२ सूरदास प० १५८

जीवात्मा का परमात्मा के प्रति वियोग वर्णित है उसी प्रकार यहा भी किया गया है। इसी से वह और भी अधिक मार्मिक हो गया है।

कृष्ण के मथुरा जाने पर सूर ने चार बार वियोग की अभिव्यक्ति की है। १ मथुरा जाते समय २ नन्द आदि के मथुरा से लौटते समय ३ कुछ समय व्यतीत हो जाने पर नन्द और यशोदा के वार्तालाप करते समय ४ उद्धव के आगमन के समय इन सभी अवसरो पर यशोदा की मनोदशा और वात्सल्यमय उद्गार ही विशेष रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। मथुरा जाते समय वे अनिष्ट की आशका से अभिभूत होती हैं। नाना भाति के यत्न करती हैं जिससे कृष्ण और बलराम का गमन रुक जाय। अपने बच्चो के स्नेह का कभी उनकी असमर्थता का और कभी राजदरबार के नियमादि के विषय म उनकी अभिज्ञता का अक्रूर से भी कथन करती हैं। यशोदा के शब्दों मे अक्रूर की खुशामद भी अभिव्यक्त हुई है ताकि वह प्रसन्न होकर बच्चो को छोड ही जाय। कभी वे कृष्ण के प्रति स्नेहाभिभूत होकर अपने वात्सल्य को अभिव्यक्त करने लगती हैं—

"मेरो माई निधनी को धन माधौ।
बारबार निरखि सुख मानति तजति नहीं पल आधो।
छिनु छिनु परसति अकन लावति प्रम प्रकृत है बाधो।
निसि दिन चन्द चकोरी अखियन मिट न दरसन साधो॥"[1]

माता के वियोग-व्यथित मानस के और भी बहुत से भावो का सूर न वर्णन किया है। कृष्ण को ले जाने म उन्हे सारा दोष अक्रूर का लगता है। अत उन्हे वे अपना शत्रु समझती हैं। यशोदा को जब कृष्ण को रोकने का कोई माग नही सूझता तो वे बेचन हो जाती हैं और व्रज के लोगो स पुकार करने लगती हैं। उनके वियोग-व्यथित मानस की कातरता से भरे हुए शब्दो की अभिव्यक्ति सूर ने निम्नोद्धत पद म की है—

यशोदा बारम्बार यों भाष।
है कोउ ब्रज मे हितू हमारो चलत गुपालहिं राख।
कहा काज मेरे मगन को नृप मधुपुरी बुलायो।
सुफलकसुत मेरे प्राण हरन को कालरूप ह्व आयो।
बरु ये गोधन हरौ कस सब मोहि बदि ल मेलो।
इतने ही सुख कमल नन मेरी अखियन आग खेलो।
बासर बदन विलोकत जीवों निसि निज अकमलाऊ।
तेहि बिछुरत जो जीवो कमवश तो हसि काहि बुलाऊ।

---

१ [सूरसागर पद ३५८९

कमल नैन गुन टेरत टेरत हो अधर वदन कुम्हिलानी।
सूर कहां लगि प्रकट जनाऊं दुखित नंद जू की रानी।"[1]

उधर कृष्ण स्वय चलने को तयार है। इससे यशोदा का विरह और भी बढता है। वे कहती है कि गोपाल ! जिस मुख से तुमने नन्द से तात और मुझसे माता कहा है उस मुख से जाने को कैसे कहते हो ? अब कौन माखन खायेगा और मथानी को पकडकर जिद करेगा ? यशोदा मुरझाकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है— 'सूरदास अवलोकि यशोदा धरणि परी मुरझाई।'[2] उनका मन और भी आशंकित होता है। उनके कृष्ण तो ऐसे निष्ठुर नहीं थे। अवश्य अक्रूर ने कुछ जादू टोना कर दिया है। इसी से तो और किसी से बोलते नहीं, अक्रूर के साथ ही लगे हुए हैं। रोहिणी भी पृथ्वी पर गिरती है और व्याकुल होती है। उनकी सम्मति मे भी अक्रूर के आने से ये दोनो बालक निष्ठुर हो गये हैं। नन्द जी यशोदा का समझाते भी हैं। उन्होंने अघ बक, धेनु तृणावर्त केशी आदि को मारा है। उनका कंस कुछ भी नहीं कर सकता। परन्तु यशोदा सारी रात व्याकुल होकर रोती ही रहती हैं। पुत्र प्रेम मे पगा मन ऐसी बातें नहीं समझ पाता। जब कोई सखी आकर कहती है कि अब कृष्ण जाने के लिये रथ पर बैठ हैं तो यशोदा पृथ्वी पर लोट जाता है। दृश्य देखने लायक है। चारो ओर ब्रज के लोगो की नन्द के दरवाजे पर भीड है। बीच मे रथ पर कृष्ण और बलराम बैठे हैं और यशोदा पृथ्वी पर लोट रही हैं। ऐसा है माता का हृदय। यशोदा के लिये कृष्ण, ब्रज को उजाड कर जा रहे हैं। जाते समय धैर्य कैसे बधे ? अत एक बार इधर को तो देख लें। यशोदा अत्यन्त मार्मिक शब्दो मे कृष्ण से कहती है कि लाल ! बिछुडते समय मेरी छाती से लग जाओ और जहां दीन घोषा ने यहा जन्म लिया है उस खेरे को भी देख लो—

'मोहन नेक बदन तन हेरो।
राखो मोहिं नात जननी को मदन गुपाल लाल मुख फेरो।
पाछे बढो बिमान मनोहर बहुरो यदुपति होत अंधेरो।
बिछुरत भेंट देहु ठाढे ह्वै निरखो घोष जनम को खेरो।"[3]

नन्द को कृष्ण वियोग का धक्का मथुरा मे लगता है। कंस को मारकर उग्रसेन को राज्य देकर कृष्ण नन्द के पास आते हैं। नन्द और ग्वाल बाल सब सोच रहे हैं कि अब कृष्ण ब्रज को चलेगे। अपनत्व के मारे वे कृष्ण की विजय से फूले नहीं समा रहे हैं परन्तु बात कुछ और ही निकलती है। वे नन्द से कहते हैं कि

१ सूरसागर पद ३५६१
२ सूरसागर पद ३५६२
३ सूरसागर पद ३६०६

अच्छा तुमने हमारा बडा अच्छा पालन पोषण किया। नन्द को पहले तो बडा सकोच लगता है कि मेरा बालक यह ऐसी बातें क्या कह रहा है? फिर उनकी नीरस वाणी को सुनकर बड़े शकित होते हैं। कृष्ण ने फिर नन्द से कहा कि मैं तो ससार मे पृथ्वी का भार उतारने आया हूँ। इस ससार मे मिलना जुलना चार दिन है। तुम सब जानते हो। तुमने मुझे जो सुख दिया है उसका मैं क्या बयान करू—

"मिलन हिलन दिन चारि को तुम तो सब जानौं।
मो को तुम अति सुख दियौ सो कहा बखानौं।"[1]

नन्द की दशा बडी दयनीय हो जाती है। वे कहने लगते हैं कि हे कृष्ण! एसे निष्ठुर वचन मत कहो। मुझ पर ये सहे नही जाते। तुम हँसकर वचन कहते हो और मेरे नेत्रो मे जल छा रहा है। चलो और व्रज के आगन मे डालना। तुम्हारी माता यशोदा तुम्हारी बाट देख रही होगी। फिर कृष्ण की भाँति हलधर भी ऐसे ही निष्ठुर वचन कहते है। इससे नन्द की व्याकुलता और भी अधिक बढती है। सूर ने उनकी दशा का इस प्रकार कथन किया है—

"व्याकुल नद सुनत ए बानी।
डसी मानो नागिनी पुरानी।"[2]

नन्द को यशोदा की प्रीति का पता है जब वह दौडकर आयगी तो वे क्या कहेंगे? इसलिये नन्द कहते हैं कि मैं तुम्हे छोडकर यहाँ से पर नहीं रखूगा। सूर ने उनकी वेदना का नाना भाँति से कथन कर के अत मे अपनी असमर्थता प्रकट की है—

अरध स्वास चरण गति थाक्यो नैनन नीर न रहाइ।
सूर नद बिछुरे की बेदन मो पै कहिय न जाय।"[3]

उधर माया मोह मिलन अरु बिछुरन ऐसे ही जग जाइ[4] आदि शब्द कहते हैं जिन्हे सुनकर नन्द के नेत्रो मे और जल छा जाता है। उन्हे बडा भारी दुःख होता है और उनको एसा लगता है कि कृष्ण बदल गये है। जब कुछ उपाय नही सूझता तो कृष्ण के चरण पकड कर दीन बन कर विनती करते है कि हे श्याम व्रज तो चलो—

'धाइ चरन परे हरि के चलहु व्रज को श्याम।"[5]

---

१ सूरसागर पद ३७३२
२ सूरसागर पद ३७३३
३ सूरसागर पद ३७३४
४ सूरसागर पद ३७३५
५ सूरसागर पद ३७३६

नन्द बार बार यही कहते हैं—

"मेरे मोहन तुम बिन नाहिं जहौं।
महरि दौरि आगे जब ह्वै कहा ताहि म कहौं।"[1]

कृष्ण फिर भी यही कहते हैं कि जितनी सेवा आपने की है व्ह्ला नहा दिया जा सकता। घर जाओ और एसा नाता माने ही रहना। ऐसा कह कर कृष्ण उठ पडते हैं— उठे कहि माधो इतनी बात[2] भला अब नन्द के पास चारा ही क्या था? उनका हृदय धकधक करने लगता है और पछताते हुए चल देते हैं—'धक धकात मन बहुत सूर उठि चले नन्द पछतात।[3] उनका हृदय दुःख से परिपूर्ण हो गया है। वे किस तरह गोकुल आये होंगे—इसका अनुमान सूर की इस पंक्ति से लगाया जा सकता है—' मध मध पद भुव भई कोटि गिरि जो लगि गोकुल पठो।"[4] नन्द की दशा बडी दयनीय हो गई है। क्योंकि इधर तो कृष्ण का विरह और उधर यशोदा के व्यंग्य।

व्रज म पहुंचते ही यशोदा और रोहिणी अपने पुत्रों से मिलन के लिये विकल छटपटाती हुई सबसे आगे आती हैं। बडी प्रसन्न हो रही है कि अब पुत्रों से मिलेंगी परन्तु उनको वहां न देखकर बडा दुख होता है। यशोदा का इसमें सारा कसूर नन्द का लगता है। वे कृष्ण को छोडकर आये ही क्यों? कैसे पिता हैं? दशरथ को न देखो पुत्र के बिछुडते ही प्राण त्याग दिये। वे नाना भांति से अपनी झुंझलाहट का पात्र नन्द को समझकर उन पर खीझती हैं। वह कहती है कि नन्द मथुरा जाओ और चाहे करोडों यत्न करने पडें कृष्ण को लेकर आओ। फिर कृष्ण की स्मृति से बेचैन हो उठती हैं। सूर ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

"छांडि सनेह चले कत मंदिर दौरि न चरन गह्यो।
फटि न गई बज्र की छाती कत यहि सूल सह्यो।
सुरति करति मोहन की बातें नयनि नीर बह्यो।
सुधि न रही अति गलित गात भयो जनु डसि गयो अह्यो।"[5]

पुन विरह से दग्ध नन्द भी थोडी अपनी झुंझलाहट यशोदा पर डालते हैं और कहते हैं—

'तब तू मारिबोई करति।
रिसनि आगे कहि जो आवत अब लै भांडे भरति।

१ सूरसागर पद ३७३८
२ सूरसागर पद ३७४२
३ सूरसागर पद ३७५२
४ सूरसागर पद ३७४३
५ सूरसागर पद ३७५३
६ सूरसागर पद ३६६६

यशोदा और नन्द कभी कभी कृष्ण की बात चलाने लगते है। रात्रि को बात करते करते प्रात काल हो जाता है। यशोदा को उस समय कृष्ण की और याद आती है। नन्द यशोदा बडा पछताते हैं कि हमने कृष्ण पर ऐसे कुश काँटे वाले माग म गाय चरवाई थी। तनिक सी दधि के लिय कृष्ण का उखल मे बाधा था। यशोदा कहती है कि कम ही छलबल करके कृष्ण को यहा लिवा लाओ। चाहे मथुरा म कितने ही मोती मणि और लाल हैं परन्तु व घुंघची की माला का क्षण भर भी नही छोड सकते। यशोदा का मन समझाये नही समझता। समझैं भी कसे। मोहन के खाने योग्य वस्तु अब किसे खिलाय—

'यद्यपि मन समझावत लोग।
शूल होत नवनीत देख मेरे मोहन मुख के जोग।''[1]

कभी वह कहती है कि नन्द अब तुम ठोक बजा कर अपने ब्रज को रख लो मैं तो मथुरा जाती हूँ।

'नद ब्रज लीजो ठोक बजाइ।
देहु विदा मिलि आँहि मधुपुरी जह गोकुल के राय।'[2]

कृष्ण को मथुरा म चाहे सब सुख हैं पर माँ का हृदय तो माँ का ही है। यशोदा को यही चिन्ता है कि कृष्ण का बिना माग माखन रोटी कौन देगा ?

"प्रात काल उठि माखन रोटी को बिन माग वहै।
अब उहि मेरे कुवर कान्ह को छिन छिन अकन लहै।''[3]

उन्ह यह बरा ख्याल रहता है कि नई जगह है। कही कृष्ण सकोच न करते हो। भूखे प्यासे न रह जायें—नहाते समय दुखी न होते हो। अत देवकी के पास सदेश भेजती हैं—

'प्रातहि उठत तुम्हारे कान्ह को माखन रोटी भाव।
तेल उबटनो और तातो जल ताहि देख भज जाते।
जोइ जोइ मागत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करके न्हाते।''[4]

इस पद म यशोदा ने बडी मम को छूने वाली बात कही है। मेरा वश ही क्या है ? पुत्र तो तुम्हारा है। मैं तो धाय की तरह रही हूँ—पाल पोष कर तुम्ह दे दिया। पर धाय बच्चे की आदतो को जानती है। अत तुम्ह कृष्ण के बारे मे बतला रही हूँ।

यशोदा को अब अपने पहले किय गय व्यवहारो पर बडी करुणा आती है।

---

१ सूरसागर पद ३७८८
२ सूरसागर पद ३७८६
३ सूरसागर पद २७०५
४ सूरसागर पद ३७९३

वे सोचती हैं कि कृष्ण आ जायँ तो फिर ऐसा न करूँगी। निम्नलिखित पद में इसकी मार्मिक अभिव्यंजना की गई है—

"मेरे कान्ह कमल दल लोचन।
अबकी बेर बहुरि फिरि आवहु कहा लगे जिय सोचन।
यह लालसा होत जिय मोरे बैठी देखत रहौं।
गाइ चरावन कुँवर कान्ह सों भूलि न कबहूँ कहौं।
करत अन्याय न बरजौं कबहूँ अरु माखन की चोरी।
अपने जियत मन भरि देखौं हरि हलधर की जोरी।"[1]

अगर किसी तरह पाहुन की भाँति भी कृष्ण आ जायँ तो कुछ सन्तोष तो हो। यहाँ तो बिना कृष्ण के सारी घर की वस्तुएँ शूल उत्पन्न करती हैं। कृष्ण के चरित्र याद कर करके यशोदा बड़ी दुःखी होती है और ब्रज अब उसको कौड़ी का भी नहीं लगता। नीचे के पद में कितनी बेचैनी के साथ यशोदा विलाप करती है—

'मेरे कुँवर कान्ह बिन सब कछु वैसेहि धर्यो रहै।
को उठि प्रात होत लै माखन को कर नेत गहै।
सूने भवन यशोदा सुत के गुनि गुनि शूल सहै।
दिन उठि घेरत ही घर ग्वारिनि उरहन कोउ न कहै।
जो ब्रज मे आनंद हो तो मुनि मनसाहू न गहै।
सूरदास स्वामी बिन गोकुल कौड़ी हू न लहै।'[2]

अन्त मे यह भी अवलोकनीय है कि सूर ने उद्धव के आगमन पर भी यशोदा के वात्सल्यमय उद्गार अभिव्यक्त किये हैं। परन्तु यह वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त है। यशोदा कृष्ण के विरह में व्यथित ब्रज की दशा का वर्णन करती है। गोपी, गाय और ग्वाल बालों के साथ कृष्ण के विरह में गायों की व्यथा का भी कथन किया है। यशोदा ने अपनी मिलनोत्सुकता भी प्रकट की है। परन्तु सूर ने इसका चित्रण इतना मार्मिक नहीं किया। यशोदा कृष्ण को सुखी देखकर सन्तोष कर लेती है और अपना आशीर्वाद उद्धव के द्वारा कहलाती है—

'कहियो जसुमति की आसीस।
जहाँ रहौ वहाँ नँदलाडिलो जीवौ कोटि बरीस।'[3]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सूर ने वियोग वात्सल्य की भी विस्तृत और मार्मिक व्यंजना की है। उसमें आश्रय की नाना भाँति की मनोदशाओं का चित्रण सफलतापूर्वक हुआ है। फलतः विद्वानों ने वियोग की जो दस अवस्थाएँ मानी

१ सूरसागर पद ३७९४
२ सूरसागर पद ३७९८
३ सूरसागर पद ४७०८

हैं उन सभी की अभिव्यंजना सूर की वियोग वात्सल्याभिव्यक्ति में मिलती है। उनके उदाहरण निम्नांकित पंक्तियों में द्रष्टव्य हैं—

अभिलाषा

"कब वह मुख बहुरो देखौंगी कह वसो सचुपहौं।
कब मोप माखन मांगेंगे, कब रोटी धरि दहौं।"[1]

चिन्ता

'सूर पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन बढ्यो रहत उर सोच।
मेरो अलक लड़तो मोहन ह्वै है करत सकोच।"[2]

स्मरण

जह खेलन के ठौर तुम्हारे नंद देखि मुरझात।
जौ कबहू उठि जात खरिक लौं गाइ दुहावन प्रात।।
दुहत देखि औरनि के लरिका प्रान निकसि नहिं जात।"[3]

गुण कथन

"इक दिन नंद चलाई बात।
कहत सुनत गुन राम कृष्ण के ह्वै आयो परभात।"[4]

प्रलाप

"यहि सुनि ब्रजवासी सब परे धरनी अकुलाय।
हाय हाय करि कहत सब काहू रह्यो कहू जाय।"[5]

उद्वेग

"खान भीतर खाम बाहिर आवत खान आंगन इहि भांति।
सूर स्याम को टरत जननी नैकु नहीं मन सांति।"[6]

व्याधि

"पथी इतनी कहियो बात।
तुम बिनु इहां कुंवर वर मेरे होत जिते उतपात।"[7]

---

१ सूरसागर पद ३६२६
२ सूरसागर पद ३७६३
३ सूरसागर पद ४७००
४ सूरसागर पद ३७७६
५ सूरसागर पद १२०७
६ सूरसागर पद ११५८
७ सूरसागर पद ३७८६

जडता

'मदन गोपाल बिना घर आगन गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रहीं ठगी सी ठाढ़ी कहा ठगौरी लाइ।'[१]

सूर के वात्सल्य वर्णन को समाप्त करने से पहले एक बात और कहनी है। और वह यह है कि सूर ने अनेक स्थलो पर कृष्ण के अलौकिक रूप का स्मरण किया है। यशोदा पालने मे झुलाती है तो सुर मुनि देव कोटि ततीसा' आकाश मे छाकर कौतुक देखने लगते है। जब चरण के अगूठे को मुख मे डाल देते है तो प्रलय के समय की सन्निकटता जानकर सवत्र आशका फल जाती है—

' उछरत सिंधु धराधर कपत कमठ पीठ अकुलाइ।
सेष सहसफन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ।'[२]

इसके अतिरिक्त और बहुत से पदो मे कृष्ण की अलौकिकता का विशेष वर्णन न होकर थोड़ा सा अलौकिक पुट ही लगा हुआ है 'सूरदास प्रभु गोकुल प्रकट मेटन का भू भार।'[३] कहीं कहीं पूरा वात्सल्य वर्णन करते करते अत मे 'स्वामी' 'प्रभु' 'स्वामी सुख सागर' आदि शब्द कह देते हैं। आखिर सूरदास द्वारा स्थान स्थान पर इस प्रकार के सकेत करने का क्या तात्पय है? उत्तर स्पष्ट है।

सूर भगवदभक्त हैं—पहले भक्त और कवि उसके पश्चात। भगवान की लीला का गान करना उनका प्रधान लक्ष्य है। भक्ति के पाँच विशिष्ट भाव माने गये हैं—कान्त वात्सल्य सख्य दास्य और शान्त। फलत वात्सल्य का वर्णन भक्त सूर ने अपने भक्ति भावो की अभिव्यजना के निमित्त किया है। दूसरे शब्दो मे हम यो कह सकते हैं कि सूर ने जो वात्सल्य वर्णन किया है वह अधिकाशत वत्सल भक्ति रस की कोटि मे ही आयगा। सूर की भक्ति के प्राधान्य को देखकर विद्वानो ने उनके शुद्ध वात्सल्य रस के पदो को भी वत्सल भक्ति रस की कोटि मे ही परिगणित किया है। बात यह है कि भक्तो की दृष्टि से लौकिक व्यवहार भी अलौकिक बनकर भक्ति रस के अन्तगत समाविष्ट किये जाते हैं। इस तरह नन्द और यशोदा का कृष्ण के प्रति शुद्ध वात्सल्य भाव सूर के लिए भक्ति रस है। यही कारण है कि वात्सल्य वर्णन के प्राय सभी पदो मे सूर अपने प्रभु को नहीं भूलते। कहीं उनके ईश्वरत्व का स्पष्ट सकेत करते हैं तो कहीं प्रभु आदि कहकर बलिहारी जाने की बात कहकर अपनी भक्ति प्रदर्शित कर देते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि उपयुक्त विवेचन के आधार पर सूर को वात्सल्य रस का स्रष्टा कैसे कहा जाय? भक्त सूर तो वत्सल भक्ति रस के स्रष्टा ही सिद्ध होते हैं परन्तु ऐसी बात नहीं है। प्रथमत तो सूर ने मुक्तक पद लिखे हैं। उनमे कहीं

१ सूरसागर पद ३५६०
२ सूरसागर पद ६८२
३ सूरसागर पद ६३३

भक्ति है तो कही शुद्ध वात्सल्य है। इस तरह सूर के साहित्य म शुद्ध वात्सल्य और वत्सल भक्ति दानो ही प्रकार की अभिव्यजना है। दूसरे यदि यह भी मानें कि सूर न वत्सल भक्ति रस का वणन किया, तब भी काई आपत्ति नही है क्याकि भक्ति और वात्सल्य भाव का कोई विरोध नही है। फिर जा वणन उन्होने किया है वह इतना मनोवैज्ञानिक और स्वाभाविक है कि वात्सल्य रस की अनुभूति मुख्य रूप से हाती है। कवि चाहे यत्र तत्र अपने प्रभु का स्मरण करता ही रहा है पर अधिकाश म उनका वणन मानवीय लगता है ईश्वरीय नही है। कवि अलौकिक धरातल से लौकिक धरातल पर उतर आया है। अत जिन बाल चरित्रा का भूयाभूय वणन पढन का मिलता है वह सामान्यत बालका म नित्य देखन का मिलता है। इसके साथ ही जिज्ञासा, अनुकरण, क्षाभ, स्पर्धा आदि बच्चों की जिन अन्त प्रकृति की बाता का सूर न सजीव वणन किया है वे मानवीय और नित्य देखन मे आती है। उन्ह देखकर पाठक वात्सल्य रस-मग्न हो जाता है। इसलिए उन्ह शुद्ध वात्सल्य रस कहने म कोई आपत्ति नही है। हाँ जहा ईश्वरत्व का स्पष्ट उल्लेख है वहाँ वत्सल भक्ति रस ही होगा।

कृष्ण के अलौकिक चरित्र चित्रण क होत हुए भी उनकी वात्सल्य रस की परिणति की क्षमता के विषय म डा० हरवशलाल शर्मा का मत द्रष्टव्य है—

"यद्यपि इन प्रसगो मे भी हम यत्र-तत्र भगवान के अलौकिक चरित्रो का चित्रण मिलता है, परन्तु अधिकाश वणन इसी मानवीय धरातल पर स्वाभाविकता क साथ हुए हैं। वन मे गोपा का परस्पर मिलकर भाजन करना अलग अलग वना का बाटना, बारी बारी से गौओ का घेर कर लाना आदि घटनाए मानव जीवन स सम्बद्ध है। इन प्रसगा म कवि वात्सल्य रस के उन पीयूष बिन्दुओ को ढालना नही भूला है जो स्वाभाविक स्नेहवश उदगार के रूप मे माता पिता के हृदय स निकलत है।"[1]

सूर के वात्सल्य वणन की विशेषतायें

१ श्री मदभागवत से प्रेरणा लेन वाल सूर न अपनी मौलिकता की छाप लगा कर एक एक कृष्ण चरित को इतने विस्तार के साथ लिया है कि उस प्रकार के भावा की एक शृखला सामने आ जाती है। एक एक भाव पर अनेक पद लिख दिय हैं जिससे उसमे बहुत विस्तार आ गया है। अनेक स्थलो पर इन्होन अपने भावों की भूयोभूय पुनरावृत्ति की है। इसका कारण स्यात् यही है कि सूर का लक्ष्य भगवान के गुणगान करना था। जो कुछ उनके मन म आया उस ही भाव विभोर हाकर गात रहे। नेत्रहीन होने स पुन अवलाकन करके काँट छाट करना उनके लिय सम्भव भी नही था।

१ सूर और उनका साहित्य पृ० १७० द्वितीय सस्करण

२ कृष्ण चरित्र का वर्णन महाभारत, पद्मपुराण वायु पुराण, वामन पुराण, कूर्म पुराण गरुड़ पुराण और विष्णु पुराण आदि मे मिलता है। भागवत मे उसका सर्वाधिक विस्तृत वर्णन हुआ है। इन सभी ग्रन्थो मे कृष्ण का चरित्र परब्रह्म रूप मे ही अकित किया गया है। सूर ने कृष्ण के प्रति अपनी परम भक्ति रखते हुये भी उनके चरित्र का चित्रण मानवीय ढग से किया है। परब्रह्म कृष्ण का चरित्र सूर के काव्य मे बालकृष्ण और गोपाल कृष्ण के रूप मे परिवर्तित हो गया है। दूसरे शब्दो मे सूर ने नरत्व मे ही देवत्व की प्रतिष्ठा की है और यह उनकी निजी विशेषता है।

३ सूर ने वियोग वात्सल्य का विस्तार देकर एक ओर तो मन की आन्तरिक वेदना को अभिव्यक्त करने का अवसर दिया है और दूसरी ओर जीवन की प्रगति का दृष्टिकोण भली भाँति अभिव्यक्त किया है। कृष्ण अपने चिरकालीन स्नेहियो से दूर मथुरा मे जा बैठते हैं। अब उनके ब्रज मे आने मे कोई रहस्य नही रह जाता। जीवन की प्रगति का क्षेत्र और काव्य मे वियोगाभिव्यक्ति का अवसर दोनो साथ-साथ आ गये है।

४ कृष्ण के बाल चरित के वर्णन में सूर उनके रूप और सौदर्य को ही प्रमुखता देते हैं। असुरो का वध करते हुए भी वे उनके रूप को विस्मृत नही करते। पूतना वध पर सारे सगे सम्बन्धी बेचैन हो जाते हैं। उस समय भी यशोदा के व इस प्रकार की अभिव्यक्ति करात हैं—

"लेहु उठाय पूतना उर तें मेरो सुभग सांवरो ललना।

५ सूर ने वात्सल्याभिव्यक्ति मे अलौकिकता का वर्णन भी बहुत किया है। उस समय वात्सल्य के स्थान पर अदभुत रस की अनुभूति होती है।

६ सूर ने वात्सल्य के साथ हास्य का मिश्रण अनेक स्थानो पर किया है। कुछ स्थल उनके वात्सल्य के साथ हलके शृगार के मिश्रण के भी हैं।

७ बाल क्रीडा और छवि का वर्णन वातावरण के अनुसार किया है। जैसा ग्रामीण वातावरण है कृष्ण की वैसी ही मनोवृत्ति जिज्ञासा क्रीडा और शोभा की अभिव्यक्ति की है।

८ सूरदास ने राम के जन्म का भी वर्णन किया है। सयोग वियोग के बहुत से चित्र खीचे हैं परतु कवि का हृदय अपने इष्ट देव के बाल वर्णन मे ही अधिक रमा है।

९ सूर पुष्टि मार्ग के अनुयायी है। पुष्टि मार्ग के अन्तर्गत बालकृष्ण की आराधना होने से कलात्मकता की प्रवृत्ति रही है। इसी से सूर ने कही कहा कृष्ण के वर्णन को नाना भांति के अलकारो के साथ अभिव्यक्त करके पुष्टिमार्गीय कला प्रियता का परिचय दिया है।

१० सूर ने सयोग और वियोग दोनो का ही वर्णन बडे विस्तार के साथ

किया है। फिर उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, मनोवैज्ञानिक चित्रण का क्षमता, अनुभूति और अभिव्यक्ति की विधा असाधारण रूप से प्रकट हुई है। इससे उनके वात्सल्य वर्णन को पढकर ऐसा लगता है कि जैसे अब इस विषय म कुछ कहने को रह ही नही गया है।

११ सूर न मुक्तक छन्दो मे रचना की है। प्रत्येक पद का अपना अलग अस्तित्व है। और उनके वर्णन म कोई क्रम नही है फिर भी एक हल्का सा क्रम और सूक्ष्म प्रबन्धात्मकता उसमे मिलती है। कृष्ण का जन्म, शिशु रूप, बाल रूप और किशोर वर्णन मे पूर्वापर का सम्बन्ध है। उनकी लीलाओ का भी वर्णन उनके वय क्रम के अनुसार ही है।

परमानन्ददास

अष्टछाप के कवियो म परमानन्ददास का विशेष स्थान है। विद्वानो ने काव्यत्व की दृष्टि से अष्टछाप के कवियो का क्रम निर्धारण करत समय सूर के पश्चात इन्ही का नम्बर रखा है।[१] अष्टछाप के अन्य कवियों की भाति इन्होने भी कृष्ण-चरित सम्बन्धी ही अपने हृदयोदगार प्रकट किये हैं। बालक कृष्ण के विषय मे गाये गये इनके पदो म वात्सल्य रस की निष्पत्ति होती है।

परमानन्ददास ने कृष्ण के जन्म के समय होने वाले व्रज के आनन्द और उल्लास का वर्णन किया है। इस अभिव्यक्ति मे व्यापकता और सार्वजनीनता है। केवल नन्द यशोदा ही पुत्र के जन्म से आनन्दित नही होते वरन ग्राम भर के गोप और गोपिया कृष्ण-जन्म से उल्लसित होत हैं। इन्हाने वर्णन किया है कि कृष्ण जन्म के समय गाँव के सभी घरो से स्त्रियाँ आती हैं। मगलगान करती हैं। आशीर्वाद देती हैं। वे कचन के थाल ले लेकर आती हैं और आनन्द मे मग्न हुई नाना भाँति से नाचती हैं। अहीर फूले फिरते हैं। वे प्रसन्नता प्रकट करने के लिये दूब दधि, अक्षत हल्दी और कुमकुम को एक दूसरे पर छिडकते हैं। नन्द जी प्रसन्नतावश गाय दान करते हैं। कचन के कलस दान करते हैं। जात कम करवाते हैं। नाम धराते हैं। गाँव मे सतये रखे जा रहे हैं। वदनवार बधे हुए हैं। मोतियो के चौक पूरे जा रहे है। इस उल्लासपूर्ण वातावरण म यशोदा तो पुत्र की प्राप्ति पर मानो निहाल ही हो गई है। उसकी दशा देखिये—

> जनम फल मानत जसोदा माय।
> जब नदलाल धूरि धूसर वपु रहत कठ लपटाय।
> गोद बठि गहि चिबुक मनोहर बातें कहत तुतराय।
> अति आनन्द प्रेम पुलकित तन मुख चुबत न अघाय।

---

१ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, पृ० ५९६

आरति चित बिलोकि बदन विधु पुनि पुनि लेत बलाय।
'परमानंद मोद छिन छिन को मोप कह्यो न जाय॥'[1]

कृष्ण जस जस बडे होते जाते है वैसे ही वैसे उनके प्रति स्नेहाभिव्यक्ति के प्रकार भी और और तरह के होते जाते है। कुछ बड़ा होने पर छटी का पूजन होता है। सब गोपियाँ बधाई देती हैं बच्चे का तिलक करती है। सारे व्रज से बधाई दी जाती है।[2] कृष्ण को पालने पर भुलाया जाता है। गोपियाँ पालने में भुलाते समय भी गाती हैं कभी हँसती हैं और कभी यशोदा के भाग्य की प्रशंसा करती हैं कि जिसका पुत्र ऐसा सुन्दर है? वात्सल्यातिरेक के कारण व्रज बालायें उनकी शोभा को पुन: पुन: आती है। बिना कृष्ण छवि अवलोकन के उनको कल नहीं पड़ती। पालने पर झूलते हुए कृष्ण मुदित होते हैं। परमानन्ददास ने पालने पर झूलते हुए कृष्ण का वर्णन इस प्रकार किया है—

रतन जटित कंचन मनिमय नन्द भवन मधि पालनो।
ता ऊपर गजमोतिन लर लटकत अति लट झूलत जसोदा लालनो।
किलकि किलकि विलसति मन ही मन चितवत नैन विसालनो।
'परमानंद प्रभु की छवि निरखत आवत कल न परत ब्रज बालनो।'[3]

अन्नप्राशन होता है तो यशोदा अत्यन्त प्रसन्न होती है। दान देती है। भोजन कराती हैं। कर्णछेदन होता है तब प्रसन्न होकर दान देती है। रामकरण पर मंगल गीत पुराय जाते हैं। मंगल-गीत गाए जाते है। और तो और करवट लेने[4] और भूमि पर बैठने तक की क्रिया पर यशोदा आनन्द मनाती है। फिर जब कृष्ण बोलते हैं तो उनकी बोली में बड़ा माधुर्य लगता है। कृष्ण पैजनी बाँधे रहते हैं। काजल का तिलक माता ने लगा दिया है कि कहीं नजर न लग जाय। कंठ में कठुला है और पीला वस्त्र धारण किए हुए वे सुन्दर लगते हैं। परमानन्ददास ने उस रूप माधुरी का इस प्रकार चित्र खींचा है—

माई मीठे हरि जू के बोलना।
पांय पैजनी रुनभुन बाजें आंगन मनिमय डोलना॥
काजर तिलक कंठ कठुला पुनि पीताम्बर को बोलना।
परमानंददास को ठाकुर गोपी भुलावै झोलना॥[5]

१ प० सा० पद १
२ परमानन्द सागर पद ३८ ६
३ परमानन्द सागर पद ६१
४ करवट लई प्रथम नन्द नन्दन।
   माता महरि महोत्सव मानत भवन लिपाया चन्दन।
   परमानन्द सागर पद ६०
५ परमानन्द सागर पद ६६

छोटा बालक वैसे भी स्नेह का भाजन होता है। कृष्ण तो अत्यन्त सुन्दर है। सभी ब्रज के लोग उनसे स्नेह करते ह। चुटकी दे देकर उन्हे नचा नचा कर सबको बडा आनन्द आता है। यशोदा तो टकटकी बाधकर और भी स्नेह से उनकी ओर देखती रहती है। यशोदा माता ह। माता अपने बालक के बारे म नाना भाति की अभिलाषाए किया करती है। परमानन्ददास ने यशोदा की मान अभिलाषा का बडा स्वाभाविक वर्णन किया है। गाव का वातावरण है। यशोदा वहीं के वातावरण के उपयुक्त अभिलाषा करती है कि कब कृष्ण मुझसे मया कहके बोलेगा। कब ब्रज की गलिया म डोलता फिरेगा? कब बछडा को खोलेगा? गाय दुहने के समय प्राय छोटे बच्चा से सहायता ले लेते हैं कि वे बछडा को छोड दें ताकि बछडा को नीचे लगाकर गाय का पय स्रवित हो और वे उसे दुह ले। यशोदा कृष्ण के विषय मे ऐसी ही अभिलाषाए करती हैं—

> जा दिन कन्हैया मो सो मया कहि बोलेगो।
> ता दिन अति आनद गिनोंगी माई कनक भुवन ब्रज गलिन मे डोलेगो।
> प्रात ही खिरक माय दुहिबे को धाई बघन बछरवा के खोलेगो।
> परमानद प्रभु नवल कुवर मेरो ग्वालिन के सग सग बन मे विलोलेगो।[1]

सूर की भाति परमानन्ददास ने भी बाल भाव के अनेक चित्र खीचे है। इस क्षेत्र म इनकी अनुभूति और सूक्ष्मनिरीक्षण शक्ति सूर की कोटि की तो नही परन्तु सूर जैसी ही गहरी ह। बाल भाव के विविध चित्रा की इनके पदा म कमी नही है। इन चित्रा की स्वाभाविकता स्तुत्य है। कृष्ण कुछ और बडे हो गये हैं और इधर उधर खेलते फिरते है। यशोदा उन्हे बुला बुलाकर कहती है कि कृष्ण दूर खेलने मत जाना किसी की गाय मार देगी।[2] है भी ठीक। ब्रज गाव म मोटर कार, ट्रक और ताग तो थे नहीं जिनसे टकराने का भय होता गाय ही आ सकती है इधर उधर से भगी हुई। कृष्ण आगन म खेलते ह। प्रतिबिम्ब को पकडने दौडते हैं। कभी यशोदा व रोहिणी के कहने से नाचते हैं। अनेक चरित्र करते हैं जिससे सभी को प्रिय है। इनकी सब प्रियता के कारण का सार परमानन्ददास ने दो पक्तियो म भली भाति कह दिया है—

> बाल दसा गोपाल को सब काहू भाव।
> जाके भवन मे जात हैं सो ले गोद खिलाव[3] ॥

गोद खिलाने म तो कोई बात नही ह परन्तु माता की आशका बडी बलवती होती ह। एक दिन किसी ग्वालिन ने कृष्ण का वात्सल्यातिरेक के कारण गोद म

१ परमानन्द सागर पद ६८
२ परमानन्द सागर पद ७
३ परमानन्द सागर पद ७६

उठा लिया । फिर छाती स लगा लिया। यशोदा को आशंका हुई कि कहीं यह ग्वालिन कुछ जादू टोना तो नहीं कर रही । यशोदा ने यह कह कर कि रूठ रहा था अभी बहलाया है ग्वालिन स गोद म उठाने को मने कर दिया । ग्वालिन तो चली गई पर कृष्ण उसी की गोद म जाने के लिये रोने लगे । बालहठ तो है ही प्रसिद्ध, अब यशोदा को उस ग्वालिन की उल्टी खुशामद करके लाना पडा। इससे ग्वालिन की बन गई । वह मन म अतीव प्रसन्न हो गई और अपने नेत्रो म मुसकराती हुई आई। बात बडी स्वाभाविक है। परमानंददास ने इसका बडा सुंदर चित्रण इस प्रकार किया है—

> रहि री ग्वालिनि जोवन मदमाती ।
> मेरे छगन मगन से लालहिं कित ल उछग लगावति छाती ॥
> खीझत ते अब ही राख है न्हानी न्हानी दूध की बाती ।
> खेलन द अपने घर डोलत काहे को एतो इतराती ॥
> उठि चली ग्वालि लाल लागे रोवन तब जसुमति लाई बहु भांति ।
> 'परमानद प्रीत अंतर गति फिर आई ननति मुसकाती ॥'[1]

भोजन के समय माता को अपने बच्चे को खिलाने की बडी चिन्ता रहती है। कृष्ण अपने साथियो म खेल रहे हैं । यशोदा बार बार किसी न किसी को बुलाने के लिये भेजती है । जगह बतलाती है कि कहाँ वे मिल सकते हैं । अधिक चिंता इसलिये होती है कि आज सवेरे कलेऊ भी नही किया । वह सुबल और श्रीदाम से कहती हैं कि तुम बुला क्यो नही लाते और यो कहना कि नन्द बाबा तुम्हे बुला रहे हैं । स्वय भी घर घर ढूंढती है । कृष्ण धूल धूसरित हुए घर लौट रहे हैं । वात्सल्य भरित मानस से माँ गदगद हो जाती है और उसके नेत्र कृष्ण को देखकर शीतल हो जाते हैं। कवि ने इस भाव का बडा सुन्दर चित्र खींचा है—

> प्रेम मगन बोलत नदरानी ।
> अहो सुबल अहो स्रीदामा ल आवहु किन टेरि मदुवानी ॥
> भोजन करत अबार आनि जिय सुरत भई आतुर अकुलानी ।
> ढूंढत घर घर अगन लौं तन की दसा हिरानी ॥
> जननी प्रीति जान उठि दोरे सोभित हैं कच रज लपटानी ।
> 'परमानद प्रभु नद नदन की अंखिया निरखि सिरानी ॥'[2]

बडे होकर कृष्ण और भी चचल होते जाते हैं । वे दूध दही और माखन खाने की उनकी रुचि का तो कहना ही क्या ? अपने घर चाहे खायें या न खायें पर दूसरों के घर मे अपने साथियो को लेकर घुस जाना, कुछ स्वय खाना कुछ सखाओ को

---

१ परमानन्द पद सग्रह ५८
२ परमानन्द सागर पद १०८

खिलाना कुछ बन्दरों को खिलाना और कुछ इधर उधर बिखेर देना रोज का कृत्य हो गया। इससे कृष्ण की शिकायत लेकर बारम्बार गोपियां यशोदा के पास आती हैं। कभी कोई गोपी कहने लगती है कि कृष्ण को तुमने बिगाड कर इस ढंग का कर रखा है। और भी तो बालक हैं। अनोखा पुत्र तुमने ही जन्मा है?—

तेरे ही लाल मेरो माखन खायो।
भरी दुपहरी सब सूनो घर ढढोरि अबही उठि धायो॥
खोलि किवार अकेले मंदिर दूध दह्यो सब लरकन खायो।
छींके ते काढि खाट चढ मोहन कछु खायो कछु भू ढरकायो।
नित प्रति हानि कहा लौं सहिये यह ढोटा ऐसे ढंग लायो।
'परमानंद' रानी तुम बरजो पूत अनोखो तैं ही जायो॥[1]

यशोदा ऐसी शिकायतें रोज सुनती है। सदैव अपने पुत्र का पक्ष लेती है। वह मानती ही नहीं कि कृष्ण ने माखन खाया होगा। वह कैसे खा सकता है घर का दूध और माखन तो अच्छा नहीं लगता। तुम्हारा दही कैसे खा लेगा। वह प्रत्यक्ष प्रमाण चाहती है कि बताओ कब और कहां उसने माखन खाया है इसी से कृष्ण के पक्ष में कैसी उक्तियां कहती है?

अरी मेरो तनक सो गोपाल कहा करि जाने दधि की चोरी।
काहे को आवति हाथ नचावति जीभ न करही थोरी॥
कब छींके ते माखन खायो कब दधि मटुकी फोरी।
अंगुरिन कर कबहू नहिं चाखत घर ही भरी कमोरी॥[2]

आखिर सच्ची बात एक दिन खुलता ही है। यशोदा के सामने पूरी तरह सिद्ध हो जाता है कि कृष्ण ने माखन चुराकर खाया है। पर मां अपने बच्चे के अनेक अपराधों का भी अपराध कैसे गिन सकती है? हो ही क्या गया जो जरा सा माखन खा लिया? इतने से माखन के बदले इतनी नाराजी की क्या जरूरत है मुझसे उससे दूना माखन ले लो पर मेरे बच्चे को कुछ कहिए नहीं अपितु आशीर्वाद ही दो। पुत्र के प्रति कितना स्वाभाविक प्रेम प्रदर्शित कराया गया है। इस प्रकार के हृदयोद्गार परमानन्ददास ने ही अभिव्यक्त कराये हैं। ऐसा भाव सूर ने भी नहीं अभिव्यक्त किया।

ढोटा रंचक माखन खायो।
काहे को करई होति री ग्वालिनि सब ब्रज गाजि हलायो॥
जाको जितनो तुम जानत हो दूनो मेरे लेहु।
मेरो कान्ह रहे दूबलो आसिस सब मिलि देहु॥

---

१ परमानन्द सागर पद १८७
२ परमानन्द सागर पद १३

कमल नयन मरो अलियन तारो कुल दीपक ब्रज गेह।
। 'परमानद बहुत नदरानी सुत प्रति अधिक सनेह॥'[1]

इधर कृष्ण बात मिलाने म बड चतुर हैं। एक बार किसी ग्वालिन के शिकायत करने पर कृष्ण कहते हैं कि माता तुम इन नही जानती कि य कसी है। बलराम स पूछो आज मरा क्या हाल हुआ। ब्याही गाय अपने बछडे को चाट रही थी। म दूध पी रहा था। इस दगमर धौरी गाय भिडक गई और मुझ मारन दौडी और दो सींगो के बीच म रख लिया। म तो तुम्हार पुण्य स बचा हू। यह ग्वालिन वहाँ से भाग कर चली गई। ऐसी है। इसकी क्या बात सुनाती। माता को इन बातो से कितना आनन्द आता है। व स्नेहवश कृष्ण को गले लगा लेती हैं। य भाव बडे साधारण और ग्रामीण वातावरण क उपयुक्त हैं—

तेरी सौं सुन सुन सुन री मया।
या के चरित तू नहीं जानत बोल बूझ सकरखन भया॥
बयाई गाय बछरवा चाटत पीवत हौं आतखन पयया।
याहि देख धौरी बिझुकानी मारन को दौरी मोहि गया॥
द्व सींगन के बीच परयौ म तहाँ रखवारो कोउ न रहैया।
तेरी पुन्य सहाय भयौ है अब उबरयौ बाबा नद दुहैया॥
यह जु दुलरि परी हो मो प भाज चली कहि कहा दया।
'परमानद स्वामी की जननी उर लगाय हसि लेत बलैया॥'[2]

कृष्ण को गाय चराने का शौक है। करें भी क्या ? जसा वातावरण होता है बच्चा वसा ही करता है। हा चाह कभे भी पर नये नये अनुभवो को चाहना बालक के लिए मनोवज्ञानिक है। ब्रज मे बालक गाय ही चराते हैं। कृष्ण कहते है कि मैं अब बडा हो गया हूँ डरूगा नही। गाय चरान जाऊगा। कृष्ण सबसे छोटे है। ग्वाले इन्ही से गाय घिरात है। अब कृष्ण आकर मा से शिकायत करते हैं। कवि न बहुत सीधी सरल भाषा म कृष्ण के मुख से शिकायत कराई है वह अत्यत भोली और वात्सल्य भाव को उद्दीप्त करने वाली है। माता मैं अब गाय चराने नही जाऊगा क्योकि सब मुझ पर ही गाय घिराते है और मेरे पर भी गाय घरते घरते दुखने लगे। तुम्हे विश्वास न हो तो बलदाऊ से अपनी कसम दिलाकर बूझ लो कि यह बात है या नही। यशोदा पुत्र की बातें सुनकर सब ग्वालो पर क्रोधित होती हैं और कृष्ण को प्रमातिरेक के कारण गले स लगा लेती हैं—

मया हो न चरहौं गाय।
सबरे ग्वाल घिरावत मोप दूखत मोरे पाय॥

---

१ परमानन्द सागर पद १३५
२ परमानन्द सागर पद १५२

तव हौं घेरन जात नहीं कितनी बेर चराय।
मोहि न पयाइ बूझि बलदाऊ कौं अपनो सौंह दिवाय।।
हौं जानत मेरे कुवर कन्हैया लेत हिरदय लगाय।
परमानद दास को जीवन ग्वालन पर जसुमति जु रिसाय।।[1]

निष्कर्ष यह है कि परमानन्ददास ने बाल चरित और वात्सल्य भाव दोनो का साथ साथ चित्रित किया है। उनके ऐसे अनेक पद हैं जो अच्छी आनन्दानुभूति कराते हैं। हाँ यह अवश्य है कि परमानन्द जी के अधिकाश पदो को वत्सल भक्ति की कोटि मे रखा जायगा। क्योकि कवि ने कृष्ण के ईश्वरत्व और अलौकिकत्व का वर्णन भी किया है और समय-समय पर अपना भक्ति भाव भी प्रदर्शित किया है।

इतना सब कुछ होत हुए भी इनके द्वारा अभिव्यक्त की गई वात्सल्यानुभूति के महत्व को भुला नही सकते। यद्यपि बहुत सी बातें कवि ने सूर के अनुकरण पर ही की हैं पर उनकी नवीन उद्भावनाए भी कम नही हैं। इनके काव्य मे सीधी सरल भाषा ऋजुता और सरल चेष्टाओं की अभिव्यक्ति मिलती है। ग्रामीण वातावरण के अनुरूप चित्रण करने मे कवि को विशेष रूप से सफलता मिलती है। बाल-स्वभाव का चित्रण भी बडी सरलता के साथ किया है। वैसे तो कृष्ण के अलावा राधा, रामचन्द्र जी आदि के प्रति भी इन्होने जन्मोत्सव के समय आदि की बधाई का वर्णन किया है परन्तु उसका कोई विशेष महत्व नही है। वह साधारण कथन-मात्र और अत्यन्त सक्षिप्त है। सक्षेप मे हम कह सकते हैं कि परमानन्ददास का वात्सल्य-वर्णन इस परम्परा का एक महत्वपूर्ण अग है।

तुलसीदास

तुलसीदास राम साहित्य के सब श्रेष्ठ कवि है। इनके काव्य मे भी वात्सल्य की अभिव्यजना विस्तार के साथ हुई है। रसनीयता की दृष्टि से भी इनकी वात्सल्या-भिव्यक्ति उच्च कोटि की है। इसीसे किसी किसी आलोचक ने तो बाल लीला-वर्णन मे तुलसी का ही सर्वोच्च स्थान माना है।[2] इनके द्वारा अभिव्यक्त वात्सल्य के आल-म्बन मुख्य रूप से राम हैं। लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न आदि के प्रति जो उनकी इस प्रकार की अभिव्यक्ति है वह कोई विशेष महत्व नहीं रखती। 'श्रीकृष्ण गीतावली' मे श्रीकृष्ण के बाल चरित का भी वर्णन है परन्तु इसमे भी कवि के हृदयोदगार इतने

---

१ परमानन्द सागर पद २६४

२ हिन्दी-साहित्य गगन-मयक गोस्वामी तुलसीदास जी का कवित्व सम्बन्धी सर्वोच्च सिंहासन बाल लीला वर्णन में भी सर्वोच्च रहा है। क्या भाव सौन्दर्य क्या शब्द विन्यास, सभी बातो मे उनकी कीर्ति पताका भगवती वीणापाणी के उच्चतर कर कमलों मे ही विद्यमान है।'

—रस कलस ने० हरिऔध, पृ० १८। ८६

मार्मिक नही है। वस्तुत राम उनके इष्टदेव है और उनके एक एक रहस्योद्घाटन मे तुलसी का हृदय बोल उठा है। उन्ही के वात्सल्य वर्णन मे कवि की अनुभूति गहन और अभिव्यक्ति व्यापक है।

तुलसीदास ने रामचरितमानस, गीतावली, कवितावली और रामाज्ञा प्रश्न मे वात्सल्य का वर्णन किया है। इन सभी मे वात्सल्याभिव्यक्ति के विषयालम्बन राम आदि भ्राता है। आश्रया मे से राजा दशरथ तथा रानी कौशल्या और सुमित्रा मुख्य हैं। कवि ने वात्सल्य की सयोग और वियोग दोनो दशाओ का चित्रण विस्तार के साथ किया है। सयोग वात्सल्य मे रामायत जिन भावो की अभिव्यक्ति हुई है वे ये हैं—(१) पुत्र जन्म के समय आनन्दमय वातावरण का चित्रण (२) रूप वर्णन (३) आलम्बन की चेष्टायें (४) पितृ मनोभाव (५) मातृ मनोभावनाएं और (६) गुरु-जनो का स्नेह।

पुत्र-जन्म के समय के आनन्दमय वातावरण का चित्रण

राम जन्म के समय आनन्द की व्यापकता प्रदर्शित की गई है। आनन्द की अनुभूति रानी राजा, पुरवासी, सेवक तथा मुनि और देवताओ को भी होती है। इस व्यापकता का कारण एक तो दशरथ का वृद्धावस्था मे बड कष्ट और प्रयत्नो के पश्चात् पुत्र प्राप्ति का सुखानुभव है। दूसरे वे राजा हैं अत राजा की प्रसन्नता पर पुरवासी और सेवक आदि का प्रसन्न होना स्वाभाविक और व्यावहारिक दोनो प्रकार से उचित है। तीसरी बात यह है कि तुलसी के विषयालम्बन राम उनके इष्टदेव भी हैं। परब्रह्म के अवतार हैं। मुनि और देवताओ के प्रसन्न होने का वर्णन इसीलिए हुआ है। राम जन्म के आनन्दमय वातावरण की अभिव्यजना करते समय सर्वत्र भक्ति भाव का प्राधान्य है। कवि ने उपयुक्त सभी व्यक्तियो की आनन्दानुभूति का प्रदर्शन अलग अलग रीति से वर्णित किया है। कौशल्या को पुत्र की प्राप्ति से अत्यन्त हर्ष होता है। वे प्रसन्न होकर वस्त्र मणि और भूषणादि का दान करती हैं। दशरथ असीम प्रसन्नता का अनुभव करके बहुमूल्य दान देते हैं तथा गुरुजन और विप्रो को बुलाकर वेद विधि के द्वारा अवसर के अनुकूल जातकर्म आदि क्रियायें कराते है। पुरवासी अपने आनन्द का प्रदर्शन अनेक प्रकार से करते हैं। स्त्रिया शृगार करके सोने के कलसे और मागलिक वस्तुओ से थाल सजाकर राजा के घर आती है। वे भाति भाति से न्यौछावर करती हैं प्रसन्न होकर आशीर्वाद देती है और सोहले गाती हैं। मागध, सूत बदीजन और सेवक आदि आनन्द से भरपूर हैं और सर्वत्र प्रशसा करते फिरते हैं। मुनि लोग वेद की ध्वनि करते हैं। देवता आकाश से पुष्पो की वर्षा करते हैं और दुदुभी बजाते हैं। कवि ने राम-जन्म की प्रसन्नता की व्याप्ति प्रकृति मे दिखलाई है। इसके अतिरिक्त नगर का वातावरण ऐसा हो गया है कि उससे समस्त जड चेतन का आनन्द मुखरित होता प्रतीत होता है। समस्त नगर वन्दनवार और पताकाओ से सुसज्जित किया गया है। गलियो मे मृगमद चन्दन

केसर और अगर आदि सुगंधित पदार्थ बिखेरे गये हैं। गृह, आँगन, गली, बाजार मे सर्वत्र फल, पुष्प, दूब, दधि आदि सुशोभित हैं। सर्वत्र मंगलगान हो रहा है। यह आनन्द का प्रसार दसो दिशाओ मे व्याप्त हो रहा है। उसी समय भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न का भी जन्म होता है। दशरथ के यहाँ पुत्रो के जन्म इस प्रकार के आनन्दोल्लास वातावरण का वर्णन तुलसी के निम्नोद्धृत पद मे द्रष्टव्य है—

आजु महा मंगल कौसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भए।
सदन सदन सोहिलो सोहावनो, नभ अरु नगर निसान हए॥
सजि-सजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समय सम ठान ठए।
नाचहि नभ अपसरा मुदित मन, पुनि पुनि बरषहि सुमन चए॥
अति सुख बेगि बोलि गुरु भूसुर भूपति भीतर भवन गए।
जात करम करि कनक बसन मनि भूषित सुरभि समूह दिए॥
दल फल फूल दूब दधि रोचन जुवतिन्ह भरि भरि थार लए।
गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह बंदिन्ह बांकुरे बिरद बए॥
कनक-कलस चामर पताक धुज जहँ तहँ बंदनवार नए।
भरहिं अबीर अरगजा छिरकहिं सकल लोक एक रंग रए॥[1]

जन्मोत्सव के पश्चात् कवि ने शिशुओ के क्रम क्रम करके आने वाले संस्कारो के अवसर पर भी इसी प्रकार के आनन्द और उल्लास का वर्णन किया है। उनमे से छठी[2] बरही[3], नामकरण[4] और चूडाकरण[5] मुख्य हैं। इस प्रसंग मे यह भी ध्यानागवत करने योग्य बात है कि तुलसी के उपयुक्त वर्णन पर सूर का प्रभाव है। ये सभी वर्णन प्राय गीतावली से लिये गये हैं और गीतावली को रामचन्द्र शुक्ल[6] और डा० रामकुमार वर्मा आदि ने निस्सन्देह सूर से प्रभावित माना है।

रूप वर्णन

तुलसी ने आलम्बन के रूप का चित्रण क्रम क्रम करके बढती हुई अवस्था के अनुसार किया है। बच्चा जैसे जैसे बडा होता जाता है वैसे ही वैसे उसके अंग प्रत्यंग के सौन्दर्य तथा वस्त्राभूषण आदि के प्रकार मे परिवर्तन होता जाता है। कवि ने इसका सर्वत्र निर्वाह किया है। जहाँ आलम्बन के तीन रूपो का वर्णन किया

१ गीतावली १।३
२ गीतावली १।४
३ गीतावली १।४
४ गीतावली १।६—रामचरितमानस १।१९६।२—१।१९७
५ रामचरितमानस १।२०२।३
६ हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० ११७
७ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ० ५६१

है—(१) शिशु रूप (२) बाल रूप और (३) किशोर रूप। शिशु का रूप वर्णन करते समय उनके अंग प्रत्यंगो आभूषणों और वस्त्रादि से सुसज्जित शोभा की अभिव्यक्ति की है। अंग प्रत्यंगों में उनके चरण, नख, उदर, नाभि भुजा, कंठ, चिबुक, मुख, दाँत, अधर, नाक, कान, कपोल और बालों की आभूषणों में नूपुर किंकिणी, पहुँची, बघनखा और मणियों के हार की तथा वस्त्रों में पीतझगा की छवि का वर्णन अलंकृत भाषा में किया गया है। इसके साथ ही उनके अलौकिक रूप का आभास देने वाले कुलिस, ध्वज और अंकुश आदि के चिन्हों का भी वर्णन है। इस प्रकार की शोभा से युक्त राम आदि शिशुओं की रूप माधुरी का कवि ने गोद, पालने और भूमि तीनों स्थानों पर सुशोभित होने का वर्णन किया है। वैसे लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के गोद में सुशोभित होने का भी वर्णन है परन्तु राम की शोभा का वर्णन अधिक हुआ है। उन्हें कभी कौशल्या, कभी सुमित्रा और कभी दशरथ गोद में लेते हैं। दशरथ की गोद में शोभायमान शिशु राम की छवि का वर्णन तुलसी के निम्नलिखित सवैये में अत्यन्त कवित्वपूर्ण भाषा में हुआ है—

पग नूपुर औ पहुँची कर कंजनि, मंजु बनी मनिमाल हिये।
नवनील कलेवर पीत झँगा झलकै पुलकै नृप गोद लिये॥
अरबिंद सो आनन रूपमरंद अनंदित लोचन भृंग पिये॥
मन मो न बस्यो अस बालक जो तुलसी जग में फल कौन जिये॥[1]

पालने में भूलते हुए शिशुओं के वर्णन के साथ कवि ने वात्सल्यमय वातावरण की सृष्टि की है। उनके साथ खिलौने और बजने वाली किंकिणी आदि हैं। पलना भी रत्न आदि से अलंकृत है। पालने झुलाते समय रूप वर्णन की अपेक्षा शिशु के प्रति माता के मनोभावों की अभिव्यक्ति अधिक है। भूमि पर क्रीडा करते हुए राम आदि कुमारों के अंग प्रत्यंग और वस्त्राभूषणों का कथन है। साथ ही उनके घुटनों चलने धूलधूसरित होने और बाल सुलभ चेष्टा करने का भी वर्णन है।[2]

बाल रूप वर्णन में कवि ने उनके अंग प्रत्यंग की शोभा का वर्णन कम किया है परन्तु उनके शरीर पर सुशोभित बालोचित वस्त्राभूषण आदि का कथन है और वह उनकी अवस्था के अनुसार ही है। राम आदि बालक अब कुछ बड़े हो गये हैं। अतः अपने पैरों में जूतियाँ पहने हुए हैं। क्षत्रिय राजकुमार हैं इससे छोटे से धनुष और बाण भी ले रखे हैं और अपने समवयस्क बालकों के साथ खेल रहे हैं—

"पद कंजनि मंजु बनी पनहीं धनु हीं सर पंकज पानि लिये।
लरिका संग खेलत डोलत हैं, सरजू तट चौहट हाट हिये॥[3]

१ कवितावली १।२
२ गीतावली १।२६ २७
३ कवितावली १।६

उन्होने पैंजनी किंकिणी पहुँची, बिजायठ, पदिक, हार और कुंडल आदि आभूषण धारण कर रखे है। परो म जूते सिर पर लाल टोपी और शरीर पर पीला वस्त्र है।[1] अभी ये सब बालक छोटे हैं अत इनके शरीरावयव तथा वस्त्राभूषण आदि भी वसे ही छोटे छोटे हैं, वे मन को मोहने वाले हैं। कवि ने 'छोटी' शब्द की आवत्ति स राम आदि बालको के रूप का चित्रण वात्सल्य रस से ओतप्रोत किया है—

छोटिऐ धनुहिया पनहिया पगनि छोटी
छोटिए कछौटी कटि छोटिए तरक सी।
लसत झगूली झीनी दामिनी की छवि छीनी,
सुन्दर बदन सिर पगिया जरक सी।[2]

तुलसी ने शिशु रूप और बाल रूप की तरह राम आदि कुमारो के किशोर रूप का भी चित्रण किया है। उसमें भी उनके अग प्रत्यग की शोभा और वयोचित वस्त्राभूषण का वणन ह। उनके मुख, नयन, मस्तक, केश और चोटी आदि से सुशोभित शरीर के सौन्दय की अभिव्यजना विभिन्न प्रकार की उपमायें देकर की है। उन्होने पीताम्बर उपवीत, चन्दन मनिमाल और धनुषबाण, तरकस धारण कर रखे हैं। राम और लक्ष्मण के किशोर रूप का वणन निम्नलिखित पक्तियो मे द्रष्टव्य है—

नील पीत पाथोज बरन वपु, वय किसोर बनि आई।
सर धनु पानि पीत पट, कटितट, कसे निखग बनाई।
कलित कठ मनिमाल कलेवर, चदन खोरि सुहाई।
सुन्दर बदन सरोरुह लोचन मुख छवि बरन न जाई॥[3]

आलम्बन की चेष्टाए

जिस प्रकार आलम्बन के रूप वणन म तुलसी के काव्य म एक व्यवस्थित क्रम मिलता है उसी प्रकार आलम्बन की चेष्टाओ के वणन मे भी। फलत पहले शिशु की चेष्टाए फिर बालक की चेष्टाए और फिर किशोर की चेष्टाए वर्णित हैं। शिशु चेष्टाओ की अभिव्यक्ति गोद पालने और भूमि पर हुई है। गोद म केवल राम की चेष्टाओ का वणन है और व भी उनका किलकना और गोद से उतर कर भागने का उपक्रम करना है।[4] पालने पर राम की ही चेष्टाओ की अभिव्यक्ति है और वे उनका खिलौना देखकर प्रसन्न होकर किलकना, नेत्र हाथ और पैर चलाना और अथ हीन वचन बोलना आदि हैं।[5]

---

१ गीतावली १।४३
२ गीतावली १।४४
३ गीतावली १।५२।२ ३
४ गीतावली १।१३।१-२
५ गीतावली १।२२।८ ६ १।२३।८, १।२४।५

शिशु की भूमि पर की चेष्टाओं में राम आदि चारों भ्राताओं का धूल धूसरित होना, घुटनों के बल दौड़ना, लड़खड़ाना, हँसना, किलकना, खेलना तोतली बोली बोलना और अन्यान्य बाल क्रीडा करना है। उनकी इस प्रकार की चेष्टाओं का वर्णन अधोलिखित पंक्तियों में अत्यन्त स्वाभाविकता के साथ हुआ है—

'बाल, भूषन बसन तन सुंदर रुचिर रज भरनि।
परसपर खेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि।
झुकनि झाकनि छाह सों किलकनि नटनि हठि सरनि।
तोतरी बोलनि विलोकनि मोहनी मन हरनि।[1]

बालक की चेष्टायें शिशु से भिन्न प्रकार की वर्णित हुई हैं। अपने समवयस्क सखाओं के और छोटे भाइयों के साथ गलियों में घूमना तथा भौंरा चकडोरी खेलना धूल धूसरित होना हँसना, हठ करना चपलता दिखलाना मुँह से भोजन लिपटाना[2] आदि बाल चेष्टाओं का वर्णन तुलसी ने मुख्य रूप से किया है। किसी किसी स्थल पर आँगन में खेलते हुए चारों भाइयों की चेष्टाओं की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है—

"कबहू ससि मागत आरि करै, कबहू प्रतिबिम्ब निहारि डरै।
कबहू करताल बजाइ कै नाचत मातु सबै मन मोद भरै।
कबहू रिसिआइ कहैं हठि कै पुनि लेत सोइ जेहि लागि अरै।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी मन मन्दिर में बिहरै॥[3]

राम के किशोर रूप की चेष्टाओं का वर्णन अपेक्षाकृत कम हुआ है। उनका मृगया के लिये जाना चौगान खेलने मार्ग में चलते हुए कौतुक करना लता पुष्प आदि के तोड़ने और वृद्ध जनों के सामने सकोची और विनयशील होने आदि के जो भाव तुलसी ने वर्णित किये हैं वे ही इसके अंतर्गत समाविष्ट किये जा सकते हैं।[4]

पितृ मनोभाव

पितृ-मनोभावों की अभिव्यंजना के अनेक स्थल मिलते हैं। उन स्थलों पर कवि ने दशरथ की मनोदशाओं का कथन किया है। ये स्थल निम्नलिखित हैं—(१) पुत्रैषणा (२) पुत्र प्राप्ति के अवसर पर आनन्द (३) नामकरण आदि के अवसरों

---

१ गीतावली १।२८।२ ३

२ भोजन करत चपल चित इत उत अवसर पाइ।
भाजि चले किलकत मुख दधि ओदन लपटाइ॥
—रामचरितमानस १।२०३

३ कवितावली १।४

४ गीतावली १।५२ ५५

पर प्रसन्नता (४) गोद म लेकर सुखानुभूति और (५) बाल क्रीडा का आनन्दानुभव करना । दशरथ द्वारा पुत्रैषणा की अभिव्यक्ति वशिष्ठ जी के समक्ष हुई है। फिर उन्ही के आदेशानुसार वे पुत्रेष्टि यज्ञ करते हैं ।[1] पुत्रा की प्राप्ति पर कवि ने राजा के मनोभावो म उनके हर्ष एव आनन्द का वर्णन किया है। राजा की परम अभिलाषा के पूर्ण हो जाने पर उन्हे ब्रह्मानन्द के समान आनन्द का अनुभव प्राप्त होता है—

दशरथ पुत्र जन्म सुनि काना । मानहु ब्रह्मानन्द समाना ।
परम प्रेम मन पुलक सरीरा । चाहत उठन करन मति धीरा।[2]

इसके पश्चात् पुत्रो के जन्मोत्सव तथा नामकरण और चूडाकर्म आदि विभिन्न सस्कारो पर राजा का अनेक प्रकार से उत्सव कराना और बहुमूल्य दान आदि देना भी इनके आन्तरिक आनन्द को स्पष्ट करता है। राजा कभी कभी पुत्रो को गोद मे लेते हैं तो अत्यन्त सुख का अनुभव करते हैं। आनन्दातिरेक से वे रोमाचित हो जाते हैं।[3] राम के बाल क्रीडा करते समय राजा की सुखानुभूति की अभिव्यक्ति कवि ने भली भाँति की है। राजा भोजन करते हैं तो राम को बुलाते हैं ताकि अपने साथ उन्हें खिलाकर आत्म-तुष्टि प्राप्त कर सकें। राजा के बुलाने से राम नही आते तो कौशल्या के द्वारा उन्हे बुलवाते हैं और धूलधूसरित होकर आये हुए पुत्र को गोद मे बिठाकर प्रसन्न हो जाते हैं—

'धूसर धूरि भरे तनु आए ।
भूपति बिहसि गोद बैठाए ॥'[4]

मातृ-मनोभाव

तुलसी के काव्य म मातृ मनोभावो की अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक हुई है और वही मार्मिक भी अधिक है। वात्सल्य की अनुभूति मातृ हृदय का ही विशेष होती है। तुलसी ने इसका विस्तार के साथ वर्णन किया है। मातृ मनोभावो के प्रसग मे यह अवलोकनीय है कि तुलसी ने कौशल्या के अतिरिक्त सुमित्रा के मातृ हृदय की अभिव्यञ्जना भी अनेक स्थलो पर की है।

कौशल्या राम को पयपान करा रही हैं। उन्होने शिशुओ को गोद म ले रखा है और शय्या पर लेटी हुई हैं। उस समय वे वात्सल्य से अभिभूत होकर नाना भाँति से पुत्र को प्रम करती हैं। कवि ने उसकी भावाभिव्यक्ति इस प्रकार की है—

सुभग सेज सोभित कौशल्या रुचिर राम सिसु गोद लिये ।
बार बार विधु बदन विलोकति लोचन चारु चकोर किये ।

---

१ रामाज्ञाप्रश्न १।२।४ ५, ४।१।२
२ रामचरितमानस १।१९२।३ ४
३ कवितावली १।१ २
४ रामचरितमानस १।२०३।६

कबहु पौढ़ि पयपान करावति कबहु राखति लाइ हिये।
बाल केलि गावत हलरावति, पुलकति प्रम पियूष पिय॥'[1]

इसी प्रकार की भावभिव्यक्ति राम को सुलाने के समय भी की गई है। सुमित्रा उन्ह बार बार गोद लेती है कभी गाकर कभी हिलाकर और कभी बछए छबीले, छौना आदि प्यार भरे शब्द कहकर दुलराती हुई नींद को बुलाती हैं।[2] कौशल्या चारो भाइयो को सुलाते समय और भी अधिक वात्सल्य दर्शाती हुई कहती है—

'ललन लोने लेरुवा बलि भया।
सुख सोइये नींद बरिया भई चारु चरित चारयों भया॥
कहति मल्हाइ, लाइ उर छिन छिन छगन छबीले छोटे छया।
मोद कद कुल कुमुद चद्र मेरे रामचन्द्र रघुरया॥'[3]

इसके अतिरिक्त और भी बहुत से मात मनोभावो की अभिव्यक्ति तुलसी न की है और वे निम्नलिखित हैं—पुत्र के बड होन क विषय म नाना भांति की अभिलाषा करना[4] स्नान आदि कराकर अजन तिलक काजल तथा वस्त्रादि से सुसज्जित करना[5] पालने मे भुलाते समय आनन्दानुभव करना[6] उगली पकड कर बच्चे को चलना सिखाना[7], बच्चे का नचाना और उसक नचाने म सुख का अनुभव करना[8] जगाने के लिये प्यार भरे शब्दो म गान करना[9] और खेलन और मगया करने के समय आनन्द का अनुभव करना[10] आदि। माता के उपयुक्त सभी मनोभावो की अभिव्यक्ति म वात्सल्य की व्यजना की गई है। मात मनोभावो की अभिव्यक्ति के व स्थल अपेक्षाकृत और अधिक मार्मिक हैं जब कौशल्या आदि माताए वियोग के पश्चात अपने पुत्रो से मिलती है ऐसे अवसर तीन हैं—जनकपुर से विवाह के पश्चात लौटने पर चित्रकूट पर राम से मिलने पर और वनवास के पश्चात अयोध्या मे पुन मिलन पर। तीनो अवसरो पर माताओ के मनोभाव बडी स्वाभाविकता के

१ गीतावली १।७।१ २
२ गीतावली १।१६
३ गीतावली १।२०।१ २
४ गीतावली १।८।१ ४ १।६।१२
५ गीदावली १।१०।१ ३
६ गीतावली १।१८।१ १।२३।१
७ गीतावली १।३२।१
८ गीतावली १।३३।४
९ गीतावली १।३६-३८
१० गीतावली १।३६।३

साथ व्यक्त हुए है। हृप, पुलक आनन्दाश्रु आदि विविध अनुभावो के अतिरिक्त कवि ने माता के हृदय का एक बडा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। अपने सुकुमार राम के द्वारा ताडका का वध हुआ इसको याद करके माताए जब विवाह के पश्चात् अयोध्या म आय हुये राम से मिलती है तो कहती है—मारग जात भयावनि भारी। केहि विधि तात ताडका मारी।[1] इसी प्रकार वनवास स लौटने के पश्चात कौशल्या के मनोभावो की अभिव्यक्ति माता के हृदय की आन्तरिक परख का उदाहरण प्रस्तुत करती है। यद्यपि अब सकट टल गया है परन्तु माता उस स्मरण करके अब भी सहम जाती है।

> कौशल्या पुनि पुनि रघुवीरहि। चितवति कृपासिधु रनधीरहि।
> हृदय विचारति बारहि बारा। कवन भांति लकापति मारा।[2]

गुरजनो का स्नेह

पिता और माता के अतिरिक्त गुरु को भी तुलसी ने वात्सल्य भाव के आश्रय रूप म अकित किया है। वशिष्ठ कुल गुरु है। राम के प्रति उनका स्नेह भी वात्सल्य है। कवि ने उसकी भी अभिव्यक्ति की है। व राम के सिर पर हाथ रखते है तो राम किलकन लगते हैं। उसे देखकर गुरु बहुत प्रसन्न होते हैं।[3] जब राम को गोदी म लेते है तो वे गोदी से भागने लगते है इसस गुरु को और भी आनन्द आता है—

> 'लिये गोद धाये गोद तें मोद मुनिमन अनुरागे।[4]

इसी प्रकार जब विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण जा रहे है तो उनके सादय को देखकर उनके हृदय म भी आनन्द नही समाता।[5] ये भाव उनके वात्सल्य के ही है। गुरजनो के स्नेह मे भक्ति का पुट लगा हुआ है अत इसम वात्सल्य भक्ति की ही अभिव्यजना की गई है।

वियोग वात्सल्य

पुत्र के सयोग सुख का अभाव दो अवसरो पर हुआ है। यज्ञ की रक्षा के लिए विश्वामित्र के साथ जाते समय और राम के वन गमन के समय। दोनो अवसरो पर दशरथ और कौशल्या के विरह व्यथित हृदयोदगारो की कवि ने व्यजना की है। विश्वामित्र के द्वारा राम के मागे जाने पर राजा दशरथ बहुत दुखी होते है और जब राम चले जाते है तब उनका स्मरण करके कौशल्या वियोगाभिभूत होती है। दशरथ को वसे तो सभी पुत्र प्रिय है परन्तु राम पर उनकी अतिशय प्रीति है। अत उनके मांगे जाने पर वे अत्यन्त कातर होकर मुनि के समक्ष राम के सम्भावित वियोग का

१ रामचरितमानस १।३५५।८
२ रामचरितमानस ७।६।६ ७
३ गीतावली १।१३।१
४ गीतावली १।१३।२
५ गीतावली १।२४।२

कबहूँ पौढ़ि पयपान करावति कबहूँ राखति लाइ हिये।
बाल केलि गावत हलरावति, पुलकति प्रेम पियूष पिये॥[1]

इसी प्रकार की भावाभिव्यक्ति राम को सुलाने के समय भी की गई है। सुमित्रा उन्हें बार बार गोद लेती है कभी गाकर कभी हिलाकर और कभी बछए छबीले, छौना आदि प्यार भरे शब्द कहकर दुलराती हुई नींद को बुलाती हैं।[2] कौशल्या चारों भाइयों को सुलाते समय और भी अधिक वात्सल्य दर्शाती हुई कहती है—

"ललन लोने लेरुआ बलि मैया।
सुख सोइये नींद-बरिया भई चारु चरित चारयो भैया॥
कहति मल्हाइ, लाइ उर छिन छिन छगन छबीले छोटे छैया।
मोद कंद कुल कुमुद चंद्र मेरे रामचंद्र रघुरैया॥"[3]

इसके अतिरिक्त और भी बहुत से मातृ मनोभावों की अभिव्यक्ति तुलसी ने की है और वे निम्नलिखित हैं—पुत्र के बड़े होने के विषय में नाना भांति की अभिलाषा करना[4] स्नान आदि कराकर अंजन तिलक काजल तथा वस्त्रादि से सुसज्जित करना[5] पालने में झुलाते समय आनन्दानुभव करना[6] उंगली पकड़ कर बच्चे को चलना सिखाना[7] बच्चे को नचाना और उसके नचाने में सुख का अनुभव करना[8] जगाने के लिये प्यार भरे शब्दों में गान करना[9] और खेलने और मृगया करने के समय आनन्द का अनुभव करना[10] आदि। माता के उपर्युक्त सभी मनोभावों की अभिव्यक्ति में वात्सल्य की व्यंजना की गई है। मातृ-मनोभावों की अभिव्यक्ति के वे स्थल अपेक्षाकृत और अधिक मार्मिक हैं जब कौशल्या आदि माताएं वियोग के पश्चात् अपने पुत्रों से मिलती हैं। ऐसे अवसर तीन हैं—जनकपुर से विवाह के पश्चात लौटने पर चित्रकूट पर राम से मिलन पर और वनवास के पश्चात् अयोध्या में पुनः मिलन पर। तीनों अवसरों पर माताओं के मनोभाव बड़ी स्वाभाविकता के

१ गीतावली १।७।१ २
२ गीतावली १।१६
३ गीतावली १।२०।१ ७
४ गीतावली १।८।१४ १।६।१७
५ गीतावली १।१०।१ ३
६ गीतावली १।१८।१ १।२३।१
७ गीतावली १।३२।१
८ गीतावली १।३३।४
९ गीतावली १।३६ ३८
१० गीतावली १।३६।१

साथ व्यक्त हुए हैं। हर्ष पुलक, आनन्दाश्रु आदि विविध अनुभावों के अतिरिक्त कवि ने माता के हृदय का एक बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। अपने सुकुमार राम के द्वारा ताड़का का वध हुआ इसको याद करके माताएं जब विवाह के पश्चात् अयोध्या में आये हुये राम से मिलती हैं तो कहती हैं—मारग जात भयावनि भारी। केहि बिधि तात ताड़का मारी।[1] इसी प्रकार वनवास से लौटने के पश्चात् कौशल्या के मनोभावों की अभिव्यक्ति माता के हृदय की आन्तरिक परख का उदाहरण प्रस्तुत करती है। यद्यपि अब संकट टल गया है परन्तु माता उसे स्मरण करके अब भी सहम जाती है।

कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं। चितवति कृपासिंधु रनधीरहिं।
हृदय बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा।[2]

गुरुजनों का स्नेह

पिता और माता के अतिरिक्त गुरु का भी तुलसी ने वात्सल्य भाव के आश्रय रूप में अंकित किया है। वशिष्ठ कुल गुरु हैं। राम के प्रति उनका स्नेह भी वात्सल्य है। कवि ने उसकी भी अभिव्यक्ति की है। वे राम के सिर पर हाथ रखते हैं तो राम किलकने लगते हैं। उसे देखकर गुरु बहुत प्रसन्न होते हैं।[3] जब राम को गोदी में लेते हैं तो वे गोदी से भागने लगते हैं इससे गुरु को और भी आनन्द आता है—

'लिये गोद धाये गोद तें मोद मुनिमन अनुरागे।'[4]

इसी प्रकार जब विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण आ रहे हैं तो उनके सौन्दर्य को देखकर उनके हृदय में भी आनन्द नहीं समाता।[5] ये भाव उनके वात्सल्य के ही हैं। गुरुजनों के स्नेह में भक्ति का पुट लगा हुआ है अतः इनमें वात्सल्य भक्ति की ही अभिव्यंजना की गई है।

वियोग वात्सल्य

पुत्र के संयोग सुख का अभाव दो अवसरों पर हुआ है। यज्ञ की रक्षा के लिए विश्वामित्र के साथ जाते समय और राम के वन गमन के समय। दोनों अवसरों पर दशरथ और कौशल्या के विरह व्यथित हृदयोद्गारों की कवि ने व्यंजना की है। विश्वामित्र के द्वारा राम के मांगे जाने पर राजा दशरथ बहुत दुखी होते हैं और जब राम चले जाते हैं तब उनका स्मरण करके कौशल्या वियोगाभिभूत होती हैं। दशरथ को वैसे तो सभी पुत्र प्रिय हैं परन्तु राम पर उनकी अतिशय प्रीति है। अतः उनके मांगे जाने पर वे अत्यन्त कातर होकर मुनि के समक्ष राम के सम्भावित वियोग की

१ रामचरितमानस १।३५२।८
२ रामचरितमानस ७।६।६-७
३ गीतावली १।१३।१
४ गीतावली १।१३।२
५ गीतावली १।२४।२

कन्दना मात्र में अनुभूत व्यथा प्रकट करता है—

> ' चौपन्न पायहु सुत चारी । विप्र वचन नहिं कहेहु विचारी ॥
> मांगहु भूमि धेनु धन कोसा । सर्वस देउ आज सहरोसा ॥
> देह प्रान ते प्रिय कछु नाही । सो मुनि देउ निमिष एक माही ॥
> सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाई । राम देत नहिं बनइ गोसाई ॥ '[1]

विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण के चले जाने पर कौशल्या और सुमित्रा दोनों पुत्रों की स्मृति करके दुखी होती है। कौशल्या को दशरथ, वशिष्ठ और मन्त्री आदि सभी का इस प्रकार अपनी सम्मति देना अनुचित लगता है। वे कहती है जो मुझे राम लक्ष्मण के आगमन की सूचना देगा वह मुझे चारों पुत्रों के समान ही प्रिय लगेगा। सुमित्रा को भी यही दुख होता है कि पुत्रों के जाने के बाद कोई समाचार नहीं मिला। वे उनकी सुख सुविधा के विषय में बड़ी चिन्तित होती है। कौशल्या तो और भी अधिक बेचैन होती है। वे अनेक प्रकार के विचार करके व्याकुल होती है। कवि ने कौशल्या के उद्गारों की अतीव हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति की है—

> "मेरे बालक कैसे धौं मग निबहैंगे।
> भूख प्यास सीत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकहि कहिहैं ॥
> को भोर ही उबटि अन्हवैहै काढ़ि कलेऊ दैहै ?
> को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचन सुख लैहै ?
> नयन निमेषनि ज्यों जोगवत नित पितु परिजन महतारी।
> ते पठए ऋषि साथ निसाचर मारन मख रखवारी ॥"[2]

राम-वन गमन के समय वियोग की अनुभूति असह्य वेदना उत्पन्न करती है। पुत्र प्रेम के कारण दशरथ की जो दशा तुलसी ने वर्णित की है वह पिता की वियोग वात्सल्यानुभूति का अद्वितीय उदाहरण है। कवि ने उसकी अभिव्यंजना बड़े विस्तार के साथ की है। दशरथ जब कैकेयी के मुख से दोनों वर माँगने की बात सुनते है तो उनका रंग पीला पड़ जाता है। उन्हें भरत के राज्याभिषेक करने में कोई आपत्ति नहीं है परन्तु राम का वनवास सुनकर बहुत दुख होता है। राम तो उनके प्राण हैं। बिना राम के वे जीवित नहीं रह सकते। उनके मुख से राम के प्रति प्रेम की अभिव्यंजना इस प्रकार हुई है—

> ' जिए मीन वरु वारि विहीना। मनि बिनु फनिक जिए दुख दीना।
> कहहु सुभाय न छलु मन माहीं। जीवन मोर राम बिनु नाहीं ॥ '[3]

---

१ रामचरितमानस १।२०७।२-५
२ गीतावली १।९९।१ ३
३ रामचरितमानस २।३२।१ २

सुत के स्नेह के कारण व कैकेयी की खुशामद भी करते हैं पर उसके निश्चय मे कोई परिवर्तन न देखकर अत्यन्त व्यथित होते हैं। कवि ने उस समय की दशा का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियो मे किया है—

> "राम राम रट विकल भुआलू। जनु बिनु पख विहग बेहालू।
> हृदय मनाव भोर जनि होई। रामहिं जाइ कहै जनि कोई॥"[1]

अप्रतिम वात्सल्य से विभोर हुए परम प्रतापी राजा के कातरतापूर्ण शब्दो की अभिव्यजना मे कवि ने मर्यादा का आश्रय रखकर इस परिस्थिति को विलक्षण बना दिया है। राजा चाहें तो राम को वन जाने की आज्ञा न दें परन्तु इससे उनके धर्म की मर्यादा टूटेगी। इससे वे चाहते हैं कि किसी प्रकार राम के ही मन मे वन न जाने की बात आ जाय। इसके लिये वे शिव की मनौती करते हैं। शिव ही ऐसे अवढर दानी हैं जो जैसा चाहे वरदान दे सकते हैं। राजा के उस समय के शब्द उनकी मानसिक स्थिति का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं—

> तुम्ह प्रेरक सबके हृदय सो मति रामहिं देहु।
> वचन मोर तजि रहहिं घर परिहरि सीलु सनेहु॥[2]

राजा की वात्सल्याभिभूत दशा के चित्रण के विषय मे तुलसी का वशिष्ट्य बतलाते हुए डा० उदयभानुसिंह के अधोलिखित शब्द द्रष्टव्य हैं—' पुत्र वियोग की भावना मात्र से सुरलोक रक्षक विश्वविजेता पिता के द्रुतचित्त की कातरता की पराकाष्ठा का चमत्कारकारी कारुणिक आलेखन समर्थ कवि तुलसी की लेखनी का ही चमत्कार है।"[3] इस स्थान पर यह भी अवेक्षणीय है कि किसी किसी विद्वान ने दशरथ की पुत्र वियोग मे व्यथित उपर्युक्त दशा को करुण रस के अन्तर्गत समाविष्ट किया है परन्तु हमारी सम्मति से यह वियोग वात्सल्य ही है। हाँ सुमन्त्र के वापिस लौट आने पर जो दशरथ का विलाप है उससे करुण रस की अनुभूति होती है क्योंकि उस समय दशरथ की राम से मिलने की आशा समाप्त हो जाती है।[4]

पुत्र वियोग मे कौशल्या के विरह-व्यथित मानसोद्गारो का वर्णन भी कवि ने विस्तार के साथ किया है। वे ममतामयी माँ हैं, अत इनकी अभिव्यक्ति मे वात्सल्य रस अपेक्षाकृत अधिक अनुस्यूत मिलता है। दशरथ की दशा के वर्णन मे पुत्र विरह की चरमावस्था का चित्रण है परन्तु कौशल्या के विरहोदगारो मे वियोग वात्सल्य की मार्मिक अभिव्यजना है। तुलसी ने कौशल्या की वियोग-दशा का चित्रण तीन

---

१ रामचरितमानस २।३६।८ २

२ रामचरितमानस २।४४

३ तुलसी दर्शन-मीमासा पृ० ४००

४ करुण रस (मध्ययुगीन हिन्दी राम काव्य के परिवेश मे) पृ० २३८
—डा० व्रजवासीलाल श्रीवास्तव

अवसरो पर किया है। राम के वन जाने समय, वन म स्थित होने समय और चौदह वप पश्चात् वनवास की अवधि समाप्त होत समय। वन जात समय कौशल्या राम को स्नेह भरे शब्दो मे रुक जाने के लिये समझाती हैं वे माता होने क कारण अपना अधिकार और अधिक मानती हैं। वे अत्यत कातर होकर विलाप करती ह। राम से वियुक्त होने की कल्पना करके वे अधीर हो जाती ह। अधोलिखित पक्तियो म उनकी तत्कालीन चित्त दशा का निरूपण बडे ही कायोचित श दावली मे किया गया है—

> "राम ! हौं कौन जतन घर रहिहौं।
> बार बार भरि अक गोद ल ललन कौन सौं कहिहौं॥
> इहि आगन बिहरत मेरे बारे ! तुम जो सग सिसु लीन्हें।
> कसे प्रान रहत सुमिरत सुत बहु बिनोद तुम कीन्ह॥
> जिन्ह श्रवननि कल बचन तिहारे सुनि सुनि हौं अनुरागी।
> तिन्ह श्रवननि बनगवन सुनति हौं मौतें कौन अभागी॥"[१]

राम के वन चले जाने पर कौशल्या को रह रहकर उनकी स्मृति आती रहती है। वे उनके खेलने के धनुष बाण को बार बार देखती हैं। कभी उनकी जूतिया को नेत्रो से लगाती हैं। राम के वियोग मे उन्हें सब सूना ही सूना लगता है और राम की स्मृति से उनके बाल विनोद याद आ जाते हैं। उनकी अनुपस्थिति म य सारी बाते उन्हे बहुत दुखद प्रतीत होती है। वे राम क लौटने के विषय म कामनायें करती हैं और उस शुभ घडी की बडी आतुर होकर बाट देखती हैं जबकि राम लौटकर आयेंगे। कभी कभी कौशल्या धय खोकर विलाप करने लगती है। उनके विलाप से सारे रनिवास का धैय छूट जाता है। कवि ने राम के विरह स व्यथित कौशल्या की दशा के चित्रण करने म अपनी वाणी को असमथ पाया है। उनकी यह अभिव्यक्ति वियोग-वात्सल्य का उत्कृष्ट उदाहरण है—

> माई री ! मोहि कोउ न समझाव।
> राम-गवन साचों किधौं सपनो, मन परतीति न आव॥
> लगउ रहत मेरे नैनन आगे राम लषण और सीता।
> तदपि न मिटत दाह या उर को बिधि जो भयो बिपरीता॥
> दुख न रहै रघुपतिहि बिलोके तनु न रहै बिनु देखे—
> करत न प्रान पयान सुनहु सखि ! अरुझि परी यहि लेखे।
> कौसल्या के बिरह वचन सुनि रोइ उठीं सब रानी।
> तुलसिदास रघुबीर बिरह को पीर न जाति बखानी॥"[२]

१ गीतावली २।४।१—४
२ गीतावली २।५३

जब राम के वनवास की अवधि प्राय समाप्त हो चुकी है, उस समय कौशल्या को अपने पुत्र से मिलन की लालसा प्रबल हो जाती है। वे कभी महल पर चढकर देखने लगती हैं, जब कुछ दृष्टिगत नही होता तो हताश होकर अधीर हो जाती हैं। वे अपनी सखियो से अपने मनोभावो की अभिव्यक्ति करती हैं। कभी अनिष्ट की आशका करती हैं और कभी राम, लक्ष्मण और सीता के कष्ट की कल्पना करके दुखी होती हैं। कवि ने अन्त मे कौशल्या की भावाभिव्यक्ति का बडा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। वे तरह तरह से सगुनौती करती है। कभी ज्योतिषियो से राम के आगमन के विषय मे पूछती हैं। कवि ने उनकी भी अभिव्यक्ति सुन्दर शब्दो मे की है—

'बैठी सगुन मनावति माता।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि बाता॥
दूध भात की दोनी दैहों सोने चोंच मढैहों।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि राम लखन उर लैहौं॥
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी।
गनक बोलाइ पाय परि पूछति प्रेम मगन मदुबानी॥[1]

इस प्रकार तुलसी की वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति भी बडी मार्मिक है। रस-व्यजना की दृष्टि से भी कवि को इसमे पूर्ण सफलता मिली है। इसमे व्यापकता और विविधता है। वियोग की जो दस दशाए—अभिलाषा[2], चिन्ता[3] स्मरण[4] गुणकथन[5], उद्वेग[6], प्रलाप[7] व्याधि[8] जडता[9], मूर्छा[10] और मरण[11] आदि होती हैं उन सभी की अभिव्यजना इनकी वियोग वात्सल्याभिव्यक्ति मे मिलती है।

---

१ गीतावली ६।१६।१—२
२ गीतावली २।५८
३ गीतावली १।६६
४ गीतावली २।५४
५ गीतावली २।५८।२
६ रामचरितमानस २।१५२।५ ६
७ रामचरितमानस २।१५२।५ ८
८ गीतावली २।५८
९ रामचरितमानस २।१५२।१ २
१० रामचरितमानस २।४३
११ गीतावली २।५६।४

तुलसी के वात्सल्य वर्णन की विशेषतायें

(१) तुलसीदास ने राम के चरित का गान किया है। राम के व्यक्तित्व की यह विशेषता है कि उनका वर्णन सर्वत्र आदर्श रूप में ही हुआ है। वाल्मीकि रामायण, पुराणों तथा पौराणिक रामायणों में राम के चरित का चित्रण है। इनमें सर्वत्र उनका व्यक्तित्व आदर्शरूप में ही रहा है। काव्यजगत में भी उनका वैसा ही व्यक्तित्व है। तुलसी ने उसी परम्परा का पालन किया है और बाल विनोद तथा क्रीडा आदि के प्रसंगों में भी सर्वत्र उनके आदर्श व्यक्तित्व का ही चित्रण किया है।

(२) तुलसी ने वात्सल्याभिव्यक्ति के संयोग और वियोग दोनों अवसरों पर अपने प्रभु का स्मरण नहीं छोड़ा है। इससे तुलसीदास द्वारा अभिव्यक्त वात्सल्य रस अधिकांशतः वत्सलभक्ति रस की कोटि में ही आता है। परन्तु शुद्ध वात्सल्य रस के उदाहरण भी बहुत कम मात्रा में नहीं हैं। इस प्रकार तुलसी ने वत्सलभक्ति और शुद्ध वात्सल्य रस दोनों की अभिव्यक्ति की है।

(३) इन्होंने वियोग की व्यापकता का वर्णन किया है। राम के वियोग में समस्त पुरवासी दुःखी होते हैं। इससे भी अधिक पशुओं तक में राम के वियोग का प्रभाव है उनके घोड़े इस कथन का प्रमाण हैं।

(४) कवि ने सपत्नी पुत्रों के प्रति जो सौतेली माता के स्नेह की अभिव्यक्ति की है वह इनकी निजी विशेषता है। वह इसलिए है क्योंकि कवि ने सर्वत्र मर्यादा का निर्वाह किया है।

(५) राम की अपने भक्तों के प्रति जो सदैव अनुकम्पा रही है वह उनका भी भक्तों के प्रति वात्सल्य ही है। इसी से उन्हें भक्त वत्सल कहा गया है।

(६) संयोग और वियोग की विविध दशाओं का चित्रण भली भांति किया गया है। उसमें आश्रय के मनोभाव और संचारी भावों की अभिव्यक्ति सफलता पूर्वक की गई है। आलम्बन के रूप और क्रीड़ा का स्वाभाविक चित्रण है। उद्दीपनों में आलम्बनगत और आलम्बनबाह्य दोनों प्रकार का चित्रण हुआ है। इस प्रकार इयत्ता और इदंता दोनों ही दृष्टियों से इनका वात्सल्य श्रेष्ठ है।

(७) राम के ईश्वरत्व का दशरथ और कौशल्या दोनों को पता है परन्तु फिर भी वे अपने को वात्सल्य भावाभिभूत हुए बिना नहीं बचा सके। राम का अलौकिक रूप वात्सल्य की अनुभूति में बाधक नहीं हुआ।

(८) वात्सल्य वर्णन में व्यापकता और विविधता तुलसी की सबसे बड़ी विशेषता है। इस दृष्टि से कुछ आलोचकों ने उनकी वात्सल्याभिव्यक्ति को सूर के समकक्ष रखकर भी प्रशंसा की है। उदाहरणार्थ डा० उदयभानुसिंह के निम्नोद्धृत शब्द द्रष्टव्य हैं—

पार्वती राम लक्ष्मण सीता भरत आदि के प्रति माता पिता एवं स्वयं कवि के वात्सल्य का वर्णन तो सुंदर है ही किन्तु राम और सीता के प्रति राम

ससुर आदि गुरुजनो तथा साधारण दर्शको का वात्सल्य भी विशेष द्रष्टव्य है। मैना, सुनयना, कौशल्या सुमित्रा आदि की परिस्थितियो मे जो वविध्य है वह यशोदा आदि मे नही है।"[1]

रसखान

रसखान भक्तिकाल के प्रसिद्ध कवि है। इनकी कविता से इनकी सहृदयता और भावुकता का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। ये कृष्ण भक्ति परम्परा के कवि हैं। और इनके काव्य मे भक्ति का सवनाप्त प्रसार है। इनके भक्ति प्रवाह मे दो सवैये कृष्ण के बाल वर्णन के भी मिलते हैं। उनमे आलम्बन और आश्रयगत दोनो प्रकार के भावो की अभिव्यक्ति है और उनमे मातृ हृदय की स्वाभाविक व्यजना मिलती है। माता का स्वभाव है कि वह अपने पुत्र को वस्त्रालकारो से सुसज्जित करना चाहती है और उसके सुन्दर रूप को देखकर अव्यक्त आनन्द का अनुभव करती है। यशोदा के इसी प्रकार के भाव को रसखान ने एक सखी के मुह से व्यक्त कराया है। यशोदा तेल अजन और डिठौना आदि से शिशु कृष्ण को सुसज्जित करती है तथा उसके गले मे हमेल डाल कर मुख देखती है और अपना वात्सल्य प्रदर्शित करती है। सखी भी उसी प्रकार के वात्सल्य भाव से अभिभूत होती है और उसका वर्णन इस प्रकार करती है—

> 'आज गई हुती भोरहीं हैं रसखानि रई कहि नद के भौनहिं।
> वाको जियो जुग लाख करोर जसोमति को सुख जात कह्यो नहिं॥
> तेल लगाइ लगाइ के अजन भौंह बनाइ बनाइ डिठौनहिं।
> डारि हमेल निहारति आनन वारति ज्यों चुचकारति छौनहिं॥"[2]

रसखान का दूसरा सवया वात्सल्य-रस का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। उसमे कृष्ण के रूप स्वभाव और चपलता का अत्यन्त हृदय स्पर्शी और स्वाभाविक वर्णन है।

शिशु का सौन्दय अनुपमेय होता है। उसकी शशव सुलभ अपनी विशेषताऐं होती है और उसी दृष्टि से उसका अनुभव भी किया जाता है। धूल से लथपथ किसी वयस्क पुरुष का शरीर अस्वाभाविकता को उत्पन्न कर देता है परन्तु शिशु के शरीर से लगी धूल उसके सौन्दय की अभिवृद्धि करती है। रसखान ने शिशु कृष्ण के धूल से भरे हुए शरीर की शोभा का वर्णन किया है। कवि कहता है कि उसी प्रकार उसकी चोटी भी सुन्दर बनी हुई है। वस्तुत इससे सौंदय का भाव इसलिये उद्दीप्त होता है कि शिशु इन सासारिक वस्तुओ के प्रति अनिर्लिप्त भावो वाला होता है और उसकी अनर्लिप्त भावना पर एक अनिवचनीय आनन्द प्राप्त होता है। आगन

---

१ तुलसी दर्शन मीमासा, पृ० ४०१

२ रसखान का अमर काव्य, पृ० ५०

में बच्चा खेल रहे हैं और खा भी रहे हैं, इससे शिशु स्वभाव की व्यंजना होती है। वे थिरकते डोलते हैं, पग पैंजनी और आँगन में साथ ही बाजती है, कोई गाना नहीं। उनके पैरों की पैजनी और पीली कछोटी और भी अधिक शोभा देती है। इस प्रकार माखन रोटी का कृष्ण के हाथ से कौए का लेकर भाग जाना स्वाभाविक भी है और कवि की सूझ से शिशु रूप चित्रण का परिचय भी मिलता है। उनका उपर्युक्त भावों से युक्त वात्सल्य रस का प्रसिद्ध सवैया निम्नलिखित है—

धूल भरे अति सोभित स्याम जू तैसी बनी सिर सुंदर चोटी।
खेलत खात फिरैं अँगना पग पैंजनी बाजति पीरी कछोटी॥
वा छवि को रसखान विलोकत वारत काम कलानिधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सों लै गयो माखन रोटी॥[1]

इस रचना की वात्सल्याभिव्यक्ति यद्यपि परिमाण की दृष्टि से अत्यन्त अल्प है परन्तु भाव गाम्भीर्य और रस परिपाक की दृष्टि से उत्कृष्ट है। इतने संक्षिप्त वर्णन में ही कवि ने वात्सल्य की मार्मिक व्यंजना की है। उपर्युक्त सवैये में वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति है। इसके साथ यह भी उल्लेखनीय है कि अन्तिम पंक्तियों में काग के भाग की सराहना करने में तथा कृष्ण के लिये 'हरि' शब्द का प्रयोग करने में इसमें भक्ति का पुट भी लग गया है। और यह रसखान जैसे भक्त कवि के लिये स्वाभाविक भी है।

रसिक बिहारी

वात्सल्य रस का वर्णन करने वाले कवियों की परम्परा में रसिक बिहारी का नाम भी परिगणित करने योग्य है। यद्यपि इनका एतद्विषयक एक ही कवित्त मिलता है परन्तु वह इतनी भावपूर्ण और काव्यमयी भाषा में लिखा गया है कि उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती और उसे वात्सल्य वर्णन के प्रतिनिधि प्रसंगों के समक्ष रखा जा सकता है। इस कवित्त में कवि ने राम आदि कुमारों के रूप का वर्णन किया है। रूप-वर्णन में शिशुओं के आकार और मंडन का तथा उस समय के वातावरण का ऐसा हृदयग्राही वर्णन किया है कि नेत्रों के समक्ष उनका चित्र सा उपस्थित हो जाता है। शिशुओं के समस्त छोटे छोटे शरीरावयव पग हाथ उंगली नख कपोल लोचन अधर और मुख आदि की शोभा का वर्णन 'लाल' शब्द की आवृत्ति के साथ होने से शिशु रूप की स्वाभाविकता को और भी अधिक स्पष्ट कर देता है। रूप और आकल्प के साथ साथ पालने में झूलने और खिलौने आदि के वर्णन से शिशु क्रीड़ा का भी ध्वनन होता है। इस प्रकार रूप, क्रीडा और शिशु स्वभाव का एक ही कवित्त में सजीव चित्र उपस्थित कर दिया गया है। रसिक बिहारी का वह कवित्त

---

१ रसखान का अमर काव्य पृ० ५०

निम्नलिखित है—

छोटे पद पानि लाल छोटी अगुरी हु लाल,
छोटे नख लाल छोटी रेखा लाल लाल हैं।
कलित कपोल लाल लोचन ललित लाल,
अधर अनूप लाल लाल मुख लाल हैं।
लाल लाल भूषण बसन सब लाल लाल,
रसिक बिहारी सब साज भौन लाल हैं।
लाल पलना मे लाल फूलन की सेज लाल,
खेल नग लाल ल खिलौना लाल लाल है॥

केशवदास

केशवदास के काव्य में भी वात्सल्य का वर्णन हुआ है। उसमे सयोग और वियोग-वात्सल्य दोनो की अभिव्यक्ति है। सयोग-वात्सल्य वर्णन मे बाल छवि और सयोग सुख का वर्णन है। वियोग-वात्सल्य म पिता और माता की व्यथित दशाओं का चित्रण है।

बाल छवि वर्णन के आलम्बन राम आदि चारों भ्राता हैं। कवि ने चारो कुमारो के रूप और उनके शरीर पर सुसज्जित वस्त्राभूषण आदि का कथन किया है। रूप वर्णन म उनके नेत्र भकुटी तथा बोलने, चलने, हँसने और देखने आदि की शोभा की अभिव्यक्ति की है। वस्त्राभषणों मे पाग, पनही, माला और बघनखा आदि से विभिन्न अगो को सुशोभित होने की अभिव्यक्ति है। वे एक तो राजा हैं और दूसरे क्षत्रिय कुमार हैं अत उनके हाथो मे धनुष बाण का होना और भी अधिक स्वाभाविकता उत्पन्न कर देता है। इस प्रकार की बाल छवि की अभिव्यक्ति से युक्त उनका निम्नलिखित उदहरण द्रष्टव्य है—

'पीरी पीरी पाट की पिछौरी कटि केशौदास,
पीरी पीरी पागैं पग पीरिये पनहियां।
बडे बडे मोतिन की माला बडे बडे नैन,
भकुटी कुटिल नाहीं नाहीं बघनहियां।
बोलनि चलनि मृदु हसनि चितौनि चारु,
देखत ही बन प न कहत बनहियां।
सरजू के तीर तीर खेल चारों रघुवीर,
हाथ द्व द्व तीर राती राति द्व धनुहियां॥'[1]

१ दे० नवरस, पृ० ५४५ पर उद्धत

केशवदास ने वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति रामचन्द्रिका में दो अवसरों पर की है। यज्ञ रक्षा के लिये राम लक्ष्मण को भेजते समय और राम वन गमन के समय। यज्ञ की रक्षा के लिये जब विश्वामित्र राम को माँगते हैं तो दशरथ को अतीव दुःख होता है। ऋषि के वचन उन्हें तीक्ष्ण बाण के समान प्रतीत होते हैं। व्याकुलता से वे एक दम चुप हो जाते हैं।

'यह बात सुनी नृप नाथ जबै,
सर से लगे आखर चित्त तबै।
मुख तें कछु बात न जाइ कही
अपराध बिना रिसि देह दही॥'[1]

अपने पुत्र का राक्षसों के साथ युद्ध के लिये भेजने में उनका मन अनिष्ट की आशंका से व्याप्त हो जाता है। अतः वे राम के स्थान पर अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ स्वतः चलने को प्रस्तुत होते हैं।[2] विश्वामित्र के और अधिक आग्रह करने पर राजा बड़े कातर हो जाते हैं। राम से वियुक्त होना वे नहीं चाहते। अतः वे अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहते हैं—

"जु कह्यो रिषि देन सु लीजिय। काज करौ हठ भूल न कीजिय।
प्रान दिये धन जाहिं दिये सब। केसव राम न जाहिं दिये अब।"[3]

अन्त में वशिष्ठ जी के समझाने बुझाने से राजा किसी प्रकार विवश होकर राम को देने के लिये प्रस्तुत तो होते हैं परन्तु पुत्र विरह से वे अतीव व्यथित हो जाते हैं। उनके मुख से वचन भी नहीं निकलते और नेत्रों में आँसू आ जाते हैं। कवि ने दशरथ की वियोग व्यथित दशा का अत्यन्त भाव-पूर्ण चित्र खींचा है—

राम चलत नृप के जुग लोचन।
बारि भरित भये बारिद रोचन॥
पाइन परि रिषि के सजि मौनहिं।
केसव उठि गये भीतर भौनहिं॥[4]

वियोग का दूसरा अवसर उस समय आता है जब कैकेयी दशरथ से दो वर माँगती है। राजा को राम के वन जाने की बात सुनकर अपार दुख होता है और उनका हृदय विदीर्ण हो जाता है। रामगमन की सूचना से नगर के व्यक्ति भी बड़े व्यथित होते हैं। वे सुख भोग भूख प्यास सब भूल जाते हैं। कौशल्या को राम के वियोग की अनुभूति और भी अधिक होती है। वे पुत्र प्रेम के कारण दशरथ पर

---

१ रामचन्द्रिका पृ० ३२
२ रामचन्द्रिका, पृ० ३२
३ रामचन्द्रिका पृ० ३४
४ रामचन्द्रिका पृ० ३६

भी अपनी खीझ प्रकट करती हैं और उन्हें बावला हुआ बतलाती हैं। वे रहने में अपने में असमय पाती हैं और पुत्र का मुख सदैव देखते रहने की लालसा में कहती हैं—

'मोहि चलो बस संग लिये। पुत्र तुम्हें हम देख जियें।'[1]

कवि ने लव कुश प्रसंग में भी वात्सल्याभिव्यक्ति की है और उसके आश्रय राम और सीता हैं तथा आलम्बन लव कुश। राम जब लव कुश को देखते हैं तो उनका स्वाभाविक पुत्र प्रेम उमड़ने लगता है। उन्हें वे बालक अपने ही प्रतिबिम्ब से लगते हैं। सीता की वात्सल्याभिव्यक्ति उस समय की है जब दोनों पुत्र युद्ध में विजयी होकर आते हैं और सीता की चरण वन्दना करते हैं। उनका हृदय वात्सल्य प्रेम में उमड़ने लगता है और वे अत्यन्त आनन्दित होती हैं। कवि ने सीता के वात्सल्य प्रदर्शन का इस प्रकार कथन किया है—

"रन जीति के सब साथ लै। करि मातु के कुस पा पर।
सिर सूंघि कंठ लगाइ आनन चूमि अंक दुवौ धरे॥"[2]

केशव के काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य का वर्णन विस्तृत नहीं है। वात्सल्याभिव्यक्ति के प्रसंग तो कई हैं परन्तु कवि ने उनका वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त रूप में किया है। फिर भी उनके कुछ स्थल भाव गाम्भीर्य की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। कहीं भावातिरेक में मूक चित्र उपस्थित करके वर्णन की स्वाभाविकता भी बढ़ा दी है। दुःखातिरेक की भांति सुखातिरेक के समय का भी इन्होंने स्वाभाविक वर्णन किया है। राम के वन से आने पर हर्षातिरेक के कारण कौशल्यादि मातायें यह सोचने लगती हैं कि यह सत्य है अथवा स्वप्न। सुख के समय मानव मन की इस प्रकार की कल्पना स्वाभाविक है।

रीतिकाल

चिन्तामणि

चिन्तामणि रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि हैं। इनका एक अप्रकाशित काव्य ग्रन्थ 'कृष्णचरित्र' शीर्षक है। इसमें १२ सर्ग हैं। कृष्ण चरित्र का वर्णन करते समय भक्ति और शृंगार के साथ वात्सल्य का वर्णन भी इस ग्रन्थ का एकतम विषय है। कवि ने इसके प्रथम और द्वितीय सर्ग में कृष्ण का बाल वर्णन किया है। इसमें कुछ भाव आलम्बन के और कुछ आश्रय के हैं। आलम्बन चित्रण में कृष्ण के जन्मोत्सव, बाल-छवि बाल विनोद और कौतुक आदि हैं और आश्रय के चित्रण में यशोदा के मातृ-हृदय की अभिव्यक्ति की गई है। कृष्ण जन्म के समय वसुदेव देवकी के हृदय में वात्सल्य की वृद्धि नहीं हो पाती वे कृष्ण के दिव्य रूप को देखकर आश्चर्य और

१ रामचन्द्रिका, पृ० १४३
२ केशव ग्रंथावली, पृ० ४१०

भक्ति से अभिभूत होते हैं। कवि ने यशोदा के यहाँ पुत्र जन्म के आनन्द का वर्णन किया है। उसमें सज्जन लोग, गोपी और गोप सभी सम्मिलित होते हैं। उस समय बाजे और नगाड़े और संगीत के द्वारा हर्षोल्लास प्रकट किया जाता है और दान आदि दिये जाते हैं जन्मोत्सव के साथ कवि ने जन्म दिन[1] और जात कर्म[2] के अवसर के आनन्दमय वातावरण का भी वर्णन किया है।

कृष्ण के रूप वर्णन में कवि ने उनके मुख, अलक लोचन पाणि, पग और समस्त अंग की शोभा का कथन किया है।[3] कहीं कहीं उसकी बालसुलभ क्रीडा के प्रसंग में भी उनके सौंदर्य की व्यंजना की है। छोटी-छोटी डग भर कर अपने पैर की छोटी छोटी घंटियों को बजाते हुए धूल से सने हुए प्रसन्न मुख बाल-कृष्ण इधर उधर फिर रहे हैं। कवि ने इन भावों का वात्सल्य पूर्ण वर्णन इस प्रकार किया है—

> 'छोटी छोटी डगन धरत डगमग पग,
> बाजे छुद्र घंटिका हरख हरि पाव री।
> देत है डगन सुख सुन्दर हसत मुख,
> धूरि सो लपेट लला लटकत आव री॥'[4]

कवि ने बाल विनोदों का वर्णन बड़ी सफलता के साथ किया है। उसमें से उनकी तोतली बोली बोलना, गोबर व कीचड़ में पैर लथपथ करना काँटे भाग, छुरी आदि से खेलना वन में निर्भय होकर दूर चले जाना और माखन चुराना आदि मुख्य हैं। किसी किसी स्थल पर क्रीडा करते हुए कृष्ण और बलराम का बड़ा मार्मिक वर्णन है। उदाहरणार्थ बालक आँगन में खेल रहे हैं। उनके किंकणी और नूपुर बज रहे हैं प्रसन्नता से व किलकारी मार रहे हैं। कभी अपनी परछाइयों को देखकर डर कर माताओं के पास आ जाते हैं। कवि ने इस प्रकार के बाल-विनोदों में वात्सल्यमयी यशोदा और रोहिणी की सुखानुभूति की अभिव्यक्ति भी की है—

> 'किंकन नूपुर की धुनि सो किलक
> कर आनन के बल धाव।
> दोऊ जने सित स्याम मना मनि आगन
> आगन की छवि छाव।
> रोहनि संग विलोकि जसोमति बाल
> विनोद महा सुख पाव।

१ कृष्ण चरित्र १।१६
२ कृष्ण चरित्र १।२१
३ कृष्ण चरित्र १।२३
४ कृष्ण चरित्र १।४६

श्रौचक आपनी छाह निहारि डराइ,
क माइ समीपहि आव ॥[1]

यशोदा के मातृ-मनोभावो की अभिव्यक्ति कवि ने भली भांति की है। व कृष्ण के धूसरित शरीर, मथानी पकडकर आड करने, माखन चुराने और तरह तरह के बाल विनोदो को देखकर आनन्द का अनुभव करता है। गोपिया उलाहने लेकर आती हैं तो भी वे कृष्ण से कुछ कहती नही है परन्तु वात्सल्य से विभोर होकर हँसती हैं और अपने पुत्र को देखने लगती हैं।[2] माखन चोरी के विषय म कवि ने एक बहुत सुन्दर चित्र खीचा है। यशोदा कृष्ण को माखन खाते हुए देख लेती हैं। वे छोटी सी छड़ी लेती हैं और कृष्ण को पकडने जाती हैं। कृष्ण उन्ह देखते ही भाग जाते हैं। वे कृष्ण के इस कृत्य को देखकर बडी आनन्दित होती हैं ह और पकडने के लिये दौडती ह। कवि के इस भाव का चित्रण निम्नोद्धृत पक्तियो मे द्रष्टव्य है—

'छोटी छरी ल चली चुप माइ लख्यो उत,
माखन खात कन्हैया।
भाजे उलूखल तें हरि कूदि ससभ्रम,
नन विलोकति मया।
मया जसोमति देखि छकी छवि को म,
छक छकि लेत बलैया।
दौरि उत जननी गहिबे को भज्यो हसि
क बलभद्र को भैया ॥'[2]

चिन्तामणि ने वात्सल्य के सयोग के ही चित्र अकित किये हैं। कवि का भावानुभूति पर सूर का प्रभाव है परन्तु उनकी अभिव्यक्ति का यत्वपूर्ण है। कृष्ण चरित्र के कुछ प्रसग जैस पूतना वध ऊखल ब धन और ब्रह्मा-वत्स-हरण आदि में साधारण कथा प्रवाह है उसम वात्सल्य की अनुभूति नही होती। कुछ प्रसगा म— जस माटी खान और रस्सी बाधने म कृष्ण के इश्वरत्व की ही अभिव्यजना है। इसके अतिरिक्त शुद्ध वात्सल्य के वणन के समय भी कही कही अपार, 'अनादि' 'अनन्त और निरजन आदि शब्दो के प्रयोग हान से उसमे भक्ति का पुट भी लग गया है। कृष्ण के अतिरिक्त कवि ने अपने दूसरे ग्रन्थ म राम के प्रति भी वात्सल्या भिव्यक्ति की है और उसमे राम का रूप वणन किया है।[3]

---

१ माइ जसोमति बात कछू नाहिं बोलि,—
मके हँसि पूतहि देख ॥
कृष्ण चरित्र २।१६

२ कृष्ण चरित्र २।१३

३ कवि कुल-कल्प तरु ४।२०२

आलम

रसखान की भाँति आलम ने भी श्रीकृष्ण को विषयालम्बन बनाकर फुटकल पद लिखे हैं। इनकी कविताएं 'आलम केलि' शीर्षक ग्रंथ में संगृहीत हैं। उनमें वैसे तो शृंगार वर्णन का ही प्राचुर्य है परन्तु कृष्ण के बाल चरित सम्बन्धी कुछ छन्दों में वात्सल्य की अभिव्यक्ति भी हुई है। इनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि ये बड़ी तन्मयता के साथ रचना करते थे। अतः इनकी वात्सल्याभिव्यक्ति भी मार्मिकतापूर्ण है। कवि ने आलम्बन और आश्रय दोनों के ही भावों की अभिव्यक्ति की है। आलम्बन के भावों में कृष्ण का रूप और क्रीड़ा आदि मुख्य हैं और आश्रय विभाग में यशोदा और ब्रज की गोपियों की सुखानुभूति यशोदा का मातृ हृदय और मातृ अभिलाषा द्रष्टव्य हैं। कृष्ण के रूप-वर्णन में उनके मुख शरीर केश, नेत्र और पैरों आदि की शोभा को लिया है। कहीं कहीं उनके रूप का वात्सल्यपूर्ण चित्र सा उपस्थित कर दिया है। उदाहरणार्थ नीचे की पंक्तियाँ देखिये—

> छीर मुख लपटाए छार चकुटिन भर छीया।
> नेकु छवि देखो जगन मगन को ॥ [1]

कृष्ण की शिशु क्रीड़ा गोद पालन और भूमि तीनों स्थानों पर वर्णित की है। उसके साथ ही कवि ने यशोदा और ब्रज की गोपियों की सुखानुभूति का वर्णन किया है। पालने में झूलते हुए कृष्ण की शोभा की अभिव्यक्ति, कवि ने अत्यन्त मार्मिक की है। कृष्ण के पतले वस्त्र से होकर उनका शरीर छविमान दृष्टिगोचर हो रहा है और वह झुमर झुमर करते हुए पालने में झूल रहे हैं। उस समय उनके घुंघरू और घुंघराले बाल अतीव शोभायमान लग रहे हैं। ऐसे कृष्ण को ब्रज की स्त्रियाँ भूयोभूय गोद में लेती हैं और उनके गुणों का बखान करती हैं। उपयुक्त भाव की अभिव्यक्ति कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में की है—

> "झीनी सी झंगुली बीच झीनो आगु झलकतु,
> झुमरि झुमरि झुकि ज्यों ज्यों झूले पलना।
> घुंघरू घूमत बने घुंघरा के छोर घने,
> घुंघरारे बार मानौं घन बारे चलना।
> आलम रसाल जुग लोचन बिसाल लोल,
> ऐसे नन्दलाल अनदेखे कहू कल ना।
> बर बर फेरि फेरि गोद लै लै घेरि घेरि
> टेरि टेरि गाव गुन गोकुल की ललना।[2]

---

1. आलम केलि, पृ० ३
2. आलम केलि पृ० १

यशोदा के मनोभावों का वर्णन भी कवि ने ऐसी ही सफलता के साथ किया है। उनमें कृष्ण की शोभा को देखकर नंद को बुलाने तथा उनके खेलने के लिए कहीं दूर चले जाने पर बलराम से व्याकुल होकर कृष्ण के विषय में पूछने में मातृ हृदय की अच्छी अभिव्यक्ति की है।[1] परन्तु कृष्ण के विषय में उनकी नाना भाँति की अभिलाषाएं अत्यन्त स्वाभाविक और वात्सल्य रस से ओत प्रोत हैं। कृष्ण अभी छोटे हैं। यशोदा उनके बड़े होकर गाने, बोलने, चलने और मैया कहकर बोलने की अभिलाषा करती हैं और इस सुख की कल्पना करके बड़ी आनन्दित होती हैं। कवि ने उसकी अभिव्यक्ति निम्नांकित कवित्त में की है—

"कहीं दधि मथुर धरनि धर्यो छोटि रीहे,
थाम तें निकसि धोरी धेनु धाइ खोलि हैं।
धूरि लोटि ऐहैं लपटैहैं लटकत ऐहैं,
सुखद सुन हैं बैनु बतियां अमोलि हैं।
आलम सुकवि मेरे ललन चलन सीखे,
बलन की बाह ब्रज गलिनि में डोलि हैं।
सुदिन सुदिन दिन ता दिन गनौगी माई,
जा दिन कन्हैया मोंसो मैया कहि बोलि हैं।"[2]

आलम ने वात्सल्य वर्णन में कृष्ण के संयोग सुख के चित्र चित्रित हैं। उनमें भी पालने में झुलाने और मान मनोभावों का विशेषतः वर्णन है। जितनी अभिव्यक्ति कवि की मिलती है वह निस्सन्देह काव्यत्वपूर्ण है। कहीं कहीं वात्सल्य वर्णन के साथ साथ कवि ने कृष्ण के ईश्वरत्व की ओर भी संकेत कर दिया है। उस स्थान पर वात्सल्य के साथ भक्ति का भी पुट लग गया है।[3]

घन आनन्द

रीतिकाल के अन्य कवियों की भांति घन आनन्द के काव्य में भी फुटकल पदों का ही प्राधान्य है। उन्हीं में यत्र तत्र वात्सल्य की अभिव्यक्ति भी हुई है।

---

१ 'पल न परत कल विकल जसोदा मया
ठौर भूले जस तलवसी लगे गया को।
आँचरू सों मुख पोछि के कहति तुम
ऐसे कस जान देत कहू छोट भया को।
(आलम केलि, पृ० ३)

२ आलम केलि, पृ० २

३ 'ब्रह्म त्रिपुरारि पचि हारे रहे ध्यान धरि
ब्रज को अहीरनि खिलौना करि पायो है।
आलम केलि, पृ० ४

इनकी वात्सल्याभिव्यक्ति रस परिपाक की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट कोटि की नहीं है पर वात्सल्य के विभिन्न अंगों पर इनके भावपूर्ण मिलते हैं। कवि ने जन्म के समय के उल्लासपूर्ण वातावरण पर अधिक दृष्टि दी है। इनके वात्सल्य भावाभिव्यक्ति के आलम्बन कृष्ण, राधा और श्रीराम हैं।

कृष्ण के जन्म पर बधाई दे।[1] 'आनन्दधाम दा'[2] और जन्म दिवस आदि के समय के उल्लास[3] का वर्णन किया गया है। इनकी अभिव्यक्ति में विशेष बात यह है कि गाँव की अन्य गोपियाँ भी वात्सल्य भाव से ओत प्रोत हैं। कृष्ण को देखकर वे नाना भाँति से आनन्दित होती हैं। एक गोपी के सोहलो गाते समय के वात्सल्य पूर्ण उद्गार देखिये—

> ललना को सोहिलो गाऊं ऐसी अगन में नाऊं।
> तेरो बाढ़ो चिरजीवो दिन दिन उहो मनाऊं।
> नित मोहन मुख चंद निहारों नैनन हियो सिराऊं।
> आनंदघन जसुदा के आंगन दौरि-दौरि आईं जाऊं।
> रंगनि बरसाऊं॥[4]

राधा के जन्म पर भी इसी प्रकार का आनन्द होता है। गोपियाँ मिल जुल कर 'सोहिलो' गाती हैं। बलि बलि जाती हैं। कृष्ण जन्म के आनन्द की तरह राधा के जन्म की भी प्रसन्नता व्यापक और सार्वजनीन है। गाँव की गोपी निश्छल आनन्द का अनुभव करती है। एक गोपी बधाई गाती हुई राधा के प्रति अपने वात्सल्य की अभिव्यक्ति इस प्रकार करती है—

> बधावौ हौं ही गाऊं री कीरति-कुंवरि को मल्हाऊं।
> मंगल की मनि सोभा की निधि निरखत मन सिराऊं ललनि सिहाऊं।
> याही के सुहेले मनाऊं हौंसनि दौरि दौरि आऊं।
> आनंदघन रंगनि बरसाऊं याकी बलमा ल [illegible] ज्यो जियाऊं।
> बहु विधि लाड़ लड़ाऊं सब कछु पाऊं॥[5]

घन आनन्द ने कृष्ण और राधा के साथ श्रीराम के जन्मोत्सव का भी वर्णन किया है। किन्तु यह वर्णन वात्सल्यपूर्ण नहीं है। राम के जन्म के आनन्दमय वातावरण और बधाई आदि का साधारण शब्दों में कथन मात्र है। कवि की रुचि कृष्ण और राधा के नाना भाँति के वर्णनों में ही रमी है अतः उनका ही वात्सल्य वर्णन भी अच्छा है।

---

१ घन आनन्द पदावली ६४०
२ घन आनन्द पदावली ६४१
३ घन आनन्द पदावली ६४४ ४६
४ घन आनन्द पदावली ६४३
५ घन आनन्द पदावली ६५३

कृष्ण के प्रति यशोदा का वात्सल्य विशेष है। पुत्र सुख से वह अपने को बडी सौभाग्यशालिनी समझती है। गोद मे लेकर प्यार करती है। तोतले वचनो से आनंदित होती है। सुकुमार कृष्ण को देखकर वात्सल्यातिरेक से दुग्धस्राव होने लगता है। वह कृष्ण को आंचल से ढक कर दुग्धपान कराती है और कृष्ण सुसक्त सुसक्ते दूध पीते हैं। माँ के वात्सल्य का अच्छा चित्र प्रस्तुत किया है। कतिपय पक्तियाँ इस भावाभिव्यक्ति से सम्बद्ध ईक्षणीय हैं—

> नव सुकुमार बस मन मोहन ब्रजजन जीवन प्रान।
> ऐसे सुत के मुखहि सपूती देति पयोधर पान।
> सुसक्त पियत अरु ज्यावत जननी जिय आधार।
> प्रबल मोह की उमग तिरगनि द्रवित दूध की धार।
> झापि लेति आचर सों स्यामें निधरक सकत न चाहि।
> अतुल अगम क्यों बरनि बताऊ हित-गति अकथ कथाहि।[1]

कृष्ण के वन से लौटते समय वह बाट देखती रहती हैं। आने पर आरती उतारती है सुख पाछती और पुचकारती है।[2]

घन आनन्द ने एकाध स्थल पर बाल स्वभाव का भी वर्णन किया है। गिरि-पूजन को जाते समय बलराम आदि के साथ होते हुए भी कृष्ण दौड दौड कर यशोदा के पास आ जाते है सबको कुछ गोद मे भर कर बाँटते फिरते हैं फिर वह सबके साथ क्रीडा करते हुए पैदल पदल ही चलना पसद करते है।[3] उत्सवादि के अवसरो पर सबकी भाति बच्चे भी पदल पदल चलने मे आनन्द का अनुभव करते है।

कृष्ण की भाँति राधा की मा के मातस्नेह का वर्णन भी कवि ने किया है। पुत्री के भावी सुख की माँ को सदव चिता रहती है। वह बडे स्नेह के साथ राधा से साँझी पुजवाती है और इस प्रकार भावी सुख-सौभाग्य की मनौती करती है—

> पुजावति साझी कीरति माय कुवरि राधा को लाड लडाय।
> अरचि चरचि चदन बदन सो फूल माल पहिराय
> विविध मधु मेवा भोग रचाय।

---

१ घन आनन्द पदावली ८०८

२ घन आनन्द पदावली ८७३

३ रोहिनि जसुमति का समाज जह। दौरि जात है कान्ह कुवर तह॥
गोद भराय फिरत कछु बाटत। मधु मगल ले ले फिरि नाटत॥
या विधि हठि परिकरमा देत। कबहु नद कनियाँ करि लेत॥
गिरिधर पायन पायन पायन। उतरि चलत भरि गोधन भायन॥
—घन आनन्द गिरिपूजन
घन आनन्द ग्रथावली पृ० २४७ ४८

बोली बहिरोली घर घरतें भरि भरि झोली देत सिहाय।
कंचन थार उतारि आरत्यौ हौंसनि लागति पाय
लली को भाग सुहाग मनाय।
यह सुख सोभा दिन दिन या घर सरस बधाए गीतनि गाय।
आनदघन ब्रज जीवन जोरी रसिकन सदा सहाय।'

घन आनन्द की वात्सल्याभिव्यक्ति के अध्ययन से पता चलता है कि उन्होंने सयोग वात्सल्य का ही वर्णन किया है वियोग का नहीं। सयोग वात्सल्य वर्णन में जन्म के आनन्द और उल्लास आदि का वर्णन ही मुख्य है। उसमें सोहला' गान और बधाई के पद वात्सल्यपूर्ण हैं। बाल छवि और बाल विनोद का वर्णन इन्होंने नहीं किया। फलत आलम्बन के चेष्टा आदि का वर्णन न रहने से उद्दीपन की कमी है। वात्सल्य के आश्रय यशोदा आदि माताएं और ब्रज की गोपियाँ हैं नन्द आदि नहीं। वात्सल्य के आलम्बन कृष्ण और राधा के साथ श्रीराम भी हैं। श्रीराम के जन्मोत्सव आदि का वर्णन भी कवि ने किया है। पद के अन्त में अनेक स्थलों पर घन आनन्द ने राधा और कृष्ण की जोड़ी का भक्तिपूर्ण स्मरण किया है। उसमें कहीं कहीं वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति में भक्ति भाव भी आ जाने से वत्सल भक्ति का भी वर्णन है।

चाचा हितवृन्दावनदास

चाचा हितवृन्दावन दास रीतिकाल के प्रमुख कवि हैं। इनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इन्होंने १५८ ग्रंथ लिखे हैं और उनमें सात सागर हैं। परन्तु इनमें से दो सागर ही प्राप्त हो सके हैं—ब्रजप्रमानन्द सागर और लाड सागर। लाड सागर में इन्होंने राधा और कृष्ण के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति की है। यह ग्रंथ वात्सल्य वर्णन की दृष्टि से श्रेयतम है। वात्सल्य रस ही इस ग्रंथ का अंगी रस है।

लाड सागर में ३५४ पृष्ठ हैं। उनमें ६३ शीर्षक हैं। राधा और कृष्ण के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति को दस विषयों में विभाजित किया गया है। कवि ने पद दोहा सोरठा, अरिल्ल, चौपाई छप्पय और कवित्त छंदों में वात्सल्य वर्णन किया

है और इन सब छन्दो की सख्या १३७७ है।[1]

'लाडसागर' मे वात्सल्य के आलम्बन राधा और कृष्ण ह। कवि ने पहले राधा के प्रति उनकी माता का वात्सल्य अभिव्यक्त किया है और फिर कृष्ण के प्रति यशोदा और नन्द का। इन्होने राधा और कृष्ण के शिशु रूप को न लेकर उनके बाल रूप और किशोर रूप का ही वर्णन किया है। राधा के वात्सल्य वर्णन मे राधा के मुख की शोभा का कथन करके उसके विनोदो का वर्णन किया है। कीर्ति की गोदी म राधा लेटी हुई है। सौन्दर्य की आभा से सारा घर जगमगा रहा है। मुख चन्द्रमा से सौ गुना बढकर सुन्दर है। रानी रात्रि समझकर जागकर भी पुन पुन सोना चाहती है पर राधा आचल पकड कर कहती है कि प्रात काल हो गया है मुझे लड्डू दे दो। कभी राधा दही मागती है—

'गाढौ वही द री माई।
भोर लागी भूख थी राधा कहती तुतराय।'[2]

चाचा वृन्दावनदास ने प्राय उन भावो का वर्णन किया है, जिसका वर्णन सूर तुलसी आदि भक्तो न नही किया। कई बार भाई बहन आपस मे खाने पीने की वस्तुओ के ऊपर झगडा किया करते ह। कवि ने उसका वर्णन लाड सागर मे किया है। राधा कहती है कि 'बाबा दूध काढ कर ले आये, मुझे पिला दे। तब तक तुझे काम नही करने दूगी। माता कहती है कि माखन निकाल लू', उठकर तेरा भाई मांगगा। परन्तु राधा बार-बार 'देहु'-देहु कहती है क्योकि उसे अपन भाई के स्वभाव का पता है—

१

क्रम सख्या	विषय	छन्द का नाम	पद सख्या
१	राधा बाल विनाद	पद	२५
२	श्रीकृष्ण बाल विनोद	पद	१२६
३	श्रीकृष्ण सगाई	दोहा, सोरठा	३५०
४	श्रीकृष्ण के प्रति यशोदा की शिक्षा	दोहा, सोरठा, अरिल्ल	१६२
५	विवाह मगल	पद, छप्पय	२०६
६	श्री लाडली लालजू को गौनाचार पद	दोहा, कवित्त	११६
७	लालजी की महमानी को बरसाने जाना	चौपाई	१५१
८	राधाछवि सुहाग	चौपाई	२६
६	जसुमति मोद प्रकाश	पद	२५
१०	राधा लाड सुहाग	पद	१५४
			१३७७

२ लाडसागर, राधा बाल विनोद पद ३

"कटोरा लुढकाइ दहे ल भजगो कोर ।
तू जू हर हर हसगी चलि है न वल कछु ग्रोर ॥
ग्ररी बटी बहिनि भया मिलि जिमाऊ साथ ।
बहुत घया काढि प्याऊ ग्रापने हो हाथ ॥"[1]

बालिकाग्रो की क्रीडाएँ बालको से भिन्न होती हैं । बालिकाग्रा क खेला में गुडिया का खेल ग्रत्यन्त प्रमुख है वे उनको वस्त्राभूपण पहनाती ह ग्रौर सगाई विवाह तक भी करती ह । गुडिया को छोटी बच्चिया ग्रपनी माताग्रो स बनवा लिया करती ह । राधा भी ग्रपनी माता से गुडिया के लिए ग्राग्रह करती है—

'मया गुडिया देहि बनाइ ।
जिनको सुन्दर रूप भूसन बसन द पहराइ ॥"

गुडिया लडकिया के लिए ग्रत्यन्त ग्राकपण की वस्तु होती ह । लडक ग्रपनी चपलतावश कभी कभी ग्रपनी बहना के खेल मे बाधा डाल दिया करत ह । राधा का भाई भी उसकी गुडिया लकर भाग जाता है इससे वह ग्रपनी माँ से शिकायत करती है । माँ ऐसे ग्रवसर पर स्वभावत पुत्री की ग्रार होती है । राधा की माता भी पुत्री का पक्ष लेती है ग्रौर दोनो को प्यार करता है । यहा पर बच्चा की जरा जरा सी बात पर नाराज हो जाने की ग्रोर सकेत है । कवि की निम्नाङ्कत पक्तिया म उपयुक्त भाव का वात्सल्यमय कथन द्रष्टव्य ह—

"बेटा बहिनि खिजावने त कुमति सवेरी ।
कहा धरी ग्रब लाइ द सुनि सोरा सवेरी ॥
हौं पीवत हो दूध इन दियो भाजन मेरी ।
म याकी गुडिया हरी ग्रब कहतु हौं टेरी ॥
रानी लिये पुचकारि उर बरसी सुख ढरी ।
वृन्दावन हित रूप यह कही लाइ पहेरी ॥'[3]

राधा लाड की मूर्ति है । कई बार गुस्स म ग्राकर काय भी बिगाड दती है परतु फिर भी वह प्यारी लगती है । माता पिता क ग्रानन्द को ही बढाती है । कभी कभी माँ से रूठ कर बाबा क पास जाने लगती है । गुस्से म ग्राकर कभी कभी भाजन भी फाड दती है । ग्रकेली वही है ग्रत माँ भी सब सहन कर लेती है । किसी किसी स्थान पर कवि न राधा क प्रति मात हृदय की ग्रच्छी ग्रभिव्यक्ति की है । एक दिन राधा को माँ ने हँसी म यह कह दिया जसा प्राय माता बच्चा का बहकाने को कह दिया करती हैं कि मरा पुत्र ता ग्रोनामा है उसी स प्रम करूगी । तू तो

१ लाडसागर राधा बाल विनोद पद ४
२ लाडसागर राधा बाल विनाद पद ८
३ लाड सागर राधा बाल विनाद पद १२

अपने पिता के संग रहे। राधा इस पर क्रोधित हो जाती है। दही का माट भरा हुआ पृथ्वी पर ढुलका देती है और कहीं से कहीं चली जाती है। अब माँ दही के माट को तो भूल जाती है चिन्ता इस बात की होती है कि बच्ची कहाँ चली गई। वह ललिता से बूझती है। माता के इन शब्दों में मातृ हृदय का स्पष्ट चित्र अंकित हो रहा है—

"बेटी अकुलात होय देखे बिनु कल न जीय मो सों रूठि ताहि तू मनाउरी।
मात सो सो जु देउ हिये सों लगाइ लेउ नननि की थाती अब ही मिलाउरी॥
डोटी माँहि बाहो ऐरि रहि ह लू टेरि टेरि आउ प्रान प्यारी मो उर सिराउरी।
आई घर घर निहारि सुधि बल सब रही हारि सखि तू सोभ दन लली मुख दिखाउरी॥"[1]

पुत्री का तनिक भी कष्ट मा को असह्य है। वह उसके कष्ट को देखकर राई लौन का उतारा करती है ताकि कष्ट दूर हो। राधा जब छोटी सी थी तब गंडा दिलवा देती है कि बेटी का भविष्य में भाग्य अच्छा रहे।

'लाड सागर' राधा कृष्ण की पौगण्ड लीला का ही सागर है। इसमें नाना भाँति के और वृत्तान्त नहीं हैं। बालक राधा कृष्ण का विवाह हो जाता है और सगाई से लेकर अनेक होने वाले कृत्यों का वर्णन होते होते गौन तक की बात आ जाती है। वियोग का अवसर केवल एक ही आता है और वह राधा का है। राधा जब विवाह के पश्चात कृष्ण के साथ जाती है तब उसकी माँ को राधा के वियोग की अनुभूति होती है। जिस बेटी को अब तक लाड लडाया है उसको अलग करने में किस माता का हृदय व्यथित न हो जाएगा? अतः उनकी दशा बिना जल की मछली के समान हो रही है। उस समय ताई चाची और वृषभानु सभी दुःखी होते हैं।

> 'लली चलन दिन आज मात अरबरति हैं।
> थोरे जल में मीन मनो तरफरति है॥
> पुनि पुनि ताकत बदन नैन जल भरति है।
> सीनी प्रेम दवाइ न धीरज धरति है।"[2]

राधा की माता कीरति जी की पुत्री विदेश चली गई वह अपने प्राणों की रक्षा किस प्रकार करे? राधा के बिना उसे अब सब फीका लगता है। सारे सुखद व्यापार दुःखद प्रतीत होने हैं—

> ये खेलनि के ठाम सब अरु विविध खिलौना धाम रो।
> विष सम ते छिन में गये बन उपवन गिरि अरु ग्राम॥[3]

---

१ लाड सागर राधा बाल विनोद पद १६
२ लाड सागर विवाह मंगल (पलका चार) पद १५८
३ लाड सागर श्री कीरति जू की प्रेम उत्कंठा पद १८७

राधा की माता नाना भांति से व्यथित होती है। वे राधा के संयोग के समय की बातों का स्मरण करती हैं और इस प्रकार कहती हैं कि अब वह श्रेष्ठ दिन कब होगा जब फिर राधा यहाँ आकर खेलेगी ? सारी सखियाँ उसके साथ होंगी और आंगन उनसे जगमगा जायगा। उनके नेत्रों से जल बह रहा है और राधा राधा का नाम रट रही है।[१] उधर राधा अपनी सखी के द्वारा अपनी माता के पास संदेशा भेजती है कि मुझे शीघ्र बुला लो और मेरी गुड़िया तथा खिलौना सभाल कर रखना भैया बिगाड़ न दे। उस संदेश को पढ़कर वात्सल्य उमड़ता है और पुत्री की स्मृति उन्हें विह्वल बना देती है—

'श्री राधा विरह हियौ व्याकुल कीरति निसि नींद न आवै।
छिन आंगन छिन मंदिर रानी जुग सम पल जु बितावै॥'[२]

लाड़ सागर में राधा की भांति कृष्ण की भी शिशु लीला आदि का वर्णन नहीं है। कृष्ण के बड़े हो जाने पर ब्रज के ग्रामीण वातावरण के मध्य क्रीडा करते हुए उसके जीवन की कुछ झांकी है। कृष्ण बालकों के साथ खेल रहे हैं। धूल में शरीर सना हुआ है पसीना आ रहा है और खेल में दूसरे की बारी चुका रहे हैं परिश्रम की कोई परवाह नहीं है—

'ब्रज की धूरि में तन सने।
लेत कन्ध चढाइ काहू स्याम बाहन बने।
कहत सो चलि बगि मोहन पग उठाय जु घने॥
पोंछ मेरो देह भया कपट तजि अपने।
तन प्रस्वेद जु घरि लपेटे तनक श्रम नहिं गने॥'[३]

यशोदा उनके धूल सने शरीर को पोछती है। कृष्ण के उधम को लखकर कहती है— बहुत ऊधम करत मो पै जात नाहिं सह्यो। वह पुचकार कर लड्डू देती है और चोटी गूहने के लिये कहती है पर कृष्ण हाथ छुड़ा कर भाग जाते हैं—

"आउ तेरी गुहौं चोटी ललकि अंकन लियौ।
सुनत ऐसे बचन हाथ छुड़ाय के भजि गयौ॥"[४]

चाचा वृन्दावनदास ने कृष्ण के उत्पातों का भी वर्णन किया है। वे दूध की हांडी फोड़ जाते हैं मेवा चुरा लाते हैं। उन उत्पातों का यशोदा को सब पता है। गोपियों के उलाहने के मोघ पर नहीं है पर यशोदा कृष्ण से कहती है कि तनक

१ लाड़ सागर श्री कीरति जू की प्रेम उत्कण्ठा पद १८७
२ लाड़ सागर विवाह मंगल (१८६)
३ लाड़ सागर श्री कृष्ण बाल विनोद पद ८
४ लाड़ सागर, श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ६

मौ प्रति छल मरयु है सब नचाया गाऊ[1] पर यशोदा कृष्ण का समझान की रीति लाड सागर मे निराली है। उधर कृष्ण भी इस बात स ही मानत ह। वह यह है कि उनको अपने विवाह की चिता है। यशोदा उन्ह यह कह कर डरा देती ह कि तू बड़ा ऊधम मचाता है, अब तरा ब्याह कौन करेगा ?

"क्वारो रहैगो तू लला।
को करगो ब्याह इन गुन भयो अति ल चला।"[2]

कृष्ण को विवाह की बडी चिता है। कभी विवाह के सम्बन्ध म स्वप्न दखते ह और उसे यशोदा को सुनात ह कभी पूछत ह कि माँ मेरा ब्याह कसे करेगी माखन रोटी खान म भी व अपने ब्याह की बात सोचने रहत ह—

"मोटी रोटी सानि सानि क कूदि कूदि हों खहौं।
रीझि रीझि सब ब्याह करेंगे जब मोटो है जहौं॥"[3]

लाडसागर म नन्द का भी कृष्ण और बलराम दोना के प्रति वात्सल्य दिखलाया है। कभी कभी नन्द भी कृष्ण के ब्याह की ललक पर आनन्द लेते ह। यशोदा कह देती ह कि कृष्ण ब्याह को उकता रहे ह। वे पूछने लगते ह कि बताओ कितनी बडी दुलहिन तुम लोगे—

'आय गयो भवन घोष को रानौं।
हरि हलधर पुचकारि गोद ल मन मे अधिक सिहानौं॥
गिरधर तू क्यों होत झूवरी एस कहि मुसिकानौ।
महरि कहति यहि सखा चिराव ब्याह करन उकतानौं॥
चिपट गये बाबा छाती सौं लाज भीजि गये मानौं।
कितनी बडी लेहुगे दुलहिन मो सौं श्याम बखानौं॥"[4]

खेलने मे भी कभी कृष्ण बलराम से लडकर कह दते है कि मैं अपनी सास क चला जाऊगा। जब यशोदा नहाने को कहती हैं तो नहाने धोन को नही आत और कहत हैं— 'ब्याह करन मेरी कहै तौ अब ही आऊ'[5] उन्हे यही चिता है कि दुलहिन कसी आवगी ? कितनी बडी होगी ? कहाँ घर है ? कब टीका आयेगा ? कब वह आयगी ? उनकी इस चाह का सब लाभ उठा कर उन्हे चिढाते हैं—"ऐस चाह ब्याह की जो तौ चोरी तजि नन्द लाला।[6] कोई कहता है कि काले को कौन

१ लाड सागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ६
२ लाड सागर श्रीकृष्ण बाल विनोद, पद १०
३ लाड सागर, श्रीकृष्ण बाल विनोद पद १८
४ लाडसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद, पद २२
५ लाडसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद २७
६ लाडसागर श्रीकृष्ण बाल विनाद पद ३६

वेटी दगा ? बलराम ता कृष्ण का बिकुल भीटा बतला देते है इस पर कृष्ण अपनी माता से शिकायत करते है—भोलापन ब्याह की चाह वात्सल्य और हास्य मे यह पद परिपूर्ण है—

'मया मोहि ग्वाल चिरावत भारा।
तेरी कर सगाई को यों कहि जु बजावत तारी।
मेरी ओर करत नहि कोऊ यह चिर सबहिनु पारी।
बलि द सन सिखावत सब को नेकु बरजि हा हा री।
मो सा कहै करोटो भोंडो है काकी उनहारी।
तोहि लागत हों कसो मया कहि यह बात विचारी।
मेरो लाल कुअर लाल हों सुदरता पर वारी।
वृदावन हित रूप पुज सू बकत है ग्वाल लबारी।'[1]

कभी कभी तो चिढाने म इतन तग आ जाते हैं कि मां स कहने लगते ह कि अब मैं वन म जाकर निवास करूगा क्योकि दाऊ मुझ बहुत चिढ़ाता है—

'अब हों बास करौंगो बन मे मया बहुत चिराव।'[2]

यशोदा कृष्ण की बातो पर हँसती है और बलिहारी होती है। दूध के दांत उखड नही और दुलहिन चाहिए। इन पक्तिया म कितना अच्छा हास्य व्यग्य और वात्सल्य है—

'वेगि ब्याहि हों सुत अजहों उखरीं न दूध की दतिया।'[3]

कभी उनको ब्याह का लालच देकर कभी नमिन्त्रण करके कभी डराकर व कभी दूसरों स तुलना करके वात्सल्य विभोर हुई यशोदा साज शृगार करना चाहती हैं—

'श्याम सुनि बात श्रवण द मेरी।
चोटी चुपरि गुहनि द आव वगि सगाई तेरी।
धूसर अग लगत नहि आछो देखि मुकुर मुख हेरी।
औरन के सुत फिरत धोवने तें तन धूरि अगेरी।
महायुत सें उठत भोर हीं धूरे राग सबेरी।
बाबा देखि दीजैंग तोसों स बडे नहि मेरो।
सोहे मेल मे अधिक रचि बडी अपनी पाग यवरी।
पीत पिछौरो गोदर मानो कहां नाच्यो स फेरी।

---

१ सारसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ८
२ सारसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ७५
३ सारसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ८६

ज्यों ज्यों बडो भयो तू मोहन त्यों त्यों कुमति सवेरी।
भलो सजन को बटो दहै ग्रौगुन निकसत ढेरी।"[1]

कभी कभी कृष्ण नाराज हो जाते हैं तो यशोदा गोदी मे लेकर प्यार करती है। बड प्रेम से छाती से लगा लेती हैं। पुचकार कर दूध पिलाती हैं। कृष्ण की नाराजी ग्रभी दूर नहीं हुई। बच्चे अपनी नाराजी मे आगे खाने की परवा नही करते। चाचा हितव दावनदास न कृष्ण की नाराजी का यह बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित किया है। कृष्ण यशोदा के मनाने पर भी दूध मे कटोरे को डाल देते हैं और ठिनकते हुए नेत्रों से जल बरसाते ह। मुख म ग्रास देकर भी उसे फिर निकाल देते ह—कितना स्वाभाविक बच्चे के गुस्से का चित्रण है ?

"डारि कटोरा कर तें ठिनकत लोचन वारि जु झरनी।
वृंदावन हित रूप ग्रास मुख द सुख सागर ढरनी।"[2]

इस प्रकार श्रीकृष्ण बाल विनोद, विवाह-उत्कंठा दीपक पदो मे श्रीकृष्ण की नाना भांति से बचपन मे विवाह के प्रति उत्कंठा प्रदर्शित की गई है। माता पिता के अपने इतने छोटे पुत्र के मुख से इस प्रकार की उत्कंठा सुन कर बडी हँसी और आनन्द आता है। इस प्रसग म कुछ पद गाय चराने, छाक खाने नाचने, मुरली वादन गिरिपूजन आदि के भी हैं पर कृष्ण को अपने विवाह की बात नहीं भूलती है और वह कह उठते हैं—

"मया चोटी चुपरि भली री।
बाबा आगें कलिह सगाई की सी बात चली री।"[3]

लाडसागर म अभिव्यक्त चाचा हितवृन्दावन दास के वात्सल्य म अपनी निजी विशेषताएं हैं। उन्होने यशोदा का राधा के प्रति पुत्र-वधू के रूप में वात्सल्य अभिव्यक्त किया है। यशोदा को जैसा पुत्र वसी ही पुत्र वधू। दोनो ही ग्रभी बारे हैं वात्सल्य के पात्र हैं। एक स्थान पर बडा सुन्दर चित्र दिया गया है। एक ओर राधा बठी है और दूसरी ग्रोर कृष्ण हैं। बीच मे यशोदा हैं। यशोदा उन दोनो के मुंह म अपने हाथो मे ग्रास खिला रही हैं, उसके भाग्य की देवता भी सराहना करते हैं—

'अपने हाथ जिमावति जसुमति घत पक मिष्ट दही भर भाजन।
इत उत पुत्र वधू ल बठी देति ग्रास मुख विदव नियाजन।
भाग्य गरिष्ट वरति ब्रह्मादिक रहे मुनीस विचार समाजन।
वृन्दावन हित रूप महरि घर मगल [illegible] लगे मगल साजन।'[4]

१ लाडसागर, श्रीकृष्ण बाल विनोद पद ४५
२ लाडसागर, श्रीकृष्ण बाल विनोद, पद १२३
३ लाडसागर श्रीकृष्ण बाल विनोद पद १२५
४ लाडसागर, जसुमति मोद प्रकाश, पद १३

कभी यशोदा स्नेहपूर्वक वधू को जगाती हैं, प्राणों की थाती की भाँति लाड लडाती हैं कभी कहती हैं कि आ राधा तुझे अपने हाथ से नहलाऊँ तुझमें मेरा प्रेम कृष्ण से भी सौ गुना है—

"सुत तें प्रीति सतगुनी तो सों सुनि री भावती बातें कहि समझाऊँ।"[1]

यशोदा कभी राधा को गोद में लेकर रोम रोम से प्रसन्न हो जाती हैं। कवि ने उनके वात्सल्य की अभिव्यक्ति इस प्रकार की है—

"आदर दै अंक लई गहि कै असीस दई रोम रोम सुलित भई घोष रानी।
इक कर सीस छिबुक कर दूजो बदन बिलोकि कछु उचरी बानी।
दुहु कुल लाड भरी विपुल सुहाग भरी नवीन सुसीलता तो मो मन मानी।
वृन्दावन हित रूप उठि भार सकित अचल की ओट दै कै वारि पियो पानी।'[2]

इतने पर भी यशोदा का मन नहीं भरता है। ये वात्सल्यमयी उक्तियाँ राधा से कहकर और भी अधिक स्नेह प्रदर्शित करती हैं। यशोदा के नाना अनुभवों से वात्सल्य का अतिरेक प्रतीत होता है—

रानी कीरति जू लाड की भूल रहै मन मेर।
बाट बुलावन की जु निहारी नित उठि सांझ सवेर।
देहि पुचिकार ग्रास मुख सादर से बठार नैर।
वृन्दावन हित रूप कृपा करि बहुरि सीस कर फेर।"[3]

राधा को जब यशोदा इतना स्नेह करती हैं तो उसके बिछुड़न पर बहुत दुखी होती हैं। वह अब स्नेहवश राधा को कुछ खिलाती हैं हाथ में कौर लिये ही रह जाती हैं सोचती है कि इसके बिछुड़ने पर घर कैसे अच्छा लगेगा—

"इहि बिछुर कैसे अब मोकों नीको लागि है गेह।'[4]

यशोदा को गौराग का विछोह अच्छा नहीं लगता वह गदगद हो रही हैं। पहले तो पुत्र का प्रेम था परन्तु अब राधा ने भी अपना रंग उसी प्रकार चढ़ा दिया है। राधा और कृष्ण उनके बाएं और दाएं नेत्र हो गये हैं इस प्रकार यशोदा की राधा के विरह की अनुभूति का चाचा हितवृन्दावन दास ने निम्नलिखित पद में वर्णन किया है—

'मुहि गौराग विछोह न भाव।
जब ते सुनी चलगो पीहर हियो प्रेम सों भरि भरि आव।
मुरलीधर हू तें अति प्यारी कहत बन नहिं चितहि घुमाव।

---

१ लाडसागर जसुमति मोद प्रकाश पद १०
२ लाडसागर श्री राधा लाड सुहाग पद ५६
३ लाडसागर श्री राधा लाड सुहाग पद ७०
४ लाडसागर श्री राधा लाड सुहाग पद १३४

मोही सी अनुरागिनी कोऊ सो जु बात के मरमहि पाव।
सुत के लाड रग्यौ हो मन यह जु रग प रग चढ़ाव॥"[1]

'लाड सागर' म अभिव्यक्त वात्सल्य म एक और विलक्षणता है। जिस प्रकार यशोदा का अपनी पुत्र वधू राधा के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित कराया गया है उसी प्रकार राधा की माँ कीरति जी का अपन जामाता कृष्ण क प्रति भी वात्सल्य वर्णित है। विवाह के समय मडप की तनी खोलने का समय आता है, तो कीरति भी कृष्ण को पुचकारती हे और प्यार भरे शब्दो म मडप की तनी को खोलने को कहती हैं—

"मडप तनी खोल मेरे अति लड धनि जसुमति जिन जायो।
श्री कीरति पुचकारि लाल कौं ऐसी बचन सुनायो।"[2]

इसी प्रकार जब राधा का गौना होता है तो कीरति भी कृष्ण के प्रति प्रेम प्रदर्शित करती है। वे आशीर्वाद देती हैं, उनके सिर पर हाथ रखती हैं और प्रमवश हृदय म सुख का अनुभव करती हैं—

द आसीसनि कृष्ण सीस कर राखि क,
व दावन हित हियें सुख जु कीरति सनी॥"[3]

चाचा हितवृ दावनवास के वात्सल्य वणन की विशेषतायें

'लाड सागर' मे श्रृ गार के अवसर भी आये है, परन्तु राधा कृष्ण के सयोग का कवि ने राधा कृष्ण की पारस्परिक आँखा से नही देखा वरन् वृषभानु कीरति और नन्द यशोदा की आँखा स देखा है। कहन का तात्पय यह है कि दृष्टिकोण का भेद होने स जिन प्रसगा मे एकदम श्रृ गार की भरमार हो सकती थी, उन्ही प्रसगो मे वात्सल्य की अनुभूति होती है। विवाह गौना और राधा का दुलहिन के रूप मे आना ऐसे ही प्रसग हैं। अत इन्होन श्रृ गार-रस को वात्सल्य के प्याले म ढाल के पिया है।

कवि न राधा और कृष्ण दोना के वात्सल्य का वणन किया है। परन्तु दोना के शिशु रूप को न लेकर पौगण्ड रूप का लिया है। यद्यपि थाड समय पश्चात उनका विवाह भी हा जाता है परन्तु उसस माता पिता के वात्सल्य म कही कमी नही आती। राधा और कृष्ण एक दूसरे के माता पिता के यहाँ दूसरे पुत्र पुत्री की तरह समझे जान लगत हैं।

चाचा हितवृ दावनदास न जितन प्रसग लिये हैं वे सब उनके एकदम मौलिक हैं। सूर के पश्चात के भक्ता और कविया न जसे सूर का अनुकरण किया

१ लाडसागर, श्री राधा लाड सुहाग, पद १०२
२ लाडसागर, पलकाचार तथा बिदाई, पद १५७
३ लाडसागर श्री लाडली लाल जू को गौनाचार पद ४

है वसे इन्होने नही किया। बाल क्रीडा चेष्टाए उलाहने और माता पिता के अनुभव आदि एकदम नवीन है।

यद्यपि इनका सारा ही ग्रन्थ वात्सल्य रस मे ओत प्रोत है परन्तु विशेष वात्सल्य की अनुभूति राधा के बाल विनोद और कृष्ण के बाल विनोद के प्रसगा म होती है। कवि न ग्रामीण बच्चो के सीधे साधे खेल, सरल वातावरण और निष्कपट व्यवहार आदि का सीधी-साधी भाषा मे कथन किया है।

लाड सागर म स्थान स्थान पर श्रीकृष्ण के ईश्वरत्व का या सूर की तरह उनको प्रभु कह कर स्मरण करने का पुट नही है। परन्तु भक्त कवि होने के नाते वे उस भाव से अछूते भी नही रहे और जब कभी तल्लीन होते है तो अखिल खग धारन को कारन 'पालक विश्व और अखिल लोक ध्वज' आदि कह देते हैं जो एक भक्त के लिये है भी स्वाभाविक।

ब्रजवासीदास

ब्रजवासीदास न ब्रजविलास नामक ग्रन्थ की रचना की है। इस ग्रन्थ म कृष्ण चरित्र का वर्णन किया है। कवि ने प्राय सूरदास की ही भावाभिव्यक्ति को कुछ परिवर्तित शब्दो म रखने का प्रयत्न किया है परन्तु अनेक स्थल मौलिक और कवित्वपूर्ण हैं। ऐसे स्थलो पर वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति भी होती है।

ब्रज विलास मे श्री कृष्ण के प्रति वसुदेव देवकी नन्द यशोदा तथा गोकुल की गोपियो के वात्सल्य की अभिव्यक्ति की गई है। परन्तु उसम प्रधानता नन्द और यशोदा की वात्सल्यमयी उक्तियो की है। कृष्ण के जन्म के समय देवकी और वसुदेव कारागृह म हैं। उनके जन्म लेने पर हर्ष होता है। साथ ही कस के भय से देवकी आशकित होती है उसकी द्वन्द्वात्मक स्थिति का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

"सुत उठाय उर सों लपटायो। प्रेम विवस लोचन जल छायो ॥
कहत देवकी पति सुन लीज। गमन वेग गोकुल को कीज ॥"[1]

कृष्ण का जन्म यशोदा और नन्द को अपार आनन्ददायक लगता है। यशोदा के सोते हुए ही कृष्ण को वहाँ पहुचा दिया गया था। वह जब सोकर उठती है तो पुत्र प्रेम के कारण उसकी स्थिति का वर्णन निम्नलिखित पक्तियो म भली भाति किया गया है—

जसोदा जब सोवत तें जागी। सुत मुख देखत ही अनुरागी ॥
पुलक अग उर आनन्द भारी। देख रही मुख शशि उजियारी ॥
गदगद कठ न कछु कहि आयो। हुलसत ह्वै नन्द बुलायो ॥
आवहु कत पुत्र मुख देखो। बडो भाग्य अपनो करि लेखो ॥[2]

---

१ ब्रज विलास, पृष्ठ २८

२ ब्रज विलास पृष्ठ २८

जन्म के बाद होने वाले विभिन्न संस्कारों—बधाई, जातकर्म, दान देना[1] छठी[2] अन्नप्राशन[3] और कर्णवेधन[4] आदि का भी अन्य कवियों की भाँति वर्णन किया गया है।

व्रज विलास में यशोदा और नन्द के मनोभाव विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं। यशोदा कृष्ण की छवि से बड़ी प्रसन्नता का अनुभव करती है। वह कभी उन्हें गोद में लेती है कभी हृदय से लगाती है मुख चूमती है, उनके शरीर का अवलोकन करती है और कभी पालने पर झुलाती है। कवि ने दो पंक्तियों में ही कितने भाव भर दिये हैं *यह नीचे की पंक्तियों से स्पष्ट होता है—*

'कबहू लेत उछंग उर लगाय चूमति मुखहिं।
निरखि मनोहर अंग कबहु झुलावत पालने॥'[2]

वात्सल्य भाव से भरपूर हुई यशोदा कृष्ण को पालने पर सुलाती है। वह सुलाने के लिये मधुर मधुर कुछ गाती है। नींद को कृष्ण के लिये बुलाती हैं। इन भावों का वर्णन निम्नोद्धृत पंक्तियों में देखिये—

'पुनि पलना पौढ़ाय झुलावै। दुलरावै हुलरावै मल्हावै।
लालन के हित नींद बुलावै। मधुरे सुर कछु जोइ सोइ गावै।
लालन को आव निंदरिया। तोहि बुलावत स्याम सुंदरिया।
जो कर कपट लाल पै आवै। ताहिव की लौं विधि विनसावै।'[6]

मातृ मनोभावों में सबसे अधिक सुन्दर वर्णन यशोदा की मनोभिलाषा का किया गया है। कृष्ण अभी छोटे से शिशु हैं। माँ यह अभिलाषा कर रही है कि वह कौन-सा समय होगा जब कृष्ण कुछ बोलने लगेंगे मुझसे जननी कहेंगे नन्द से बाबा कहेंगे आँगन में इधर उधर खेलेंगे और कुछ अपने हाथ से लेकर खायेंगे। कवि ने यशोदा द्वारा अनुभूत सुख और नाना अभिलाषाओं को अच्छी प्रकार से अभिव्यक्त किया है—

'कबहु हरि मुख सों मुसकावै। कबहु हर्षित कंठ लगावै।
मो निधनी को धन सुत नाहा। खेलत हसत रहो नित कान्हा।
कब धौं मधुर वचन कछु कहै। कब जननी कहि मोहि बुलहै।
कब नन्दहिं कहि बाबा बोलै। खेलत इत उत आँगन डोलै।

१ व्रज विलास, पृष्ठ ३०
२ व्रज विलास पृष्ठ ३७
३ व्रज विलास पृष्ठ ५२
४ व्रज विलास, पृष्ठ ७०
५ व्रज विलास पृष्ठ ८३
६ व्रज विलास पृष्ठ ८२

कब धौं तनक तनक कछु खै हैं। अपने कर लै मुख मे नै है।
कब विधि यह अभिलाष पुराव। मन ही मन कुल देव मनाव।"

इन पंक्तियों में यशोदा के उद्गार वात्सल्य रस से पूर्णत ओत प्रोत है।

मान अभिलाषा का इसी प्रकार का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है। यशोदा कृष्ण को चलना सिखा रही हैं और उनके लडखडाने पर सुख का अनुभव कर रही हैं। वे उनका बडे होकर पैरो चलने की अभिलाषा का अनुभव करती हैं—

'हरि को गोद लिये दुलराव। पुनि पुनि तुतले बोल बुलाव॥
कबहुक गावत दे कर तारी। कबहु सिखावत चलन मुरारी॥
तनक तनक भुज टेक उठाव। कम कम ठाढो होन सिखाव॥
पुनि गहि भुज पद द्वक चलाव। लरखरात लखि मन सुख पाव॥
मन ही मन यो विधिहि मनाव। कबधौं अपने पायन धाव॥"[1]

यशोदा के अतिरिक्त ब्रज की अन्य गोपियां में वात्सल्य के भी कृष्ण आलम्बन हैं। यशोदा गोद में लेकर और खिलाकर कृष्ण को पालने में सुला देती है। उसके पश्चात ब्रज की स्त्रियां आती हैं और गोद मे लेकर कृष्ण को खिलाती है। गोद में खिलाना वात्सल्य रस का अनुभाव है। कवि ने ब्रज की गोपियों के वात्सल्य की इस प्रकार अभिव्यक्ति की है—

"कबहु झुलावति पालने, कबहु खिलावति गोद।
कबहु सुलावति पलग पर जसुदा सहित विनोद।
नित प्रति ब्रज की बाम आव जसुमति के सदन।
मुदित निरखि घनस्याम, लै लै गोद खिलावहिं॥"[2]

पिता मनोभावों की अभिव्यक्ति में आश्रय नन्द हैं। नन्द भी कृष्ण को देखकर बड़ा आनन्द का अनुभव करते हैं। वात्सल्य भाव में ओत प्रोत हुए वे चुटकी बजा-बजा कर कृष्ण को खिलाते हैं—

"निरखि नंद सुत आनन भारी। कमल वदन छवि रहे निहारी॥
चुटकी दै दै गुर्लाह खिलाव। निरखि निरखि मुख अति सुख पाव॥"[3]

नन्द जब और अधिक वात्सल्य भाव से आपूरितमानस होते हैं तब कृष्ण को लेकर मुख चूमते हैं और उन्हें हृदय से लगाकर असीम सुख का अनुभव करते हैं। यह निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

---

२ ब्रज विलास पृ० ५८
३ ब्रज विलास पृ० ५२
४ ब्रज विलास, पृ० ४६

"चन्द्र वदन सुख सदन कन्हाई। निरखि नंद आनंद अधिकाई॥
बदन चूमि उर सों लपटायौ। सो सुख कापै जात बतायौ॥"[1]

ब्रजविलास में कृष्ण की बाल क्रीडा और बाल स्वभाव का भी चित्रण कवि ने किया है। कृष्ण अभी छोटे ही है। वे अपने मुख से कुछ वचन बोलना चाहते हैं परन्तु अभी अस्पष्ट और तुतले ही वचन निकलते है। वे सकेत से माखन खाने का मन्तव्य प्रकट करते हैं और यशोदा उसे समझकर उन्हें माखन देती है। कुछ खिला देती हैं और कुछ हाथ पर रख देती है। इसमे बडी स्वाभाविकता है। कृष्ण और यशोदा का इस प्रकार का चित्रण उदाहरण के लिए यहाँ दिया जाता है—

"कबहु कहत कछु खंडित बाता। सुनत होत सुख पूरण गाता॥
कहन चहत कछु प्रगट न आवै। माखन मांगत सैन बतावै॥
मातु समुझि मथनी तें लेई। कछु खवाय कछु कर धर देई॥
खलत खात बाहु मणि अगना। इत उत करत घुटुरुवन रिंगना॥"[2]

बच्चे का स्वभाव है कि प्रतिबिम्ब की ओर बडा आकृष्ट होता है। कृष्ण माखन खा रहे है तभी प्रतिबिम्ब मे अपनी छाया देखकर और उसे दूसरा बालक समझकर उसे भी खिलाने लगते हैं—

"कबहु माखन ले मुख नावै। कबहु खम्भ प्रतिबिम्ब खवावै॥
माखन मागहु हू कर लेई। एक भाग प्रतिबिम्बहिं देई॥"[3]

बच्चा कभी खाता है तो कभी नीचे गिराता है। प्राय बच्चे ठीक प्रकार नहीं खा पाते तो मुख पर इधर उधर लिपटा लेते हैं। कवि इस सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इस प्रकार उक्ति कहते हैं—

"कछु डारत कछु खात, कछु लपटानो पानि दुहु।
सुभग सावरे गात बाल केलि रस बस करे॥"[4]

शिशु से जब कृष्ण बडे हो जाते है तो उनमें बाल सुलभ जिज्ञासा प्रबल होती है। बालक जैसा देखता है वैसा ही करना चाहता है। कृष्ण गाव के बालक है। नित्य प्रति गायो को दुहा जाता हुआ देखते है। अत वे भी गाय को दुहने के लिए अपनी रुचि प्रकट करते है। कृष्ण के गाय दुहने के प्रयत्न का परिचय नीचे के उदाहरण से प्राप्त किया जा सकता है—

"हसि जननी सो कहत कन्हैया। दुहनी दै दुहिहो मै गैया।
नंद बाबा मोहि दुहन सिखायौ। ग्वालन की सर दुहन चढायौ॥"[5]

---

१ ब्रज विलास, पृ० ५५
२ ब्रज विलास पृ० ७४
३ ब्रज विलास, पृ० ७१
४ ब्रज विलास पृ० ८२
५ ब्रज विलास, पृ० १७०

बाल छवि वर्णन में कवि ने बड़े कौशल से काम लिया है। कृष्ण छोटे बालक हैं। उनकी सभी चीजें छोटी छोटी हैं। कवि ने 'तनक' शब्द की आवृत्ति के द्वारा अनुप्रास पुनरुक्तिप्रकाश आदि अलंकारों से युक्त कृष्ण की छवि का सुन्दर वर्णन किया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित द्रष्टव्य हैं—

'तनक सो बदन तनक सो दतिया। तनक से अधर तनक सो बतिया।
तनक बदन दधि तनक कपोलनि। तनक हसत मन हरत अमोलनि।
तनक तनक कर ले के माखन। तनक अगुरिया तनक चाखन।
तनक तनक भुज चरण सुहाए। तनक सरूप मनोज लजाए ॥'[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि ब्रजवासीदास ने कृष्ण के संयोग को अभिव्यक्त करने वाले अनेक भाव रखे हैं। वियोग वात्सल्य का उद्घाटन बहुत कम वर्णन किया है फिर भी कुछ स्थल द्रष्टव्य हैं।

जिस समय कृष्ण मथुरा जा रहे हैं तो यशोदा बहुत व्यथित होती हैं वे व्यथित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ती हैं। बड़ा विलाप करती हैं और कहती हैं कि कृष्ण के जाने से सारा ब्रज सूना ही सूना लगेगा। कवि ने उनकी दशा का चित्रण इस प्रकार किया है—

देखत ही जसुमति अकुलानी।
परी धरणि बिलपति बिललानी।
बिकल कहति मो हित क्यों दुलारे।
जात किये सूनो ब्रज प्यारे ॥'[2]

नन्द जब मथुरा जाते हैं तो वासुदेव के साथ कृष्ण और बलराम उनसे मिलने आते हैं। नन्द उन्हें देखकर वियोग दुख को शान्त करने के लिए एकदम गले से लगा कर अत्यन्त सुख प्राप्त करते हैं—

आये तबहीं कुंवर कन्हाई। नृप बसुदेव सहित दोउ भाई।
देखत नन्द मिले उर धाई। लिये लगाइ कंठ सुखदाई ॥'[3]

यशोदा की वियोग में जो स्थिति है वह सच्चे मातृ हृदय की द्योतक है। श्रीकृष्ण जब चिट्ठी भेजते हैं तो नन्द को तो ऐसे सुख प्राप्त होता है मानो कृष्ण ही मिल गये हों। यशोदा की स्थिति और अधिक राग रंजित है। कृष्ण के हाथ की चिट्ठी होने के कारण यशोदा उसे पुत्रवत हृदय से बार बार लगाती हैं। यह भाव नीचे की पंक्तियों में स्पष्ट होता है—

'पाती बांचि नंद उर लाई। भेंटे मानो कुंवर कन्हाई।
लिखी स्याम के कर की पाती। जसुमति ले ले लावति छाती ॥'[4]

---

१ ब्रज विलास पृ० ५६
२ ब्रज विलास, पृ० ६०६
३ ब्रज विलास पृ० ६५०
४ ब्रज विलास पृ० ६८६

ब्रजवासी दास के ब्रज विलास के अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि उन्होंने संयोग वात्सल्य का वर्णन अपेक्षाकृत अधिक किया है। उसमें कृष्ण के बाल स्वभाव के वर्णन—जैसे चन्दा के लिए मचलना, दूध के दातों को देखकर यशोदा का आनंदित होना, उलाहने आदि आना, प्रतिबिम्ब को माखन खिलाना, खेल के समय आपस में लड़ना, होआ से डरपाया जाना आदि अनेक भावों का चित्रण बिल्कुल सूर जैसा किया है। कुछ स्थल उनके मौलिक और कवित्वपूर्ण हैं और उनमें वात्सल्य रस का पूर्ण परिपाक हुआ है। मात मनोभाव, पितृ मनोभाव, बालछवि और बालस्वभाव आदि के बहुत से स्थल अच्छे हैं। वियोग-वात्सल्य की अभिव्यक्ति यद्यपि इतनी विस्तृत नहीं है परन्तु वह मार्मिक है और नन्द और यशोदा की विरह व्यथित स्थिति का प्रत्यक्ष परिचय देती है। रीति-काल के कुछ ही कवि ऐसे हुए हैं जिन्होंने प्राचीन परिपाटी की भांति काव्य रचना की है। व्रजवासीदास उनमें से एक हैं। किन्तु कृष्ण चरित वर्णन करते समय इन्होंने सूर की भांति वात्सल्य भक्ति की इतनी व्यापक अभिव्यक्ति नहीं की है। फिर भी यत्र-तत्र देवताओं के प्रसन्न होने तथा वेदों को भी उनकी महिमा अगम्य आदि बतलाने का कथन किया है। उनके स्वामी भी अखिल लोकपति नायक और भक्तों को सुख देने वाले हैं। ऐसे स्थल अत्यन्त न्यून हैं।

इतना सब कुछ कहते हुए भी पाठक को वत्सल भक्ति की वैसी अनुभूति नहीं लगती जैसी सूर की रचना में लगती है। क्योंकि इन्होंने कृष्ण के ईश्वरत्व का कथन कुछ ही प्रसगों में किया है। सूर की भांति स्थल-स्थल पर उनके अलौकिक रूप स्मरण नहीं है।

तृतीय अध्याय

वात्सल्य-रस के आधुनिक कवि, उनकी कृतिया और रस-व्यजना

महाराज रघुराजसिंह

महाराज रघुराजसिंह राम परम्परा क भक्त ह । इन्होंने 'रामस्वयवर' नामक ग्रन्थ म भगवान राम की कथा का वरणन किया है । इनकी कथा का विकास तो वाल्मीकि और तुलसी की भाँति ही है परन्तु कवि की अभिव्यजना मौलिक और कवित्वपूर्ण है । इसम कवि के विषयालम्बन राम आदि दशरथ-पुत्र ह । वात्सल्यानुभूति के आश्रय राजा दशरथ तथा माता कौशल्या आदि ह । कवि ने सयोग सुख और वियोगानुभूति दोनो की अभिव्यक्ति बड विस्तार के साथ की है ।

सयोग सुख का वरणन राजा दशरथ की पुत्रषणा से प्रारम्भ होता है । वे सब प्रकार से सम्पन्न ह । पुत्र नही है । सारे वभव आदि से युक्त होते हुये भी उन्ह पुत्र का अभाव खटकता रहता है ।[1] अत व पुत्र की प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि-यज्ञ करने का विचार करते ह और अपने मन्तव्य को रानिया क आगे प्रकट करते ह । पुत्र का अभिलाषा क प्रसग म व सब इतने तल्लीन हो जाते ह कि समस्त रात्रि नाना भाँति की बातें करते ही व्यतीत हो जाती है ।[2]

कवि न पुत्रो की उत्पत्ति के पश्चात् होने वाले हर्षोल्लास की व्यापकता का विस्तत वर्णन किया है । दशरथ के यहाँ आनन्द का स्रोत उमड पडता है । राजा व रानियो के अतिरिक्त समस्त समाज आनन्दित होता है । सब बधाई दत हैं और पुत्रो को देखकर बलि बलि जात हैं ।[3] तत्पश्चात् जसे जसे समय व्यतीत होता जाता है वसे ही अवसरानुकूल आनन्द के अन्य प्रदशनो की अभिव्यजना भी कवि ने की ह ।

---

१ यह विधि जासु प्रभाव, श्री दशरथ महिपाल मणि ।
और सब चित चाव सुत बिन तापति रहत हिय ॥

—रामस्वयवर पृ० १७

२ रामस्वयवर, पृ० १८ १६

३ रामस्वयवर, पृ० ७८

पुत्रोत्पत्ति के पश्चात होने वाले विभिन्न संस्कारो के अवसर पर होने वाली सुखानुभूति का इन्होंने विधिवत वर्णन किया है। इनम से जातकर्म[1], नामकरण[2], छठी[3], अन्नप्राशन[4], चूडाकरण[5] और कर्णछेदन[6] मुख्य हैं।

आलम्बन के चित्रण मे कवि ने राम आदि चारो कुमारो के रूप, बाल क्रीडा और बाल-स्वभाव आदि का वात्सल्यपूर्ण वर्णन किया है। रूप-वर्णन करते हुए इन्होंने राम के अंग प्रत्यंगो—केश ललाट भृकुटिरेख नेत्र, नासिका, मुख अधर, दाँत और कपोल आदि की शोभा का नाना उपमा और उत्प्रेक्षाओ से पुष्ट वर्णन किया है, साथ ही सौ दर्यवर्धक आभूषणों द्वारा विभिन्न अंग की साज सज्जा का भी वर्णन है, और इन आभूषणों म सुगन्धित इत्र नाक का मोती, हीरे और मोतियो का कठुला, मोतियो की माला, बिजायठ और कटक आदि मुख्य हैं।[7]

बाल क्रीडा का वर्णन करते हुये कवि ने उनके शिशु रूप और बाल रूप दोनो को लिया है। उनकी शिशु क्रीडा घुटनो के बल दौडना भूयोभूय गिरना और उठना, हसना धूलधूसरित होकर एक दूसरे के साथ घिसटना तथा धूल आदि उडाना है। कवि ने इस प्रकार की शिशु क्रीडा का वर्णन बडी निपुणता के साथ किया है—

> जानु सों धावत सबहि मह स्वच्छंद गिर उठि के पुनि धाव।
> त्योंहि परस्पर पाणि गहे घसिल हसि हेरि हुलास बढ़ाव॥
> श्री रघुराज नपागन मे निज अगन को अंगराग लगाव।
> रज पाणि उडाव लला नहिं आव जब उठि मातु बोलाव॥[8]

शिशु से कुछ और बडे होने पर राम आदि जो क्रीडा करते हैं वह उनकी शिशु क्रीडा से भिन्न है। अब वे दूसरे बालको के साथ दौड लगाते हैं कभी हाथी और घोडो पर चढते हैं कभी महलों की चोटी पर चढने हैं और कभी कृत्रिम हिरन आदि पशुओ को लडाते हैं। इन बालको का जीवन उमग से भरपूर है। उनकी बाल क्रीडा की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार की है—

> कहु नप अगन ■ खेल बाल सगन मे कहु नप अगन मे दौरि लपटाते हैं।
> चढ़ते मतगन म कबहू तुरगन मे कबहू सतागन मे दूरि कढ़ि जाते हैं।

---

१ रामस्वयवर पृ० ८६
२ रामस्वयवर पृ० ८६
३ रामस्वयवर, पृ० १०१
४ रामस्वयवर, पृ० १०६
५ रामस्वयवर पृ० १३१
६ रामस्वयवर, पृ० १३१
७ रामस्वयवर, पृ० ११८
८ रामस्वयवर पृ० ११७

सोधनि उतगनि अरोहि के उमगन मे मणिन कुरगन विहगन सराते हैं।
बाल केलि अगन मे जीति रस रगन में रघुराज चित्त चोप चगन चढ़ाते हैं।।[१]

बाल स्वभाव का चित्रण भी कवि ने बडा स्वाभाविक किया है। किलकारी मारना आपस म लडकर फिर एक हो जाना और मणियो के खम्भ म प्रतिबिम्ब देखकर उसे पकडने का प्रयत्न आदि करना उनके स्वभाव हैं।[२] बालक खेल में लगे हुए हैं उस समय उन्हें यदि कोई बुलाता है तो ये नहीं जाते। यदि कोई बरबस गोद मे भरकर ले जाना चाहे तो वे रोने लगते हैं। रोना ही बालको का बल है (बालानां रोदन बलम्)। कवि ने इस प्रकार का भी वर्णन किया है।[३] बाल-स्वभाव का एक बडा आकर्षक चित्र कवि ने दिया है—

कबहु क खसत त्यागि पनि पय अगन मचलि परे हैं।
बार बार जननी समुझावहिं मानि न रुदन करै हैं।।
मणि मुठकी कचन घुनघुनियाँ जननी जाय बजाव।
हाऊ ते डरवाइ उठाइ अग पयपान कराव।।[४]

आश्रय का चित्रण भी कवि ने भली भाँति किया है। राम आदि के प्रति वात्सल्य रखने वाली कौशल्यादि जननी विशेष उल्लखनीय हैं। दूसरे आश्रय दशरथ हैं। माता के प्यार म वात्सल्य की उत्कट अभिव्यक्ति है। उसके नाना अनुभव सहृदयो को आनन्दानुभूति कराते हैं। मणियो म चित्र दिखलाना, पालना झुलाना, दुलराना ऐसे ही मनोभाव हैं। नीचे की पक्तियो मे मातृ-मनोभावो का सुन्दर उदाहरण हैं—

'कबहु अग उठाइ भामिनी मणिन चित्र दरसाव।
कबहु अग धरि मणिन खिलौनन अनुपम खेल खिलाव।।
कबहु पालने पारि मनोहर जननी मद झुलाव।
कहा कहा रोवन अब लाग कहा कहत दुलराव।।
जिन बालन के नाम सुनत भव भूत भीति भजि जाव।
तिन बालकन धूप देत तिय भूत भीति नहिं आव।।'[५]

अन्तिम पक्तियो म राम आदि के ईश्वरत्व की ओर भी सकेत किया गया है इससे वात्सल्य म भक्ति का भी पुट लग गया है।

---

१ रामस्वयवर पृ० १६७

२ रामस्वयवर पृ० ११३

३ सखी उठाइ अक ल गमनी मचलि परे अगन म।
खेलने लगे खेल पुनि साई लाल सखन सगन मे।।
—रामस्वयवर, पृ० १२४

४ रामस्वयवर पृ० ११२

५ रामस्वयवर पृ० १०५ ६

कवि ने मातृ अभिलाषा का भी वर्णन प्रचुर मात्रा में किया है। माता का स्वाभाविक गुण है कि वह अपने पुत्र के भविष्य में बड़े होकर करने के क्रिया कलापों का स्मरण करके आनंदित होती है—

"कब चलि पद पूजिहौं मनोरथ लालन अवधि हमारा।
कबहू कहै होरिल कब कानन खेलि हो जाइ शिकारा॥"[1]

पुत्र के तनिक से कष्ट को देखकर ही जननी का हृदय बड़ा व्यथित होता है। उसके सुख के लिये कितने यत्न एकदम वह करती है। उदाहरणार्थ एक दिन राम प्रातःकाल रोने लगे, दूध नहीं पिया। मां कभी राई लोन का उतारा करती है, कभी वशिष्ठ आदि के हाथ रखवाती है चित्र दिखाती है, खिलौने देती है ताली बजाती है और पालने मे झुलाती है परन्तु राम पर कोई असर नहीं पड़ता। तब एक चतुर स्त्री राम को एकदम कल्पित हाथी से डरा देती है और राम, बाल स्वभाव के अनुसार डर कर पय पान करने लगते हैं। कवि ने इस दृश्य का बड़ा मनोरम चित्र खींचा है—

"जब मा रुवाने राम रमणी चतुर कोई,
आसुही कनक पट वारन बनायो है।
हे हे लाल हाथी एक आयो भागो भौन जाई
करो पय पान अस कहि डरवायो है॥
भभरि भगाने मातु अंक मे लुकाने जाइ,
किये पय पाने रघुराज इमि गायो है।
डरयो हरि सोई हेम हाथी को जो ग्राह ग्रस्यो
हाथन सों हाथा हाथी हाथी ऐंचि ल्यायो है॥"[2]

कौशल्यादि माताओं की भाँति दशरथ की वात्सल्यानुभूति का भी कवि ने वर्णन किया है। माता अपने पुत्र को घर से बाहर भेजती है तो खिला पिला कर और वस्त्रादि से सुसज्जित करके भेजती है। कौशल्या आदि माताएं राम आदि पुत्रों को नृप के समीप इसी प्रकार भेजती हैं। राजा दूर से ही उन्हें हाथ फैलाकर गोद में ले लेते हैं और हृदय से लगा लेते हैं। उस समय कोई पुत्र उनकी गोदी में चढ़ता है और कोई गले से लिपटता है।[3] राजा उस समय पुत्रों को प्यार करते हैं और उनकी तोतली बोली को सुनकर अत्यन्त आनन्दित होते हैं। कवि ने उस समय दशरथ के विभिन्न अनुभावों का भी वर्णन किया है—

---

१ रामस्वयंवर, पृ० ११७
२ रामस्वयंवर, पृ० १२१
३ रामस्वयंवर, पृ० १२१

चूमहि वदन सुतन कर भूपति ठोढ़ी धोर बतवाव।
सुनि सुनि तोतरि बानि विनोदत हसे हेरि हसवाव॥[1]

सयोग के समान कवि ने वियोग वात्सल्य का भी वर्णन किया है। राजा दशरथ इसके विशेष आश्रय हैं। रामायण की भाति यहा भी राम के वियोग के दो अवसर आते हैं—विश्वामित्र द्वारा यज्ञ रक्षार्थ मागे जाने पर और वनवास के अवसर पर। कवि ने प्रथम अवसर पर वियोग वात्सल्य का वर्णन अधिक किया है। विश्वामित्र जानते हैं कि दशरथ को राम अतीव प्रिय हैं। उन्हे यह शका है कि कही पुत्र प्रेमवश राम को उनके साथ जाने की अनुमति दशरथ न दे सकें। अत वे पहले ही कह देते हैं कि पुत्र के स्नेह के कारण आप किसी प्रकार का सन्देह मत करो।[2] फिर भी राम के मागे जाने पर उनका हृदय विदीर्ण हो जाता है। वे राम के विरह की कल्पना करके पीले पड जाते हैं और विह्वल होकर सिंहासन से नीचे गिर पड़ते हैं। कवि ने राजा दशरथ की विरह-व्यथित दशा का बडा मार्मिक चित्रण किया है—

कोमल कमल प तुषार को सपाट जसे,
नव लतिका प ज्यो दवारि बीह ज्वाल है।
जसे गजराज प मराज मगराज केरी,
पुनि गहराज प ज्यों सिंहिका को लाल है।
भन रघुराज रघुराज को विरह जानि,
मुख पियराय गयो कोशल भुआल है।
परम कशाला पाय ह्व गयो बिहाला अति,
गिरगो सिंहासन ते भूमि भूमिपाल है॥[3]

पिता की दृष्टि म पुत्र बडा होकर भी वसा ही सुकुमार रहता है जसा कि वह शशव म होता है। दशरथ राम के विषय म ऐसा ही विचार करते हैं। जो अभी पूरे सालह वर्ष का भी नही है भला वह शास्त्रास्त्र सचालन और वीरता के काय क्या कर सकता है? उसम धय हो क्या होगा? राम के विषय म ऐसा विचार करके दशरथ अपना सवस्व—दश कोष धन शासन और प्राण तक विश्वामित्र को देने के लिए प्रस्तुत होते हैं परन्तु अपने प्राणो म प्रिय पुत्र को नहीं। उनके वत्सलता यरिष्ट मानमादगारो का वर्णन कवि के निम्नलिखित उद्धरण म किया गया है—

षोडशहू वष को न पूरो भयो मेरो सुत,
दूध मुख सूख नहिं सीखो शस्त्र कला को।

१ रामस्वयवर प० १२६

२ सुत सनेह सदेह करो जनि यदपि राम अति प्यार
—रामस्वयवर प० १७३

३ रामस्वयवर प० १७४

वीरता न पूरी त्योंही धीरता न पूरी दूरी
बुद्धि की गम्भीरता बखान अस्त्र घला को।
भन रघुराज बल विषम विचारि कौन
माग्यो मुनि एक जौन जीवन कोशला को।
देग कोष दहौं, सन साहिबी को दहौं,
घन प्राणहू को दहौं प न द हों राम लला को ॥[1]

चारो पुत्रो म स राजा का राम पर विशेष प्रेम है। राम बडे हैं और श्रेष्ठ गुणा स युक्त हैं। अपन गुण शील और सौंदय से वे दशरथ को और भी प्रिय लगते हैं। अत वे बार-बार राम पर अपनी प्रीति प्रकट करत हैं और उन्हें विश्वामित्र के साथ जाने की अनुमति नहीं देते। वे कहते है कि राम का वियुक्त करके मैं कैसे जीऊगा ?—

भन रघुराज नेह सब प समान मेरो,
तदपि जियोंगो कसे राम को निवारि क।[2]

जब विश्वामित्र के साथ राम का भेजना अनिवाय ही हो जाता है तो भी दशरथ स्नेहवश राम को अकेले नही भेजना चाहते। वे लक्ष्मण को भी साथ मे भेजते हैं ताकि माग में वे राम की सेवा कर सकें।[3] राजा पुत्र के स्नेह के कारण इतने गदगद् हो जाते हैं कि उनके मुख स वचन नहीं निकलते। अपने अतीव प्रिय पुत्र को अपने आप ही कसे अलग होने की अनुमति दें। स्नहातिरेक के कारण दशरथ की जो दशा होती है उसका वर्णन करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है—

राम जाहु कौशिक मुनि के सग कहत न नृप मुख बानी।
राज समाज जकी सी ह्वै ग मन महं परम गलानी ॥[4]

पुत्र को भेजते समय राजा नाना भाँति की अनिष्ट की आशकाए करते हैं। कवि ने दशरथ द्वारा राम का भाँति भाँति से समझाना और विश्वामित्र के प्रति कर्तव्यपरायण रहने आदि का कथन करके जो उनकी गद्गदावस्था का वर्णन किया है उससे पिता के वात्सल्य भरित मानस का चित्र सामने आ जाता है।

राम के वियोग मे कौशल्या इतनी अधीर और व्याकुल हो जाती हैं कि वे राजा दशरथ पर भी खीझने लगती हैं उन्हें बौरालाया हुआ या भूतग्रसित समझती हैं—

---

१ रामस्वयवर पृ० १७५
२ रामस्वयवर पृ० १७५
३ रामस्वयवर, पृ० १८०
४ रामस्वयवर पृ० १८१

भूप किधौं लग्यो भूत रोक्यो है न मजबूत,
हाय मेरो पूत अवधूत लीन्हे जात है।[1]

राम के समझाने पर कौशल्या उन्हें किसी प्रकार जाने की अनुमति दे देती हैं। विदा होते समय वे स्नेह वश पुत्रों के मस्तक का आघ्राण करती हैं। राजा दशरथ विदा करते समय पुत्रों का मस्तक सूंघते हैं और पीठ को करों से स्पर्श करके अपना प्रेम प्रदर्शित करते हैं।[2]

राम के वनवास के समय राजा दशरथ राम के वियोग से और भी अधिक दुखी होते हैं। वे उनके वन जाने की बात सोचकर ही विह्वल हो जाते हैं। फिर जब राम से उन्हें अपना मन्तव्य विवश होकर कहना ही पड़ता है तो भरत के विषय में बातें करके मौन हो जाते हैं। कवि ने उनकी मूकता से उनकी अतीव वेदना की व्यंजना की है।[3]

महाराज रघुराजसिंह के उपरिलिखित वात्सल्य वर्णन की निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं—

१ पुत्रों के जन्म पर राजा रानियों के अतिरिक्त सारा समाज आनन्दित होता है। समाज की ओर से बधाई आदि देने से वात्सल्य की व्यापकता का अनुभव होता है।

२ कवि ने संयोग वात्सल्य का विस्तृत वर्णन किया है। वियोग का वर्णन तो है पर उसमें उतना विस्तार नहीं है।

३ माता कौशल्या संयोग वात्सल्य की विशेष रूप से आश्रय बनी हैं। अन्य रानियों के हृदय में भी इसी भाव का संचार हुआ है। संयोग वात्सल्य में दशरथ का स्थान गौण है। परन्तु वियोग वात्सल्य में दशरथ प्रधान रूप से आश्रय हैं और कौशल्या आदि रानियां बिल्कुल गौण हैं।

४ कवि ने राम के प्रति विशेष प्रेम प्रदर्शित किये जाने का वर्णन किया है। एक तो वे ज्येष्ठ हैं दूसरे श्रेष्ठ गुणों से युक्त हैं।

५ बाल-छवि वर्णन में कवि ने राम के नख शिख का वर्णन किया है और उसको प्रभावशाली बनाने के लिए विभिन्न अलंकारों की सहायता ली है। कहीं कहीं अनुप्रास और पुनरुक्तिप्रकाश का योग बहुत सुन्दर है।

६ कवि स्वयं राजा हैं। उन्होंने राजाओं जैसे खेल आदि का वर्णन किया है। हाथी घोड़ा पर चढ़ना उनको चलाने की दक्षता शिकार खेलना शस्त्र संचालन आदि का वर्णन इसीलिये स्वभावतः अच्छा बन गया है। इनके वात्सल्य-वर्णन में इनके राजसी व्यक्तित्व की छाप है।

---

१ रामस्वयंवर पृ० १८२
२ रामस्वयंवर पृ० १८५
३ रामस्वयंवर पृ० ३६

७ संयोग अथवा वियोग की दशा विशेष का वर्णन कवि ने सुन्दर किया है। उस वातावरण का पूरा चित्र सामने आ जाता है। ऐसे स्थलों की अभिव्यक्ति विशेषतः कवित्वपूर्ण है।

८ कवि को बालस्वभाव और मानव-स्वभाव की अच्छी परख है। किस समय पर स्वभावतः बालक क्या करता या किस स्थिति पर मनुष्य की क्या दशा होती है, इसका उन्होंने भली भाँति वर्णन किया है।

९ वात्सल्य वर्णन में कहीं-कहीं राम के ईश्वरत्व की ओर भी संकेत किया गया है। ये भी इसलिए स्वाभाविक हैं क्योंकि कवि राम परम्परा का भक्त है। ऐसे स्थल वत्सल भक्ति मिश्रित हैं, परन्तु उनका सूर तुलसी की भाँति बाहुल्य नहीं है। इससे सिद्ध होता है कि रघुराजसिंह जू देव के भक्ति भाव पर कवि भाव अधिक प्रभविष्णु हुआ है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र स्वच्छन्द विचारों के निर्द्वन्द्व किन्तु सहृदय व्यक्ति थे। वे अपने निजी मार्ग के प्रणेता थे। हिन्दी के जिन विद्वानों ने वात्सल्य को रस माना है उसमें उनका भी स्थान है। एक ओर तो उन्होंने वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार किया है और दूसरी ओर अपने काव्य में उसकी अभिव्यक्ति भी की है। भारतेन्दु जी के समय में प्रबन्ध काव्य लिखने की विशेष प्रवृत्ति नहीं थी अतः इनकी अधिकांश काव्य-कृतियाँ भी फुटकल पदों के संग्रह ही हैं। उन्हीं के अन्तर्गत यत्र-तत्र वात्सल्य-रस युक्त रचनायें मिलती हैं।

भारतेन्दु के वात्सल्य विषयक फुटकल पदों में वात्सल्य के विविध अंगों की अभिव्यक्ति पाई जाती है। बच्चा जन्म से लेकर ही सबके आनन्द का आधार होता है। अतः शिशु के जन्म होते ही सब आनन्द के मारे फूले नहीं समाते और उसकी अभिव्यक्ति जन्मोत्सव मनाने दान आदि देने और आशीर्वाद आदि के द्वारा की जाती है। भारतेन्दु की दृष्टि पुत्र जन्म के आनन्द को भली भाँति देखती है। कृष्ण के जन्म के समय के हर्ष और उल्लास आदि की अभिव्यक्ति उन्होंने बहुत से पदों में की है। उस समय बधाई, आशीर्वाद और मंगल कामना भी की गई है—

'जसोदा माई लेहु हमारी बधाई।
धन्य भाग तेरे सुनु प्यारी जन्म्यो कुँवर कन्हाई॥
चिरजीवो जबलों जमुना जल गंगा जल सब देवा।
जबलो धरु प्रकास और हैं जब लो हरि की सेवा॥
तब लौं चिरजीवो जग भीतर हरीचन्द तव लाला।
मंगलगीत विनोद मोद मति मंगल होइ रसाला॥'[1]

१. भारतेन्दु ग्रन्थावली, पृ० ४२[illegible]

बच्च का पालने में झुलाने[1] और भूमि पर खेलने की[2] भावाभिव्यक्ति भी की गई है। वात्सल्य की अभिव्यक्ति में सबसे बड़ी बात मातृ-हृदय की अनुभूति होती है। भारतेन्दु ने माता के हृदय का अनुभव किया है। माता को प्रातःकाल से ही अपने पुत्र के लिए नाना भाँति की वस्तुओं के निर्माण की बड़ी चाह रहती है और जब बालक उठता है उसका मुख देखकर माता को असीम आनन्द की उपलब्धि होती है। कवि ने इसी प्रकार के वात्सल्यपूर्ण उद्‌गारों की अभिव्यंजना निम्नलिखित पद में की है—

"मथे साढ नवनीत लिये रोटी घृत बोरी।
ललित सलोने साक दूध की भरी कटोरी॥
खरी जसोदा मात जात बलि बलि तृन तोरी।
सुत मुख निरखत हेत ललन उर लिये करोरी॥
रोहिन आदिक सब पास हो खरी बिलोकत बदन सुत।
उठि मंगलमय दरसाय मुख मंगलमय सब करहु भुव।[3]

आलम्बन का भाँति भाँति से विनोद करना और बाल-सुलभ चपलता दिखलाना वात्सल्य भाव को उद्दीप्त करता है। भारतेन्दु ने आलम्बन-गत उद्दीपनों का भी वर्णन किया है। बलराम और कृष्ण कभी आँगन में किलकारी मारकर खेलते हैं। वे धूल धूसरित होकर घुटनों के बल चलते हैं कभी माँ की चोटी पकड़ कर माखन माँगते हैं। वात्सल्य को उद्दीपन करने वाली बाल क्रीड़ा का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

'सखी री देखहु बाल विनोद।
खेलत राम कृष्ण दोउ आँगन किलकत हँसत प्रमोद॥
कबहु घुटुरुवन दौरत दोउ मिलि धूरधूसरित गात।
देखि देखि यह बाल चरित छवि जननी बलि-बलि जात॥'[4]

बालक को लक्ष्य करके माँ कभी-कभी अपने हृदयोद्‌गार प्रकट करती है। ऐसी उक्तियाँ अधिक वात्सल्यमयी होती हैं। भारतेन्दु ने यशोदा द्वारा इसी प्रकार के हृदयोद्‌गार प्रकट कराये हैं—

"मेरो लाड़िलो गोपाल माई साँवरो सलौना।
जाके हित लाई मैं सुरग खिलौना॥
छाँड़ो हठ वारते हो बार बार जाऊँ।

---

१ भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ० ४७६
२ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ४६७
३ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ६८१
४ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ४७

मुख देखि लालन कौं नैनन सिराऊं ॥
ब्रज को उजियारो मेरो छोटो सो लाला।"[१]

भारतेंदु ने वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति बहुत कम की है। उसका कारण सम्भवतः यही है कि भगवान् कृष्ण की भक्ति में भरे हुए भावपूर्ण फुटकल छन्द ही लिखते रहे। प्रबंधात्मकता का अभाव होने के कारण सांगोपांग चित्रण का अवकाश नहीं रहा फिर भी एकाध स्थल पर वियोग-वात्सल्य की अभिव्यक्ति भी की है—

"जसुदा मन्द विकल रोवत हैं कहि कहि के हा तात हो तात।
सो दुख देख्यौ जात न नैनन देखि दुखी सब मात हो मात॥"[२]

भारतेन्दु जी ने राधा के प्रति भी वात्सल्य वरिष्ट पद लिखे हैं। किन्तु उनमें राधा के जन्मोत्सव का ही वर्णन है। राधा के जन्म पर नाना बधाइयाँ दी जाती हैं।[३] उत्सव होते हैं[४], दान दिये जाते हैं[५] और सब आशीर्वाद देते हैं।[६]

राधा के जन्म के समय बधाई आदि का वर्णन करते समय भारतेंदु राधा कृष्ण की जोड़ी का स्मरण करके मुग्ध हो जाते हैं। वहाँ वात्सल्याभिव्यक्ति में भी आराध्य के प्रति माधुर्य भाव की स्मृति प्रधान रहती है।

भारतेन्दु जी के वात्सल्य के पद प्रायः सभी सरस भाषा में हैं। कहीं-कहीं विभिन्न अलंकारों की सहायता लेकर भावाभिव्यक्ति की गई है। बाल-कृष्ण की छोटी छोटी वस्तुओं का अनुप्रास और पुनरुक्तिप्रकाश से युक्त वर्णन किया है—

"छोटो सो मोहन लाल छोटे छोटे ग्वाल बाल,
छोटी छोटी चौतनी सिरन पर सोहैं।
छोटे छोटे भवरा चकई छोटी छोटी लिये,
छोटे छोटे हाथन सों खेल मन मोहैं।
छोटे छोटे चरन सों चलत घुटुरुवन,
चढ़ी ब्रज बाल छोटी छोटी छबि जोहैं।
हरिचन्द छोटे छोटे कर पै माखन लिये,
उपमा बरनि सकै ऐसे कवि को हैं।"[७]

---

१ भारतेंदु ग्रंथावली पृ० ४६७
२ भारतेंदु ग्रंथावली पृ० ४६२
३ भारतेंदु ग्रंथावली पृ० ५२४ ४६०
४ भारतेंदु ग्रंथावली, पृ० ५१३, ५१४, ५१७
५ भारतेंदु ग्रंथावली, पृ० ५१३
६ भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ० ४४८
७ भारतेन्दु " पृ० ४४८ पद ३०

भारतेन्दु के वात्सल्य वर्णन की समीक्षा करने पर प्रतीत होता है कि उनका वात्सल्य सार्वजनीन है। कृष्ण और राधा के जन्म पर सारा गाँव आनन्दित होता है। ग्राम में एक दूसरे के सुख दुख में मित्र और सम्बन्धी पूरी तरह भाग लेते हैं। राधा के जन्म पर नन्द का प्रसन्न होकर मनमाना दान करना इसका उदाहरण है।[1] बाल स्वभाव का चित्रण कवि ने किया है, परन्तु उसमें साधारण बातों को ही कवि ने लिया है। गर्मी में दोपहर के समय जब सब ठंड वातावरण में सोना पसन्द करते हैं।

कृष्ण बार बार धूप में चले जाते हैं। यह स्वाभाविक है कि बच्चों को धूप आदि की परवाह नहीं होती।[2] इसी तरह कृष्ण कभी मुँह में उंगली डालते हैं[3] और कभी कभी माता का आंचल पकड़ते हैं।[4] सभी साधारणतः घटित होने वाली बातें हैं। बच्चे के हृदयगत सूक्ष्म भावों की परख करके उसकी अभिव्यक्ति कवि ने नहीं की।

मात मनोभावों में यशोदा का कृष्ण को प्रसन्न करने के लिये झुनझुना बजाना, कहानी सुनाना सुलाना और माखन आदि का देना भी नित्य प्रति प्रत्यक्ष होने वाले वातावरण से सम्बद्ध हैं। इसी तरह प्रसन्न होकर बच्चे से उसके लिये छोटी दुलहिन लाने की बात है।[5] मात मनोभावों में पाठक को भाव विभोर कर देने वाली इनकी उक्तियाँ नहीं हैं। कवि ने बाल सुलभ चापल्य का ऐसा वर्णन नहीं किया जिससे यशोदा को तरह तरह के उलाहने सुनने पड़ें। एकाध स्थल पर यदि उलाहना लेकर कोई गोपी जाती भी है तो यशोदा का कोई विशेष वात्सल्य-वरिष्ट कथन नहीं है।

भारतेन्दु जी अपनी वात्सल्याभिव्यक्ति में कहीं कहीं राधा कृष्ण की जोड़ी का स्मरण करके आनन्दित होते हैं। ऐसे स्थलों में वात्सल्य वर्णन के साथ-साथ वसन्त भक्ति भाव भी आ गया है। उसका कारण यह है कि ये वल्लभ-सम्प्रदाय में दीक्षित थे अतः कृष्ण के बालरूप का वर्णन और उसके प्रति ब्रजजों के वात्सल्य की अभिव्यक्ति स्वाभाविक है। इसके साथ यह भी अधिगम्य है कि आलोच्य कवि की वात्सल्याभिव्यक्ति भाव की कोटि की ही है। रस कोटि की आनन्दानुभूति के स्थल बहुत कम हैं। फिर भी इनके वात्सल्य वर्णन के महत्त्व को भुला नहीं सकते।

---

१ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ५२४
२ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ६३
३ भारतेन्दु ग्रंथावली पृ० ५६७
४ भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ० ४७६
५ भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ० ४७६

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध

आधुनिक हिन्दी काव्य के वात्सल्य वर्णन करने वाले कवियो मे हरिऔध जी का नाम महत्वपूर्ण है। इनकी वात्सल्याभिव्यक्ति मुक्तक और प्रबन्ध काव्य दोनो मे मिलती है। मुक्तक काव्यो मे इस दृष्टि से उनकी 'पद्य प्रसून', 'चोखे चौपदे', 'मर्म स्पर्श' और 'पद्य प्रमोद' आदि पुस्तके आती है और प्रबन्ध काव्यो मे वात्सल्य का वर्णन करने वाले ग्रन्थ वैदेही वनवास और प्रियप्रवास हैं।

मुक्तक कृतियो मे अभिव्यक्त वात्सल्य-वर्णन को सुविधा की दृष्टि से निम्न लिखित वर्गों मे विभाजित कर सकते हैं—

१ आलम्बन के प्रति कवि की वात्सल्य अभिव्यक्ति
२ उद्दीपन
३ बाल विनोद और चापल्य
४ उद्बोधन और शयन आदि के लिए वात्सल्याभिव्यक्ति
५ बालक को स्नेह करने का आग्रह

आलम्बन के प्रति कवि की वात्सल्यामयी अभिव्यक्ति

बच्चो का स्वरूप और भोलापन देखकर कवि प्रभावित होता है। उनके लाल लाल हाथो को देखकर उसका जी चाहता है कि उन्हें चूम ले। वह नही चाहता कि कोई बच्चा रोय। कवि अभिलाषा प्रकट करता है कि तोतले वचन बोलते हुए और रुनुक झुनुक पजनी बजाकर ठुमुक ठुमुक करते हुए बच्चे आगन मे डोलें। कभी-कभी जब कवि का मानस वात्सल्य से पूर्ण हो जाता है, तो वह बच्चो को लक्ष्य करके इस प्रकार कहता है—

'मेरे प्यारे बेटो आओ।
मीठी मीठी बातें कहके मेरे जी की कली खिलाओ।
उमग उमग कर खेलो कूदो,
लिपट गले से मेरे जाओ।
इन मेरी दोनों आखों मे,
हसकर सुधा बूद टपकाओ।'[१]

उद्दीपन

बालक की तरह तरह की चेष्टाओ को देखकर वात्सल्य रस उद्दीप्त होता है। कवि ने बालक की उद्दीप्ति करने वाली क्रियाओ का वर्णन करते हुए लिखा है कि वह कभी उछलता है तो कभी कूदता है। कभी चौक मे इधर भागता है और कभी भावरें लगाने लगता है।

---

१ पद्य प्रसून, पृ० २३६

बाल विनोद और चांचल्य

बालक तरह-तरह के विनोद करता है और उनसे सबके हृदयों को प्रसन्न करता है। वह कभी-कभी जैसा हम कहते या करते हैं वैसा ही करने लगता है। कवि कहता है कि बालक तो एक खिलौना है जो मेरे हँसने के साथ हँसता और गाने के साथ गाता है। मुझे प्रफुल्ल देखकर वह भी प्रफुल्ल हो जाता है और जब मैं बोलता हूँ तभी बोलता है—

> "जब मैं किलकूँ तब वह किलके,
> जब बोलूँ तब बोले।
> मीठी बातों में मुझ सा ही,
> वह भी मिसरी घोले।"[१]

बच्चा बड़ा नटखट होता है। कवि ने लिखा है कि नटखट बालक ऐसा है कि कभी ऐंठ ऐंठ कर बातें करता है कभी भौंह मटकाता है और कभी अँगूठा दिखाता है। कभी बच्चों को चिढ़ाता है कभी कुछ चीज लेकर भाग जाता है तो कभी किसी के कान में डू करके भाग जाता है। इसी प्रकार के और बाल सुलभ चांचल्य को प्रदर्शित करने वाले कार्यों का उन्होंने वर्णन किया है—

> "घर में घुसकर ऊधम करता,
> बछड़े खोल भगाता।
> लगा लगा मुँह थन से पय,
> गायों का है पी जाता।
> है लड़का का कान ऐंठता,
> चपतें कभी लगाता।
> कभी बंदरों सी घुड़की
> दे दे है उन्हें डराता।"[२]

उद्बोधन और शयन आदि के लिए वात्सल्याभिव्यक्ति

बच्चों को प्राय प्रातःकाल माता उठाया करती है। उनको उठाने के लिये कहने में माता का वात्सल्य प्रधान होता है। वह चारों ओर के और सभी जग हुए वातावरण का वर्णन करके बहुधा बच्चे से कहा करती है कि देखो गुलाब कमल आदि फूल खिल गये। आकाश में लाली छा गई तुम भी उठो और आँगन में खेलो। लोरियों में माता नींद को बुलाती है जिससे बालक सो जाए। नींद बच्चे की आँखों पर आकर बैठ जाए।

१ मर्म-स्पर्श पृ० ११७
२ मर्म-स्पर्श, पृ० ११८

शिशु प्रेम का आग्रह

हरिऔध जी बच्चो से बड़े प्रभावित होते हैं। इसलिये वह सबको कहते हैं कि इनको प्यार करो। बालक देश और जाति का सबल होता है। देश का बनना बिगड़ना इन्ही पर आधारित है। बालको से स्नेह करना निस्वार्थ है। इसमे मलिनता कपट और कलह को स्थान नही है।[1] अत यदि उन्हें प्यार करेंगे तो यह हमारे मन को लुभायेंगे।

> बच्चों को तुम जी से चाहो,
> प्यार करो, आलों पर ले लो।
> पुलकित हो हो उन्हें सराहो
> उनसे मीठी बोली बोलो।[2]

वदेही वनवास

प्रबन्ध काव्य म वर्णित वात्सल्य मे हरिऔध जी ने सयोग और वियोग के चित्र प्रस्तुत किय हैं। वदेही-वनवास' म सयोग-वात्सल्य वर्णन है और प्रियप्रवास' मे वियोग वात्सल्य का। वदेही-वनवास' म वर्णित वात्सल्य के आलम्बन लव और कुश हैं और आश्रय सीता है। यद्यपि यह काव्य करुण रस प्रधान है परन्तु लव-कुश के सयोग सुख और उनकी क्रीडा आदि का वर्णन करके कवि ने वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। लव और कुश के जन्म पर सारे आश्रम म आनन्द छा जाता है। ब्रह्मचारी वद पाठ करत हैं। जगल मे मगल हो गया है। वाल्मीकि उनका नामकरण करते हैं। आश्रमवासी स्त्रियाँ पुत्रो को आशीर्वाद देती हैं और बधाई देती हैं। एक स्त्री की बधाई द्रष्टव्य है—

> "बधाई दने आई हू।
> गोद आपकी भरी विलोके फूली नहीं समाई हू।
> लालों का मुख चूम बलायें लेने को ललचाई हू।
> ललक भरे लोचन से दखे बहु पुलकित हो पाई हू।
> जिनका कोमल मुख अवलोके मुदिता बनी सवाई हू।
> जुग जुग जियें लाल वे जिनकी ललकें देख ललाई हू।"[3]

दोनो बच्चे बड़े होकर सबके सुख का हेतु बनने लगते है। उनकी मूर्ति आश्रम की स्त्रियो के हृदयो मे बस जाती है और वे उन्हे नित्य आनन्दपूर्वक देखने लगती हैं। सीता की सखी सत्यवती उन बच्चो को तरह-तरह से खिलाती है। कभी उनके सामने वीणा बजाती कभी खिलौने देती है। कभी सीता जी अपने पुत्रो को लेकर आनन्द

---

१ पद्य प्रसून, पृ० १०७ ८
२ पद्य प्रसून, प० २३८
३ वदेही-वनवास पृ० १५७

सोये भू मे धपल रथ के सामने आ अनेकों।
जाना होता अति अप्रिय था बालकों का सबों को ॥[१]

कृष्ण के मथुरा में स्थित होते समय

कृष्ण के प्रवास म स्थित रहने पर ब्रज म उन्ही की चर्चा रहती है। यशोदा को तो क्षण भर भी चैन नही मिलता। उनकी व्यथा और व्याकुलता के कारण जो स्थिति हो गई है उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

पल पल अकुलाती अवती थीं यशोदा।
रट यह रहती थी क्यों नहीं श्याम आये ॥[२]

कवि ने यशोदा के मातृ-हृदय की मार्मिक अभिव्यंजना करते हुए उनका वेदना व्यथित दशा के अनेक चित्र खीचे हैं, जसे बाट देखना, पथिकों से पूछना, खाने योग्य पदार्थ नित्य प्रति सजाकर रखना और ज्योतिषियों से अपने पुत्रों के विषय में पूछना आदि। व व्यथा के कारण अत्यन्त दुबल हो गई हैं। उनका हृदय नाना भांति से आशंकित होकर कमजोर हो गया है। उनकी दशा का पता निम्नलिखित भावपूर्ण उद्धरण से भली भाँति लगता है—

यह दिखि यदि कोई पौधता साथ आता।
तब उभय करों से थामतीं वे कलेजा।
जब वह दिखलाता दूसरी ओर जाता।
तब हृदय करो से ढापती थी वणो को।[३]

नन्द और गोपो के गोकुल लौटते समय

नन्द और गोपो के गोकुल लौटने समय ब्रजवासियों के विरह का कवि ने ऐसे ही विस्तार के साथ वर्णन किया है। उनमें नन्द की अत्यन्त दीन दशा है। एक तो उन्हे कृष्ण के वियुक्त होने का दुख है दूसरे बड़ी लज्जा लग रही है कि अब लोगों से क्या कह? उन्हे तो अपने वचनो के अनुसार कृष्ण और बलराम को दो दिन मे लौटा लाना चाहिए था। उनकी दुखी दशा का अनुमान नही लगाया जा सकता। कवि ने नन्द की पीड़ा का वर्णन इस प्रकार किया है—

खोके होवे विकल जितना आत्म सवस्व कोई।
होती हैं जो स्वमणि जितनी सप को वेदनायें॥
दोनों प्यारे कुवर तज के ग्राम आज आते।
पीड़ा होती अधिक उससे गोकुलाधीन को थी ॥[४]

---

१ प्रिय प्रवास पृ० ५६
२ प्रिय प्रवास पृ० ६०
३ प्रिय प्रवास पृ० ६२
४ प्रिय प्रवास पृ० ७३

ब्रज के लोगों का कृष्ण के न आने से वज्र-सा मार जाता है। यशोदा का तो कहना ही क्या? वे नन्द को अकेले आता हुआ सुनकर दौड़ती हैं और छिन्नमूल वृक्ष की भाँति उनके धरा पर गिरकर अचेत हो जाती हैं। सचेत होने पर अतीव करुण शब्दों में विलाप करती हैं—

प्रिय पति मेरा वह प्राण प्यारा कहाँ है?
दुख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है?
अब तक जिसको मैं देख के जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नैन तारा कहाँ है?[1]

यशोदा कृष्ण के रूप, क्रीडा और स्वभाव आदि का स्मरण करके भूयोभूय व्यथित होती हैं। वे नाना भाँति की कृष्ण के विषय में शंकायें करती हैं। वे अत्यन्त अधीर हो जाती हैं और नन्द से बड़ी कातरतापूर्वक इस प्रकार पूछने लगती हैं—

प्रियतम! अब मेरा कंठ में प्राण आया।
सच बतलादो प्राण प्यारा कहाँ है?
यदि मिल न सकेगा जीवनाधार मेरा।
तब फिर निज पापी प्राण मैं क्यों रखूँगी?[2]

इतना ही नहीं कवि ने उनके विलाप करते-करते चेतनाशून्य हो जाने का भी वर्णन किया है। वे कृष्ण का मुख अंतिम बार देख न सकने का खेद प्रकट करती हुई अचेत हो जाती हैं। उपचारों द्वारा सचेत करने पर नन्द उन्हें ढाढ़स बंधाते हैं कि तुम्हारे पुत्र दो ही दिनों में आ जायेंगे। इन शब्दों से व्यथित यशोदा को कुछ सन्तोष मिलता है और वह इस प्रकार का है—

जैसे स्वाती सलिल कण पा वृष्टि का काल बीते।
थोड़ी भी है परम तृषिता चातकी शान्ति पाती॥
वैसे आना श्रवण करके पुत्र का दो दिनों में।
संज्ञा खोती यशुमति हुई स्वल्प आश्वासिता सी॥[3]

उद्धव आगमन पर

उद्धव के आने पर भी यशोदा के व्यथित हृदय के उद्गार कवि ने व्यक्त किये हैं। यद्यपि नन्द आदि की वियोगानुभूति की अभिव्यक्ति की गई है पर वह उससे बहुत कम है। उद्धव के आगमन पर यशोदा का मातृ हृदय और अधिक उमड़ता है। वे पुनः विलाप करती हैं और व्यथा के समुद्र में डूब जाती हैं। वे उद्धव से बार बार कृष्ण की कुशल क्षेम पूछती हैं। खाने, पीने और प्रसन्नचित्त रहने के विषय में जिज्ञासा

१ प्रिय प्रवास पृ० ७५
२ प्रिय प्रवास पृ० ७६
३ प्रिय प्रवास, पृ० ८३

प्रकट करती है। कवि ने यहाँ माता के हृदय का बड़ा मनोवैज्ञानिक निरीक्षण किया है। यशोदा का वात्सल्य, कृष्ण-सम्बन्धी चर्चा करके उद्दीप्त हो जाता है। व नाना प्रकार से कृष्ण के स्वभाव, रूप, मृदुता और सहृदयता का स्मरण करके अधीर हो उठती हैं—

सकोची है अति सरल है धीर है लाल मेरा।
होती लज्जा अमित उसको मांगने मे सदा थी।
जसे ले के सरुचि सुत को अक मे म खिलाती।
हा! वसे ही अब नित खिला कौन माता सकेगी?[1]

यशोदा उद्धव स पूछती हैं क्या कृष्ण कभी मेरी याद करता है? क्या उसे कभी बूढ़े पिता का ध्यान नहीं आता? यहाँ के बच्चे गोपियाँ, वशी, राधा और वृन्दावन की कुन्जे आदि की क्या उसे कभी स्मृति आती है? व ऐसा इसलिए पूछती हैं क्योंकि उन्हे विश्वास है कि कृष्ण को इनकी स्मति होगी तो अवश्य आयेंगे। वे अपनी व्यग्रता का उद्धव से व्याख्यान करती हैं। यशोदा के एक एक शब्द स मातत्व टपकता है—

म हाथों से कुटिल अलकें लाल की थी बनाती।
पुष्पो को थी श्रुति युगल के कु डलो में सजाती॥
मुक्ताओ को शिर मुकुट में मुग्ध हो थी लगाती।
पीछे शोभा निरख मुख की थी न फूली समाती॥[2]

अन्त म कवि ने यशोदा के पश्चाताप का भी कथन किया है। व कृष्ण के प्रति किये गये कठोर व्यवहार का स्मरण करती हैं। उनकी स्मति करके उनका मन और भी अधिक दुखी हो जाता है। वे पश्चाताप करती है कि उन्होने कृष्ण को क्या ऐसा कष्ट दिया? अत व अत्यन्त विनम्र भाव स उद्धव स कहती हैं कि कृष्ण से कहना कि उन बातो को भूल जाय और यहाँ आकर मेरा दुख दूर करे—

जो चूकें है विविध मुझसे हो चुकी वे सदा ही।
पीडा दे दे मथित चित को प्रायश ह सताती॥
प्यारे से यो विनय करना वे उन्हें भूल जावें।
मेरे जी को व्यथित न करें क्षोभ आके मिटावें।[3]

यशोदा की भाँति नन्द जी भी उद्धव के समक्ष नाना प्रकार से अपनी विरह-व्यथा का वर्णन करते हैं। और दोनो का अपनी विरह-व्यथा के कथन करते हुये समस्त रात्रि व्यतीत हो जाती है। नन्द और यशोदा के मानस मे विरह गाथाओं का

१ प्रिय प्रवास, पृ० १२३
२ प्रिय प्रवास पृ० १२६
३ प्रिय प्रवास पृ० १३४

समुद्र एकत्रित था जिसकी एक एक बूंद कृष्ण के एक एक चरित्र का कथन करने से निकलती थी। अतः उसकी समाप्ति कैसे सम्भव हो सकती थी?—

निशान्त देखे नभ श्वेत हो गया।
तथापि पूरी न व्यथा कथा हुई।[1]

हरिऔध जी ने अपनी रचनाओं मे वात्सल्य का वर्णन बड़े विस्तार के साथ किया है। मुक्तक और प्रबन्ध काव्य दोनों मे ही उसकी अभिव्यक्ति की गई है। मुक्तक काव्य में जो वर्णन हुआ है उसमें शिशु के रूप, क्रीडा, कौतुक आदि के साथ साथ कवि ने उसके प्रति अत्यन्त आकर्षण भी प्रकट किया है। इनके वात्सल्य वर्णन में एक विशेषता यह है कि इन्होंने सामान्य शिशु और शिशु विशेष के वात्सल्य वर्णन में पुत्र को ही महत्त्व दिया है। पुत्री का वात्सल्य वर्णन कहीं नहीं किया। वैसे वात्सल्य की संयोग और वियोग दोनो दशाओं में विस्तार है। परन्तु वियोग वात्सल्य का वर्णन बहुत अधिक किया है। 'प्रिय प्रवास' में कृष्ण के वियोग वात्सल्य का जो वर्णन है वह इतना विस्तृत है कि सूर के पश्चात और किसी कवि ने आज तक नहीं किया। उसके अनेक स्थल अत्यन्त मार्मिक है। माता पिता के नाना भांति के मनोभावों के चित्र से उपस्थित कर दिये गए हैं। इनके वात्सल्य-वर्णन में व्यापकता और सार्वजनीनता है। नन्द यशोदा के अतिरिक्त व्रज के गोप-गोपी आबाल वृद्ध सभी उसकी तीव्र अनुभूति करते हैं। इतना ही नहीं कवि ने प्रकृति तक को भी वात्सल्य भाव से अभिभूत चित्रित किया है। वियोग की दस दशाएं मानी गई है। उनमें से अनेक दशाओं का वर्णन इनकी वात्सल्याभिव्यक्ति में मिलता है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण वियोग वात्सल्य की विभिन्न दशाओं को व्यंजित करते हैं—

अभिलाषा

मेरे जी में अब रह गई एक ही कामना है।
आके प्यारे कुंवर उजड़ा गेह मेरा बसावें॥

चिन्ता

पल पल अकुलाती ऊबती थीं यशोदा।
रट यह रहती थी क्यों नहीं श्याम आये॥

स्मृति

प्रतिपल दृग देखा चाहते श्याम को थे।
छिन छिन सुधि आती श्यामली मूर्ति की थी॥

प्रलाप

प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहां है।
दुख जलधि निमग्ना का सहारा कहां है॥

---

१ प्रिय प्रवास, पृ० १३७

तिनका का भी कहा सहारा,
जिसके बल पर वह लेती म ॥
कौन यहा है अब जिससे कुछ
अपने जी की कह लेती म।
सुत पाती तो पति क्यों खोती,
जसे रहती रह लेती म ॥[1]

२—मातृ मनोभाव

मात मनोभाव अप्रतिम होते हैं। सन्तान के लिए द्रवीभूत होकर नाना प्रकार के भाव और अनुभाव माता म ही अधिक प्रगाढता के साथ परिलक्षित होते हैं। मथिलीशरण गुप्त ने अनेक स्थलो पर मात मनोभाव की अभिव्यक्ति की है। 'वक सहार' म ब्राह्मण का पुत्र कुन्ती के घुटनो मे चिपट जाता है तो कुन्ती उसे गोद मे उठा लेती है और अपने मनोगत भावो की अभिव्यक्ति करती हुई कहती है कि हे लाल तू जल्दी बडा बन जा।[2] यह स्वाभाविक है कि माताओ के मन म होता है कि शीघ्र ही बच्चा जल्दी बडा हो जाये। वनवास से लौटने समय कौशल्या अपनी भावाभिव्यक्ति इस प्रकार करती है कि हे राम मुझे ऐसा लगता है कि मानो पुत्र तू मेरी कोख म आ गया हो।[3] एक स्थान पर कवि ने माता का पारवश्य से युक्त मनोभाव भी अभिव्यक्त किया है। कुन्ती कर्ण के पास जाती है और उसे पाण्डवो के पक्ष मे मिलाने का प्रयास करती है। एतदर्थ अतीत की कथा बताकर यह भी प्रकट करती है कि वह वस्तुत उसी का आत्मज है पर कर्ण दुर्योधन का पक्ष तथा पालन पोषण करने वाले सूत और उनकी पत्नी को विशेष महत्व देता है। उस समय कुन्ती विवश होती है और कर्ण से इस प्रकार कहती है—

जसे तू जाने राधा पर प्रीति प्रकट करना मेरी।
म दुखिनी देवकी सी हू वही यशोदा मा तेरी।[4]

३—मातृ हृदय

माता का हृदय बडा भावुक होता है। बच्चे का थोडा सा भी कष्ट या असुविधा उसके मर्म को छू लेती है। मथिलीशरण ने माता के कोमल हृदय का वर्णन बहुत से स्थलो पर किया है। निताई की माता अपने पुत्र के सन्यास लेने की बात जान कर विलाप करने लगती है और उसे बाहो मे भर कर मूर्छित हो जाती

१ विष्णुप्रिया, पृ० ५०
२ 'वक सहार, पृ० २६
३ साकेत पृ० ३३०
४ जयभारत पृ० ३३४

है।[1] 'अजित' मे कारागृह मे आई हुई वात्सल्यमयी माता अपने बच्चा के पते का जान लेने के लिये आतुर और व्यग्र होती है तथा सारा दोष स्वत स्वीकार करती है।[2] कौशल्या पुत्र प्रेमवश दशरथ के पर पकड कर यही मागने की बात कहती हैं कि भरत को आप राज्य दे दें परन्तु मुझे मेरे राम की भीख दीजिये।[3] इसी तरह बच्चे को बडे से बडा देखना,[4] बच्चे को बिना खिलाये भूख का न लगना,[5] उसका शीघ्र विवाह देखना तथा पुत्र के विषय म धूप ताप और खाने पीने की सुविधा की चिन्ता करना[6] आदि मातृ हृदय की स्वाभाविक अनुभूतिया का कवि न अपन काव्य म वणन किया है। द्वापर मे माता के हृदय की उस समय विशेष अभिव्यक्ति हुई है जब कि द्विज स्त्रियों ने ग्वालो के खाने की सामग्री प्रदान की थी उस समय कवि ने कहा है–

"मा की जाति किसी बच्चे को
भूखा देख सकी कहां ?[7]

इसी प्रकार उद्धव ने यशोदा से भी कृष्ण के विषय म बात कही है। उस समय भी माता के हृदय की अच्छी अभिव्यक्ति हुई है—

'अब शिशु नहीं सयाना है वह पर तू यह जाने क्या ?
आया है वह तेरी माखन मिसरी ही खाने क्या ?[8]

४—पितृ मनोभाव

माता की भाँति पिता के मनोभावो का भी वणन कवि ने यत्र-तत्र किया है। पुत्र के विवाह आदि की माता को तो अभिलाषा रहती है परन्तु पिता को यदि वह दीन हो तो चिन्ता बन जाती है कि कसे और कहां पुत्र का विवाह हो ?[9] 'काबा और कबला' मे कवि न अब्दुल्ला के प्रति उसके पिता के मनोभावो की अभिव्यक्ति की है। जब वे प्यास मर रहे थे तो वह अब्दुल्ला को जान नही देता और भुजाओ से पकड कर छाती से लगा लेता है[10] हुसन अपन पुत्र को पानी पिलान के बदले म अपना मास तक भी देना चाहता है कि इस बिचारे बालक को तो पानी पिला दो।[11]

१ विष्णुप्रिया पृ० ३८ ३९
२ अजित, पृ० १५
३ साकेत पृ० १००
४ पृथिवी पुत्र पृ० ६४
५ अनघ पृ० ५५
६ अनघ पृ० ८५
७ द्वापर पृ० ६०
८ द्वापर, पृ० १५०
९ किसान' पृ० ३१
१० 'काबा और कबला पृ० ८०
११ काबा और कबला पृ० १०२

कभी कभी माता के अभाव में पिता ही अपने प्यार के साथ साथ माता के प्यार की भी पूर्ति करता है। 'शकुन्तला' में दुष्यन्त भरत के प्रति अपत्याभाव के कारण अत्यन्त आकर्षित होते हैं और वह उन लोगों को धन्य मानते हैं जो धूल धूसरित बच्चों को गोद में लेने का आनन्द लेते हैं। भरत को गोद में लेने के सुख को प्राप्त करके उनकी जो अभिव्यक्ति है वह द्रष्टव्य है—

'एक बार इस किसी धन्य कुल धन्य को।
छूकर इतना हृष्ट हुआ मुझ अन्य को।
होता होगा हृष उसे कितना बड़ा।
यह जिसके प्रवस्थ हुआ इतना बड़ा॥'[1]

पिता के मनोभावों की अभिव्यक्ति 'द्वापर' में विशेष रूप से द्रष्टव्य है। उग्रसेन अपनी पत्नी से वार्तालाप करते हुए अत्याचारी और क्रूर कंस के प्रति वत्सलता दिखलाते हैं क्योंकि वह उनका ही पुत्र है। उन्हें उसका बलपूर्वक राज्य अपहरण भी कुछ बुरा नहीं लगता क्योंकि आखिर उस पर उनके पुत्र का ही तो अन्ततोगत्वा अधिकार था। और फिर पुत्र चाहे जैसा भी हो माता पिता तो माता पिता ही होते हैं—

"फिर भी रहें पिता माता हम सुत न रहे सुत चाहे।
वह भूला हम भी भूले तो किसको कौन निबाहे॥"[2]

५—आशंका

पुत्र को तनिक सी भी विषम परिस्थिति में देखकर माता-पिता को अनिष्ट की आशंका होने लगती है। मैथिलीशरण ने माता द्वारा आशंकाएं अभिव्यक्त कराई हैं। 'विष्णुप्रिया' में जब निताई 'कृष्ण' 'कृष्ण' कहकर अचेत हो जाता है तो उसकी माता शची उसके जीवन के विषय में शंकित होकर व्यग्र हो जाती है[3], और जब वह संन्यासी होकर दक्षिण को जाता है तो उनकी माता पुत्र के विषय में नाना भाँति से चिन्तित होने लगती है। कवि ने आशंकित माता की मार्मिक भावाभिव्यक्ति इन शब्दों में की है—

"तीव्र भावावेश की पछाड़ें भला उसकी,
झेलेंगे कहां तक ये हाड़ चाम उसके?
जाने किस झाड़ी में अचेत पड़ जावेगा
भोजन क्या पानी भी मिलेगा न निचाट में.

---

१ शकुन्तला, पृ० ५०
२ 'द्वापर', पृ० ६०
३ 'विष्णुप्रिया, पृ० ४०

घर में न घाट में भ्रमेगा बाट बाट में।
धूल और काटों से शरीर भर जावेगा ?'[1]

इसी प्रकार जब राम वन जाते हैं तो कौशल्या बहुत दुखी होती हैं। राम वस बड़े शक्तिशाली हैं परन्तु उनको यह डर लगता है कि वन में हिंस्र पशु आदि हैं और अनिष्ट की आशंका से व्याकुल होकर कहती हैं—

"जिसे गोद में पाला है।
जो घर का उजियाला है।
बहन सुमित्रे चला वहीं।
जहां हिंस्र पशु पूर्ण महो।"[2]

६—बाल विनोद और क्रीडा

बाल विनोदों का वर्णन भी वात्सल्य का वर्णन करने वाले कवियों,ने विशेषतः किया है। प्रस्तुत कवि ने भी बाल विनोद और क्रीडा का वर्णन किया है। 'गुरुकुल' में सात वर्ष के गुरु हरिकृष्ण के दोनों हाथ पकड़ कर जब जयपुर राज ने कहा कि बच्चे अगर तुम्हारे एक थप्पड़ लगा दूं तो ? तब बालक ने अत्यन्त चातुर्य से भरा हुआ उत्तर दिया कि फिर तो मेरा पकड़ा हुआ हाथ आपसे छूट जायगा। कवि ने उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार की है—

"दोनों हाथों से वह उनके
घर दोनों कोमल कर घेर।
'बच्चे अगर एक थप्पड़ में
जड़ दूं तो ?' बोला हंस हेर।
तब तो पकड़ा हुआ हाथ से,
छूट जायेगा मेरा हाथ।
उत्तर दिया वहीं बच्चे ने,
हंस ग्रीवा भंगी के साथ।[3]

मनप में सुरभि अपने भोलेपन के साथ मालिन से जो प्रश्नोत्तर करती है उनमें भी बालक का क्रीडा रत होकर स्वच्छन्द रूप से निश्छल उत्तर,देना पाया जाता है—जब मालिन सास की बात कहती है तो सुरभि कहती है— मैं ब्याह करूंगी तब न सास आवेगी।[4] ऐसे ही यशोधरा' में जब यशोधरा राहुल से डीठ और टोना की

---

१ विष्णुप्रिया, पृ० ६६
२ साकेत, पृ० १०८
३ गुरुकुल, पृ० ६० ६१
४ मनप पृ० ३८ ३६

बात कहती है तो राहुल यशोधरा की वियोगमय दशा देखकर कहता है कि माता दीठ तो तुम्हे लग गई है[1]—

७—बाल हठ और प्रश्नोत्तर

मथिलीशरण गुप्त ने बच्चे की हठ का और आश्रय आलम्बन के प्रश्नोत्तरो का बडा सुन्दर चित्रण किया है अतिशयोक्ति न होगी यह कहने मे कोई अत्युक्ति नही है कि वात्सल्य वर्णन मे प्रश्नोत्तरो का सफल प्रयोग कवि का वैशिष्ट्य और निजी विशेषता है। हठ करती हुई सुरभि का बार बार दुहरा कर जिद करना बडा स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक है—

"म नहीं टलूगी नहीं टलूगी जा तू,
क बार कहू सिर हाय ! न मेरा खा तू।"[2]

इसी प्रकार यशोधरा मे राहुल हठ करता है यशोधरा उसे कहानी न सुनाने का धमकी देती है—

"नहीं पियूगा नहीं पियूगा पय हो चाहे पानी।
नहीं पियेगा बेटा यदि तू तो सुन चुका कहानी॥"[3]

यशोधरा म चन्द खिलौने के लिये हठ करते हुए यशोधरा और राहुल के प्रश्नोत्तर भी द्रष्टव्य हैं—

'तब कहता था लोभ न दे अब,
चन्द खिलौने की रट क्यों ?
तब कहती थी दूगी बेटा,
मा अब इतनी खटपट क्यो ?"[4]

८—शिशु का जगाना तथा सुलाना

मथिलीशरण गुप्त ने बच्चे को सुलाने और जगाने के समय जो माता मुग्ध होकर गा गा कर उसे सुलाती और जगाती है उसकी अभिव्यक्ति की है। इस प्रकार का वर्णन केवल 'यशोधरा' म ही उन्होने किया है। राहुल को सुलाते समय यशोधरा कहती है—

'सो अपने चचलपन सो,
सो मेरे अचलधन सो।"[5]

---

१ 'यशोधरा' पृ० ७०
२ अनघ पृ० ३८
३ यशोधरा, पृ० ५२
४ यशोधरा पृ० ५१
५ यशोधरा, पृ० ६१

इसी भाँति राहुल को जगाते समय यशोधरा इस प्रकार कहती है—

घुसा तिमिर अलकों मे भाग,
जाग दुखिनी के सुख जाग।[1]

६—उद्दीपन

मथिलीशरण गुप्त ने आलम्बन के मुख से यत्र तत्र ऐसी बातें कहलवाई हैं जिनसे वात्सल्य का उद्दीपन होता है। कृष्ण के कालीदह म कूदने पर जब यशोदा ने डाट कर कृष्ण स पूछा कि कालीदह मे क्यो कूदा तो वे हँस कर कहते हैं कि तुमने ही तो कहा था कि अब चुराना माखन ? सबने छीको पर बतनो म भिड रख छोडी हैं। व पहले ही उड पडी और मैं भागकर मुश्किल से बचा हूँ। इस बनावटी झूठ से हँसी आती है और वात्सल्य उद्दीप्त होता है[2]—

सिद्धराज म काचनदे जब अपनी दादी को औषधि देती है और वह मना करती है तो काचनद हँसकर कहती है कि पीओ बडी मीठी है। जसे बच्चो से बडे कहत हैं वैसे बच्चे को बडो स कहत देखकर हास्य के साथ वात्सल्य भी वृद्धि पाता है।[3] यशोधरा म राहुल माता से कहता है कि यदि मैं पक्षी की भाति उड सकता तो पिता जी को ढूढ कर उनके पास चला जाता। तो वे चौंक कर मुझस पूछत कि तू कौन है ? तो मैं अपना नाम बता देता और उन्हे सीधा रास्ता बतला कर यहाँ ले आता। कवि की उस भाव को व्यक्त करने वाली निम्नोद्धत पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

'कहता म तात उठो घर चलो अवतो,
चौंककर अम्ब मुझे देखते वे तब तो।
कहते तू कौन है ? तो नाम बतलाता म
और सीधा माग दिखा शीघ्र उन्हें लाता म।'[4]

१०—सयोग-सुख और रूप वणन

वात्सल्य के सयोग सुख का वर्णन करने में आलोच्य कवि न बच्चे के व्यक्तिगत स्वभाव-वशिष्ट्य और रूप-वणन को प्रमुखता दी है। द्वापर' म यशोदा कहती है कि मैं कृष्ण को हाथो पर हिला हिलाकर सुलाती रही हू और खाना खिलाकर मुझे जीवित रहने का वास्तविक फल मिलता रहा है। वह नटखट इतनी करता है कि जब तक मरी मार नही खा लेता तब तक उसका पेट नही भरता। उसकी बातो को सुन कर हम दोनो पति-पत्नी हस पडते हैं। कभी यशोदा नन्द स कृष्ण का गोचन का आग्रह करती है कि यह रोज उलाहने लाता है। तो कभी उसकी भोली आकृति,

---

१ यशोधरा पृ० ६३
२ द्वापर, पृ० १४
३ सिद्धराज पृ० ८३
४ यशोधरा पृ० ५६

दृष्टि और बुद्धि आदि को देखकर अपने भाग्य को सराहती है—

"मेरे श्याम सलौने की है मधु से मीठी बोली,
कुटिल अलक वाले की आकृति है क्या भोली भोली।
मृग से हैं दृग किन्तु अनी सी तीक्ष्ण दृष्टि अनमोली,
बड़ी कौन सी बात न उसने सूक्ष्म बुद्धि पर तोली।
जन्म जन्म का किया बल है सग सग वह लाया।
तेरा दिया राम सब पाव जैसा मैंने पाया।"[1]

बच्चे को देखकर माता वात्सल्य विभोर होकर डिठौना लगाना चाहती है।[2] कभी बच्चे के दाँतों को देखने की अभिलाषा करके उन पर मोतियों को न्यौछावर करती है। इस समय यशोधरा की अभिव्यक्ति वात्सल्य रस से ओत प्रोत है—

किलक और म नेक निहारू।
इन दाँतों पर मोती वारू।
पानी भर आया फूलों के मुह मे आज सवेरे,
हा गोपा का दूध जमा है राहुल! मुख मे तेरे।
लटपट चरण चाल अटपट-सी मन भाई है मेरे,
तू मेरी अगुली धर अथवा म तेरा कर धारू,
इन दाँतों पर मोती वारू ?[3]

रूप चित्रण कवि ने भरत का बहुत अच्छा किया है। उसके रूप को देखकर दुष्यन्त वात्सल्य विभोर हो जाता है, कवि ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

"खिला हुआ मुख कज मजु दसनावली,
अरुण अधर कल कण्ठ तोतली काकली।
कोमल केश कलाप धन्य विधि चातुरी
मुग्ध हुए नृप देख बाल छवि माधुरी।"[4]

११—वियोग वात्सल्याभिव्यक्ति

सयोग-वात्सल्य की भाँति कवि ने वियोग वात्सल्य का भी वर्णन किया है। 'मगलघट' म ठकुरानी का पुत्र जब राजा के यहा जाता है तो वह वियोग से व्यथित होकर हाय हाय करती है और उसका गला भर आता है।[5]

---

१ द्वापर, पृ० १२
२ पृथिवी पुत्र, पृ० ५४
३ यशोधरा, पृ० ८६
४ शकुन्तला, पृ० ४८
५ मगलघट पृ० १५६

कुणाल गीत म कुणाल के विदा होने पर भी ऐसी ही व्यथित स्थिति का वर्णन है।[1] प्रदक्षिणा म जब यज्ञरक्षार्थ विश्वामित्र राम को मागते हैं तो दशरथ पुत्र का अलग नही करना चाहते हैं।[2] पुत्र विरह से व्यथित दशरथ की दशा तो चरमावस्था पर पहुँच गई है। जिस समय कैकेयी के वर मागने की बात दशरथ सुनते हैं तो उन पर वज्र सा टूट पडता है और उनका शरीर सा टूटने लगता है।[3] वे बार बार राम का नाम लेकर गदगद होने लगते हैं।[4] जब राम दशरथ के पास आते हैं उस समय वे यही रट लगाए हुए थे—'हा राम ! हा सुत ! हा गुणाकर!'[5] हे विधाता शब्द का उच्चारण करके कुछ न कह सके। इस मूक स्थिति ने उनके अन्तरमन के सारे कष्ट का परिचय दिया।[6] राम के चले जाने पर सचिव लौटकर आते हैं तो वे पूछते हैं कि तुमने राम को कहाँ छोड दिया, मुझे भी वही छोड आओ और कैसे ही रामचन्द्र का मुख दिखला दो।[7] वियोग की अन्तिम अवस्था को प्राप्त करके दशरथ विलाप ही करते रहते हैं। कवि ने उनके अन्तिम शब्दों का इस प्रकार कथन किया है—

हे जीव चलो अब दिन बीते।
हा राम राम लक्ष्मण सीते।[8]

वियोग वात्सल्य का वर्णन द्वापर म भी हुआ है। देवकी कृष्ण का स्मरण करके वात्सल्यमय शब्दों मे पुकारती है कि मेरे राजकुँवर कन्हैया तू कहा है ? बोल तो सही तेरी दुखी माता यहा है। अपनी मुरली और गोदोहन मुझे भी तो सिखला दे।[9] द्वापर मे नन्द की वियोगानुभूति अत्यन्त मार्मिक है वे कृष्ण के बिना चाहते हैं कि अकेले बैठकर रोते रह। अपने दुख को देखकर कहते हैं कि परमेश्वर ऐसा दुख किसी को न दे। उन्हें यह सकोच होता है कि मैं अपना मुख किसी को कैसे दिखलाऊ कि गया था मथुरा किसी और काय से पर सब खेल बिगड गया। वे कृष्ण के बिना गोकुल की सूनी स्थिति की कल्पना करके कहते हैं कि गायें भहराती डोलेंगी अपने बछडे को भी न लगायेंगी। कोई युवा पुरुष उत्साह से युक्त नही रहेगा। इस

१ कुणाल गीत पृ० १६
२ प्रदक्षिणा पृ० १०
३ साकेत पृ० ६४
४ साकेत, पृ० ६७
५ साकेत पृ० ७०
६ साकेत, पृ० ७४
७ साकेत पृ० १७५
८ साकेत पृ० १७८
९ द्वापर-देवकी पृ० ८७

आँगन मे अब कृष्ण के साथ खेलन वाले बालक भी नही आयेंगे। अब यहाँ के सूनपन मे केवल कौए हा दिखलाई देंगे।[1] इसी प्रकार वर्णन करत हुए उनका निम्नोद्धृत कथन अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है और वियोग की मार्मिक अनुभूति कराता है—

'हाय उलहना लाकर हमसे अब कोई न लड़ेगा,
मिसरी तो चींटियां चुगेंगी माखन किन्तु सड़ेगा।
छिपा यशोदा के आचल मे राधा का मुख होगा,
फिर भी हरि को दुःख न हो कुछ यही हमे सुख होगा।"[2]

मथिलीशरण गुप्त न पुत्री के वियोग का भी सक्षप म वर्णन किया है। जब शकुन्तला अपने पति के घर जाती है तो शान्त हृदय कण्व ऋषि भी वियोग से अभिभूत होन है। पुत्री क साहचय की सारी वस्तुए कण्व को नीरस सी लगने लगती है और व एक गहस्थी की भांति पुत्री विरह से कातर हो जाते हैं। उनके निम्नलिखित शब्दों मे पुत्री वियोग की अभिव्यक्ति हुई है—

सुते ! तब स्मति चिन्ह तपोवन मे बहुतेरे,
देते थे जो, महामोद मानस मे मेरे।
उदासीनता बढा रहे हैं आज सभी ये,
कुछ के कुछ हो गये दृश्य सब अभी अभी ये।"

१२—वात्सल्य का अन्य रसों के साथ मिश्रण

अन्त म मथिलीशरण गुप्त जी के वात्सल्य वर्णन म एक और विशेषता पायी जाती है। वह यह है कि इन्होने वात्सल्य के साथ अन्य भावो का मिश्रण बडी सफलता से किया है। यशोधरा म वात्सल्य स परिपुष्ट वियोग शृंगार का वर्णन है वहा कही कही पर वात्सल्य और शृंगार एक साथ मिश्रित अभिव्यक्त पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिये—

"यह छोटा सा छौना।
कितना उज्ज्वल कसा कोमल क्या ही मधुर सलौना॥
क्यों न हसू गाऊ रोऊ म, लगा मुझे यह टौना।
आय पुत्र आओ सचमुच म दूगी चन्द खिलौना॥'[4]

इसी प्रकार नीचे की पंक्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं—

'आ मरे अवलम्ब बता क्यो अम्म अम्म कहता है।
पिता पिता कह बेटा जिनसे घर सूना रहता है।[5]

---

१ द्वापर—नन्द पृ० १२७
२ द्वापर—नन्द, पृ० १२८
३ शकुन्तला पृ० २६
४ यशोधरा पृ० ४७
५ यशोधरा, पृ० ४८

उपयु क्त उदाहरणो म राहुल के साथ वार्तालाप और वात्सल्य प्रदर्शित करते हुए यशोधरा को गौतम की स्मृति भी आती रहती है। यहाँ पर वात्सल्य और शृ गार का मिश्रण है। परन्तु यह बात द्रष्टव्य है कि ये मिश्रण भाव-दशा का ही है। वह रस दशा को नही पहुच सका है।

वात्सल्य और हास्य का मिश्रण भी कवि ने किया है। उदाहरण क लिए नीचे की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

"मां कह एक कहानी।
बेटा समझ लिया क्या तूने मुझको अपनी नानी।
कहती है मुझसे ये चेटी तू मेरी नानी की बेटी।
कह मा कह लेटी ही लेटी राजा था या रानी।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मथिलीशरण गुप्त ने वात्सल्य का वर्णन अनेक रचनाओ मे किया है। इससे आश्रय और आलम्बना की सख्या और विविधता बढ गई है। पौराणिक ऐतिहासिक साधारण और सामान्य सभी प्रकार के आलम्बनो का वात्सल्याभिव्यक्ति का विषय बनाया है। हिन्दुओ के अतिरिक्त मुसलमानो और सिक्खो का भी इसम समाविष्ट किया है। पिता के हृदय की अभिव्यक्ति मे इन्होंने व्यापकता और विशालता दिखलाई है। उग्रसेन क्रूर और अत्याचारी कस के प्रति भी वात्सल्य प्रदर्शित करता है क्योकि वह उसका आत्मज है। आलम्बन चित्रण करते समय कवि ने बाल स्वभाव और क्रीडा का अधिक वर्णन किया है। बाल वर्णन मे हास्य रस का विशेष रूप से पुट मिलता है। सयोग और वियोग दोनो प्रकार के वात्सल्य की अभिव्यक्ति अनेक स्थलो पर हुई है। कवि के विषयालम्बनो म पुत्र ही अधिक है। पुत्रिया अपेक्षाकृत कम है और उनके प्रति जो वात्सल्य अभिव्यक्त किया गया है उसमे उतना विस्तार नही है। इनकी अभिव्यक्ति म राष्ट्रीयता और सामाजिकता का भी प्रभाव है। इसक अतिरिक्त इनके वात्सल्य वर्णन मे एक और विशेष बात है जिसका प्राय अन्य कवियो द्वारा बहुत कम चित्रण किया गया है। वह है आश्रय और आलम्बन के सम्वाद। कवि ने अनेक स्थलो पर बड रोचक सम्वाद दिये है और उसम उन्ह बडी सफलता मिली है। वात्सल्य क विषय म कवि ने शास्त्रीय बातो का भी उल्लेख किया है और पुत्र के अभाव पर मार्मिक सकेत किये हैं। बहुत से स्थलो पर वात्सल्य का उपमान रूप म भी प्रयोग किया है। अन्त म यह भी उल्लेखनीय है कि कवि के बहुत स स्थलो पर वात्सल्य भाव मात्र ही वर्णित है वह रस दशा को नही पहुच पाया है।

डा० गोपालशरण सिंह

डा० गोपाल शरण सिंह न वात्सल्य रस क फुटकल छन्द लिखे है। इनके द्वारा इन्होंने वात्सल्य के उद्दीपन की अच्छी अभिव्यक्ति की है। बच्चे क स्वाभाविक

१ यशोधरा पृ० ५९

क्रिया-कलापों का और उसको देखकर उठने वाले भावों का कवि ने विशेषतः वर्णन किया है।

बच्चों के कोमल हृदय पर बड़ों की बातों का तात्कालिक प्रभाव पड़ता है। वे जैसा सुनते हैं वैसा ही करने का भी प्रयत्न करते हैं और फिर दूसरे बच्चों की बातों को सुनकर तो बच्चे और भी अधिक चाव और सावधानी से वैसा कार्य करना पसन्द करते हैं। कवि ने ऐसे ही भावों से युक्त बच्चे का चित्रण अपने काव्य में किया है। बच्चे ने कृष्ण के गाय चराने, नाचने-गाने, दूध दधि चुराकर खाने और मुरली बजाने आदि के वृत्तान्त को सुनकर इच्छा प्रकट की है कि कितना अच्छा होता कि वह भी ब्रज के अहीर का बालक होता। फिर तो वह भी गाय चराता, मुरली बजाता, दूध और पकवान खाता और कृष्ण के साथ यमुना के किनारे नाचता गाता।[1] फिर स्वतः वैसा ही बनने की भी अपनी माँ से अभिलाषा की है। उसका वर्णन भी कवि ने इस प्रकार किया है—

उठके सबेरे नित्य जाऊंगा चराने गाय,
शाम को उन्हीं के साथ धाम लौट आऊंगा।
नाचूं और गाऊंगा सदय बालकों के संग
दूध दधि माखन चुराके खूब खाऊंगा।
पहन वसन पीले वनमाल और पंख
घूम घूम चारों ओर मुरली बजाऊंगा।
मैया को कहूंगा दाऊ लेगी तू बलैया मेरी,
फिर मैया न मैया मैं कन्हैया बन जाऊंगा।।[2]

इसी तरह बालक जो तरह तरह की कल्पनायें और उत्साह की बातें करता है उसका भी कवि ने रोचक चित्र खींचा है। कागज के वायुयान को उड़ाकर आकाश की सैर और वहाँ से चन्द्र खिलौना और तारे को तोड़कर लाना शिशु की दुनिया में ही सम्भव है उसका वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

सुन्दर सजीला चटकीला वायुयान एक,
मैया हरे कागज का आज मैं बनाऊंगा।
उस पर चढ़ के करूंगा नभ की मैं सैर
बादल के साथ साथ उसको उड़ाऊंगा।
मन्द मन्द चाल से चलाऊंगा उसे मैं वहाँ
चहक चहक चिड़ियों के संग गाऊंगा।

१ 'माधवी', पृ० १२
२ आधुनिक कवि गोपालशरण सिंह, पृ० ५

चन्द्र का खिलौना मन छौना यह छीन लूंगा,
भैया को गगन को तरैया तोड़ लाऊंगा।''

बालक यह भी भली भाँति जानता है कि मैं बड़ा होऊंगा। कवि ने बालक के बड़े होने के साथ-साथ और भी तरह तरह की कल्पनाओं का वर्णन कराया है। बालक कहता है—

'लेगी निज गोद में तू करके मुझे मैया तब,
भैया के समान जब मैं भी बड़ जाऊंगा।
फिर यदि कोई मुझे बालक कहेगा कभी
तो मैं उसे खूब फटकार बतलाऊंगा॥'[2]

इसके अतिरिक्त कवि ने आलम्बन को लक्ष्य करके स्वतः भी वात्सल्य प्रदर्शित किया है। शिशु को देखकर कवि विचार मग्न है? वह कौन है? और कैसा लगता है? आदि बातों को कवि ने स्पष्ट किया है और उनके वर्णन करने में कवि के हृदय का वात्सल्य उमड़कर आया है। नीचे के कवित्त में उन्होंने शिशु के विषय में नाना प्रकार की सम्भावनाएं की है। वह कहाँ से आया? किसने बनाया वह क्या है? और क्या है?

'प्यारा प्रेम सागर की लाई शिशु को है यहाँ
विधि ने बनाया क्या खिलौना एक प्यारा है।
प्यारा सब जग से है उसका अनूप रूप,
विकसित कंज के समान अति प्यारा है।
प्यारा वह मंजुता की मूर्ति सा किसे है नहीं,
व्योम से गिरा हुआ क्या कोई लघु तारा है।
तारा लोक लोचन का सबका दुलारा मानो,
माता के सनेह ने सगुण रूप धारा है?[3]

बच्चे के रूप को देखकर कवि कहता है कि उसके प्रत्येक अंग की शोभा नई नई है। उसकी शोभा नित्य बदलती है। कोई भी यह नहीं जान सकता कि वह कौन सी उमंग मे भरकर उछला करता है। आरम्भ में शिशु को किसी से जान पहचान नहीं होती। उसे तो बस माता के दूध से ही काम होता है या वह सोता रहता है। शिशु की मुसकान बड़ी अच्छी लगती है। उसके छोटे छोटे कोमल शरीर में ही सारी शक्तियाँ छिपी हुई हैं। उसका छोटा शरीर बड़ा अच्छा लगता है वह एक अनमोल धन है अतः उसे धन से कोई काम नहीं। शिशु देश देश और ग्राम ग्राम में सदन

१ आधुनिक कवि पृ० ५
२ आधुनिक कवि पृ० १२
३ 'माधवी' पृ० ३२

अपना प्रभाव रमता है। वस्तुत वह शिशु के रूप म ईश्वर ही है। शिशु म चाह शक्ति नहीं है पर उसने सबको वश म किया हुआ है।[1] शिशु के प्रभाव को निम्न लिखित पक्तिया म कवि न भली भाँति व्यक्त किया है—

'अनायास उसने चुराया चित्त जग का है,
प्रेम वश लाल और हीरा कहलाया है।
माता के उदर से निकल कर आया पर,
उर मे उसी के स्नेह रूप मे समाया है ?'[2]

इस प्रकार डा० गोपाल शरण सिंह ने वात्सल्य का फुटकल छदा म वणन किया है। इनके वणन म वात्सल्य के उद्दीपन और आलम्बन के स्वरूप और चेष्टा आदि का कथन ही मुख्य रूप से हैं। सयोग सुख और उससे आनदित होने वाले वणन ही कवि को प्रिय हैं। कवि शिशु का वणन करते करते जिज्ञासावश कभी यह प्रश्न कर उठता है कि यह ऐसा अद्भुत रूप वाला शिशु कौन है ? इसके अधिकाश छन्द काव्यत्व पूण है और पाठक को वात्सल्य की अच्छी अनुभूति कराते हैं। प्रबध काव्य म वात्सल्य वर्णित न होने से उसके विविध रूपा पर प्रकाश नहीं डाला गया है। एक स्थल पर भोली नादान बालिका का भी वणन कवि ने किया है, परन्तु वह बहुत साधारण है।[3]

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की काव्य-कृतियो मे 'ऊर्म्मिला' प्रबध काव्य सव-श्रेष्ठ है। ऊर्म्मिला म सीता और उर्मिला के प्रति उनकी माता सुनयना के वात्सल्य की अभिव्यक्ति है। इस ग्रन्थ में अभिव्यक्त वात्सल्य के अन्य आश्रय और आलम्बन भी हैं। उनमे विशेषता इस बात की है कि जहाँ सुमित्रा का राम और लक्ष्मण के प्रति वात्सल्य वर्णित है वहाँ सुमित्रा का अपनी पुत्र वधुओ सीता और उर्मिला के प्रति और सीता का अपने देवर लक्ष्मण के प्रति भी वात्सल्य वणन किया गया है। वात्सल्य की व्यापकता के आधार पर इस प्रकार की वात्सल्याभिव्यक्ति सवथा समी चीन है। सीता और उर्मिला के वात्सल्य का वणन कवि ने उनकी बाल छवि से प्रारम्भ किया है। उन्होंने पजनी पहनकर किलकारी मारते हुए आगन की शोभा बढाने वाली सुकुमार बालिकाओ की छवि का वणन करते हुए लिखा है—

"रुनझुन रुनझुन नहीं पजनिया झकारे,
चरण चलन की आगण भर मे फल रही गुजारें।

---

१ माधवी प० ३२-३४
२ माधवी प० ३४
३ सागरिका, प० ८४

किलक विसम मधु स्रोत बहाती हैं विदेह की ललियां,
प्रात पवन में खिलतीं हैं दो छोटी छोटी कलियां ॥''[1]

दोनों बालिकाएं अमृत के कण के समान आनन्द प्रदान करने वाली हैं।[2] कवि स्वयं बड़ी विनोदी प्रकृति के हैं उन्होंने सीता और उर्मिला के बाल विनोद और चांचल्य का वर्णन सुन्दर ढंग से किया है। बच्चों के बाल विनोद की चपलता आनन्द प्रदान करती है। सीता और उर्मिला के पारस्परिक वार्तालाप की स्वाभाविकता निम्नोद्धृत पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

''सीता जीजी तुम्हीं कहो कुछ पहले नई कहानी।
देखो आंख मीच कर बठी हूं मैं बनकर ज्ञानी॥
जसे तात बठते सुनते पूत वेद की गाथा।
वसे ही बठी हूं सुनने मात तुम्हारी बाता।'[3]

सीता और उर्मिला के आपस के मचकोरन हँसन, चुटकी नन मानापूसी करने और होड़ लगाने के नाना विनोदों का वर्णन कवि ने किया है।[4] पारस्परिक विनोद करती हुई वे अपनी माता के पास आती है और उनसे अपनी जिज्ञासा की शान्ति के लिये नाना भांति के प्रश्न करती हैं।[5] अपनी पुत्रियों की जिज्ञासा बाल-क्रीड़ा और कौतुक आदि को देखकर सुनयना अत्यन्त आनन्दित होती हैं। वे पुत्रियों के प्रेम में मग्न होकर अपनी सुध बुध भी खो देती हैं। कवि ने उसका वर्णन करते हुए लिखा है—

''अपनी दोनों ललियों की सुन बातें प्यारी प्यारी।
उस विदेह रानी ने अपनी सुध बुध सभी बिसारी॥
दोनों को दोनों हाथों से खींच लिया गोदी में।
दोनों ने मिलकर जननी का नेह पिया गोदी में।'[1]

कवि ने राम लक्ष्मण को भी वात्सल्य भाव का आलम्बन बताया है। उनके प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य का आश्रय सुमित्रा हैं। कवि ने उनके प्रति संयोग वात्सल्य के वर्णन की अभिव्यक्ति करके वन गमन के समय सुमित्रा के वियोग-व्यथित मानस के उद्गारों का भी वर्णन किया है—

''मा का मन ऐसा है मैं,
कहो क्या करूं ? क्या न करूं ?

---

१ ऊर्म्मिला पृ० २४
२ ऊर्म्मिला पृ० २४
३ ऊर्म्मिला पृ० २८
४ ऊर्म्मिला, पृ० २९ ३२
५ ऊर्म्मिला, पृ० ५४
६ ऊर्म्मिला पृ० ६०

-कैसे हिय को समझाऊँ मैं?
कैसे मन में धैर्य धरूँ ?'[१]

वन-गमन के समय सुमित्रा ने लक्ष्मण के प्रति वियोग प्रदर्शन के स्थान पर उन्हें कर्तव्य परायणता की शिक्षा देकर ही सन्ताप किया है। वस्तुतः इस अवसर को वे अपने दुग्ध पोषित पुत्र की वास्तविक परीक्षा की कसौटी मानती हैं। सुमित्रा के से भाव वीर पुत्र की जननी के सर्वथा उपयुक्त हैं।[२] राम और लक्ष्मण के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य में संयोग और वियोग दोनों का कथन है। वन को जाते हुए उनके साथ सुमित्रा ने उर्मिला और सीता के प्रति भी वात्सल्य भाव प्रदर्शित किया है।

इस काव्य में यह एक नवीन उद्भावना की गई है कि सीता का लक्ष्मण के प्रति भी वात्सल्य भाव दिखाया गया है। उर्मिला से वार्तालाप करते हुए सीता भी लक्ष्मण के विषय में वात्सल्यमयी उक्तियाँ कहती हैं—

'आय पुत्र से नहीं पा सकी
हूँ प्रसाद मातापन का।
पर मातृत्व उमड़ता मेरा,
मुख देखूँ जब लक्ष्मण का।
यह समझो कि लखन हैं मुझको,
अधिक कोख-से जाए से।
प्रियतर हैं वे मुझको अपने,
निज के गोद खिलाये से॥[३]

अयोध्या वापिस लौटते समय सीता और लक्ष्मण के वार्तालाप में लक्ष्मण से सीता पुनः यही भाव प्रदर्शित करती है—

'बलि बलि जाऊँ मेरे लालन,
यह सुनकर मैं धन्य हुई।
तुमको पाकर मम वत्सलता,
वत्स कौ वत्स अनन्य हुई।'[४]

ऊर्म्मिला काव्य के अतिरिक्त दूसरे ग्रन्थों में भी नवीन जी ने वात्सल्य का वर्णन किया है। 'रश्मि रेखा' में सन् १९३२ की एक कविता वात्सल्य भाव पर लिखी गई है। कवि ने पजनी पहनकर नाचते हुए बच्चे का वात्सल्य से परिपूर्ण वर्णन किया है। लल्ला पजनी पहन कर नाच रहा है तो माँ बड़ी आनन्दित होती है, और

१ ऊर्म्मिला, पृ० ३३५
२ ऊर्म्मिला पृ० ३३७
३ ऊर्म्मिला, पृ० २८७
४ ऊर्म्मिला, पृ० ६११

उस दृश्य को दिखाने के लिये अपनी पडोसिन को बुलाती है—

'मेरे लालन की पजनिया,
झुनक रही मेरी आंगनिया।
औचक आकर धीरे धीरे
सुन ले तू मेरी साजनिया।
मा जानू कैसे पाया है यह धन अरी पडोसिन सुन,
रुन झुन, रुनझुन रुनुन झुनुन।'[1]

आलम्बन गत उद्दीपना से विभिन्न अनुभावो स्तम्भित होना और तन का झङ्कृत होना आदि की उत्पत्ति होती है। उठकर गिरना धूलधूसरित होना और हँसना आदि उद्दीपन हैं। कवि की इस प्रकार की पक्तिया नीचे उद्धृत हैं—

पजनिया की रुन खुन से तन मन मे उठती झङ्कृतिया।
ठगी ठगी सी रह जाती हू लख लख चरण अलक्कृतिया॥
लल्ला उठ उठकर गिरता है,
धूल भरा हसता फिरता है।
लालन की इस अस्थिरता मे,
थिरक रही जग की स्थिरता है।
आज विश्व की शाश्वतता मम आगन आई बन तिरगुन।
रुन झुन, रुन झुन रुनुन झुनुन॥'[2]

नवीन जी की काव्य कृतियो मे वात्सल्य के सयोग और वियोग दोनो प्रकार के वर्णन हुए हैं। कवि ने पुत्रियो के भी सयोग सुख का चित्रण किया है यह प्राय अन्य कवियो से भिन्न है। प्राय कवियो ने पुत्रियो के सयोग वर्णन के साथ उसके विवाहित होने के समय वियोग की भी अभिव्यजना की है। नवीन जी ने ऐसा नही किया। इसके अतिरिक्त इन्होने पुत्र वधू और देवर के प्रति भी वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। यह भी इनकी नवीनता ही है। कवि ने शिशु क्रीडा का अपेक्षाकृत अधिक वर्णन किया है। नाच आदि का वर्णन करते समय ध्वन्यात्मक शब्दो का सफल चयन उर्मिला तथा रश्मि रेखा दोनों पुस्तको मे किया है। इन्होने सामान्य शिशु के प्रति मात मनोभावो की अभिव्यक्ति का चित्र सा उपस्थित कर दिया है।

जयशकर प्रसाद

कवि प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति हैं। अपनी अनेक विशेषताओ के साथ वे वात्सल्य वर्णन की कडी को भी जोडने वाले हैं। इनकी तीन काव्य कृतियो मे वात्सल्य का वर्णन हुआ है—कानन कुसुम करुणालय और कामायनी। इनमे

1 रश्मि रेखा पृ० ६७
2 रश्मि रेखा पृ० ६८

से 'कानन कुसुम' में बाल क्रीड़ा[1] और 'करुणालय' में माता पिता की ममता[2] का साधारण कथन है। कामायनी में वात्सल्य का अपेक्षाकृत अधिक वर्णन हुआ है उसमें श्रद्धा का अपने पुत्र मानव के प्रति वात्सल्य अभिव्यक्त हुआ है।

श्रद्धा अपनी भावी संतान के प्रति उसके गर्भस्थ होने की दशा में ही नाना कल्पनाएं करने लगती है। वह उसके लिये पहले से ही कुटी और पालना आदि तयार कर लेती है और नाना अनुभावों की पहले से ही कल्पना करती है—

> "झूले पर उसे झुलाऊंगी,
> दुलरा कर लूंगी वदन चूम।
> मेरी छाती से लिपटा इस,
> घाटी में लेगा सहज घूम।"[3]

वह यह भी सोचती है कि बच्चे के बड़े कोमल चिकने बाल होंगे। वह बड़ी मीठी मुसकान बिखेरा करेगा। उसके मीठे बोलों से मेरा सारा क्लेश दूर हो जाया करेगा। उससे मेरी दुनिया सूनी न रहेगी। इस प्रकार की अनेक अभिलाषाएं करके अपने मानस को वात्सल्य स्नेह से परिपूर्ण कर लेती है।

इसके पश्चात कवि ने शिशु मानव के रूप, चाचल्य और क्रीडा आदि का वर्णन किया है। किलकारी मारते हुए शिशु के रूप और चाचल्य का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है—

> 'मां फिर एक किलक दूरागत गूंज उठी कुटिया सूनी।
> मां उठ दौड़ी भरे हृदय में, लेकर उत्कंठा दूनी॥
> लुटरी खुली अलक रज धूसर बांहें आकर लिपट गई।
> निशा तापसी की जलने को धधक उठी बुझती धूनी॥'[4]

मां पूछने लगती है कि अरे नटखट आज तक तू कहां था? तू दूर भाग जाता है इधर मैं डरती रहती हूं कि कहीं तू रूठ न जाये। इसी से जाने को मना नहीं करती हूं। बालक मां के हृदय की अवस्था पर कोई ध्यान नहीं देता और कहने लगता है कि मां यह बड़ी अच्छी बात है कि मैं रूठूं और तू मुझे मनाये—

> 'मैं रूठूं मां और मना तू कितनी अच्छी बात कही।'[5]

और लो मैं सोए जाता हूं अब बोलूंगा नहीं। मां बच्चे की बात पर प्रसन्न होती है और उसका चुम्बन लेती है।

---

१ कानन कुसुम पृ० ४६
२ करुणालय पृ० ११ १८
३ कामायनी पृ० ११७
४ कामायनी, पृ० १३६
५ कामायनी, पृ० १४०

मानव के और बड़ा हो जाने पर जब वह गाम्भीर्य मग्न सी श्रद्धा के पास जाता है और वहीं पूछने लगता है कि तू इस निर्जन में कहाँ खो गई ? और क्या सोच रही है चल घर चलें। श्रद्धा उसकी भावना पर वात्सल्यमयी होकर उसका मुख चूम लेती है। वह फिर पूछने लगता है—

माँ क्यों तू है इतनी उदास
क्या मैं हूँ तेरे नहीं पास।[1]

बालक द्वारा कहे गये ये शब्द वात्सल्य भाव का उद्रेक करने वाले हैं।

प्रसाद जी ने अपने काव्य में जो वात्सल्य का वर्णन किया है, उसमें माता शिशु के प्रति माता की अभिलाषायें और सयाने गुण के वर्णन अधिक हैं। पिता के वात्सल्य का पक्ष भी चित्रित नहीं किया गया है। प्रसाद दार्शनिक और गम्भीर स्वभाव के व्यक्ति हैं। हर समस्या पर उनकी दार्शनिक दृष्टि रहती है। वात्सल्य पर भी उनकी ऐसी ही दृष्टि है। वे कहते हैं कि समरसता जो अनेक साधनाओं से योगियों को प्राप्त होती है वह बच्चे को सहज ही प्राप्त है। कामायनी में माता शिशु के ऊपर अपने सुख को न्यौछावर कर देती है पर पिता अपने प्रभुत्व में किसी प्रकार की कमी नहीं आने देना चाहता। मानव के आने पर मनु का आचरण इसी प्रकार का चित्रित किया है। कवि ने शिशु समस्या का यह मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इसी तरह मेप नायक पर श्रद्धा अधिक स्नेह प्रदर्शित करती है। अतः इनके काव्य में मातृ हृदय अधिक उन्मुक्त होता है पितृ हृदय उतना नहीं होता।

सुमित्रानन्दन पन्त

पन्त जी ने भी अपने काव्य में वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। इनके वात्सल्य वर्णन में विस्तार अधिक नहीं है फिर भी उसके महत्त्व को नहीं भुला सकते। कवि ने समय समय पर ऐसी फुटकर कविताएं लिखी हैं जिनसे वात्सल्य भाव की अनुभूति होती है। उन्हीं के आधार पर हम कह सकते हैं कि इनके काव्य में वात्सल्य का वर्णन हुआ है और उसकी अपनी निजी विशेषताएं हैं।

कवि के वात्सल्य भाव बच्चे के प्रति लोरी के रूप में अभिव्यक्त हुए हैं। नन्हें मुन्ने को देखकर वात्सल्य का उद्रेक प्रायः गान के रूप में फूट पड़ता है। कभी कभी लोरी द्वारा भी अपनी स्नेहाभिव्यक्ति की जाती है। निम्नलिखित शब्दों में कवि ने लोरी गाने का कथन किया है—

लोरी गाओ लोरी गाओ
फूल दोल में उसे झुलाओ।
निंदिया की प्रिय परियो आओ,
मुन्ना का मुख चूम सुलाओ।

---

१ कामायनी, पृ० १७६

स्वर्णों के छाया पर्तों को,
नन्हे के ऊपर सिमटाओ।[1]

बालक के रूप का वर्णन भी इनके काव्य में मिलता है। रूप-वर्णन करते हुए बाल और कपोल का ही कथन किया गया है। बाल घुंघराले हैं, उनमें धूल भरी हुई है और काले हैं, कपोल लाल हैं और गोरे गोरे हैं—

धूल भरे घुंघराले काले,
भैया को प्रिय मेरे बाल।
माता के चिर चुम्बित मेरे,
गोरे गोरे सस्मित गाल।[2]

शिशु क्रीड़ा का वर्णन भी पन्त जी ने किया है। उसमें उसके स्वभाव सुलभ चापल्य और नाना वस्तुओं के प्रति आकर्षण की व्यंजना की है। शिशु कभी अपने पैर चलाता है और तलली कोरी में करता है, कभी वह भाँति भाँति से मचलता है। इस प्रकार के कुछ भावों की अभिव्यक्ति उनकी निम्नोद्धृत पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

दीप शिखा के लिये वह मचल
नचा रहा निज कोमल करतल।
चू चू करती चिड़ियाँ सुन्दर,
फूल पाँखड़ी उड़ती फरफर।
उन्हें बनाने को निज सहचर,
पास बुलाता वह इंगित कर।[3]

कवि के लिए सामान्य शिशु स्वतः ही स्नेह का पात्र है। ईश्वर ने इसका सृजन करते हुए अपने हाथों से स्पर्श किया है। उसकी सरलता और सौन्दर्य को देख कर वे प्रभावित होते हैं और वह उठते हैं—

देख वत्स का अकलुष आनन।
हृदय रखते कर उठता मतन॥[4]

शिशु के प्रति ऐसी अभिव्यक्ति के साथ साथ पन्त जी उसके प्रति अपनी आन्तरिक जिज्ञासा भी प्रकट करते हैं। शिशु के सौन्दर्य आकार, माधुर्य कोमलता और निष्कपटता आदि को देखकर वे पूछने लगते हैं। ऐसे गुणों से युक्त शिशु सचमुच तुम कौन हो? शिशु के प्रति इस भाँति की जिज्ञासा प्रकट करने का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

१ रश्मिबंध पृ०, ८२ स्वर्ण किरण, पृ० ६६
२ पल्लव, पृ० ८६
३ स्वर्ण किरण, पृ० ६७
४ स्वर्ण किरण, पृ० १२६

कौन तुम गूढ़ गहन अज्ञात
अहे निरुपम नव जात ?[1]

शिशु में जिज्ञासा सरलता और भोलापन होता है। उसके ये भाव वात्सल्य को उद्दीप्त करते हैं। पंत जी ने इस प्रकार का वर्णन भी किया है। प्रभात में स्वामी विवेकानन्द के आने पर दीपावली की गई और स्वागत के गान विछ्वाये गये। उसे देखकर बच्चों की अपनी माँ के प्रति जो जिज्ञासा अभिव्यक्त की गई है उससे शिशु की ममता और सरलता स्पष्ट होती है। शिशु का यह सारल्य वात्सल्य भाव को उद्दीप्त करता है।[2] एक स्थल पर कवि ने मातृ हृदय की अभिव्यक्ति की है और वह अत्यन्त मनोवैज्ञानिक भी है। कृष्णा काले रंग के दुकूल की उत्कट आकांक्षा प्रकट करती है इस पर उसकी माँ अपनी बच्ची से वात्सल्य भरी उक्ति कहती है कि कृष्णा अभी तू बच्ची है बड़ी होने पर मैं तुझे मलमल की साड़ी बनवाऊँगी।[3] शिशु के सुकुमार मानस को व्यथित किए बिना माँ का इस प्रकार बहलाना स्वाभाविक है और मातृ हृदय के सर्वथा अनुकूल है।

पंत जी ने अपने एक गीत में गर्भस्थ शिशु के प्रति भावाभिव्यक्ति की है। जिस शिशु का भविष्य में जन्म होगा वह चाहे बच्चा हो चाहे बच्ची हो अवश्य ही मनमोहक होगा। कवि ने कल्पना की है कि सुन्दर रूप धारण करके यह शिशु सबको प्रसन्न करेगा। उसके क्रन्दन किलकारी सुन्दर मुख और गोद में सुशोभित होने आदि से अवश्य ही आनन्द छा जायेगा। अतः वे सस्नेह उसको सम्बोधित करके कहते हैं—

आओ प्यारे मुन्ना आओ,
भू पर चन्दा से मुसकाओ।
नन्हे आओ ।।[4]

वात्सल्य का वर्णन करने के साथ-साथ पंत जी अपने शैशव की भी मधुर स्मृति करते हैं। उसके स्मरण से वे व्यथित होते हैं। उसका अभाव उन्हें बहुत खटकता है। शैशव की जिन बातों का इन्होंने स्मरण किया है वे इतनी स्वाभाविक हैं कि उनका सम्बन्ध सामान्य शिशु से भी है। अतः उन्हें पढ़कर शिशु सामान्य के स्वभाव का स्मरण हो आता है। माता की धमकी तोतली बोली मुस्कान धूल धूसरित होना और नाना भाँति की बाल क्रीडा आदि इसी प्रकार के भाव हैं। निम्नलिखित पंक्तियों से उपर्युक्त भाव भली भाँति स्पष्ट होता है—

---

१ पल्लव पृ० ६१
२ पल्लविनी पृ० ६
३ पल्लविली, पृ० १०
४ युगपथ, पृ० १५१

उडते पत्ते बनते थे तब उडती चिडिया,
कोने कोने में छिपकर रहती थी परियां।
आस पास के झुरमुट ठूठ सभी थे होवा,
नित्य डाकिया बन जाता आगन का कौवा।
जादूगर का खेल जगत था रहस भावना कल्पित,
पलक मारते ही उगता था पेड़ आम का निश्चित।[1]

पन्त जी ने जो वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है उसमे लोरी, शिशु-सौन्दर्य, शिशु क्रीड़ा और स्वभाव आदि का विशेष रूप से वर्णन हुआ है। कही कही इन्होने एक ही कविता मे जन्म से लेकर क्रम क्रम करके जैसे जैसे शिशु बड़ा होता जाता है उसका वर्णन किया है। इस तरह जन्मोत्सव, आशीर्वाद रोना, मुस्कराना, क्रीडा करना और बाल-स्वभाव आदि बातो का वर्णन आ गया है। परन्तु आलंकारिक व्यायाम के कारण वात्सल्य की सहजाभिव्यंजना कुंठित हो गई है। वैसे इनकी कविता से वात्सल्य भाव का व्यापक स्पन्दन अभिव्यंजित होता है। वात्सल्य भाव को प्रकृति के पदार्थों मे भी प्रदर्शित किया है। कही कही बालक का उपमान रूप मे भी कथन किया है।[2] कवि की वात्सल्याभिव्यक्ति पर सामाजिकता का भी प्रभाव है। सामाजिक दुख दैन्य को देखकर वात्सल्य के स्थान पर वे करुणाभिभूत हो जाते हैं। उनका तात्पर्य यह है कि निर्धन देश के बच्चो को सुख सुविधा प्राप्त नहीं है। ऐसे बच्चो को देखकर करुणा जाग्रत होती है, वात्सल्य नहीं। इनके प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य भावना आदर्श की हो सकती है यथार्थ की नहीं। 'दो बच्चे' शीर्षक कविता मे कवि ने ऐसे ही विचारो की अभिव्यंजना की है।

अनूप शर्मा

अनूप शर्मा के दो प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ हैं—सिद्धार्थ और वर्द्धमान। इन ग्रन्थो मे कवि ने वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। सिद्धार्थ उनकी पहली कृति है और उसी मे वात्सल्य-वर्णन का विस्तार भी है। वर्द्धमान मे वात्सल्य वर्णन के अपेक्षाकृत कम स्थल हैं। इनके काव्य मे अभिव्यक्त वात्सल्य का दोनो ग्रन्थो को पृथक पृथक् करके अध्ययन करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

सिद्धार्थ

'सिद्धार्थ' शीर्षक महाकाव्य मे अनूप शर्मा ने सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध का बचपन का नाम) के प्रति उनके माता पिता का वात्सल्य वर्णित किया है। शुद्धोदन राजा सभी भांति से समृद्ध थे। केवल उनके आंगन मे पुत्र नहीं खेल रहा था। राजा रानी और प्रजा सभी को यह बात खटकती थी। उसके पश्चात एक दिन रानी ने रात्रि मे विचित्र स्वप्न देखे। राजा ने गणिका से स्वप्न के फल के विषय मे पूछा तो उन्होने

१ स्वर्ण किरण, पृ० १०१
२ पल्लव, पृ० २१

बतला दिया कि समस्त संसार के भय को दूर करने वाला पुत्र होगा। अपनी कोख में ऐसे पुत्र का जान कर माया (रानी) अत्यंत प्रसन्न होती है।[1] जब पुत्र उत्पन्न हो जाता है तो राजा को इतनी प्रसन्नता होती है जैसे कि उन्होंने अपनी समस्त इच्छाओं की पूर्ति कर ली और अब कुछ अभीष्ट प्राप्तव्य नहीं रह गया—

'ज्यों भूप ने स्वसुत सजव धत्त जाना,
ऐसे हुए मुदित विग्रह मान भूले।
जैसे तपोनिरत आत्मनिधान योगी
होता प्रसन्न मन अन्तिम सिद्धि पाके।'[2]

राजा अपने पुत्र के भविष्य को जानने के लिये ज्योतिषियों को बुलाता है और जब वह अपने पुत्र के उज्ज्वल भविष्य के विषय में सुनता है तो अत्यन्त प्रसन्न होता है। राजा है इसलिए आमोद प्रमोद और मंगलकारी साज-सज्जा के लिए उत्साहपूर्वक आदेश देता है।[3] प्रजा भी ऐसा आनन्द मनाती है उन्हें ऐसी प्रसन्नता है मानो उनके ही पुत्र हुआ हो। कवि ने समाज की प्रसन्नता का कथन इस प्रकार किया है—

'ऐसा प्रमोद नरनारि समूह में था
ज्यों पुत्र जन्म सबके घर में हुआ हो।'[4]

शिशु सिद्धार्थ की बाल छवि का वर्णन करते हुए कवि ने उनकी गोद में, पालने पर और भूमि पर की शोभा का वर्णन किया है। माँ की गोद में सिद्धार्थ समस्त संसार को मोहित करने वाले से लगते हैं—

भुवन मोहन बाल स्वरूप से,
प्रभु लसे जननी कृत क्रोड़ में।[5]

पृथ्वी पर घुटना चलते हुए बालक बड़े अच्छे लगते हैं। उनके विकासमान जीवन के व्यापार और चेष्टाओं को पहले पहल देखकर बड़ा आनन्द आता है, विशेष कर माता पिता को। सिद्धार्थ की माता ने जब उन्हें भूमि पर घुटनों चलते देखा तो उनका वात्सल्य उमड़ आया—

'सुख तरंग उठी उर सिन्धु में
जननि के अंग निश्चल-से हुए।
ललक दौड़ उठा उर में लगा
द्रुत लगी सुत का मुख चूमने।'[6]

---

१ सिद्धार्थ पृ० १३
२ सिद्धार्थ पृ० २५
३ सिद्धार्थ पृ० २७
४ सिद्धार्थ पृ० ३२
५ सिद्धार्थ पृ० ३३
६ सिद्धार्थ पृ० ३६

बाल छवि वर्णन मे कवि ने शिशु सिद्धार्थ के अंग प्रत्यंगो का और उन पर सुशोभित वस्त्रालंकारो का विभिन्न उपमा और उत्प्रेक्षाओं से पुष्ट वर्णन किया है। एक ओर व पदतल, पद, नख, त्रिवली, नाभि कर, कठ, चिबुक, कर्ण, नेत्र, कपोल, दांत और लटों का वर्णन करते हैं[1] और दूसरी ओर पजनी, भिंगुलिया और वलय आदि अलंकारो का वर्णन करते है।

वात्सल्य की अभिव्यक्ति मे यह देखने योग्य होता है कि संयोग वियोग के साथ आश्रय के मनोगत भाव किस प्रकार के है? 'सिद्धार्थ' म वात्सल्य के मुख्य आश्रय राजा शुद्धोधन और रानी माया देवी है। कवि ने रानी के मनोभावो का ही विशेष चित्रण किया है। राजा तो पुत्र-जन्म के समय उत्सवादि की व्यवस्था करते हैं या नामकरण यज्ञोपवीत व विद्याध्ययन आदि के अवसरो पर ज्योतिषियो को बुलाकर उनका परामर्श लेकर उचित संस्कार कराते हैं। कभी व दूर बठे देखते हैं कि उनका पुत्र किस प्रकार मृगया के लिये जा रहा है?[2] तो कभी राजकुमार का सुख देने की ओर उनका ध्यान जाता है। जब सिद्धार्थ बड़ हो जाते हैं तो वे उनके लिये नये नये घर बनवा कर सुख प्रदान करना चाहते हैं।[3] सारांश यह है कि राजा कर्तव्य पालन करने म अधिक तत्पर हैं। बाल क्रीडा का आनन्द वे नहीं लेते। बाल क्रीडा का वर्णन जहा कवि ने किया है वहा सिद्धार्थ की माता ही अपने नाना मनो भावो को अभिव्यक्त करती पायी जाती हैं। वह कभी पलग पर तो कभी पालने म शिशु को झुलाती है। उसका मुख देखकर प्रसन्नता स गान लगती है। शिशु के उछलने हँसने किलकारी मारने आदि चापल्य से वात्सल्य का उद्दीपन होता है। सिद्धार्थ की शिशु क्रीडा भी इसी प्रकार की है और उस क्रीडा को देखकर माता को अतीव सुख का अनुभव होता है—

'उछलना गिरना फिर गोद मे,
विहँसना, भरना किलकारियां।
सहज चंचल अंग कुमार के,
सुखद थे जननी दृग कंज को।'[4]

सिद्धार्थ की माता अपने पुत्र के विषय म नाना अभिलाषाए करती है।[5] जब वे पुत्र को पहले पहल घुटन चलत देखती है तो उनके आनन्द का ठिकाना नही रहता। वे पुन पुन उसी घुटने चलने के आनन्द को लेना चाहती हैं तो शिशु का दूर बिठा कर फिर ताली बजा कर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करके बुलाती हैं। बच्चा

१ सिद्धार्थ प० ३३ ३८
२ सिद्धार्थ, प० ५५
३ सिद्धार्थ प० ६६
४ सिद्धार्थ, प० ३५
५ सिद्धार्थ, पृ० ३६

भी इसमे आनन्द लेता है। माताओं में ऐसा भाव प्राय देखा में आता है। कवि ने इसका निम्नलिखित रूप म वर्णन किया है—

'फिर बिठा कुछ दूर कुमार को,
ढिग बुला चटका कर तालियां।
कुछ दिखा कर रंग बिरंग का
कर बढ़ा कर को गहन लगीं।
नृपति नंदन का हँसना तथा,
खिसकना भर के किलकारियां।
जननि के ढिग जाकर मोद मे,
उदर प चढना गह कंठ को।'[1]

सिद्धार्थ और भी बाल-स्वभाव को प्रकट करने वाले कार्य करते दिखाये गये है। जैसे अपनी माता का मुख देखकर प्रसन्न होना पर सबके सखियों के मुख को देखकर अनिच्छा से भिझक जाना[2] और कभी कौतुक के साथ माता की कंचुकी खोलकर तुरन्त स्तन पान करने लग जाना शिशु का ऐसा स्वभाव होता है कि उसे जो कुछ हाथ लगता है उसे ही मुंह मे डाल लेता है। यदि कभी छोटी सी कोई चीज वह मुंह मे डाल लेता है तो मा उसे निगल जाने के डर से तुरन्त उंगली डाल कर निकालती है। उंगली इसलिये डालती है कि वैसे छोटा बच्चा कहने मात्र से एस कुछ मुंह मे से नही निकालता है। सिद्धार्थ के इसी प्रकार के स्वभाव का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

'अजिर मे घुटनो चलते हुए
सुमुख मे कुछ वे जब डालते
चकित-खंजन—लोचन अम्बिका
त्वरित अंगुलि डाल निकालती।'[3]

चन्द्रमा को देखकर मचलने की बात सूर के पश्चात बहुत से कवियो ने कही है। अनूपशर्मा ने भी सिद्धार्थ द्वारा इस पर मचलने का कथन किया है। जब सिद्धार्थ चन्द्रमा के लिये मचल जाते हैं तो वात्सल्यमयी मां उन्हें बड़े स्नेह के साथ चुप कराना चाहती है जब चुप नही होते तो एक सखी शीशे म चन्द्र का प्रतिबिम्ब दिखा देती है जिससे[4] वे प्रसन्न हो जाते हैं। इसी प्रकार का एक और स्वाभाविक चित्रण कवि ने किया है। प्राय छोटे बच्चो से चिड़िया आदि छोटे पक्षी डरते नही

---

१ सिद्धार्थ पृ० ३६
२ सिद्धार्थ पृ० ३६
३ सिद्धार्थ पृ० ४०
४ सिद्धार्थ पृ० ४१

हैं। सिद्धार्थ आँगन में खेल रहे हैं। उनके पास कुछ चिड़िया निर्भय होकर आ जाती हैं। वे उन्हें पकड़ने का प्रयत्न करते हैं और यदि पकड़ लेते हैं तो उन्हें ऊपर फेंकते हैं जिससे चिड़िया फड़फड़ाकर उड़ जाती हैं और शिशु से भय न मान कर पुनः उनके पास आती हैं। माता इस दृश्य को देखकर बलिहारी जाती है—

'पकड़ते करके खल दौड़ के,
गगन में उनको फिर फेंकते।
फड़फड़ा कर पक्ष विहग भी,
उड़ उड़ा कर भू पर बैठते।
यह मनोरम दृश्य विलोक के,
मन निछावर मा करती रही।'[1]

सिद्धार्थ महाकाव्य में वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति बहुत कम है फिर भी एकाध स्थल द्रष्टव्य हैं। जिस समय सिद्धार्थ महाभिनिष्क्रमण करते हैं तो उनके पिता शुद्धोधन को अतीव दुःख होता है और वे पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। कवि ने उसका कथन करते हुए लिखा है—

'ज्यों ही जाना अवनिपति ने वत्स तो वज्र टूटा,
भू पै ऐसे वह गिर पड़े शुष्क एरंड जैसे।'[2]

सिद्धार्थ को ढूंढने के लिये वे अनेक सवारों को भेज देते हैं। बहुत समय पश्चात् तक भी जब कोई सूचना लेकर नहीं लौटता तो वे पुनः विरह से व्यथित होकर अधीर हो जाते हैं—

'अनेक बीते दिन मास भी गये,
मिला समाचार कुमार का नहीं।
फिरे न प्रत्युत्तर ले सवार भी,
हुए महाराज अधीर खेद में।'[3]

किसी का कुमार मिल ही नहीं इसलिए और भी अधिक खेद है। कभी भी सूचना प्राप्त न होने से राजा और अधिक दुःखी हुए। यहाँ पर एक बात ध्यान देने की है वह यह कि सिद्धार्थ ने छन्दक के हाथ यह सन्देश भेजा था कि राजा से जाकर कहना कि धर्म रत्नें मैं कुछ समय बाद लौटूंगा।[4] यदि ऐसा न कहते तो फिर राजा का विलाप वियोग वात्सल्य का न होकर करुण रस हो जाता। परन्तु यहाँ ऐसा नहीं है। उनके पुनः आने की अभिलाषा बनी रहती है और वे अपने वचनों के अनुसार आते भी हैं। अतः यह वियोग वात्सल्य की कोटि में ही आयगा।

१ सिद्धार्थ पृ० ८२
२ सिद्धार्थ, पृ० २००
३ सिद्धार्थ, पृ० २७८
४ सिद्धार्थ, पृ० १८८

यशोधरा के पाणिग्रहण के समय उसके पिता की वात्सल्यमयी उक्ति भी द्रष्टव्य है। जब वे कन्या को विदा कर रहे हैं तो दुखी होते हैं कि कहीं इसको कष्ट न हो। अतः वे पुत्री प्रेमवश सिद्धार्थ से उस पर कृपा रखने की प्रार्थना करते हैं—

'मेरा तो बस एक मात्र धन है, कन्या शुभा सुन्दरी।
माता की यह मूर्तिमान करुणा है स्नेह सञ्चारिणी॥
देता हूं अब मैं अभी उभय की माना अवेक्षी तुम्हें,
छाया हो इस के सदैव रखना औत्सुक्य की है सुधी।'"[1]

वर्द्धमान

भगवान महावीर के पांच नाम प्रसिद्ध थे—वीर अतिवीर महावीर, सन्मति और वर्द्धमान। इस काव्य में वर्द्धमान को शीर्षक बनाकर कवि ने काव्य सृष्टि की है। वर्द्धमान महाकाव्य में 'सिद्धार्थ' की भांति विस्तृत वात्सल्य वर्णन नहीं है। फिर भी कुछ स्थल ऐसे हैं जिनसे वात्सल्य भाव की अनुभूति होती है। इस ग्रन्थ में वर्णित वात्सल्य के आश्रय भगवान महावीर की माता त्रिशला और पिता सिद्धार्थ हैं। वात्सल्य के आलम्बन भगवान महावीर (वर्द्धमान) हैं।

जिस समय भगवान महावीर का जन्म होता है तो राजा सिद्धार्थ के यहां बड़ा आनन्दोत्सव होता है। साथ ही सारी प्रजा भी नृप पुत्र का जन्मोत्सव मनाती है।[2] राजा को पुत्र के जन्म पर अपार प्रसन्नता होती है अतः वे जन्मोत्सव के अवसर पर याचकों और सेवकों को पुत्रोत्पत्ति की प्रसन्नता के कारण दान आदि देते हैं।[3] बालक की शोभा अपूर्व थी। कवि ने उसकी शोभा का वर्णन इस प्रकार किया है—

"अपूर्व था बालक गौर रंग का,
कपोल दोनों ऋतुराज पुष्प से।
सदा खिलौने कर में सुवर्ण के
अजस्र सचालित पाद युग्म थे।'[4]

जब पुत्र धीरे धीरे बड़ा होने लगता है तो माता त्रिशला उसकी शोभा देख कर अत्यन्त आनन्दित होने लगती है। प्रेमवश उसके नेत्र सास्र होकर उसे देखते ही रहते हैं।[5] बच्चे की बोली बड़ी मनोहर लगती है। महावीर भी अब कुछ बड़े हो जाते हैं तो वे बड़ी स्पष्ट वाणी बोलते हैं। राजा इसे देखकर अत्यन्त आनन्द और आश्चर्य से उन्हें देखते हैं—

---

१ सिद्धार्थ पृ०, ६०
२ वर्द्धमान ८।५०
३ वर्द्धमान ८।५१
४ वर्द्धमान ८।६७
५ वर्द्धमान ८।८६

"गन शन बालक वद्धमान के,
मुखाब्ज से नि सत भारती हुई।
विशुद्ध वाणी सुन भूमिपाल भी
महान आश्चय समेत खो गये।"[1]

माता जब पुत्र का प्यार करती है तो भाति भांति की बातें कह कर उसे सम्बोधित करती है। त्रिशला भगवान महावीर को दुलार रही है। कवि उन शब्दो को इस प्रकार अभिव्यक्त करता है—

मदीप प्राणा मम भाग्य सम्पदा,
मदीप तू प्रीति, मदीय मुग्धता।
इन्हीं स्वरो मे त्रिशला अहर्निश
कुमार को यों सहसा पुकारती।[2]

कवि ने सयोग-वात्सल्य का वणन प्रचुर मात्रा मे किया है। वियोग के स्थल बहुत कम हैं। सयाग वात्सल्याभियक्ति भी सिद्धाथ महाकाव्य म विस्तार के साथ हुई है। वद्धमान मे अभियक्त वात्सल्य अत्यत सक्षिप्त है और वह भाव की कोटि की ही आनन्दानुभूति कराता है रस कोटि की नही।

इन्होने अपने वात्सल्य के आश्रय आलम्बन एसे चुने हैं जिनका हिन्दी काव्य मे वणन अत्यल्प मात्रा म है। बुद्ध और महावीर के ऊपर कितने लोगो ने काव्य रचना की है ? इनके वर्णन म नवीनता है और रुचि भी बनी रहती है।

कवि ने सिद्धाथ और वद्धमान दोनो काव्या म वात्सल्य भाव का मानवेतर प्रकृति म भी यत्र तत्र चित्रण किया है। एक एक उदाहरण दोनो काव्य-कृतियो से उद्धत किया जाता है—

"बोली सतीय बनिता अति धीरता से,
प्राची हुई दुखित है जननी निशा की।
जाती विलोक पतिधाम स्वकन्यका को,
सो अश्र के सदन अश्रु बहा रही ह।[3]

× × ×

'धरित्रि देखो किस भात भाव से,
सुला रही पल्लव जो गिरे हुये।
वनेचरो को निज अक मे किये
प्रशांति देते वह भाति हैं उन्हें।[4]

---

१ वद्धमान ८।८७
२ वद्धमान ८।६५
३ सिद्धाथ पृ० २१
४ वद्धमान पृ० ४००

यहाँ प्राची को जननी बतलाना और धरित्री का मातृभाव से ओत प्रोत वर्णन करना वात्सल्य का जड़ प्रकृति में विस्तार है। यह व्यापक वात्सल्य मुख्य धारा के वात्सल्य को बड़ी सरस पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

सुभद्रा कुमारी चौहान

सुभद्रा कुमारी चौहान का नाम आधुनिक काल के वात्सल्य वर्णन करने वाले कवियों में उल्लेखनीय है। इन्होंने यद्यपि वात्सल्य का बहुत विस्तार के साथ वर्णन नहीं किया और इनकी कविताएं 'मेरा नया बचपन' 'बालिका का परिचय' और 'उसका रोना' वात्सल्य रस की मिलती हैं परन्तु ये इतनी मार्मिक और प्रभावशाली हैं कि हम बिना प्रशंसा किये नहीं रह सकते। इनका नाम इसलिए और भी उल्लेखनीय है कि स्त्री कवि होने के कारण इनके मातृ हृदय ने वात्सल्य रस की बड़ी मार्मिक अनुभूति की है। वे अपने बचपन की याद कर रही हैं। इतने में उनकी बिटिया आ जाती है। उनका हृदय वात्सल्य से भरपूर हो जाता है। फिर बच्ची की माँ को बुलाना, मिट्टी खाकर आना और अपनी माँ को भी खिलाने का प्रयत्न करना वात्सल्य को और उद्दीप्त करते हैं। इन भावों का वर्णन करते समय वात्सल्य रस की अभिव्यंजना की गई है—

> "मैं बचपन को बुला रही थी बोल उठी बिटिया मेरी।
> नन्दन वन सी फूल उठी यह, छोटी सी कुटिया मेरी॥
> माँ ओ' कहकर बुला रही थी, मिट्टी खाकर आई थी।
> कुछ मुख में कुछ लिये हाथ में मुझे खिलाने आई थी।"[1]

इसके पश्चात् पुत्री की मुख मुद्रा प्रसन्नता आदि को देखकर माँ को बड़ा हर्ष होता है। प्रफुल्लता और हर्षादि संचारी भावों के होने से निम्नलिखित पंक्तियों में वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति है—

> "पुलक रहे थे अंग दृगों में कौतूहल सा झलक रहा,
> मुख पर था आह्लाद लालिमा, विजय गर्व था झलक रहा।
> मैंने पूछा 'यह क्या लाई' बोल उठी वह 'माँ काओ',
> हुआ प्रफुल्लित हृदय खुशी से मैंने कहा 'तुम्हीं खाओ'।"[2]

वे अपनी बालिका का परिचय जिस प्रकार देती हैं उन शब्दों में माता के हृदय की उत्कृष्ट अभिव्यंजना होती है—

> "यह मेरी गोदी की शोभा,
> सुख सुहाग की है लाली।

---

१ मुकुल मेरा नया बचपन पृ०, ५७
२ मुकुल मेरा नया बचपन पृ०, ५७

शाही शान भिखारिन की है,
मनोकामना मतवाली।"[1]

बच्चे के प्रेम म मतवाली हुई मा के लिए बालक ही उसका सवस्व है। वे प्रत्येक क्षण अपने ध्यान को सन्तान की ओर केन्द्रीभूत किये रहती हैं। इसकी अभिव्यक्ति उन्होंने निम्नलिखित रूप से की है—

'मेरा मदिर मेरी मस्जिद,
काबा काशी यह मेरी।
पूजा पाठ ध्यान जप तप है
घट घट वासी यह मेरी।"[2]

इनका हृदय शिशु के विषय म नाना भाति से चिन्तापूर्ण है कि वह क्या है? कसी है? उसका हँसना बोलना चलना फिरना उठना बठना खाना पीना और गाना रोना सभी उनके हृदय पर विशेष प्रभाव जमाते हैं। वे बालिका के रोने मे भी वात्सल्य का ही अनुभव करती हैं—

'ये नन्हें से ओंठ और
यह लम्बी सी सिसकी देखो।
यह छोटा सा गला और,
यह गहरी सी हिचकी देखो।"[3]

बच्चा प्रत्येक बात मे अपनी माता पर ही निभर होता है। यह प्रकृति का नियम है कि मा स्वभाव से ही बच्चे के साथ होती है। बच्चे की क्रियाएं माता का आनन्द ही देने वाली होती ह। माता की आत्मा ही बच्चे म होती ह। इसी से जब बालक रोता है तो मा उस घनिष्ट सम्बन्ध के कारण स्वभावत बेचन हो जाती है। बच्चे के रोने पर माता की स्वाभाविक बचनी का वात्सल्य से परिपूर्ण शब्दों म उन्होंने वणन किया है। उसकी निम्नलिखित पक्तिया द्रष्टव्य है—

'म सुनती हू कोई मेरा,
मुझको कहीं बुलाता है।
जिसकी करुणा पूण चीख से,
मेरा केवल माता है।'[4]

इस प्रकार हम कह सकते ह कि सुभद्रा कुमारी चौहान न वात्सल्यमयी जो पक्तियाँ कही हैं उनम मातृ हृदय की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हुई है। इनकी प्रत्येक पक्ति

१ मुकुल पृ० ५६
२ मुकुल पृ० ६०
३ मुकुल पृ० ६२
४ मुकुल पृ० ६३

म कवयित्री का हृदय ही बोलता हुआ सा लगता है । इसी म वे वात्सल्य स सराबोर बन गई है । हा यह बात अवश्य है कि उन्होने इस विषय म थोडा ही लिखा है । इससे वात्सल्य के विविध अगो पर उनकी दृष्टि नही गई । बच्चे को देखकर जो उदगार निकल पडे, व ही उनक वणन की सीमा हैं । फिर भी उनकी य कविताए वात्सल्य की अच्छी कविताओ म परिगणित की जाती है ।

गुरुभक्तसिंह

गुरुभक्तसिंह क विक्रमादित्य और नूरजहा नामक महाकाव्यो म वात्सल्य का वणन मिलता है । वस्तुत इन पुस्तको म वर्णित वात्सल्य प्रसगवश ही आ गया है । कवि का उसके वणन करने की ओर कोई विशेष झुकाव नही लगता । इसी से उसमे कवि की अनुभूति की वह गहनता और तल्लीनता नहा दिखाई देती जो प्राय वात्सल्य-वणन करन वाले कवियो की कृतियो म मिलती है । विक्रमादित्य म शक-कन्या का पिता अपनी पुत्री की वषगाठ क अवसर पर अपना पुत्री प्रम प्रदर्शित करता है ।[1] पर यह केवल वात्सल्य भाव का कथन मात्र हा है । इस ग्रथ म और स्थल वात्सल्य क नहीं हैं । नूरजहा म वात्सल्य वणन के प्रसग हैं । कवि ने नूरजहां क शिशु जीवन का क्रम से वणन किया है । विकास क्रम का उसम सम्बन्ध है ।

काफिल क साथ आते हुए गयास की पत्नी ने माग मे नूरजहा को जन्म दिया । अत्यन्त सुन्दर कन्या क ऊपर दृष्टि भी नही ठहरती थी । मा न प्रसन्न होकर उस छाती से लगा लिया किन्तु परिस्थितिवश उसने उस त्याग दिया जिसको किसी दयालु सरदार न उठाकर किसा धाय को द दिया । निस्स तान क लिए उस प्रकार की कन्या स बढकर क्या सुख हा सकता था और वह धाय माना निहाल ही हो गई—

भरती अक रक माता ने
शिशु पाकर हो गई निहाल ।'[2]

वह उसका हृदय धन थी और आखो की पुतली क समान प्यारी लगती थी । कवि न नूरजहां क शैशव की ओर सकेत करत हुए लिखा है कि उसका शैशव पहले पालन पर पड पड मा की लोरी सुनत बीता और जब कुछ बडी हुई तो घुटनो के बल घूमकर और मिट्टी खाकर क्रीडा करत हुए समय व्यतीत करन लगी—

'प्यारा शैशव हस हसकर पलने पर सुन सुन लोरी,
घूमा घुटनो ही घुटनो मिट्टी खा चोरी चोरी ।'[3]

जब वह कुछ और बडी हुई तो दूध क दात टूट गय और वह बाल सुलभ क्रीडाय करन लगी—

---

१ नूरजहां पृ० ४५ विक्रमादित्य
२ नूरजहां पृ० १६
३ नूरजहां पृ० १६

'जब दात दूध के टूट चचल बालापन आया,
तब बाल सुलभ क्रीडा ने आनन्द खूब छलकाया।'[1]

गुडियो से खेल खेलना और मिट्टी के घर बना तथा तरह तरह की मिट्टी की मूरतें बनाकर उन्हे कुचल देना उसकी क्रीडा थी। कभी कभी वह मिट्टी और तिनका को प्याले पर रखकर भोजन के रूप म पत्तो पर रख लिया करती थी—

"गुडियो से ब्याह रचाये मिट्टी के बना घरोंदे
गढ गढ मूरतें बहुत सी न है परों स रौंदे।
टूटे प्यालो मे व्यजन रज तण के बना बना कर,
पात्रो मे पत्रो ही के देती सबको ला लाकर।"[2]

बाल सुलभ हठ का भी कवि न वर्णन किया है। किसी भी बात के लिए चिढ करना मनवाछित बात की पूर्ति न होने पर पृथ्वी पर लट जाना और रोना चिल्लाना नूरजहा के हठी स्वभाव के अग हैं—

"वह बात बात मे अडना हठ करके इठला जाना,
फिर लोट लोट पृथ्वी पर रोना गाना चिल्लाना।"[3]

नूरजहा की बाल क्रीडा पर सब मुग्ध होते है। वह तुतलाकर बोलती है तो सब उसका मुह चूम लेते हैं। माँ हर प्रकार का ध्यान रखकर साफ-साफ कपडे पहना देती है परन्तु थोडी ही दृष्टि से ओझल होने पर वह कपडो को भिगा लेती है—

'ये अभी अभी पहनाये कपडे सफेद नहाकर,
मडित कर आभूषण से इक टीका श्याम लगाकर।
माता धधे मे भूली यह दौडी दौडी जाकर
पानी मे छपका खेला गागर को गिरा गिरा कर।"[4]

जब नूरजहाँ कुछ बडी हो गई है तो वह घर के बाहर निकल जाती है और माता स्नेहवश उसे ढूढने को घबराती है। नूरजहा कभी पेडो पर झूलती कभी बत्तख के बच्चो का पकडने के लिए व्यर्थ ही पानी म घुसती है। कभी कभी अपनी सहेलियो के साथ तरह तरह के खेल खेलती है।

कवि ने नूरजहा की कथा कहते हुए उसके शैशव के प्रसग म कुछ छन्द वात्सल्य के भी जोड दिये हैं। आगे चलकर नूरजहाँ का अपनी पुत्री के प्रति भी थोडा सा वात्सल्य भाव प्रदर्शित किया है। नूरजहा की पुत्री भोली बातो पर मुस्करा देती

१ नूरजहाँ पृ० २०
२ नूरजहाँ पृ० २०
३ नूरजहाँ पृ० २०
४ नूरजहाँ पृ० २०

है। पर नूरजहाँ के उस समय के शाक सन्तप्त मानस को वात्सल्य की तरग उद्वेलित नही कर सकी। फिर भी हम देखत हैं कि गुरुभक्त सिंह न वात्सल्य का जो वणन किया है वह अच्छा है। अगर इस आर कवि की प्रवृत्ति होती है तो निश्चय ही उनके वणन म स्वाभाविकता आर गहनता होती है। नूरजहाँ की बाल क्रीडा के जो छन्द इन्होने लिखे हैं वे निस्सन्देह मार्मिक ■।

उदयशकर भट्ट

उदयशकर भट्ट के तक्षशिला नामक महाकाव्य मे वात्सल्य का वणन मिलता है। इस ग्रन्थ मे अशोक क पुत्र कुणाल के प्रति उसके माता पिता का वात्सल्य अभिव्यक्त किया गया है। कवि की दृष्टि कुणाल के बाल रूप की अभिव्यजना करने की ओर न हान से कुणाल के शशव का वणन नहा मिलता। उसके किशार रूप का चित्रण करत हुए प्रसगवश वात्सल्य की अभिव्यक्ति हो गई है।

चाणक्य की सम्मति से अशोक अपने पुत्र कुणाल को उत्तरापथ का राज्य-शासन भार समर्पित करके तक्षशिला जान का आदश देता है। प्रवस्यत्पुत्र को देख कर माता प्रम से गद्गद हो जाती है। वह प्रसन्न होकर पुत्र के मुख को चूमती है और ललाट को सूघती है वह वार्तालाप भी करती जाती है साथ साथ पुत्र प्रेमवश कभी कुणाल के बालो को सम्भालने लगती है। कवि ने कुणाल की माता पदमा के पुत्र प्रेम के भाव को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है—

"सादर सस्मित वदन,
दौड चूमा माता ने
सूघा धवल ललाट,
पुत्र का निमलता ने
कुचित मचक केश,
फेर कर हाथ सम्भाले।
देकर सत उपदेश,
नीति के साधन वाले।"[1]

परदेश जाने क समय माता का पुत्र के विषय म बडी चिन्ता होती है। उसके लिए पुत्र सदव भोला और असमथ ही बना रहता है। वह नाना भाति से समझाकर नाना बातो का ध्यान रखने क लिए सकेत दिए बिना नही रहती। एक राजकुमार को दृष्टिगत रखन वाली सावधानिया की ओर वह कुणाल को सकेत करती है। एक वीर माता की भाति अपने पुत्र के प्रति उत्साहवद्धक उक्ति कहकर उसे समझाती है—

---

१ तक्षशिला, प ५१२-३

'सुत चलाय कायरता को मत कण्ठ लगाना।
क्षत्रिय कुल को उचित नहीं मालिन्य लिखाना॥''[1]

× × ×

उठो त्याग मालिन्य कीर्ति कुंजर पर बैठो।
दुःख नदी कर पार कीर्ति कानन मे पैठो॥''[2]

जब पुत्र चलने लगता है तो माता उसको नाना भांति का आशीर्वाद देती हुई उसके मंगल की कामना करती हुई कहती है—

"जाओ मेरे हृदय
खण्ड नेत्रो के तारे।
चमक रहे हैं अत्युज्वल,
तव भाग्य सितारे।'[3]

तक्षशिला के षडयन्त्र से कुणाल नेत्र हीन होकर जब दुनिया में भीख मांगते फिरते है तब वे मगध मे भी आ निकलते हैं। चिर वियुक्त विनीत भक्त पुत्र से अशोक के मिलन का कवि ने मार्मिक वर्णन किया है। कुणाल के गान की ध्वनि सुनते ही वे अत्यन्त विस्मय से भर कर गवाक्ष से झांकने लगते हैं। उन्हें पुत्र की स्मृति आ जाती है और फिर उन्हे बड़ा दुःख होता है। जब कुणाल राजा के सामने आते है तो कौषेय वस्त्रो से युक्त हाथ मे वीणा लिये पुत्र की दशा को देखकर राजा मूर्छित हो जाते है। चेतना आने पर वे पुत्र को प्रेमवश छाती से लगा लेते हैं उसका मस्तक सूंघते है और प्रेम से व ओत प्रोत हो जाते है। कवि ने नृप की उपर्युक्त दशा का चित्रण निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

'देखा वेष भयाम लिये,
कर वीन कुमार कुणाल।
मूर्छित होकर गिरे प्रजापति
गत चेतन बेहाल।'[4]

कुणाल की मां भी अपने पुत्र को देखकर अत्यन्त दुःखी होती हैं। वह पुत्र के अनिष्ट से व्यथित होती है। मिलन होने पर उसे चूमती हैं और छाती से लगाती हैं। पुत्र मिलन के सुख और उसके अतीत के दुःख का एक साथ उन्हें अनुभव हो रहा है। उनकी स्थिति का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

---

१ तक्षशिला पृ० ३६
२ तक्षशिला पृ० ५।४४
३ तक्षशिला पृ० ५।५०
४ तक्षशिला पृ० ६।१००

"जननी पदमा निरख पुत्र को,
करती हुई विलाप।
पुचकारती चूमती मिलती,
रोती कर सताप।"[1]

तक्षशिला काव्य म वर्णित वात्सल्य रस अधिक विस्तत और सर्वांगीण नही है। फिर भी पिता और माता के सयोग और वियोग के समय के विविध भावो का चित्रण अवश्य देखन को मिलता है। कवि ने कुणाल के किशोर रूप को ही लिया है क्योकि प्रसगवश वह ही अभीष्ट काव्य-ग्रन्थ का विषय है शिशु कुणाल नही। माता का सयोग और पिता का वियोग वात्सल्य कवि ने अधिक दिखलाया है। कवि ने कुणाल के माता होने की जो उदभावना की है वह नवीन है क्योकि यह ऐतिहासिक तथ्य है कि कुणाल क सौतेली माँ थी, जिसक षडयन्त्र के कारण कुणाल की यह अवस्था हुई थी।

तुलसीराम शर्मा दिनेश

तुलसीराम शर्मा न पुरुषोत्तम शीर्षक महाकाव्य मे वात्सल्य का वर्णन किया है। इस पुस्तक म कवि ने श्री कृष्ण के प्रति वसुदेव देवकी और नद यशोदा के वात्सल्यपूर्ण उदगार अभिव्यक्त किय हैं। विशेष बात इसम यह है कि दोनो दम्पतियो की विरह व्यथित अवस्था का ही चित्रण इसमे किया गया है। पुस्तक का प्रारम्भ कृष्ण क कस वध के निमित्त मथुरापुरी म प्रवेश से होता है। इससे नन्द-यशोदा के सयोग सुख और कृष्ण की बाल क्रीडाओ का कोई वर्णन नही है परन्तु वियोग में व्यथित देवकी और यशोदा दोनो के मात हृदय की अभिव्यक्ति उत्कृष्ट हुई है।

कारागार म वसुदेव और देवकी कृशकाय चिन्ता और विपत्तियो से व्यथित पड हुए हैं। देवकी पुत्रो को जनकर भी पुत्र सुख से वचित रही है। इससे अनपत्यता के दुख का अनुभव करती है। उसे यह बडा खेद है कि उसके स्तनो से किसी बच्चे ने पय नही पिया और स्तन पान कराने के स्वर्गीय आनन्द को न ले सकी—

'हाय रे! ये स्तन मेरे उच्छिष्ट हुए नहीं,
नव मदु अधरो से गये हा! छुए नहीं।'[2]

वसुदेव से वह अपने हृदयोद्गार व्यक्त करती हुई कहती हैं कि मैंने कभी अपने बच्चो की क्रीडा का आनन्द नही लिया। मेरे आगन मे मेरे पुत्र कभी खेले ही नहा। यद्यपि मै मा हुई परन्तु मैंने कभी अपने पुत्रो के मुख से 'मा' शब्द नही सुना। कवि न देवकी के करुण क्रन्दन को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है—

---

१ तक्षशिला पृ० ६।११०
२ पुरुषोत्तम पृ० ६३

'हाय रे! ये गोद मेरी कभी भीगी ही नहीं—
वत्सों की सुलीलाओ से, वचिता सदा रही,
आगन मे मरे कभी खले लाडिले नहीं,
मा होके भी नाथ 'म मा' सुने बिना ही रही॥'[1]

जब वह यह सुनती है कि कृष्ण आये है तो बहुत दुखी होती है क्योकि वह आशकित होती है कि कस उनका कुछ अनिष्ट न कर दे। किन्तु जब व जयनाद सुनते हैं कि वसुदेव देवकी और वासुदेव की जय है तो दोनो का—पति पत्नियो का—हृदय प्रसन्नता से नाच उठता है। जसे तृषित चातकी बादल की गजना स समुत्सुका होकर उठती है वसे ही देवकी नेत्र खोलती है। फिर जब कृष्ण और बलराम माता से दौड कर एसे मिलते है जसे भूखे बछड गाय से मिलते हैं, तो माता के आनन्द की सीमा न रही। उसने उन्ह छाती से लगा लिया और हर्ष के आसुओ की वर्षा करने लगी—

'माता ने उठाया उन्हें शीघ स्नेह भाव से,
छाती से लगा के रोई जसी दुख दाव से।'[2]

नाना अनुभावो से युक्त देवकी के पुत्र सख का कथन कवि न निम्नलिखित पक्तियो म बडा मार्मिक किया है—

"प्यारो पगी सती सुत मुख चूमने लगी,
मोद मद मयी मद मद झूमने लगी।"[3]

जब दोनो पुत्र वसुदेव के परो मे झुकते ह तो व भी अत्यन्त आनन्दित होते हैं। उनके हृदय के आसुओ का प्रवाह रोकने स भी नही रुकता। उन्होने पुत्रो को छाती से लगा लिया और इस प्रकार का आनन्दानुभव किया जसे मणि विहीन सप को उसकी मणि मिल गई हो।

नन्द यशोदा की विरह व्यथा का कवि न चित्रण उस समय किया है जब उद्धव जी कृष्ण का सदेश लेकर गोकुल आते हैं। उद्धव का भवन म सब वस्तुएँ लुटी हुई सी लगती है। अत्यन्त व्यथित अवस्था मे पडी हुई यशोदा को उद्धव प्रणाम करते हैं। यशोदा को उद्धव क वस्त्रा म से कृष्ण शरीर की सुगन्ध आती है और वह पुत्र विरह से अत्यधिक अधीर हो जाती है। कवि कहता है कि जिसके दूध से कृष्ण का शरीर बना हुआ है भला उसकी सुगन्ध को वह कसे भूल सकती है?[4]

---

१ पुरुषोत्तम पृ० ४५
२ पुरुषोत्तम पृ० ४६
३ पुरुषोत्तम पृ० ५२
४ पुरुषोत्तम पृ० ५२

'जिसके पय से बना देह उसकी सुगध को—
कैसे बिसरें प्राण, अरे! उस निज निवध को ?"[1]

एकदम यशोदा हू हू करके रोने लगती हैं। जब उद्धव अपना परिचय और कृष्ण की कुशलता का समाचार सुनाते हैं तो यशोदा को बड़ा ढाढस मिलता है। वे उद्धव को अपने पुत्र की तरह प्यार करके आसन पर बिठाती हैं। उद्धव से कृष्ण की कुशलता जैसे ही वे पूछने लगती हैं तो उनका पुन प्रेम उमड़ पड़ता है। वे अधीर होकर रोने लगती हैं और कृष्ण का सारा बाल चरित उनको स्मरण हो जाता है। कवि ने यशोदा की उस दशा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है—

"माता अतिशय मुदित हुई सुन उद्धव का यों आना,
फिर फिर पूछा—'उद्धव मेरा राजी तो था कान्हा?'
सास मार चुप हुई, दगों ने छोड़ी अविरल धारा,
आखों आगे खड़ा हो गया बाल चरित वह सारा।'[2]

कृष्ण का रोना मचलना और तुतलाना यशोदा को बार बार याद आता है। जो कृष्ण को बाधा, पीटा और रुलाया था। उसका बड़ा भारी पछतावा आने लगता है। वे ये सारी बातें उद्धव से कहते कहते बहुत व्यथित हो जाती हैं गला रुध जाता है और आंखों से अश्रु बहने लगते हैं। फिर पूछने लगती हैं कि क्या कृष्ण कभी मुझे याद करता है? इस पर उद्धव कृष्ण का यशोदा की ओर अत्यन्त श्रद्धान्वित होने का वर्णन करते हैं तो यशोदा को बड़ा सुख मिलता है, परन्तु वे कहने लगती हैं कि उद्धव कृष्ण के पल पल के विनोद मेरे हृदय पटल पर लिखे हुए हैं। इससे प्राण सदैव विकल रहते हैं, अनेक प्रयत्न करने पर भी मैं इन्हें भूल नहीं सकती—

'उसके पल पल के विनोद उर प्रस्तर पर लीके हैं,
अब प्राण ये उनको छू छू रोते हो फीके हैं।
बहुत बहुत बिरमाती इनको कह कह कथा पुरानी,
'ना, ना, ना' ये कह रो देते, पूर्ण न होगी हानी।'[3]

पहले जो बालक कृष्ण के साथ नित्य खेलने आया करते थे, अब एक भी नहीं आता और मैं अभागिनी अकेली विरह में जलती रहती हूं। वे उद्धव से इस प्रकार वर्णन करके कहने लगती हैं कि मुझसे ब्रज की दशा का वर्णन नहीं किया जाता और रोने लगती हैं।

नन्द भी उद्धव को अपने पुत्र की तरह छाती से लगा लेते हैं। बड़े पवित्र मन

---

१ पुरुषोत्तम पृ० ७९
२ पुरुषोत्तम पृ० ८१
३ पुरुषोत्तम पृ० ८५

और स्नेह सिक्त वाणी में वे नेत्रों में जल भरकर उद्धव से कृष्ण की कुशल पूछने लगते हैं। उनके शब्दों में दीनता, वत्सलता और पुत्र प्रेम भरपूर है—

कान्हा तो सब भांति सुखी था ? 'हां' है कष्ट यहां क्या ?
बोले उसके योग्य भोग है मेरे पास यहां क्या ?
उसके सुख में हमको सुख है, आगे थकी न वाणी,
उर का सब इतिहास बताकर ले आया दृग-पानी।'[1]

उद्धव गोकुल से लौटने लगते हैं तो यशोदा और नंद का प्रेम और अधिक उमड़ता है। यशोदा उद्धव से कहती हैं कि कृष्ण से कहना कि मुझे याद के जाते ही याद करना है। कभी पछताती हुई कहने लगती हैं कि छिम छिम करती कृष्ण की वधू मेरे घर नहीं आई। फिर भीतर से रलका, मेवा आदि वस्तुएं लाती हैं और अपने चीर को फाड़ कर ही उसमें बांध देती हैं। एक कुल्हड़ी में वे मक्खन लाती हैं और उस पर ढाक की दौनी रख कर दे देती हैं। वे बड़ी आतुर हो रही हैं कि अपने प्यारे लाल को क्या क्या भेजें ? कवि ने उनकी इस दशा का चित्रण इस प्रकार किया है—

क्या भेजूं ? क्या मैं रखूं भूल रही है।
माँ दुविधा के हिंडोले झूल रही है।'[2]

इन पंक्तियों में मातृ-हृदय का अच्छा चित्रण है। अपने पुत्र को मां कितना सुखी देखना चाहती है इसका अनुमान लगाना असम्भव है। कृष्ण चाहे कितने ही बड़े राजा हैं पर मां का हृदय तो मां का ही है।

वे पीत कामदार वस्त्र लाकर देती है और कहती है कि कृष्ण इनको पहनेगा तो खुश होगा। यदि मैं नहीं तो और तो मेरे लाल को इन वस्त्रों को पहने हुए देखेंगी और देवकी से कह देना कि कभी डिठौना लगाना न भूल जाय।

जब उद्धव चलने लगते हैं तो नन्द जी का जी भर आता है और कृष्ण को याद करके व्याकुल हो जाते हैं। जब यशोदा के पग में उद्धव सिर झुकाकर जाने लगते हैं तो वे हिलकियां भर भर कर रोने लगती है—

भर गई हिलकियों सांस न पूरा आया।'[3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसीराम शर्मा ने कृष्ण के वियोग का बड़ा सजीव और मार्मिक चित्रण किया है। कृष्ण के बाल चरित का क्रीड़ास्थल गोकुल था और कवि ने उसके बाद के वृत्तान्त से अपना काव्य प्रारम्भ किया है। अतः संयोग सुख और बाल रूप व बाल क्रीड़ा आदि के चित्र नहीं हैं। वसुदेव देवकी को कृष्ण मिलन का सुख होता है परन्तु वह बहुत दिनों से बिछुड़े हुए प्राणियों को जीवन

१ पुरुषोत्तम पृ० ८३
२ पुरुषोत्तम पृ० १२८
३ पुरुषोत्तम पृ० १२६

नाग हो ता है। उनका पुत्र उन्हें मिल गया पर उस समय बाल क्रीडा का समय थोड़ा ही रहा है। कवि ने वियोग की अनुभूति की अभिव्यंजना बड़ी उत्कृष्ट की है। यशोदा और देवकी दोनों का वियोग दिखलाया है। देवकी का इसलिये कि कृष्ण आदि कभी पास नहीं रहे और यशोदा का इसलिये कि उसके पास से चले गये। कवि की वियोगाभिव्यक्ति एकदम नवीन है। इनके भावों में पुराने भावों का पिष्ट पेषण नहीं है।

रामधारीसिंह 'दिनकर'

दिनकर' के काव्य में भी वात्सल्य का वर्णन मिलता है। इसके लिये इनकी कृतियाँ रसवन्ती और रश्मिरथी द्रष्टव्य हैं। 'रसवन्ती' में कवि ने नारी का भांति भाँति का वर्णन करते हुए उसके वात्सल्यमयी होने का भी चित्र खींचा है। स्त्री जब मातृ पद को प्राप्त हो जाती है तो उसके आँचल में दूध और मुख पर सन्ताप झलकने लगता है। अपने नन्हे मुन्ने को स्तन पान कराते समय माता की लाखों अभिलाषाएं जाग्रत हो जाती हैं। वह पुत्र के विषय में नाना भांति की कामना करती रहती है—

> वीर धनी विद्वान ग्राम का नायक विश्व विजेता,
> अपनी गोद बीच आज वह क्या क्या देख रही है।"[1]

माता अपने पुत्र पर ऐसी स्निग्ध दृष्टि डालती है जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। कवि ने पुत्रावलोकन करती हुई माता का जो सजीव चित्रण किया है वह वात्सल्य का मूर्तिमान चित्र हमारी दृष्टि के आगे उपस्थित कर देता है—

> आंचल के सुकुमार फूल को वह यों देख रही है
> फूट रही हो धार दूध की, ही ज्यों भरे नयन से।"[2]

दिनकर जी की जिस दूसरी पुस्तक में वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है वह रश्मि रथी है। रश्मिरथी में कुन्ती का अपने पुत्र कर्ण के प्रति वात्सल्य वर्णित है। कर्ण को पाण्डवों के विरुद्ध युद्ध के लिये प्रस्तुत देखकर कुन्ती उसके पास जाती है और उस अतीत की कथा बतलाकर अपने तत्कालीन पारवश्य का कथन करती है। वह बड़ी व्यथित होकर कर्ण के पास जाती है पर पुत्र की आभा को देखकर वात्सल्य विभोर हुई सब दुख दर्द भूल जाती है। वह एकटक कर्ण के मुख को देखती रहती है—

> सुत की शोभा को देख मोद में फूली
> कुन्ती क्षण भर को व्यथा वेदना भूली।
> भर कर ममता पय से निष्पलक नयन को,
> वह खड़ी सींचती रही पुत्र के तन को।"[3]

---

१ रसवन्ती, पृ० ५०
२ रसवन्ती पृ० ५०
३ रश्मिरथी पृ० ७८

वह कर्ण को नाना भांति से समझाती है। अतीत का वह दारुण कर्म उसके हृदय को रह रहकर बेंधता रहता है। जिस समय उसने कर्ण को पेटिका में रखकर जल में प्रवाहित किया था। कवि ने कुन्ती के मुख से उस समय का जो वर्णन कराया है वह वात्सल्य ग्लानि पश्चाताप और बेचैनी से भरपूर कुन्ती की दशा को व्यक्त करता है—

पेटिका बीच मे डाल रही थी तुझको
टुक-टुक तू कैसे ताक रहा था मुझको।
वह टुकर टुकर कातर अवलोकन तेरा
औ शिलाभूत सर्पिणी सदृश मन मेरा।
ये दोनों ही सालते रहे हैं मुझको
रे क्या सुनाऊं व्यथा कहां तक तुझको।'[1]

इस प्रकार वर्णन करती हुई कुन्ती कर्ण को छाती से लगा लेती है।[2] आनन्दाश्रुओं से कर्ण भीगता रहता है वह भी रोमांचित होता है और कहता है कि मैं बिछुड़ी गोद को पाकर धन्य हो गया। कुन्ती इससे और भी अधीर होती है और कर्ण जैसे पुत्र को पाकर अपने को धन्य समझती है। कर्ण से मिलकर कुन्ती का हृदय गद्गद हो जाता है। वह वात्सल्य के आवेग से ओत प्रोत हो जाती है उसकी वात्सल्य विभोर स्थिति का वर्णन कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

ममता जमकर हो गई शिला जो मन मे
जो क्षीर फूटकर सूख गया था तन मे।
वह लहर रहा फिर उर मे आज उमड़ कर
बह रहा हृदय के कूल किनारे बहकर।'[3]

कर्ण के पास से जाते समय कुन्ती बड़ी दुखी होती है। पुत्र से वियुक्त होने के दुख का भी कवि ने वर्णन किया है—

बेटे का मस्तक सूंघ बड़े ही दुख से
कुन्ती लौटी कुछ कहे बिना ही मुख से।'[4]

अत हम कह सकते हैं कि दिनकर के काव्य में भी वात्सल्य का वर्णन हुआ है। उनकी वात्सल्याभिव्यक्ति प्रबन्ध और मुक्तक दोनो में हुई है। उनकी अधिकांश कविताएं प्रगतिवादी विचारों से ओत प्रोत हैं परन्तु फिर भी प्रसंगवश वात्सल्य भाव अपनी व्यापकता के कारण उनके द्वारा भी अभिव्यक्त हुआ है। कुछ स्थलों पर

---

१ रश्मिरथी पृ० ६४
२ रश्मिरथी पृ० ६६
३ रश्मिरथी पृ० ६७
४ रश्मिरथी पृ० १०४

प्रगतिवादी विचारो के कारण मा बच्चे का वात्सल्यमय वर्णन न करके उन्होने उनका करुण चित्र खीचा है ऐसी कविताए उनकी पुस्तक 'हुकार' म द्रष्टव्य हैं।[1] उनम सामाजिकता से कवि प्रभावित है। समाज के दुख दैन्य का प्रभाव उनके वात्सल्य वर्णन पर पडा है। कही कही इन्होने वात्सल्य का उपमान रूप म बडा सुन्दर प्रयोग किया है।[2] पुत्र कामना स रहित व्यक्तियो पर इनका व्यग्य भी द्रष्टव्य है।[3]

सोहनलाल द्विवेदी

सोहनलाल द्विवेदी ने फुटकल कविताओ और प्रबन्ध काव्य दोनो म वात्सल्य भाव के पद्य दिये है। फुटकल कविताओ म इन्होने जो प्रसग वात्सल्याभिव्यक्ति के चुने है उनम कुन्ती और कर्ण तथा अशोक और कुणाल के प्रसग मुख्य हैं। इनमे गौतम बुद्ध का अपने पुत्र राहुल के प्रति[4] और गाधी जी का सेवाग्राम के अनाथ बच्चो के प्रति[5] भी वात्सल्य भाव वर्णित है, परन्तु वह अत्यल्प और गौण है। प्रबन्ध काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य का आलम्बन अशोक का पुत्र कुणाल है।

कुन्ती और कर्ण के प्रसग म कुन्ती कर्ण स मिलने जाती है। कर्ण को अतीत की कथा बतलाती है कि वह उसका ही आत्मज था और वह उसे महानिर्जन म त्याग आई थी। कुन्ती पश्चाताप करते हुए कर्ण मे वात्सल्य भरे शब्दो म कहती है—

मेरा तू पुत्र
मेरा तू हृदय खण्ड
प्राणो का पिंड है मेरे शरीर का
आ लाल
गोद भर आज म बनू निहाल
देख आज जननी का स्रवित स्तन्य पय"[6]

कुन्ती का हृदय अतीत की स्मृति से टूक टूक हुआ जाता है। वह आज कर्ण को पाकर निहाल होकर सब कुछ सुध बुध खो बैठती है। वह बडे प्यार से कर्ण को अपने घर लिवा जाना चाहती है। कुन्ती के उमडते हुए वात्सल्य की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार की है—

लौट चल पुत्र
उस गृह मे आज जहा म न तुझे रख सकी

१ हुकार पृ० २२
२ धूप और धुआ, पृ० ६६
३ रसवन्ती पृ० ५१
४ वासवदत्ता महाभिनिष्क्रमण पृ० ६३
५ सेवा ग्राम, पृ० १६४
६ वासवदत्ता, पृ० २८

वह कर्ण को नाना भाँति से समझाता है। अज्ञान का यह दारुण क्रम उसके हृदय को रह रहकर बेंधता रहता है। जिस समय उसने कर्ण को गंगा में लाकर जल में प्रवाहित किया था। कवि ने कुन्ती के मुख से उस समय का जो वर्णन कराया है वह वात्सल्य ग्लानि पश्चाताप और करुणा से भरपूर कुन्ती की दशा को व्यक्त करता है—

मंजूषा बीच में डाल रही थी तुझको
टुक टुक तू क्या ताक रहा था मुझको।
वह टुकर टुकर कातर अवलोकन तेरा
औ निलाभूत साँपनी सदृश मन मेरा।
ये दोनों ही सालते रहे हैं मुझको
रे कर्ण सुनाऊँ व्यथा कहाँ तक तुझको।[1]

इस प्रकार वर्णन करती हुई कुन्ती कर्ण को छाती से लगा लेती है।[2] आनन्दाश्रुओं से कर्ण भीगता रहता है वह भी रोमांचित होता है और कहता है कि मैं बिछुड़ी गोद को पाकर धन्य हो गया। कुन्ती इससे और भी अधीर होती है और कर्ण जैसे पुत्र को पाकर अपने को धन्य समझती है। कर्ण से मिलकर कुन्ती का हृदय गद्गद हो जाता है। वह वात्सल्य के आवेग से ओतप्रोत हो जाता है उसकी वात्सल्य विभोर स्थिति का वर्णन कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

ममता जमकर हो गई शिला जो मन में
जो क्षीर फूटकर सूख गया था तन में।
वह लहर रहा फिर उर में आज उमड़ कर
बह रहा हृदय के कूल किनारे बहकर।[3]

कर्ण के पास से जाते समय कुन्ती बड़ी दुखी होती है। पुत्र से वियुक्त होने के दुख का भी कवि ने वर्णन किया है—

बेटे का मस्तक सूंघ बड़े ही दुख से
कुन्ती लौटी कुछ कहे बिना ही मुख से।[4]

अतः हम कह सकते हैं कि दिनकर के काव्य में भी वात्सल्य का वर्णन हुआ है। उनकी वात्सल्याभिव्यक्ति प्रबन्ध और मुक्तक दोनों में हुई है। उनकी अधिकांश कविताएं प्रगतिवादी विचारों से ओत प्रोत हैं परन्तु फिर भी प्रसंगवश वात्सल्य भाव अपनी व्यापकता के कारण उनके द्वारा भी अभिव्यक्त हुआ है। कुछ स्थलों पर

---

१ रश्मिरथी पृ० ६४
२ रश्मिरथी पृ० ६६
३ रश्मिरथी पृ० ६७
४ रश्मिरथी पृ० १०४

प्रगतिवादी विचारों के कारण माँ बच्चे का वात्सल्यमय वर्णन न करके उन्होंने उनका करुण चित्र खींचा है ऐसी कविताएं उनकी पुस्तक 'हुंकार' में द्रष्टव्य हैं।[1] उनमें सामाजिकता से कवि प्रभावित है। समाज के दुख दर्द का प्रभाव उनके वात्सल्य वर्णन पर पड़ा है। कहीं कहीं इन्होंने वात्सल्य का उपमान रूप में बड़ा सुन्दर प्रयोग किया है।[2] पुत्र कामना से रहित व्यक्तियों पर इनका व्यंग्य भी द्रष्टव्य है।[3]

सोहनलाल द्विवेदी

सोहनलाल द्विवेदी ने फुटकल कविताओं और प्रबन्ध काव्य दोनों में वात्सल्य भाव के पद्य दिये हैं। फुटकल कविताओं में इन्होंने जो प्रसंग वात्सल्याभिव्यक्ति के चुने हैं उनमें कुन्ती और कर्ण तथा अशोक और कुणाल के प्रसंग मुख्य हैं। वैसे गौतम बुद्ध का अपने पुत्र राहुल के प्रति[4] और गांधी जी का सेवाग्राम के अनाथ बच्चों के प्रति[5] भी वात्सल्य भाव वर्णित है परन्तु वह अल्परूप और गौण है। प्रबन्ध काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य का आलम्बन अशोक का पुत्र कुणाल है।

कुन्ती और कर्ण के प्रसंग में कुन्ती कर्ण से मिलने जाती है। कर्ण को अतीत की कथा बतलाती है कि वह उसका ही आत्मज था और वह उसे महानिर्जन में त्याग आई थी। कुन्ती पश्चाताप करते हुए कर्ण से वात्सल्य भरे शब्दों में कहती है—

> मेरा तू पुत्र
> मेरा तू हृदय खण्ड
> प्राणों का पिंड है मेरे शरीर का
> आ लाल
> गोद भर आज मैं बनूं निहाल
> देख आज जननी का स्रवित स्तन्य पय।[6]

कुन्ती का हृदय अतीत की स्मृति से टूक टूक हुआ जाता है। वह आज कर्ण को पाकर निहाल होकर सब कुछ सुध बुध सी खो बैठती है। वह बड़े प्यार से कर्ण को अपने घर लिवा जाना चाहती है। कुन्ती के उमड़ते हुए वात्सल्य की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार की है—

> लौट वत्स पुत्र
> उस गृह में आज जहां मैं न तुझे रख सकी

१ हुंकार पृ० २२
२ धूप और धुआं पृ० ६६
३ रसवन्ती, पृ० ५१
४ वासवदत्ता महाभिनिष्क्रमण पृ० ६३
५ सेवा ग्राम, पृ० १५४
६ वासवदत्ता, पृ० २८

लख न सकी
देख न सकी पुत्र तेरे जन्म हर्ष को
समझी अपकर्ष
उत्कर्ष नहीं
तुझे त्याग आई निज अंक से कलंक सा।
मेरा कलंक कर मोचन निष्कलंक है।
अंक भर मेरे मेरे शारद मयंक।[1]

कुणाल नामक प्रबन्ध काव्य में कवि ने कुणाल के शैशव का वर्णन किया है। जिस समय कुणाल का जन्म हुआ तब सर्वत्र आनन्द छा गया और मंगल सूचक वाद्य यन्त्र बजने लगे। वह अत्यन्त कोमल मृणाल के समान था अतः उसका नाम कुणाल रखा गया। जब कुणाल कुछ बड़ा हुआ तो माँ माँ कहकर कभी हँसता तो कभी रोता था। माता ने जब पुत्र रूप में आई हुई अपनी आत्मा की पुकार सुनी तो वह पुत्र पर बलिहारी होकर मानो स्वयं पर ही बलिहारी हो गई। उसने बेटे को गोदी में उठाकर प्यार किया। पुत्र प्रेम से जो स्नेह बहा वह हृदय ही मानो दूध के रूप में निकल कर आने लगा। बेटे के चुम्बन से माता की सारी प्रसव पीड़ा जाती रही—

कोमल कलित ललित कपोल का
जिस दिन किया सरस चुम्बन।
भूल गई अपना समस्त दुख
प्रसव काल का उत्पीडन।[2]

अशोक अपने पुत्र को गोद में लेकर साम्राज्य के सुख को भी भूल गये हैं—

'जब अशोक ने लिया अंक में
वह नीरव कुणाल निष्पद।
भूल गये साम्राज्य सौख्य सब
मिला अमल चेतन आनन्द।[3]

कुणाल सारे नगर का खिलौना बना था। उसके जगाने को प्रभाती गाई जाती और सुलाने को लोरियाँ। आगन में खेलता हुआ वह मन को लुभाता है उसके माँ मां शब्द बड़े मीठे लगते हैं। माता पिता के सुखानुभव के अतिरिक्त कवि ने शिशु कुणाल की चंचलता का भी वर्णन किया है। वह छींके पर रखे हुए दही को ललक

१ वासवदत्ता पृ० ३०
२ कुणाल पृ० १६
३ कुणाल पृ० १६

कर देखता है। कभी धूल धूसरित होकर खेलता है। इसका कवि ने जो वर्णन किया है उससे शिशु के रूप, स्वभाव और चापल्य का चित्र सामने आ जाता है—

"वह धूल भरा नटखट आया
मुंह में मिट्टी उगली गीली
यह कौन वेश यह धर आया।
कुंचित अलकों में धूल भरी,
मिट्टी से क्या शोभा निखरी।
क्या शिशु शंकर धर भस्म अंग
जननी का मन हरने धाया?"[1]

कवि ने कुणाल के मुख से तोतले शब्द कहलवाये हैं जिनमें वह माता से कहता है कि देखो मैं झटपट दिल्ली हो आया। माता उसे देखकर मुग्ध हो जाती है और बड़ा सुखानुभव करती है। लकड़ी का घोड़ा बनाकर इस भांति उच्चारण करता हुआ बालक वात्सल्य का उद्दीप्त करता है—

"घोड़ा था एक बना लकुटी
धोती जाती थी बीच छुटी।
कहता मां देखो मैं छलपल
धोले पल दिल्ली हो आया।"[2]

कवि ने अशोक के पुत्र प्रेम को एक और स्थल पर दिखलाया है। जब कुणाल भिक्षुक बना कालान्तर में मगध ही आ निकलता है और उसके गाने की ध्वनि को अशोक सुनते हैं तो वे स्वभावतः उद्विग्न हो उठते हैं। उसे अपना पुत्र जान कर चिर वियुक्त पुत्र की प्राप्ति पर अशोक की आत्मा इतनी प्रसन्न होती है कि वे हर्ष में मूर्छित हो जाते हैं। फिर पुत्र को गले से लगाकर प्रसन्न होते हैं—

उर लगाकर पुत्र को
वे हो गये गत शोक।[3]

सोहनलाल द्विवेदी की वात्सल्याभिव्यक्ति फुटकल कविताओं और प्रबंध काव्य दोनों में हुई है। कवि ने फुटकल कविताओं में विरह व्यथित अवस्था का ही चित्रण किया है। स्वतन्त्र छन्द में वात्सल्य वर्णन इनकी नवीनता है। कुन्ती अपने पुत्र से चिरकाल बाद मिलती है और फिर वियुक्त होती है। यहां जीवन के मार्मिक पक्ष का उद्घाटन वात्सल्य रस के माध्यम से कवि ने किया है। कुन्ती जीवन की परिस्थितियों के पराधीन होकर कितने वर्ष कर्ण को देखती रही, पर उसके प्रति

१ कुणाल पृ०, १७ १८
२ कुणाल पृ०, १८
३ कुणाल पृ०, ११६

वात्सल्य व्यक्त न कर सकी। परन्तु कुंडल माँगने को जाते समय मातृ-वात्सल्य की दुग्ध धवल धारा परिस्थितियों के पत्थरों को फोड़कर बाहर निकल आई।

प्रबन्ध काव्य में संयोग सुख और शिशु क्रीडा का कवि ने वर्णन किया है। वर्णन में कवि साधारण धरातल पर इतना उतर आया है कि राजपुत्र को लकड़ी के घोड़े पर चढ़ते और छींके पर रखे दूध और दही की ओर ललकते दिखलाया है। 'कुणाल' काव्य में कवि ने अशोक का पुत्र प्रेम ही वर्णित किया है क्योंकि कुणाल की माँ सौतेली थी। वियोग की अवस्थाओं का चित्रण वियोग के पश्चात मिलन की दशा का कवि ने कराया है। सरलता और कोमलता का कवि ने सर्वत्र निर्वाह किया है। जहाँ कवि ने अनाथ और दुखी बच्चों का वर्णन किया है वहाँ उसके विचार सामाजिकता से प्रभावित हैं। वे कहना यह चाहते हैं कि वात्सल्य के पात्र होने से पहले वे दया के पात्र हैं क्योंकि वे दीन हीन दुखी और अनाथ हैं।

पं० रामसेवक चौबे

पं० रामसेवक चौबे ने माधव माधुरी नामक पुस्तक में कृष्ण चरित का वर्णन किया है। कृष्ण के जन्मोत्सव से लेकर माखन चोरी और विद्याध्ययन तक का उन्होंने बाल वर्णन किया है। परन्तु यह सब कुछ सूर के भावों को लेकर ही दूसरे शब्दों में रखा गया है। इससे कोई विशेष नवीनता नहीं लगती या यों कह सकते हैं कि सूर के वर्णन के पश्चात वैसे ही कृष्ण चरित के वर्णन पाठक को प्रभावित नहीं करते। कवि ने जन्मोत्सव बधाई दान छठी, नामकरण नख शिख, दाँत जमने खड़े होने दौड़ने अन्न प्राशन और माखन चोरी के उलाहने आदि प्रसंगों का भली भाँति वर्णन किया है।

ये सब वर्णन सूर आदि भक्त कवियों ने बड़े विस्तार के साथ किये हैं। विवेच्य कवि पर उसी परम्परा का प्रभाव है अतः इन्होंने भी बाल-वर्णन में आनन्द और उत्सव की व्यापकता का निर्वाह किया है। कृष्ण के जन्म की प्रसन्नता नन्द यशोदा गोपी गोप आदि सबको होती है। परन्तु उनके हर्षोल्लास आनन्द प्रदर्शन और बधाई आदि देने के वर्णन में कवि की निजी अनुभूति भी कुछ कम महत्व की नहीं है—

बहु नंद भवन सुख छया।
बाजत अनंद बधैया॥

यशोमति सुत सुनि सकल गोपिन धाइ धाइ सब एया।
देखि देखि शिशु चरन कमल वर निरखत बदन लोभया॥
करु नवछावरि आरति करि करि वार बार बलि जया।
गोपी गन नख शिख शिशु निरखत उर पुर बहु पुलकया॥
जन्म महोत्सव करत वेद विधि हिलि मिलि मंगल गया।
ढोल मृदंग कोटि करतल ध्वनि नाचत ता ता थया॥[1]

---

१ माधव माधुरी पृ० ३६

कृष्ण के कुछ बड़े हो जाने पर वात्सल्यमयी माता उनके विषय में अनेक भावपूर्ण अभिलाषायें करती है—

'भुवि जानु पानि कब चलि है।
कर शिर कबहिं निरखि है॥'[1]

कभी माता का शिशु के उलाहने सुनकर प्रसन्न होना और कभी शरारत पर डाटने पर युक्ति युक्त उत्तर सुनकर वात्सल्य का उमड़ आना आदि प्रसंग माता के मनोभावों को अभिव्यक्त करने वाले ही हैं। पर ये भाव कोई नवीन नहीं हैं। इतना होने पर भी प० रामसेवक चौबे की वात्सल्याभिव्यक्ति में अपनी निजी विशेषता है। वह यह कि कवि ने ध्वन्यात्मक शब्दों का चयन कई स्थलों पर बड़ा अच्छा किया है। कृष्ण ने सब छोटी छोटी वस्तुएं धारण कर रखी हैं। उनका वर्णन कवि ने बड़ी सफलता से किया है। उनकी कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं—

'छोटी छोटी छोटी अति छोटी घुनघुनिया।
बाजत सुछोटी राग रुनझुन झुनियां॥'[2]

इसी प्रकार बलदेव व कृष्ण के नाचने के समय का बड़ा मार्मिक चित्रण है। इसका शब्द-चयन भी नाच के अत्यन्त उपयुक्त है इसमें काव्यत्व है और यह इनका बड़ा प्रसिद्ध पद है। नाचते हुए बालकों का चित्र, नत्रों के सामने उपस्थित हो जाता है—

नाचत बलदेव कृष्ण बाजत पजनिया।
श्याम गौर अंग संग शोभा रस खनिया॥
उठत गिरत चलत धाय बहुरि पलटि कर बढ़ाय।
निरखत प्रतिबिम्ब बाल उलटि गहत पनिया।
ठुमुकि ठुमुकि धरत पांव छाह गहत लहत दांव।
बरसत नर नारि मधुरि तोतरि किलकनियां।
किंकनि कहि बजत ताल नूपुर धुनि गति रसाल।
मोहत नर नारि बहुरि चमकनि करधनिया॥'[3]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कवि ने यद्यपि अपने वर्णन में सूर से बहुत कुछ प्रभाव ग्रहण किया है परन्तु बहुत से स्थानों पर उनके वर्णन मौलिक हैं और कवित्वपूर्ण है। विशेषत नाच के समय का उपयुक्त पद उनका बहुत सुन्दर है।

आरसीप्रसाद सिंह

आधुनिक काल के फुटकल छन्दों में वात्सल्य वर्णन करने वाले कवियों में

१ माधव माधुरी, पृ० ६२
२ माधव माधुरी पृ० १०२
३ माधव माधुरी, पृ० ८६ ७७

आरसीप्रसाद सिंह का नाम उल्लखनीय है । इनकी फुटकल रचनाओ का सग्रह 'आरसी है । उसम ८२३ कविताए सग्रहीत हैं जिनम २७ कविताए वात्सल्य-वणन की हैं । इन कविताओ म शिशु की आयु आदि का किसी प्रकार का क्रम नही है । जिस समय जसा भाव आया वसा ही कवि ने लिख दिया है । उन्हीं के आधार पर इनका वर्गीकरण भी है—इनकी कविताओ म निम्नलिखित बात वात्सल्य-वणन की मिलती हैं—आलम्बन को लक्ष्य करके कवि की उक्तियाँ उद्दीपन बाल रूप बाल-स्वभाव बाल क्रीडा बाल हट प्रबोधन और शिशु को देखकर कवि का आश्चर्यान्वित होना ।

आलम्बन को लक्ष्य करके कवि ने व्यग्य से सस्नेह बच्चे की हसी उडाई है । बालक के धूल धूसरित शरीर को देखकर कवि कहता है कि लगोटी वाल बताओ तुम्हारा कसा वेश है ? मालूम पडता है मिट्टी खाकर आय हो ? बिल्कुल भोल बाबा लगते हो । लगोटी लगाकर बडे पहलवान बन रह हो तो मेरी एक चपत ही झेल लो ? कभी कवि सस्नेह बच्च स प्राप्त सुख का भी कथन करता है—

तुम्हीं ताड के पत्ते को बासुरी बजाने वाले हो
जगल मे मगल ऊसर मे फसल लगाने वाले हो।
यार तुम्हीं हो सूरत मस्ती की शीराजी का प्याला,
उजियाला है वहीं जहा तुम जहा नहीं वह अधियाला ॥ [1]

इसी प्रकार शिशु के दन्तहीन मुख और खेल की वस्तुओ का गिनाकर उनस बहुत स प्रश्न किय है । शाम होते ही प्यारा मा की गोदी म सोन को आन के लिए उत्सुक होता है । उसका कथन कवि इस प्रकार करता है—

वह कहता म सोऊगा,
मुझे झुला दो नींद सताती ।
मा कहती तू सो जा मेरे
लाल नींद को म ले आती । [2]

मा लोरी गान लगती है और ललन धीरे धीरे सो जाता है । कवि क कुछ चित्र बड स्वाभाविक है जसे घरो म सभा पारिवारिक सम्बधियो को बच्च क मुख स कहलवाते हैं कि य तुम्हारी मा है चाचा है आदि । शिशु के प्रति परिवार मे जसा मदुल वात्सल्यपूर्ण व्यवहार होता है उसका मनोरम चित्र कवि न दिया है ।

उद्दीपन के लिए कवि बच्च क मुह स तरह तरह की बातें कहलवाता है । बालक कहता है—

हट जाओ जी हट जाओ जी जाता हू अपनी ससुराल । [3]

---

१ आरसी लगोटी वाला पृ० ३७५
२ आरसी प० ५०१
३ आरसी, बच्च की शादी प०४४७

बच्चे का सुसराल जाना और गुडिया-सी बहूरानी लाना आदि का सारा वर्णन, वात्सल्य को उद्दीप्त करता है। चंदा मामा के लिए नाना भांति से विचार करना और सोचना कि चंदा मामा ऐसे हैं मामी तो कभी देखी ही नही। उनके वहां न जाने क्या-क्या होगा यो सोचते सोचते, बच्चे का माँ से कहना वात्सल्य को उद्दीप्त करता है—

"मुझे बुलाते चंदा मामा
मैं मामा घर जाऊंगा।
और वहाँ से माँ मैं तेरे
लिये खिलौना लाऊंगा।"[1]

इसी प्रकार बच्चे के मुँह से तुतली बोली सुनकर भी वात्सल्य उद्दीप्त होता है। तकली का सारा गीत तुतली बोली में है—

'तकली तकली तकली—
वितिमा भेली प्यली बुलाली
तूने क्यों कल पकली
तकली तकली तकली।'[2]

बाल रूप वर्णन में कवि ने स्नेहमयी सरला नामक बालिका का रूप वर्णन किया है। वह स्नेहमयी सुकुमारी और माँ बाप तथा पुरजनों की प्यारी है। उसका रूप वर्णन करते करते कवि ने लिखा है—

गोरे गोरे गाल, कमल लोचन पर हरिणी वारी थी।
बिम्बाफल से अधर चमकते दांतों की छवि न्यारी थी।'

× × ×

तितली सी थी चंचल परियों सी वह कोमल सुन्दर।
जिसके काले बाल सदा ही खेला करते थे मुख पर॥[3]

इसी प्रकार दूधमुही बच्ची के रूप को देखकर कवि कहता है—

'उग आ रहे दांत दूध के मोहक रूप किये धारण,
किलकारी भरती है केवल सही न केवल उच्चारण।"[4]

बच्चे के सामने कुछ भी रखो वह मुँह में देने लगता है। कागजों को उलट-पुलट करना व कलम को उठाकर मुँह में दे लेना उसके लिए साधारण बात है। खाना खाते समय बच्चे कभी-कभी स्वयं न खाकर अपने माता पिता को ही खिलाने

---

१ आरसी चन्दा मामा पृ० ४१४
२ आरसी चंदा मामा, पृ० ३१२
३ आरसी सरला पृ० ३३२
४ आरसी मेरी बच्ची, पृ० ३८०

लगने हैं। बच्चे का स्वभाव है कि उसे खिलौने खूब चाहिए । फिर अगर हँसी चल रही है तो ठीक है पर यदि न पडे तो रो रोकर घर को भर दें, शिशु का राग द्वेष या किसी भयानक चीज से डर नही लगता। उनके स्वभाव का वर्णन करते हुए वे कहते हैं—

> दे दो अथवा दिया छीन लो किसी वस्तु की चाह नहीं,
> आवे सर्प समीप भले ही कुछ चिन्ता परवाह नही
> वह अबोध शिशु शत्रु मित्र का भेद भाव क्यों कर जाने
> बाघ नेवला चींटी बिच्छू कसे दुनिया पहचाने।[1]

बाल क्रीडा के आनन्द का भी कवि ने वर्णन किया है। बच्चे के साथ बडे भी बच्चे बन जाते हैं। हाथी, घोडा, बकरी कुत्ता आदि सभी कुछ बच्चे बना लेते हैं। बच्चे इसमे बडा आनन्द लेते हैं । कवि ने बच्चे की ऐसे ही घोडे पर चढने की प्रसन्नता का वर्णन किया है—

> मोती—भया घोडा बनते
> घोडा चलता ठुमकी चाल।
> मै उसकी मजबूत पीठ पर
> हो जाता सवार तत्काल॥[2]

मोती भया हाथी घोडा, बिल्ली कुत्ता सब कुछ बनते है, पर बालक कहता है कि कभी अगूर, आम अमरूद और अनार नही बनते क्योंकि फिर तो हम दोनो मे झगडा हो पडेगा—

> मोती भया सब कुछ बनते,
> किन्तु न बनते कभी अनार।
> क्योंकि वहा तो हो जायेगी
> हम दोनों मे ही तकरार।[3]

कवि ने बाल विनोद का वर्णन राजा रानी शीर्षक कविता मे बडा सुन्दर किया है। आगन मे दो बच्चे रोज खेलते हैं । लडका राजा बनता है और लडकी रानी। खेलते-खेलते दोनो बच्चो मे झगडा हो जाता है और वे लड पडते हैं । राजा ने पत्थर उठाया और रानी ने थप्पड और दोनो रोने लगते हैं। इस खेल मे बच्चो के सहज स्वभाव का इस कविता मे कवि ने सुन्दर चित्र खीचा है । अन्तिम चित्र का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> उठा लिया राजा ने पत्थर
> रानी ने मारा थप्पड।

---

1 मातृ मंगी बच्ची पृ० ८०
2 मातृ माता भया पृ० ६८१
3 मातृ माता भया पृ० ४८२

रानी का सिर फूटा राजा
उठा लिये सिर पर छप्पड़।
रोते धोते राजा भागे,
भाग गई रोती रानी।
भया ! भया ! करत राजा
रानी कह नानी ! नानी !"[1]

माता के प्रबोधन का भी कवि ने वर्णन किया है। माता बच्चे को जगाती है कहती है कि दूध और बताशा खा ले। वह कहती है कि अब सारी दुनिया जाग गई तू ही अकेला सो रहा है। लता पुष्प पक्षी सभी जग गये अब तू भी जाग जा सवेरा हो गया। कौआ बोल रहा है और हौआ भाग गया। निम्नलिखित पंक्तियाँ बड़ी भावपूर्ण है—

"खिली चमेली चम्पा बेली, वन बागीचा तेरा रे,
पंछी चह चह करते रह रह छोड़ा वास बसेरा रे।
नयन खोलकर विहंस बोल कर आओ छोड़ बखेड़ा रे,
बोला कौआ भागा हौआ, जागो हुआ सवेरा रे।'[2]

अन्त में कवि ने शिशु के सौन्दर्य को देखकर आश्चर्य भी प्रकट किया है कि इसके अधर कितने कोमल रहस्यमय और विस्मित करने वाले हैं—

शिशु के अधरों का विस्मय—
कितना मधु कितना रहस्यमय
जीवन का वह प्रथम—प्रणय।[3]

उपर्युक्त वर्णन के अतिरिक्त कवि ने बच्चे और माँ के प्रश्नोत्तर के रूप में कथोपकथन का भी बड़ा स्वाभाविक चित्रण किया है।[4] कहीं कहीं पर ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करके कविता के प्रभाव को बढ़ा लिया है।[5] इनके सारे वात्सल्य वर्णन में संयोग सुख के ही चित्र है। बच्चे को देखकर तरह तरह की बातें कवि ने वर्णित की है। परन्तु इनमें वह गहराई जो माता और पिता के अन्तःकरण से वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की है, नहीं मिलती। हाँ यह अवश्य है कि इनके वर्णन में विविधता है सरलता भी है। बच्चे के प्रति व्यग्य करके जो स्नेहाभिव्यक्ति की है वह बच्चे की सरलता और भोलेपन पर प्रकाश डालती है।

---

१ आरसी—राजा रानी पृ० ५२१
२ आरसी—राजा मेरे पृ० ३८०
३ आरसी, पृ० ३०१
४ आरसी पृ० ५०२ ५०३
५ आरसी—आवाज, पृ० ४४६
'पलने पर तब लल्लन करता प्याऊ प्याऊ प्याऊ।'

लगते है। बच्चे का स्वभाव है कि उसे खिलौने खूब चाहिए। फिर अगर हँसी चल रही है तो ठीक है पर यदि रो पड तो रो रोकर घर को भर दें, शिशु को राग द्वेष या किसी भयानक चीज से डर नही लगता। उसके स्वभाव का वर्णन करते हुए वे कहते हैं—

'दे दो अथवा दिया छीन लो किसी वस्तु की चाह नहीं
आवे सर्प समीप भले ही कुछ चिन्ता परवाह नहीं,
यह अबोध शिशु शत्रु मित्र का भेद भाव क्यो कर जाने,
बाघ नेवला, चींटी बिच्छू कसे दुनिया पहचाने।'[1]

बाल क्रीडा के आनन्द का भी कवि ने वर्णन किया है। बच्चे के साथ बडे भी बच्चे बन जाते हैं। हाथी, घोडा, बकरी, कुत्ता आदि सभी कुछ बच्चे बना लेते हैं। बच्चे इसमे बडा आनन्द लेते हैं। कवि ने बच्चे की ऐसे ही घोडे पर चढने की प्रसन्नता का वर्णन किया है—

मोती—भया घोडा बनते
घोडा चलता ठुमकी चाल।
मै उसकी मजबूत पीठ पर
हो जाता सवार तत्काल॥[2]

मोती भया हाथी घोडा, बिल्ली कुत्ता सब कुछ बनते हैं, पर बालक कहता है कि कभी मयूर आम अमरूद और अनार नही बनते क्योकि फिर तो हम दोनो मे झगडा हो पडेगा—

मोती भया सब कुछ बनते
किन्तु न बनते कभी अनार।
क्योकि वहा तो हो जायेगी
हम दोनो मे हा तकरार।'[3]

कवि ने बाल विनोद का वर्णन राजा रानी शीर्षक कविता मे बडा सुन्दर किया है। आगन मे दो बच्चे रोज खेलते है। लडका राजा बनता है और लडकी रानी। खेलते खेलते दोनो बच्चो मे झगडा हो जाता है और वे लड पडते हैं। राजा ने पत्थर उठाया और रानी ने थप्पड और दोनो रोने लगते है। खेल खेल मे बच्चो के लडने झगडने का इस कविता मे बडा सुन्दर चित्र खीचा है। अंतिम चित्र का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

उठा लिया राजा ने पत्थर
रानी ने मारा थप्पड।

---

१ आरसी मेरी बच्ची पृ० ३८०
२ आरसी मोती भया पृ० ४८१
३ आरसी-मोती भया पृ० ४८२

रानी का सिर फूटा राजा
उठा लिये सिर पर छप्पड़।
रोते धोते राजा भागे
भाग गई रोती रानी।
भया ! भया ! करते राजा,
रानी कह नानी ! नानी !''[1]

माता के प्रबोधन का भी कवि ने वर्णन किया है। माता बच्चे को जगाती है कहती है कि दूध और बताशा खा ले। वह कहती है कि अब सारी दुनिया जाग गई तू ही अकेला सो रहा है। लता पत्र, पक्षी सभी जग गये अब तू भी जाग जा सवेरा हो गया। कौआ बोल रहा है और हौआ भाग गया। निम्नलिखित पंक्तियाँ बड़ी भावपूर्ण हैं—

"खिली चमेली चम्पा बेली, बन बागीचा तेरा रे,
पंछी चह चह करते रह रह छोड़ा वास बसेरा रे।
नयन खोलकर विहँस बोल कर आओ छोड़ बखेड़ा रे,
बोला कौआ भागा हौआ, जागो हुआ सवेरा रे।"[2]

अंत में कवि ने शिशु के सौंदर्य को देखकर आश्चर्य भी प्रकट किया है कि इसके अधर कितने कोमल रहस्यमय और विस्मित करने वाले हैं—

शिशु के अधरों का विस्मय—
कितना मृदु कितना रहस्यमय
जीवन का वह प्रथम—प्रणय।[3]

उपर्युक्त वर्णन के अतिरिक्त कवि ने बच्चे और माँ के प्रश्नोत्तर के रूप में कथोपकथन का भी बड़ा स्वाभाविक चित्रण किया है।[4] कहीं कहीं पर ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करके कविता के प्रभाव को बढ़ा दिया है।[5] इनके सारे वात्सल्य वर्णन में संयोग सुख के ही चित्र हैं। बच्चे को देखकर तरह-तरह की बातें कवि ने वर्णित की हैं। परन्तु इनमें वह गहराई जो माता और पिता के अंतःकरण से वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की है, नहीं मिलती। हाँ, यह अवश्य है कि इनके वर्णन में विविधता है सरलता भी है। बच्चे के प्रति व्यक्त करके जो स्नेहाभिव्यक्ति की है वह बच्चे की सरलता और भोलेपन पर प्रकाश डालती है।

१ आरसी—राजा रानी पृ० ५२१
२ आरसी—राजा मेरे, पृ० ३८०
३ आरसी पृ० ३०१
४ आरसी पृ० ५०२ ५०३
५ आरसी—आवाज, पृ० ४४६
"पलने पर तब लल्लन करता प्याऊँ प्याऊँ प्याऊँ।'

द्वारकाप्रसाद मिश्र

कृष्णायन रामचरितमानस के अनुकरण पर दोहे चौपाइयों मे लिखा गया कृष्ण चरित काव्य है। इसके कवि द्वारकाप्रसाद मिश्र ने विस्तार के साथ कृष्ण चरित्र की सभी घटनाओं का वर्णन किया है। फलत इसमे वात्सल्य वर्णन भी विस्तृत रूप मे प्रस्तुत हुआ है।

इसमे संयोग और वियोग वात्सल्य दोनो की अभिव्यक्ति हुई है। यह उल्लेखनीय है कि जो बाल चरित कृष्णायन मे वर्णित है उस पर सूर का स्पष्टत प्रभाव है और उसके लिये कवि ने स्वय भी ग्रथ के प्रारम्भ मे सकेत कर दिया है—

"सूरदास पद ज्योति सहारे,
बरने बाल चरित म सारे।[१]

कृष्ण के प्रति प्रदर्शित वात्सल्य के आश्रय वसुदेव देवकी नन्द यशोदा तथा अन्य ब्रजवासी है। इनमे प्रधान रूप से यशोदा फिर नन्द और ब्रज की गोपिया वात्सल्यमयी हैं। वसुदेव देवकी को तो जन्म के समय ही कृष्ण की छवि के अवलोकन का क्षण भर को अवकाश मिलता है। वस्तुत पुत्रोत्पत्ति के सुख का अनुभव तो नन्द और यशोदा को ही होता है।

कवि ने कृष्ण जन्म के समय के उत्सव और उल्लास का विस्तार के साथ वर्णन किया है। शिशु के जन्म के समय मगलगान दान, आशीष तथा भाँति भाति के आनन्द प्रमोद का भी वर्णन है।[२] नन्द यशोदा ही नही ब्रज की सभी गोपिया शिशु जन्म से आनन्दित होती है और आनन्द प्रदर्शन के लिये तरह तरह के मागलिक सामान लाती है। वात्सल्य से ओत प्रोत हुई वे कृष्ण की छवि को बार बार देखती हैं—

"अपलक निरखहिं बाल अनूपा
पियहिं दृगन जनु सुधा स्वरूपा।"[३]

जन्म के पश्चात के विभिन्न सस्कारो का भी कवि ने वर्णन किया है। उनमे से जातकर्म[४] नामकरण[५] और अन्नप्राशन[६] आदि मुख्य हैं। अन्नप्राशन के पश्चात वस्त्रालकार आदि से सुसज्जित किया गया कृष्ण का रूप अत्यन्त मनोहर है। उनके सिर, कपोल और लट आदि अभिराम हैं और वे बघनखा कठुला और पजनी आदि अलकारो से सुसज्जित हैं। कवि ने गोद पालने और भूमि पर क्रीडा करते हुए कृष्ण

१ कृष्णायन १।३।४
२ कृष्णायन १।४०।६
३ कृष्णायन १।४५।६
४ कृष्णायन १।४३।६
५ कृष्णायन १।५५।१
६ कृष्णायन १।५६।२

की शोभा का वर्णन किया है। उसके साथ नन्द और यशोदा का उन्हें देखकर आनन्दित होना भी वर्णित है। कृष्ण आगन मे खेल रहे हैं। नन्द और यशोदा दोनों उन्हें होड लगा लगाकर बुलाते हैं कि देखें कृष्ण किसकी ओर आते हैं। कृष्ण दोनों को प्रसन्न करने के लिए कभी नन्द की ओर और कभी यशोदा की ओर आते हैं। उनका यह बुद्धि चातुर्य नन्द और यशोदा के आनन्द को बढाता है—

"इत यशुमति उत महर बोलावत,
दोउ परस्पर होड लगावत।
चतुर श्याम पितु मातु रिझावहिं
बारी बारी दुहु दिसि धावहिं।"[1]

कृष्ण का देहली को न्सांघने म असमर्थ होकर रोने लगना, माखन रोटी मांगते समय विलम्ब हो जाने से पृथ्वी पर लेट जाना तथा बलराम को बुलाकर माता की साडी और वेणी आदि को खींचने लगना आदि चेष्टायें भी कवि द्वारा वर्णित हुई हैं।

मन शास्त्रियों का यह मत है कि ज्ञान और अनुभव की कमी होने से विवेचनशक्ति की कमी होती है। जिसमें विवेचन शक्ति कम होती है वह किसी भी निर्देश के प्रभाव म शीघ्र आ जाता है। यही दशा बालक की है वह अनुभवहीन होने से निर्देश के प्रभाव म शीघ्र ही आ जाता है। कृष्ण के चरित्र म कवि ने ऐसा ही दिखलाया है। नन्द कृष्ण को माखन खाने को देते हैं। यशोदा कृष्ण से कहती हैं कि हे लाल माखन खाने से दूध पीना अच्छा है क्योंकि उससे चोटी बढती है। सूर की भाँति यहाँ कृष्ण म स्पर्धा का भाव नही है। वे बलराम की भाँति अपनी चोटी को बढाना नही चाहते बल्कि माँ के निर्देश के प्रभाव मे आकर चोटी बढाने के लिए दूध पीने लगते हैं। वे चोटी बढती हुई न देखकर मा से शिकायत करने लगते हैं। कवि ने इस भाव को इस भाँति वर्णित किया है—

"सुनतहिं फेंकेहु कर ते माखन,
चोटी गहि लागे पय मागन।
देहि अबहिं मोहिं दूध पियाया,
अबहु न बाढी माखन खाई।
पियहिं दूध दुइ घूट कन्हैया,
कहत न बाढी चोटी मया।"[2]

इसी प्रकार के बाल स्वभाव के और बहुत से भावो का वर्णन भी हुआ है जैसे खाना खाते समय मुह से लपटाते जाना, अपने साथ बैठकर खाने वाले के मुह

१ कृष्णायन १।५७।५ ६
२ कृष्णायन १।५८।२ ८

स्पष्ट परिचय देते हैं—

"देखत रहहु काहु मम बारे।
लौटहु आज विशेष सवारे॥"[1]

इसी भाँति गोवर्धन धारण के प्रसंग में कृष्ण विनोदवश कह देते हैं कि अब उठाते उठाते पर्वत मुझे कुछ-कुछ भारी लगता है—"अब मोहि लागत कछु कछु भारी" तो यशोदा चंचल हो जाती है। वह सब लोगों से कहने लगती है कि सब मिलकर सहायता करो कहीं बालक कृष्ण गिर न पड़ें—

"भया सब मिलि होहु सहाई।
गिरि न परं कहु बाल कन्हाई॥"[2]

संयोग की भाँति कवि ने वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति भी की है। वियोग के आश्रय नन्द यशोदा और ब्रज की गोपियाँ हैं। उन्हें वियोग की अनुभूति दो स्थलों पर होती है—एक कमल लेने के लिये यमुना में कूद जाने पर और दूसरी मथुरा चले जाने पर। पहली बार का वियोग तो थोड़े ही समय का होता है परन्तु अनिष्ट की आशंका से सबका मन उस समय भी एकदम बहुत व्यथित हो जाता है। परन्तु कृष्ण के मथुरा चले जाने का वियोग ब्रज के लिए असह्य होता है। जिस बालक के साथ कितने ही वर्ष सानन्द व्यतीत हुए उसे अलग करते हुए किसका दिल नहीं टूटेगा? और फिर कंस के यहाँ भेजने में तो अनिष्ट की भी आशंका है। उससे उनकी विरह वेदना और भी बढ़ती है। इस बार जो कृष्ण का विरह हुआ है उसको तीन प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है—

१ कृष्ण के मथुरा चले जाने के समय का।
२ मथुरा में स्थित होने के समय का।
३ प्रवास के पश्चात् पुनर्मिलन का।

कृष्ण और बलराम के मथुरा जाने समय ब्रज में दुख का पारावार उमड़ पड़ता है। एक तो प्रिय के सानिध्य सुख की हानि के कारण और दूसरे अनिष्ट की आशंका के कारण। यह सुनते ही कि कंस का दूत आया है नन्द डर जाते हैं। उनकी दशा का वर्णन कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

"काँपत उर आसन धरत, अर्घ्य न सकत उठाय,
सहमे नन्द निदेश सुनि, गिरेहु बज्र जनु आय।"[3]

यशोदा कृष्ण के वियोग से और अधिक व्यथित होती हैं। उनके हृदय में वात्सल्य भाव और नन्द के हृदय में अनिष्ट की आशंका अधिक व्यक्त हुई है। वे

१ कृष्णायन १।७७।८
२ कृष्णायन १।७७।८
३ कृष्णायन १।१८१

कृष्ण को रोकने के लिए प्रिय से प्रिय वस्तु भी न्योछावर करने को तैयार हैं। वे मयूर से अपने बच्चों की सुरक्षा की याचना करने लगती हैं ताकि किसी प्रकार कृष्ण ले जाया न जाय—

> 'हरि हलधर मोरे प्रति प्यार,
> सत बचहु नहिं मलस प्रहार।
> ये मालव गो चारत वन वन,
> यत सभा इन सुनो न श्रवनन।'[1]

कवि ने कृष्ण के वियोग का वर्णन बड़े विस्तार के साथ किया है। उनका विरह बड़ा व्यापक है। सारे ब्रज के लोग रात्रि भर वियोग के दुःख से दुःखी रहते हैं। सब कृष्ण के बाल चरित्र का वर्णन करते रहते हैं। इतना ही नहीं मानव स्वभाव के अतिरिक्त कृष्ण के वियोग में कवि ने जड़ प्रकृति को भी व्यथित चित्रित किया है। गाय बछड़े, तोता मैना आदि सभी अपनी व्याकुलता प्रकट करते हैं दीपक और नक्षत्र भी मानो शोक से संतप्त हो गये हैं। इस प्रकार कृष्ण का वियोग समस्त जड़ चेतन प्रकृति में व्याप्त हो गया है। प्रकृति में कृष्ण वियोग का विस्तार निम्नोद्धृत पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

> 'धेनु रंभाहिं बछरु अकुलाहीं
> राम श्याम कहि जनु बिलखाहीं।
> शुक सारिकहु जरत विरहागी
> फर फरात हरि हरि रट लागी।
> जात अकारण दीप बुझायी,
> तारक टूट गिरत महि आयी ॥'[2]

यशोदा की दशा तो वर्णनातीत है। सुत वियोग में इस प्रकार विलखती जननी स्यात ही कहीं मिले। कवि ने उनकी दशा वर्णन इस प्रकार किया है—

> 'दशा यशोमति बरनि न जाई
> गिरत भूमि उठि कहत कन्हाई।
> दौरति बहुरि गिरत पुनि धरनी
> टेरति सुत कलपति नद घरनी।'[3]

कंस के मारने के पश्चात नन्द कृष्ण से वियुक्त होते हैं। उनकी कृष्ण के विरह में कातरता पूर्ण दशा भी देखने योग्य है। नन्द के लिए तो कृष्ण ही उनके सब कुछ हैं। उन्हें वे साथ ही घर लौटा ले जाना चाहते हैं। वे राजनीति को क्या जाने ?

---

१ कृष्णायन १।१८१।३४

२ कृष्णायन १।१८५।४८

३ कृष्णायन १।१८७।५६

कृष्ण को छोडते समय वे बड़े दुखी होते है, पर अब चारा ही क्या है। दूसरे की थाती तो लौटानी ही पडती है, पर इस थाती से उनका इतना अपनत्व हो गया है कि लौटाते नही बनता। माना कृष्ण अब तक धरोहर के रूप में थे जिसे वे अब वसुदेव को लौटा रहे हैं। परन्तु अब यशोदा से जाकर यह कैसे कहेंगे कि मथुरा में जाकर कृष्ण को खो आया? इस बात में उन्हें बड़ी ग्लानि होती है वे व्यथित होते है उनका हृदय भर आता है। वियोग वात्सल्य की पूर्ण अनुभूति कराने वाला नन्द की दशा का निम्नलिखित चित्रण द्रष्टव्य है:—

'दत श्याम हहरति यह छाती,
सौंपब उचित तसहु पर थाती।
कहिहौं लौटि यशोदहि जायी,
आयेहु मधुपुर श्याम गवायी।
विगलित वाष्प सलिल नन्द वाणी
निरखत हरिहिं बहुत दृग पानी।'[1]

अन्त में दुखी होते होते एक बार और बलराम को गले लगाते हैं और वियोग दुख में दुखी हुए ब्रज लौटते हैं:—

'हृदय लगाय श्याम बलरामा।
बिलखत लौटि परे ब्रजगामा॥'[2]

यशोदा भी कृष्ण की विरह व्यथा के कारण इतनी क्षीण हो गई है कि पहचानने में भी नहीं आती। उद्धव के आगमन पर यह सुनकर कि कृष्ण ने उनके लिये सन्देशा भेजा है कि तुमसे बिछुडने पर मुझे किसी ने भी माखन नहीं दिया मातृ वत्सला यशोदा उद्धव से पूछती हैं कि कृष्ण ने कुछ और भी मेरे लिए कहा है:—

पूछत जलकण नयन दुराई
औरहु कछु मोहि कहेउ कन्हाई।[3]

कृष्ण ने जो सन्देश भेजा है वह कवि ने अत्यन्त स्वाभाविक और वात्सल्य रस से आप्लावित वर्णित किया है। कृष्ण अपने माता के विरह की दशा का अनुमान लगाकर उन्हें ढाढस देते हुए सन्देशा भेजते हैं कि मैं शीघ्र ही आऊंगा फिर जो सन्देशा देते हैं वह पुत्र विरह से कातर यशोदा के आंसुओं का पोछने वाला है:—

तब लगि लकुटी कमरी मोरी,
धरेउ सति भवरा चकडोरी।
राखेउ मुरली कतहु लुकायी,
न जनि राधा जाय चुरायी।

---

१ कृष्णायन २।८२।६ ८
२ कृष्णायन २।८३।८
३ कृष्णायन २।१७०।२

गुनति हसति बिलपति महतारी,
सुरी स्याम सुनि आए सुरारी। [1]

अन्तिम पंक्ति में माँ की ममता मूर्तिमान हो उठती है। यशोदा पुत्र विरह से दुखी है पर जब उसे पता चलता है कि कृष्ण वहाँ प्रसन्न हैं तो उसे भी सुख का सा अनुभव होता है। कृष्ण के सुख दुख के साथ यशोदा का भी सुख दुख चलता है।

प्रवत्स्यत्पुत्र के विरह में यशोदा सवाय के समय किये गये कार्यों का स्मरण करती है। उन्हें पश्चाताप होता है कि उन्होंने माटी खाने भाजन फोड़ने माखन चुराने और गाय चराने के ऊपर कृष्ण के प्रति कठोर व्यवहार क्या किया? उनके पश्चाताप से युक्त वात्सल्य प्रेम की व्यंजना इन पंक्तियों द्वारा होती है—

जतिक चहहिं खाहिं हरि माटी
अब नहिं कबहु छुवहु कर साँटी।
मन माने गृह भाजन फोरी
जतिक चहहिं करहिं हरि चोरी।
अब नहिं ऊखल बाधहिं मया
कहिं हो पुनि न चरावन गया। [2]

कृष्णायन में प्रवास के पश्चात् पुनर्मिलन की दशा का भी वर्णन है। कृष्ण का नन्द यशोदा और ब्रज ग्राम के निवासियों से पुनः मिलन कुरुक्षेत्र में होता है। कृष्ण पहले से कुरुक्षेत्र में होते हैं। जब वे ब्रज के लोगों के आगमन की बात सुनते हैं, तो तुरन्त ही उनकी ओर दौड़ते हैं। नन्द का शरीर कृष्ण को देखकर पुलकित हो जाता है। माता यशोदा कृष्ण को देखकर भी नहीं देख सकी उनकी आँखों में प्रमाश्रु उमड़ पड़ते हैं। वे प्रेम सहित कृष्ण का आलिंगन करती है और स्पर्श करके ही अपने पुत्र को पहचानती है। यशोदा और कृष्ण के पुनर्मिलन की दशा का वर्णन कवि ने अत्यन्त मार्मिक शब्दों में किया है—

शमि विरहज चिर उष्ण नयन जल
आनन्द—अश्रु बहे हिम शीतल।
सुरसरि जल निदाघ जनु दाहा
बहेउ हिमालय सलिल प्रवाहा।
लहि दृग शक्ति विलोकेउ माता
मूर्ति अंक निज प्राण प्रदाता।
चिबुक हस्त विधु वदन विलोकत
सिक्त कपोल सलिल दृग मोचति।

१ कृष्णायन २।१७।४
२ कृष्णायन २।१७।४

फेरति मस्तक कर महतारी,
विह्वल श्री हरि विश्व बिसारी।"[1]

कृष्णायन मे वर्णित वात्सल्य का अध्ययन करने पर प्रतीत होता है कि उसम सयोग और वियोग वात्सल्य का विशद वर्णन है। जहा कितने ही स्थलो पर सूर का स्पष्ट प्रभाव है वहा कितने ही स्थल कवि के भी मौलिक हैं। उनम स्वाभाविकता मिलती है। वात्सल्य और हास्य के मिश्रण के बहुत से चित्र कवि ने चित्रित किये हैं। कृष्ण के प्रति भक्तिभाव होने से अनेक स्थलो को भक्तिरस के अन्तर्गत भी समाविष्ट किया जा सकता है। परन्तु सूर की भांति कृष्ण, कवि की भक्ति के आलम्बन नही हैं। अत भक्ति भाव का कथन ही है उससे भक्ति रस की अनुभूति नही होती। उन्होने कई प्रसगो मे कृष्ण के ईश्वरत्व का भी वर्णन किया है जैसे मुख खोलने पर कोटि विश्व दिखला देने म, देहरी लाघ न सकने के प्रसग म और डोरी से बाधने के प्रसग आदि म। कृष्ण के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य मे व्यापकता है। नन्द यशोदा के अतिरिक्त व्रज की गोपिया और गोप भी उससे ओत प्रोत हैं। इतना ही नही कृष्ण के वियोग के समय तो प्रकृति के अन्तर्गत भी ऐसे भाव दिखलाये हैं। साराश यह है कि द्वारकाप्रसाद मिश्र द्वारा वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति व्यापक हुई है। इनके अनेक स्थल अत्यन्त मार्मिक हैं। सयोग और वियोग के बहुत से स्थलो पर वात्सल्य-रस की पूर्ण निष्पत्ति हुई है।

हरदयालुसिंह

हरदयालुसिंह ने दैत्य वश और रावण नामक दो महाकाव्यो म वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। वात्सल्य की सार्वभौमिकता के कारण राक्षसो मे भी अपनी सन्तान के प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है। कवि की उपयुक्त कृतियो म अभिव्यक्त वात्सल्य रस के उदाहरण इस तथ्य की सत्यता के प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इनके द्वारा जो वात्सल्य वर्णन हुआ है उसके आश्रय और आलम्बन राक्षस ही हैं। केवल वामन एक ऐसा आलम्बन है जो देवता है।

दैत्य वश

दैत्य वश म वात्सल्य के आश्रय और आलम्बन अनेक हैं। सर्वप्रथम कश्यप की पत्नी अदिति के यहा वामन का जन्म हुआ है। उसके प्रति अदिति और देवताओ की स्त्रियो के वात्सल्य की अभिव्यक्ति की गई है। जिस समय वामन का जन्म होता है और उसके रोने की आवाज देवताओ की स्त्रियाँ सुनती हैं तो वे सब बडी प्रसन्न होती है और मिल जुलकर मधुर कण्ठ से गाती हुइ कश्यप के घर आती हैं। वे उसे लोमस ऋषि के समान चिरजीवी होने का आशीर्वाद देती हैं—

'सुनि कै सिसु रोवन की प्रिय बानि तिया मन मोद बढावन लागी,
चहु ओर सों देवन की बनिता, जुरि कस्यप के गृह आवन लागीं।

---

१ कृष्णायन ५।८४।३८

अनुराग सों भाग भरी ललना कल कोकिल कठ सों गावन लागीं,
चिरजीवी रहैं सिसु लोमस लौं सब चद पुरारि मनावन लागीं ॥'[1]

सरस्वती, उमा रमा और शची अदिति को बधाई देती है। वे हाथों में अक्षत दूध आदि शुभ वस्तुओं से युक्त सोने के थाल लिए होती हैं। सरस्वती संतिय रचती हैं और पार्वती मंगलाचार गाती है। इस प्रकार वामन के जन्म पर आनन्द प्रदर्शित करती हैं। वामन के कुछ बड़ा हो जाने पर स्त्रियाँ तरह तरह से अपना वात्सल्य दिखाती है। कोई शिशु के नेत्रों में अजन लगाती है कोई सिर के बालों को सवारती हैं कोई प्रसन्न होकर उसे गोद में लेती हैं कोई अपने कोमल हाथों से ऊपर उछालती है और कोई उसकी मुस्कराहट पर न्यौछावर होती है। स्नेह के कारण नज़र भरकर कोई भी स्त्री शिशु की ओर भली भाँति देखती भी नहीं है कि कहीं उसे नजर न लग जाय—

दृग अजन रजन कोऊ कर सुठि सीस के बार सवार कोऊ
हरखाय कै गोद मे लेय कोउ कर कजनि मजु उछार कोउ।
मुसकानि प सुदर वा सिसु की मनि मानिक सों मन वार कोउ।
लगि जाय न दीठि कहू यहि के भरि नैन न बाल निहार कोऊ ॥'[2]

इसी प्रकार के अन्य अनुभवों की अभिव्यक्ति भी कवि ने की है। कोई उस बच्चे को पालने पर डालकर मन्द मन्द झुलाती है। कोई दुलार करती हुई गाती है कोई उसे हँसाने के लिए पुचकार कर चुटकी बजाती है और यदि शिशु रोने लगता है तो गोद में लेकर दूध पिलाती है।[3]

कवि ने वामन की शिशु क्रीडा का वर्णन भी किया है। वामन के दूध के दो दाँत दिखाई देने लगते हैं। वह कभी जीभ निकालता है और कभी आरसी में प्रतिबिम्ब को देखता है। उसकी यह दशा देखकर सबका वात्सल्य उद्दीप्त होता है। फिर कभी वह तोतला और तोतले वचन बोलता है। कभी किसी स्त्री की उँगली पकड़कर धीरे धीरे चलता है। वह सबके मन को अच्छा लगता है और माता पिता उसको देख कर अत्यन्त आनन्दित होते हैं। कवि ने उसकी इस दशा का चित्रण निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

पाय के बल कहूँ तुतराय सकेत प माय नवावन लागो।
लौं अगुरी गहि क तिय की हरए हरए महि धावन लागो।
भावन लागो मन सबके सुख कोर कहू हरसावन लागो।
या विधि वावन बाल नित पितु मातु को मोद बढ़ावन लागो ॥'[4]

---

१ दयवन्त पृ० १४६
२ दयवन्त पृ० १४६
३ दयवन्त पृ० १४
४ दयवन्त पृ० १४०

कवि ने वातावरण के अनुसार बालक वामन की क्रीडा भी दिखलाई है। शक्ति-सम्पन्न राक्षसों की भाँति वामन के खेल हैं। वह मतवाले हाथियों की सुंड पकडकर दौड जाता है। कभी शेर के दाँतों को गिनता है या फिर उन पर चढकर चलता है। कभी शेरनी के दूध पीते बच्चे को खींच लाता है।

वात्सल्य का दूसरा आलम्बन विरोचन के पुत्र बलि का पुत्र बाणासुर है। *बाण प्रवास से लौटकर आता है। इधर बलि को पाताल भेज दिया जाता है।* बाण की माता द्विविध रूप से व्यथित होती है। फिर जब बाण आता है तो उसको बड़ा ढाढस मिलता है। निर्धनी को धन प्राप्ति की भाँति वह अतीव आनन्दित होती है। उसकी आँखों से आँसू निकलने लगते हैं। वह बाण का माथा सूँघती है और उसकी बाँहों को पकडकर छाती से लगा लेती है। प्रेमातिरेक के कारण उसका गला भर आता है और वह प्रयास करने पर भी बोल नहीं पाती। कवि ने उसके मूक चित्र को निम्नोद्धृत पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है—

'बान को देखत ही तिय ने दुख पाय घने असुवा बरसायो।
ज्यों निधनी धन पाय कहूँ लखि कै तेहि बाम को धीरज आयो।
सूँघि कै माथ बिठाय समीप भुजा भरि कै तिहि कंठ लगायो।
बोलन कीन्हों प्रयास तऊ भरि आयो गरो न कछू कहि आयो।।'[1]

दत्य-वंश' में वात्सल्य का आश्रय बाणासुर भी है। उसका पुत्र असकंद और पुत्री उषा आलम्बन हैं। असकन्द जब कुछ बड़ा हो जाता है तो बाल सुलभ चापल्य का समावेश हो जाता है। वह नाना भाँति के कौतुक करता है और पद पद पर बाल स्वभाव का परिचय देता है। कभी उल्टी गिनती या अक्षरों का उच्चारण करता है। कभी कलम को उल्टी पकडकर स्याही में डुबोता है। कभी उँगली से ही तख्ती पर लिखने लगता है। *कभी बुलाने से बिल्कुल नहीं बोलता, और कभी नाराज* होकर शोर मचाने लगता है। कभी प्रतिमा की भाँति अचल बैठा रहता है। कभी आवाज सुनते ही बलपूर्वक भाग जाता है। ये सब बातें बाल-स्वभाव का परिचय देती हैं। कवि ने इसका चित्रण बडे कौशल्य पूर्ण शब्दों में किया है—

एक 'नौ सात' पै 'ना' मा पढ़ै कबौं लेखनी को उल्टी मसि बोर।
आँगुरी सौं पटिया पै लिखै खरिया तेहि माहि मिलाय कै घोर।
नेकु बुलाय न बोल कबौं, कबौ खोजि कै केतो मचावति सोर।
मूरति सौं गडो बैठो रहै, पै पुकार सुने ही भगै बर जोर।'[2]

बाण की पुत्री उषा भी तोतले बोल बोलकर मन को हरती है। वह अपनी सखियों के साथ गुड़िया खेलने के लिए माँ से हठ करती है। बाल्य काल के संक्षिप्त वर्णन के पश्चात् कवि ने अनिरुद्ध के साथ विवाह होने पर उषा के वियोग का वर्णन

१ दत्य वंश, पृ० १६०
२ दत्य वंश, पृ० १६६

किया है। उषा की मा को पुत्री के विरह की कल्पना करके रात्रि भर नींद नही आती है। बाण भी उषा को रोती देखकर बडा कातर होता है। उषा के प्रति बाण के गुरु की पत्नी का भी वात्सल्य कवि ने प्रदर्शित किया है। वह पति के घर जाती हुई उषा को नाना भाति की शिक्षा देती है।[1]

उषा बाण के पितामह विरोचन की प्रपौत्री है। कवि ने प्रपौत्री के प्रति विरोचन का वात्सल्य अभिव्यक्त कराया है। वे उषा के वियोग के समय धैर्य खो देते है। उनके नेत्रो से नीर बहने लगता है। उन्हे उषा की स्मृति व्यथित करती रहती है। कवि ने विरोचन की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है—

वृद्ध विरोचन बिलखि रोय असुवा बरसावत।
सुरति उषा की रही ताहि यहि भाति सतावत॥"[2]

और तो सब सम्बन्धियो के हृदय से उषा के अभाव का दुख दूर हो जाता है। परन्तु वृद्ध विरोचन के मन से उषा की स्मृति नही उतरती। वह भूल भी कैसे ? बाल्यकाल से ललककर जिसको आनन्दपूर्वक गोद मे खिलाया और अपनी आख की पुतली के समान समझा है उसका भूलना सहज सम्भव नही। अत वे कहते हैं—

सिसुपन से ही ललकि गोद ले समुद खिलाई।
चख पुतरी लौं राख चाव सौ लाड लडाई॥[3]

दैत्य वश महाकाव्य मे वर्णित वात्सल्य के आलम्बन पुत्र और पुत्री दोनो है। उनमे पुत्र के सयोग वात्सल्य और पुत्री के वियोग का वर्णन हुआ है। कवि ने गुरु पत्नी और पितामह नये आश्रयो द्वारा वात्सल्यानुभूति की अभिव्यक्ति की है। यद्यपि बच्चे के शिशु रूप वर्णन की ओर विशेष ध्यान नही दिया है। जो वर्णन कवि ने किया है वह निस्सन्देह कवित्वपूर्ण है।

रावण महाकाव्य

रावण महाकाव्य हरदयालुसिंह की दूसरी काव्य कृति है। इसमे भी दैत्य वश की भाति राक्षसो का ही वर्णन है। इस ग्रथ मे भी कवि ने वात्सल्य का वर्णन किया है। वात्सल्य के आश्रय आलम्बनो के रूप मे सर्वप्रथम कवि ने केतुमती (रावण की मातामही) का कैकसी (रावण की माता) के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित किया है। अपनी कन्या कैकसी के लिए केतुमती बडी चिंतित रहती है। फिर विश्रवा मुनि के पास किसी प्रकार समझाकर तप करने भेज देती हैं। विश्रवा मुनि के पास से कैकसी जब लौटकर आती है तो केतुमती पुत्री को देखकर बडी प्रसन्न होती है। वह उसका मस्तक सूघती है और बाहे फैलाकर छाती से लगा लेती है तथा प्रसन्न होकर बाते पूछने लगती है। फिर कैकसी का रावण कुम्भकरण और विभीषण के प्रति वात्सल्य वर्णित है। जब रावण आदि भ्राता तपस्या करने के लिए जाना चाहते हैं तो कैकसी

---

1 दैत्य वश पृ० २२६
2 दैत्य वश पृ० २४१
3 दैत्य वश पृ० २४२

को पुत्रों के वियोग के कारण धैर्य नहीं बंधता। जब उन्हें विदा भी करती हैं तो अनेक प्रकार से प्रेम प्रदर्शित करती हैं पुत्रों को कंठ से लगाती हैं सिर सूंघती हैं और आशीर्वाद देकर विदा करके अपने मातृ हृदय का अच्छा परिचय देती हैं। जब तीनों भाई लौटकर आते हैं तो बधाइयाँ बजती हैं हर्ष छा जाता है और प्रसन्न होकर केकसी मोतियों के चौक पुरवाती है। माल्यवान (रावण के नाना का भाई) प्रसन्न होकर पट, आभूषण और दान आदि देता है। केतुमती तो रावण को देखकर और भी अधिक आनन्दित होती है—

केतुमती महा मही उर में सुख न समात।
आनन्द को अम्बुधि बढ़त लखि ससि मुख दस गात।'[1]

इसके अतिरिक्त वात्सल्य का आलम्बन मेघनाद है। मेघनाद के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य का आश्रय उसकी माता मन्दोदरी है। दस पुत्रोत्पत्ति पर रावण के नाना सुमाली और माल्यवान तथा मातामही केतुमती और सुन्दरी (रावण के नाना के भाई की पत्नी) आदि सभी सम्बंधी हर्षोल्लास का प्रदर्शन करते हैं। किन्तु उनकी प्रसन्नता का वर्णन संक्षिप्त है। मन्दोदरी मेघनाद की माता है उसके अन्तरतम में अन्य सभी की अपेक्षा वात्सल्य का विस्तार होना स्वाभाविक है।

पार्वती की पूजा करते समय मन्दोदरी ने अपनी पुत्रैषणा प्रकट की है। उसका मन इस बात की ओर बहुत है कि वह शिशु क्रीडा का आनन्द प्राप्त कर सके। राक्षस वंश में शाप वश कुछ ऐसा था कि उनकी स्त्रियों के बच्चे तो होते थे परन्तु वे शिशु क्रीडा का आनन्द लाभ नहीं कर सकती थीं।[2] मन्दोदरी पार्वती से यह वरदान मांगती हैं कि हम भी शिशु को गोद में खिलाने का आनन्द प्राप्त करें और इस प्रकार बच्चों को गोद में खिलाकर अपने को बड़ा भाग्यशाली समझें—

'ले सिसु गोद खिलाइबे को बर
या बिधि मातु हमें अब दीजिये।
आन तियान समान ही बंस की,
बामन को बड़ भागिनि कीजिये।'[3]

शंकर जी के आशीर्वाद से मन्दोदरी की कामना पूरी होती है और उसके पुत्र उत्पन्न होता है। शिशु के रोदन को सुनते ही हर्ष का वातावरण छा जाता है और धात्रमालिनी आदि वहाँ आ जाती हैं। उस समय के आनन्दमय वातावरण में नूप शाखा भी है। मन्दोदरी की ननदी होने के कारण वह मन्दोदरी से परिहास करने लगती है। कवि ने उपर्युक्त सारे वातावरण का चित्र निम्नलिखित कविता में किया है—

१ रावण महाकाव्य, पृ० ४१६
२ रावण-महाकाव्य पृ० ६१६
३ रावण-महाकाव्य, पृ० ६१७

"स्रोननि कों सुख दनी महा,
सुनते सिसु रोदन की प्रिय बानी।
सूतिका—गृह में भाय गई।
तजि प्रासिन को धान्यमालिनी रानी॥
सूपनखा परिहास को लागी।
सो सुनि मय तनया मुसक्यानी॥
मगल साजनि साज सगी।
कुम्भो माता मही मन म मुद मानी॥"[1]

पुत्रोत्पत्ति का समाचार सुनाने के लिए दासी रावण के पास आती है। उस समय जो प्रसन्नता का पारावार लका में उमड़ने लगा उसका वर्णन नही किया जा सकता। रावण ने पुत्र जन्म के हर्ष में सब कुछ दान कर दिया। माल्यवान और सुमाली के पास भी जो कुछ था सभी लुटा दिया। इस प्रकार के आनन्दोल्लास का भी कवि ने सुन्दर वर्णन किया है।

मन्दोदरी जब शिशु को देखती हैं तो उसके मुख कमल की छवि अवलोकन से अपार आनन्द प्राप्त करती हैं। वह शिशु को गोद में लेती है और प्रसन्न होकर पार्वती की कृपा का स्मरण करती हैं। वह बच्चे को आशीर्वाद दिलाने के लिए धान्यमालिनी के पैरों में डाल देती हैं और वह उसे आशीर्वाद देती हैं। आशीर्वाद का कथन कवि ने समय और वातावरण के अनुकूल कराया है। राक्षस युद्ध प्रिय हैं। उनका युद्ध या तो देवताओं से होता था या राक्षसों से। धान्यमालिनी इसी से आशीर्वाद देती हैं कि सारे देवता और राक्षस भी मिलकर रण में इसे हानि न पहुचा सकें। और दूसरी किसी वस्तु की राक्षसों को इतनी आवश्यकता नही थी। इस भाव का चित्रण कवि ने निम्नोद्धत पंक्तियों में किया है—

'नील सरोरुह सों सिसु को
बर आनन हेर्यो मन्दोदरि रानी।
त्यो सुत को निज गोद में ले
गुनि गौरि प्रसाद हिये हरषानी॥
डारि दियो धनिमालिनी के पग,
देन असीस लगी मृदु बानी।
सारे सुरासुर हू रन में
जुरि के पहुचाय सकें नहि हानी।'[2]

---

[1] रावण महाकाव्य पृ० ६।१५
[2] रावण महाकाव्य पृ० ६।१७

रावण ज्योतिषियों को बुलाकर पुत्र के भाग्य के विषय में पूछता है और जब उसके बड़े पराक्रमी होने की बात सुनता है तो अतीव आनंदित होता है। स्त्रियों को बच्चे के खिलाने में बहुत आनन्द आता है। मेघनाद को सेविकाएं कभी लेकर बाहर निकलती हैं तो लंका की स्त्रियां उसके मुख चन्द्र को देखकर बड़ी आनंदित होती हैं। कभी अपनी गोद में लेकर स्त्रियाँ उसे खिलाती हैं। कोई स्त्री हंसकर उसे ऊपर उछालती है और कोई अपनी गोद में चुटकियां बजाकर उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करती हैं। लंका की स्त्रियों का इस प्रकार शिशु के साथ क्रीडा करने का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

अंक में ले परिचारिका ताहि
खिलावन कों जब बाहर ल्यावतीं।
तेज सौं पूरन वा सिसु को लखि
लंक की बामा महा सुख पावतीं।
देखन कौं सुत कौं ले समोद,
तिया निज गोद में आपु खिलावतीं।
कोऊ उछारती ताहि सहारा
लिये कनियाँ चुटकीनि बजावति।"[1]

मेघनाद की बाल क्रीडा का भी कवि ने वर्णन किया है। बच्चे के दूध के दांत हंसना किलकारी मारना आदि बड़े आनन्ददायक होते हैं। मेघनाद का एक तो सुंदर मुख स्त्रियों को आनन्द देता है और दूसरे जब वह दासियों की उंगलियों को पकड़कर धीरे धीरे पैर रखकर चलता है तथा बड़ों को देखकर हाथ जोड़ता है तो सब लोग अत्यन्त आनन्द का अनुभव करते हैं और अपने शरीर तथा मन को न्यौछावर करते हैं। मेघनाद की शिशु क्रीडा को वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति कराने वाला चित्रण निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

दूध के दांत दिखाव कबौं
हंस के किलकारिन की कबौं मार।
नील सरोरुह सौं मुख देखि।
तिया दबी जाती आनन्द के भार॥
दासिन की अंगुरी गहि कै।
हरुमेई लग्यो महि पै पगु धार॥
जोरत पानि बड़ेन को देखि
लगें गुरु लोग तनो मन वार॥[2]

---

१ रावण-महाकाव्य ६।११९
२ रावण महाकाव्य ६।१२०

वात्सल्य के एक और आलम्बन का भी हम इस ग्रन्थ में देखते हैं। रावण की मृत्यु के पश्चात मय दानव मन्दोदरी और धान्यमालिनी को विभीषण के अत्याचारों के कारण अपने घर ले जाता है। धान्यमालिनी गर्भवती होती है और उससे अरिमदन नामक पुत्र होता है। उसके प्रति धान्यमालिनी मयदानव और नाग स्त्रियों के वात्सल्य का कथन है। जब धान्यमालिनी के पुत्र की खबर फैलती है तो मय दानव के यहाँ नाग स्त्रियाँ सोहर आदि सुन्दर समयोचित गीत गाती हुई आती हैं—

' नागतिया हर्षित चलीं मय दानव के धाम।
सोहर सखियाँ गीत बहु गावति परम ललाम।' [1]

मयदानव को बड़ी प्रसन्नता होती है। वह ज्योतिषियों से उसका भाग्य दिखलवाता है। दान देता है उपवीत कराता है नामकरण कराता है। माता शिशु को खेलते देखकर अत्यन्त आनन्दित होती है। अरिमदन भी राक्षस के बालकों के समान बल और पराक्रम के खेल खेलता है। बालकों के साथ ऐसे भयंकर खेल खेलने का कथन करते हुए कवि ने लिखा है—

खचि सिंह की पूँछि को अरिमदन बरजोर।
लौटें बालकवृन्द सग चल्यो भवन की ओर॥ [2]

निष्कर्ष यह है कि यद्यपि रावण महाकाव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य के आलम्बन कई हैं परन्तु कवि ने मेघनाद के वात्सल्य का वर्णन विस्तृत और श्रेष्ठ किया है। इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि जो परम्परा से भय और घृणा के पात्र रहे हैं उनको वात्सल्य जैसे निश्छल प्रेम का पात्र बनाकर कवि ने नई रेखा खींची है। काव्य के सभी पात्र पुरातन हैं, इसलिए उनके रस के लेने में पाठक को उत्सुकता सी रहती है।

डा० देवराज

वात्सल्य रस की सुन्दर रचना करने वाले कवियों में डा० देवराज का भी स्थान है। उन्होंने धरती और स्वर्ग नामक पुस्तक में कुछ छन्द वात्सल्य-वर्णन के लिखे हैं। इनमें बाल रूप क्रीडा और स्वभाव के चित्र चित्रित किये गये हैं। बाल रूप और उसकी मधुर किलकारी का वर्णन उनकी निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

वे चकित सलौने स्वच्छ नयन
यह ओस बिन्दु धोया सा तन।
नन्हें कर पद कोमल आनन,
स्मित भीगे अधरों का कम्पन

1 रावण महाकाव्य १६।५
2 रावण महाकाव्य १६।८

अस्फुट आ ओ का उच्चारण।
किलकार भरी वह कभी हसन। [1]

शिशु क्रीडा में स्तन्य पान करती हुई बच्ची की क्रीडा का वर्णन बडा स्वाभाविक है। मा लेटी हुई है। उसके पास आठ महीने की बडी सुकुमार बच्ची लेटी हुई है। वह अपने कोमल अधरों को हिलाकर दूध पी रही है। थोडी देर में ही वह अपने कोमल लाल लाल मुख को खोल लेती है और हस हसकर अपनी मां का मुख देखने लगता है। कवि उसका वात्सल्यमय चित्र इस प्रकार अंकित करता है—

'कुछ क्षण मे ही नयन खोलकर
उठा दृष्टि अति कोमल काली।
विवश किये मुख सम्पुट लाली,
मा का प्रिय आनन निहारती।
अधखिल कलिका सी हस हसकर ॥ [2]

कभी मा खीझ कर कहने लगती है कि बेटी पी जल्दी पी मुझे और बहुत काम करने हैं परन्तु उसकी खीझ पर भी शिशु का निद्वन्द्व हुए अपनी मनोवाछित क्रीडा में मग्न रहना बडा स्वाभाविक है। बच्ची पर मा की खीझ का कैसा प्रभाव ?

पर वह फिर फिर पुलक विहसती फिर निश्चिन्त पयोधर गहती।' [3]

कभी कभी बच्चे की क्रीडा के वर्णन में वात्सल्य के साथ-साथ मिश्रित, हास्य की भी अनुभूति होती है। कवि ने यहा एक ऐसा ही चित्र खीचा है। मा पलंगे पर आकर बैठती है इतने में मुस्कराता हुआ बालक जल्दी जल्दी घुटनों से चलकर उसके पास पहुचता है और मा के कंधे को पकडकर मुड मुड कर मा का मुख झुक झुक कर देख रहा है। [4] धीरे धीरे वह मा की गोदी में सरक जाता है और दोनों हाथों से पयोधर ढूढने लगता है साथ ही हसता भी जाता है कैसा वात्सल्य पूर्ण चित्र है। माता सस्नेह उसकी पीठ पर थपकी देती है—

"कितना नटखट कहती हसकर
फिर देती है थपकी मृदुतर,
मा बैठी पलंगे पर आकर।" [5]

डा० देवराज ने वात्सल्य के जो छन्द लिखे हैं उनमें सयोग सुख का वर्णन है और विप्रलंभ बाल रूप और स्तनपान के अंकित किये हैं। साथ ही यह भी द्रष्टव्य

---

१ धरती और स्वर्ग, पृ० २१
२ धरती और स्वर्ग पृ० २२
३ धरती और स्वर्ग, पृ० २२
४ धरती और स्वर्ग पृ० २४
५ धरती और स्वर्ग, पृ० २४

है कि कवि बच्चो के प्रति वात्सल्य भाव प्रदर्शित करते करते प्रगतिवादी विचार अभिव्यक्त करने लगता है। उसके लिये नीचे की पंक्तियां उद्धृत की गई हैं—

"क्या तुम कहते—
वे बच्चे जो खेल रहे हैं धरा गोद मे,
उनमे कितने फटे पुराने वस्त्र पहनते
और तरसते दूध दही को अन्न मात्र को।"[1]

इसका अभिप्राय यह है कि कवि ने वात्सल्य वर्णन के साथ साथ समाज की दुरवस्था पर भी व्यंग्य किया है। ऐसे स्थलो पर दुःख और दरिद्रता के भावो के उद्रेक के कारण वात्सल्य भाव के प्रस्फुटन का कोई स्थान नही रह जाता।

आनन्द कुमार

आनन्द कुमार ने अगराज नामक महाकाव्य लिखा है। इसमे भी वात्सल्य का वर्णन हुआ है। अगराज मे कर्ण को आलम्बन बनाकर वात्सल्य की भावाभिव्यक्ति की गई है। उसके प्रति प्रदर्शित वात्सल्य के आश्रय कुंती और उसका पालन पोषण करने वाले अधिरथ नामक सूत तथा उसकी पत्नी राधा है। कुंती ने अपने पुत्र कर्ण को त्याग दिया था। इसलिये नही कि उसको वह प्यारा नहीं था। माँ के लिये पुत्र सदैव प्यारा है। परिस्थितिवश विवश होकर कुंती को त्यागना पडा क्योकि वह अविवाहिता थी। वैसे उसके वात्सल्य मे कोई कमी नही थी। इसी से जिस समय कुंती सद्योत्पन्न पुत्र को त्यागने जा रही थी उस समय उसकी विवशतापूर्ण दशा ऐसी थी—

'अश्रु नेत्र मे कर मे शिशु अंतर मे ज्वाला।'[2]

कुंती ने कर्ण को त्यागा नही उस को त्यागना पडा। उस समय का उसके वात्सल्यपूर्ण हृदय का चित्रण कवि ने अच्छा किया है। कुंती विवशता के कारण उसको अपने पास नही रख सकती परंतु यह भी नही चाहती कि उसका अनिष्ट हो। अतः एक मंजूषा मे रख कर उसे सरिता मे प्रवाहित करती है। उस समय उसकी पुत्र प्रेम मे व्यथित स्थिति का कवि ने चित्रण करते हुए लिखा है—

'बार बार मुख देखती चुम्बित करती भाल को।
मंजूषा स्थापित किया, कुंती ने निज बाल को॥'[3]

कुन्ती अपने नेत्रो से उस अज्ञात स्थान की ओर जाने वाले पुत्र के मुख की ओर देखती है। वह दुखी होकर लगातार अश्रु गिराने लगती है। ममतामयी माता भी निर्मम बन रही है क्योकि सामाजिक बंधन उसके इस पुत्र को त्यागने के लिये

१ धरती और स्वर्ग पृ० ८५
२ अगराज, पृ० १६
३ अगराज पृ० १६

बाध्य कर रहे हैं। इसका चित्र भी कवि ने सुदर खीचा है—

"बारम्बार उठाकर उसको कम्पित कर से।
आलिगित कर बोली अबला करुणा स्वर से।
अहो विवशता है अथवा यह भाग्य विषमता।
मन मे ममता किंतु कर्म मे है निर्ममता ॥"[1]

जल मे प्रवाहित करने पर पुन वह शिशु से कहती है कि तुम्हारा सब प्रकार कल्याण हो जहा कही भी तुम रहो वही तुम्हारी जीत हो। साथ ही नाना देवताओं से भी प्रार्थना करती है कि इस बालक पर सब प्रकार से कृपा करके रक्षा करना। कहने का तात्पर्य यह है कि कुती के हृदय मे मातत्व की कोई कमी नही है परन्तु परिस्थितिया ने उसे विवश बना दिया।

कर्ण के युवा हो जाने पर भी एक बार कुती का उसकी ओर वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है जबकि वह उससे कुण्डल मांगने जाती है। उसके नेत्रों से स्नेहाश्रु प्रवाहित होने लगते हैं और वह कर्ण को गले लगा लेती है। उस समय का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है—

'भावज प्रीति प्रबोधक अश्रु पया-नयन द्वय में भर आया।
होकर स्नेह विमुग्ध वहा उसने सुत को निज कठ लगाया।
भूपति ने अति आदर से उसके चरणों पर शीष झुकाया।
मात तथा सुत ने नव जाग्रत प्राकृत प्रेम ममत्व दिखाया।'[2]

अपने चिर वियुक्त पुत्र से मिलकर जब कुती घर लौटती है तो उसके विरह से व्यथित होती है। वह चलते समय कर्ण के मुख को फिर देखती है। निम्नलिखित पक्तियो मे कुती के वात्सल्यपूर्ण हृदय का अच्छा परिचय मिलता है—

' सुदूर से भी अनिमेष दृष्टि से, विलोकती सतत आत्मजात को।
विभिन्न सी होकर अगराज से, यथा गई पीडित प्रेत प्राण सी ॥'[3]

अगराज काव्य मे कर्ण का पालन पोषण करने वाले सूतक और उसकी पत्नी राधा का भी वात्सल्य वर्णित है। ये लोग सन्तान सुख से वचित थे। पयस्विनी में प्रवाहित मजूषा से शिशु को प्राप्त करके परम आनंदित हुए और उसे देवकी असीम अनुकम्पा जानकर भाग्य को सराहने लगे। राधा इससे अत्यन्त आनन्दित हुई। ईश्वर की कृपा से उन्हे सन्तान का वर मिला। राधा का सचित वात्सल्य उसी शिशु पर उमड पडा। कवि ने वात्सल्य विभोर सूत पत्नी राधा का वर्णन इस प्रकार किया है—

---

१ अगराज, पृ० १६
२ अगराज, पृ० १६५
३ अगराज, पृ० १३६

उमड पडा जननीत्व मानवी अ तस्तल का
अचल भीगा दुग्ध पयोधर से जब छलका॥
लगा लिया निज कठ से नारी ने मदुबाल को।
विह्वल बन चुम्बित किया अग्नित शीतल भाल को।' [1]

राधा का वह शिशु औरस पुत्र नही है परन्तु वह उस ही पुत्र मानकर परम सन्ताप को प्राप्त होती है। घर मे शिशु को लाकर उसका जन्मोत्सव किया नाना बाजे बजे मगल गीत गाये गये और बधाइया बजी। अधिरथ ने भी उस समय बड उत्साह से अन्न धन वस्त्रादि का दान किया। सूत दम्पति ने अपने वात्सल्य जल से इस सुकुमार शिशु तन को खूब सींचा। कर्ण इनके स्नेह स दिन प्रति दिन बढते बढते युवा हो गया। सूत ने उसको यथाविधि शास्त्र और शस्त्राथ की शिक्षा दिलाई। उसके पश्चात अग प्रदेश का राज्य मिलने पर अपने पुत्र की समृद्धि पर अधिरथ बड प्रसन्न होते हैं। कभी उसे आशीर्वाद देते हैं और कभी कठ लगाते है। राधा को भी इसी भाँति की प्रसन्नता होती है और कर्ण के यह कहने पर कि मैं अन्यन भले ही अगराज हू पर आपके लिये तो आपका पुत्र ही हू राधा वात्सल्य स ओत प्रोत हो जाती है। वह अनेक आशीर्वाद देकर कु कुम का तिलक उसके मस्तक पर लगाकर पुलकित कर्ण को दखती है। इसका वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

"कर्ण निवेदन सुन राधा का उर भर आया।
विह्वल जब उसने आत्मज को कठ लगाया॥
भाव जलधि के रत्न, हृदय के सरस सुमन से।
गिरे प्रेम के अश्रु पुत्र पर मात नयन से॥" [2]

इस प्रकार अगराज महाकाव्य भी वात्सल्य रस का वर्णन करने वाले ग्रन्थो मे से एक है। और इसम कवि ने मानव की वात्सल्यमय स्वाभाविक प्रवृत्ति दिखलाई है। इनके वात्सल्य के आश्रय अन्य कवियो से भिन्न प्रकार के है। एक ओर तो कुन्ती का पारवश्य-युक्त वात्सल्य है और दूसरी ओर अधिरथ और राधा का पोषित पुत्र पर स्नेह है। दोनो ही अच्छे हैं और इनम आश्रय के हृदय की वही वात्सल्यमयी स्थिति है जो अपनी सन्तति पर प्यार प्रकट करने वाले की होती है। इस प्रकार के व्यक्तियो का वात्सल्य वर्णन वात्सल्य भाव की व्यापकता का ही द्योतक है। कवि नवीन पात्रो की वात्सल्यमयी स्थिति का चित्रण करने म पूर्ण सफल हुआ है।

केदारनाथ मिश्र 'प्रभात

आधुनिक हिन्दी-काव्य म वात्सल्य-वर्णन करने वाले कवियो म केदारनाथ मिश्र प्रभात का विशिष्ट स्थान है। चाद पत्रिका 'कैकेयी महाकाव्य और 'तप्त

१ अगराज पृ० २४
२ अगराज पृ० ३५

गह काव्य म उन्होने वात्सल्य का वणन किया है। चाद पत्रिका मे माता की अनु भूति[1] शीपक कविता और 'ककेयी' महाकाव्य मे राम के वन जाते समय पुत्र प्रम से विह्वल राजा दशरथ के हृदयोदगार द्रष्टव्य हैं।[2] 'तप्तगह वात्सल्य वणन की दृष्टि से इनकी उत्कृष्ट रचना है। वात्सल्य वणन की श्रष्ठ रचनाओ के समकक्ष इस छोटी सी पुस्तक को रखने मे कोई आपत्ति नही हो सकती। माता के हृदयगत भावो को तो हिन्दी के प्राचीन और नवीन सभी कवियो न बडी मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त किया है, परन्तु पिता के हृदय के वात्सल्य भाव को विशेष रूप से प्रभास जी ने लिखा है।

'तप्तगह' मे मगध के सम्राट बिम्बसार की करुण-कथा है। बिम्बसार का पुत्र कोणक (अजातशत्रु) अपने पिता को तप्त गह नामक अत्यन्त ऊष्ण कारावास म डालकर निदयता से मरवा डालता है। परन्तु बिम्बसार के पुत्र प्रेम म मत्यु पयन्त कोई अन्तर नही आता। कोई पिता अपने निदयी और क्रूर पुत्र के प्रति भी कितना वात्सल्यपूण हृदय रख सकता है इसका उत्कृष्ट उदाहरण बिम्बसार है।

बिम्बसार और उनकी पत्नी कुशला कक्ष म बठे हैं। कोणक खडग लेकर बिम्बसार का वध करन के लिये सहसा घुसता है और अपनी माता का वहा देखकर सहम जाता है। बिम्बसार कोणक स पूछता है कि तुम क्या चाहते हो ? पिता का प्यार, माता का दुलार चाहत हो या मगध का साम्राज्य ? कोणक कहता है मैने जो खडग अपनाया है, वही मुझ प्रिय है। साम्राज्य तो खड्ग के सकेत पर ही भुकते हैं। सम्राट बिम्बसार अपने विद्रोही पुत्र के प्रति ममत्वपूण शब्द कहते हैं और उसे सम्मान का प्रयत्न करत हैं—

"म हू सम्राट किन्तु,
आखें पिता की हैं।
बार बार हेरती,
तुमको जो प्यार से,
इच्छा की देखू म
अपने थी तुममे।।"[3]

उपयुक्त कथन बडा मनोवज्ञानिक है। वस्तुत पिता अपनी अपूर्ण आशाओ और महत्वाकाक्षाओ की पूर्ति पुत्र म देखना चाहता है। राजा कोणक के खडग पर सारे मगध क साम्राज्य को न्योछावर करने की बात कहता है और अपनी हत्या के लिय लाय गए खडग को चूमने के लिय कहता है। उसके पश्चात जब कोणक उसे तप्तगह म बन्द करा देता है तो उस भी वह कोणक का दोप नही मानता और साम्राज्य लिप्सा को मानव का स्वभाव मानकर सतोष करता है। इतन पर भी

१ चाद पृ० ४३० फरवरी १९३१
२ ककेयी पृ० ११६ १३३
३ तप्तगह प० ३७

उससे कोणक की वात्सल्यमयी मूर्ति विस्मृत नही होती है और वह कहता है—

"बहुत देर हो गई,
बहुत दूर चला गया।
कोणक अबोध सा।"[1]

अबोध शब्द में कितनी मार्मिकता है। पिता के लिए पुत्र इतना अपराधी, क्रूर और निर्दयी होने पर भी अबोध ही है। बिम्बसार का पुत्र प्रेम अत्यन्त उत्कट है, निरपेक्ष है। इतना ही नही आगे चलकर वह और भी पुत्र प्रेम की प्रगाढ़ता प्रकट करता है। कोणक के आदेश से एक नाई तप्त गृह में आता है वह बिम्बसार के पैरों को चीरता है, मांस काट काट कर गिराता है, उसमें नमक भरता है और फिर अंगारे भरता है। राजा असह्य वेदना में मूर्छित हो जाते हैं। कुशला पति की कराह सुनकर आती है और अपने पुत्र के कुकृत्य पर बड़ी क्रोधित होती है। कहती है कि मैं एक घूंट में कोणक को पी डालूंगी। क्या है जो वह मेरी कोख से उत्पन्न हुआ है? खून का बदला तो खून से ही चुकाया जाता है। परन्तु बिम्बसार को पुत्र पर क्रोध नही आता है। वह कुशला से कहते हैं कि तुम अपने पुत्र के रक्तपात की बात कैसे सोच सकी? ऐसा विचार तो मन में भी नही आना चाहिए। आखिर कोणक है तो हमारा ही पुत्र। हमने उसे जिस प्यार से पाला है उसे भुलाना कैसे सम्भव है। बिम्बसार के अपनी पत्नी से कहे गये निम्नलिखित शब्द बिम्बसार को अद्वितीय पुत्र प्रेमी पिता सिद्ध करते हैं—

प्यार किया जिसको
दुलार किया झूम झूम
ममता के रस मे
वाणी मे अस्फुट निज
माता कह बार बार
जिसने अनजान सा
झोर झकझोर दिया
प्राणो के तार को
भूमि से उठा कर तुम्हें
जिसने सुस्थान दिया
प्रथम प्रथम गौरव का
आज उसी बेटे का
सोचती अनिष्ट तुम?"[2]

---

१ तप्त-गृह पृ० ७६
२ [illegible] पृ० १००

वे बार बार अपनी पत्नी से अपने पुत्र कोणक के प्रति वात्सल्यमयी बनी रहने का ही आग्रह करते हैं। माता को पुत्र का अनिष्ट नही सोचना चाहिए ऐसा समझाते हुए वे कहते हैं—

'कोणक के जीवन का
उज्ज्वल भविष्य हो
साधना इसी की
कर्तव्य हो तुम्हारा॥'[1]

मरणासन्न होकर भी राजा सारे कष्ट को भुलाकर कोणक की क्रूरता का कारण उसका अज्ञान ही मानते हैं और कहते हैं—कि क्या ही अच्छा होता यदि कोणक यह जान लेता कि पुत्र प्रेम क्या होता है? पुत्र प्रेम को बिम्बसार सर्वोपरि स्थान देते हैं। राजा और रंक सभी को उसके प्राप्त करने का समान अधिकार है। पुत्र प्रेम जादू टोने भी बढ़कर कुछ अव्यक्त वस्तु है। पुत्र प्रेम को प्राप्त करके मनुष्य सब कुछ भूल जाता है। इस प्रकार कुशला को समझाते हुए राजा ने निम्नलिखित भाव अभिव्यक्त किये है—

'पाकर इस प्यार को
सारे संसार को
ईश्वर को भूलता
भूलता अदृष्ट की
सारी प्रतिकूलता।'[2]

कोणक की माता कुशला भी मातृ हृदय से परिपूर्ण है। पिता की हत्या करने वाले पुत्र के जघन्य कृत्य को देखकर उस समय कुशला क्रोधित थी किन्तु समय बीत जाने पर वह साम्रगी नही माता ही रह गई। कोणक के जब पुत्र उत्पन्न होता है और वह पुत्र के प्रेम को जानता है तो व्यथित होता हुआ अपने पिता के प्यार का स्मरण करता है और माता के पास आता है। उनके चरणों में गिर कर रोने लगता है। माता का अपने पुत्र के स्वभाव में परिवर्तन को देखकर हृदय भर आता है और वह भी रोने लगती है। कुशला और कोणक का उस समय का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है—

'माता के अश्रु थे
मस्तक पर पुत्र के
बार बार गिरते
आंसू थे पुत्र के

१ तप्त गृह पृ० १०८
२ तप्त गृह पृ० ११४

करुणामय मातृ पद
धोते विभोर हो
माता के अश्रु मे
बहता यथार्थ था
साथ साथ बहती थी
धार वात्सल्य की ॥'[1]

कुशला का हृदय पति की हत्या करने वाले पुत्र की ओर से बिल्कुल फट गया था। परन्तु उसी पुत्र के कातरतापूर्ण विलाप को सुनकर वह द्रवित हो गई। सुत के करोड़ो अपराधो को तुच्छ समझकर फिर उससे स्नेह करने वाली माता ही हो सकती है। कुशला के सुप्त वात्सल्य के प्रकट होने का कवि ने निम्नांकित पंक्तियो मे वर्णन किया है। इस स्थान पर माता के वात्सल्यमय हृदय की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हुई है—

'कातरता पुत्र की
सह न सकी कुशला
आंचल के दूध की
सुन पुकार बार बार
द्रवित हुई अपने को
रोक नहीं पाई वह।
अकस्मात हाथ उठे
और लगे प्यार से
कोणाक की देह को
सुख से सहलाने।'[2]

इस प्रकार हम देखते है कि तप्त गृह मे वात्सल्य वर्णन के अच्छे स्थल है। बिम्बसार की करुण कथा के प्रसंग मे वात्सल्य रस करुण का अंग बन कर आया है। बिम्बसार अद्वितीय पिता है। कोणक के क्रूर व्यवहार से पूर्व पुत्र की बलवती लालसा मे उन्होने ज्योतिषियो के उस कहने को गल्प ही माना जबकि उन्होंने कहा था कि यह शिशु पितृहंता होगा और जिस समय कोणक कुशला के गर्भ मे था उस समय आवश्यकता पडने पर उन्होने अपना खून भी कुशला को पीने के लिये दिया था।[3] इस प्रकार कवि ने किसी प्रेमी पिता की सहिष्णुता का अतिवादी चित्रण किया है। कवि के अनेक भाव पाठक को असम्भव लगते है। माता के वात्सल्य

१ तप्त गृह, पृ० १३७
२ तप्त गृह पृ० १३६
३ तप्त गृह पृ० १४१

वर्णन म कवि न स्वाभाविकता और मनोवैज्ञानिकता के साथ मात हृदय की भी परख की है। सयोग और वियोग वात्सल्य की अय कविया जसी स्थिति इसमे नही ह।

वात्सरयाभियक्ति के साथ करुणा का भी वणन ह। वात्सल्य की स्वच्छ चद्रिका करुण क आच्छादन से धूमिल सी हो गई ह।

रामानद तिवारी 'भारती नदन'

रामानद तिवारी न पावती महाकाय मे वात्सरय का वणन किया ह। इसम पावती के जम से लकर पुत्रोत्पत्ति के पश्चात तक का इतिवत्त ह। पावती' महाकाय के विस्तत कथानक मे वात्सरय की अभियक्ति क आश्रय और आलम्बन दो प्रकार के है—

१ हिमालय और मेना का पावती के प्रति वात्सल्य।

२ शकर और पावती का कार्तिकेय क प्रति वात्सल्य।

हिमालय और मना क वात्सरय की अनुभूति म कवि ने मना की पुत्री के प्रति एषणा का वणन किया है। यह अय कविया से नवीन अनुभूति है कि पुत्री के जम पर भी माता पिता को वसा ही प्रसन्नता हाती है जसा कि पुत्रापलब्धि पर हुआ करती है। परतु उसको कोई विशप विस्तार न दकर कवि न पावती बालिका के ऐस स्वाभाविक कृत्या का वणन किया ह जा प्राय बालिकाओ म बालका की अपक्षा अधिक पाय जात हैं। जसे वह अपनी मा के गह कार्यों म हाथ बटाती है। पावती के शशव क्रीडा आदि का विशेष वणन न करके कवि ने उह तपस्या के लिए तत्पर वर्णित किया है। उस समय तप के लिए प्रस्तुत पुत्री क दुष्कर काय से माता के दुखाभिभूत हान की स्वाभाविक बातें वर्णित है। पावती क वियाग वात्सल्य की अभि व्यक्ति कवि न अपेक्षाकृत अधिक की है। चिर पोषिता पुत्री के विषय म हिमालय और मेना की अभिलाषा रहती है कि उसका पाणि-ग्रहण किसी सुयाग्य वर क साथ हा जाये। माता पिता के लिए एसी अभिलाषा है भी स्वाभाविक। शकर जस पावती के अभिप्सित वर के मिल जान पर उह सताष और हष हाता है। परतु कया के वियोग का साथ ही दुख भी हाता है। इनकी अनुभूति मना को विशेषत अधिक हाती है। उनकी हष और वियोग व्यथित दशा का वणन कवि न इस प्रकार किया है—

> पाकर कया के अय श्रेष्ठ वर माता
> मन मे कृताथ थी हष न हृदय समाता।
> करके बिछोह का ध्यान दखकर पीले,
> होता था गदगद हृदय और दग गीले॥[1]

माता की भाति पिता की भी स्थिति का वणन कवि न किया है। वियोग के समय उह पुत्री अपने पुत्रा से भी प्रिय लग रही है और वे करुणाद्र हो जात हैं।

[1] पावती प० १६४

परन्तु माता की अनुभूति की समता नहीं कर सकते। मेना पार्वती के वियोग को सहन करने म असमर्थ हो जाती है। उन्होंने उस भांति स्नेह से माता को देखकर यदि ने पार्वती के हृदय की करुणा का भी वर्णन किया है। करुणाद्र हुई पार्वती अपनी माता से सस्नेह भेंटती है। उस समय वे और भी अधिक अधीर हो उठती हैं। मेना की गदगद स्थिति निम्नोद्धृत पंक्तियों में स्पष्ट परिलक्षित होती है—

"माता से भेंटी उमा अंक में भर के
करुणा से नत गिर उसे बाहु में भर के।
मेना आंचल से पोंछ दृगों का पानी
बोली ममता से गदगद स्वर कल्याणी।
बेटी मैंने चिर पुण्यों का फल पाया,
यह शुभ मुहूर्त जो आज सामने आया॥"[1]

पार्वती महाकाव्य में जो सबसे अधिक हृदय को छूने वाली बात है वह पार्वती के विवाह के पश्चात् परिवार के अन्य सम्बन्धियों की स्थिति है। ये सब पार्वती के वियोग से दुखी हैं। पर धीरे धीरे उस वियोग को सहन करने के अभ्यासी हो जाते हैं और उसके उत्तम वर की प्राप्ति के सौभाग्य को देखकर सन्तोष लाभ करते हैं। वहाँ पार्वती के विषय में उसके अतीत की कथा और भावी सुख की कल्पनाएं ही प्रधान रह जाती हैं। कन्या के विवाह के पश्चात के पारिवारिक वातावरण का कवि ने यथार्थ चित्रण किया है। उनकी निम्नलिखित भावाभिव्यक्ति अत्यन्त मनोवैज्ञानिक और स्वाभाविक है—

अभ्यास बन गया दान अभाव सुता का
सन्तोष बन गया विरह सुहाग सुता का।
आमोद बनी चर्चा उसके बचपन की
और अन्य कल्पनायें परिणत जीवन की॥[2]

पार्वती के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य में संयोग की अपेक्षा वियोग का अधिक वर्णन किया गया है। कवि की दृष्टि कन्या के वियोग की स्थिति को अच्छी प्रकार परख करती है। उसी का स्वाभाविक चित्रण इस ग्रंथ में किया गया है। पुत्री के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य में पिता की अपेक्षा मां का स्थान ही विशिष्ट है।

इसी ग्रंथ में शंकर और पार्वती का कुमार कार्तिकेय के प्रति वात्सल्य भी वर्णित है। इसके वर्णन में और अधिक विस्तार है। जन्म से लेकर आगे आने वाले

---

१ पार्वती पृ० २५३
२ पार्वती, पृ० २५८

संस्कारों—नामकरण[1], अन्नप्राशन[2], चूड़ाकरण[3] और गुरु दीक्षा[4] आदि के अवसरों पर माता पिता की सुखानुभूति की अभिव्यक्ति की गई है। बाल क्रीडा और बाल मनो भावों पर भी कवि की दृष्टि गई है। कुमार थोड़ा बड़ा होते ही घुटनों के बल चलता हुआ किलकारी मारता है तो माता पिता को असीम सुख प्राप्त होता है—

"लगा घुटनों से विचरने कुटी में स्वछन्द,
मोद भर माता पिता के हृदय में प्रिय स्पन्द।
पास आते पुत्र की सुन हृदमय किलकार,
उमड़ता उनके हृदय में प्रेम पारावार।'[5]

कुमार नाना भाँति की बाल सुलभ चेष्टायें करता है। वह अपने छोटे छोटे हाथों से कभी जो भी कुछ वस्तु दिखलाई देती है उसे ही पकड़ना चाहता है। बच्चे के उत्पात में माता पिता को क्रोध नहीं आता वरन उसमें भी उन्हें अतुलनीय आनन्द प्राप्त होता है। शंकर और पार्वती कुमार की चेष्टाओं और कौतुकों में पुलकायमान होते हैं—

"विविध लीला देख सुत की मुदित होते तात,
और पुलकित मातु होतीं देख नव उत्पात।
चार कर पद से भवन में मुक्त रुचि संचार
उपक्रम करता ग्रहण का प्रति पदार्थ निहार॥'[6]

कुमार के पदल चलन और तोतले वचनों के वर्णन के पश्चात् कवि ने एक मनोवैज्ञानिक तथ्य की अभिव्यंजना की है। बच्चा स्वभाव से जिज्ञासु होता है। वह प्रत्येक बात को 'क्या और क्यों' का प्रश्न लगाकर जानना चाहता है। कवि ने भी कुमार के इसी प्रकार जिज्ञासु होने का वर्णन किया है।[7] बाल क्रीडा में कुमार के शिशु रूप के साथ-साथ उसके बाल रूप का भी वर्णन है। उनमें सर्वत्र स्वाभाविकता का निर्वाह है। पर्वतीय प्रदेश है। पत्थर और शिलाओं के अतिरिक्त वहाँ और है ही क्या ? फलतः कुमार भी शिलाओं से ही अन्य बालकों के साथ खेल रचना करता है—उसमें भावी वीरत्व का शैशव में ही वर्णन है—

"उठाकर भारी शिलायें मिल कई लघु वीर,
दुर्ग रचते वे बनाकर चतुर्दिक प्राचीर।

---

१ पार्वती पृ० २९३
२ पार्वती, पृ० २९७
३ पार्वती, पृ० ३०१
४ पार्वती, पृ० ३०४
५ पार्वती, पृ० २९७
६ पार्वती, पृ० २९९
७ पार्वती, पृ० ३००

शक्ति सी भारी शिलायें दूर से ही छोड,
अट्टहास समेत उसको सहज देते तोड ॥"[1]

शिवजी के साथ भी कुमार की शिशु क्रीडा का वर्णन है। परन्तु वह बडा विचित्र है। शंकर के गले में सर्प और सिर पर चन्द्रमा है। उधर कुमार अबोध हैं परन्तु बाल सुलभ चांचल्य से पूर्ण हैं। अतः वह कभी सर्पों से खेलता है और कभी चन्द्रमा को पकडने का उपक्रम करता है। इस क्रीडा का कवि ने बहुत सुन्दर और स्वाभाविक चित्र उपस्थित किया है—

गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार
खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार।
पकडने को भाल का विधु बढाता लघु हाथ,
स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ।[2]

संयोग वात्सल्य के अतिरिक्त कुमार के प्रति वियोग वात्सल्य का वर्णन भी द्रष्टव्य है। कुमार के वियोग के दो अवसर आते हैं—विद्याध्ययन के निमित्त प्रस्थान करते समय और तारक से युद्ध के लिए जाते समय। विद्याध्ययन को जाते समय माता पिता दोनों ही पुत्र प्रेम के कारण उसके वियोग दुख का अनुभव करते हैं। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात आने पर उनका स्नेह उमड पडता है। उमा का वात्सल्य भाव बहुत उत्कट हो उठता है। वह गद्गद हो जाती है। उनके पुलक आनन्दाश्रु और चुम्बन आलिंगन आदि का कवि ने वर्णन किया है।[3] इसी तरह युद्ध से विजयी होकर आने पर शंकर और पार्वती की प्रसन्नता का वर्णन किया गया है—

'कर विनत पुत्र को भेंट हृद से फूली
हो उमा हर्ष से गदगद सुध बुध भूली।
शंकर प्रसन्न थे प्रणत पुत्र की जय से,
कल्याणमय था नव जीवन समुदय से।[4]

कुमार के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य में संयोग और वियोग दोनों का वर्णन है। पार्वती माता हैं अतः उनके वात्सल्य की अनुभूति अपेक्षाकृत अधिक वर्णित की गई है। कवि ने वात्सल्य के जो दो आलम्बन रखे हैं उनमें से कार्तिकेय का वर्णन अधिक विस्तार से किया है। पुत्र और पुत्री के प्रति वात्सल्य की अभिव्यंजना में उन्होंने कोई भेद नहीं माना है। जिस प्रकार पुत्रैषणा की उत्कटता का श्रेय कवियों ने वर्णन किया है वैसे ही उन्होंने पुत्री के प्रति एषणा को अभिव्यक्त किया है। यह

१ पार्वती पृ० २०२
२ पार्वती पृ० २६६
३ पार्वती पृ० ०५
४ पार्वती पृ० ३८६

बात अवश्य है कि पुत्र के संयोग सुख वर्णन में और पत्नी के वियोग-दुख वर्णन में कवि का मन अधिक रमा है। कवि को बाल चेष्टा का स्वाभाविक चित्रण करने में अधिक सफलता मिली है।

'भारती' जी दर्शन के विद्वान् होने के नाते मनोविज्ञान के पूर्ण ज्ञाता हैं। इसलिए स्कन्द के वात्सल्य वर्णन में उन्होंने वैसे ही चेष्टायें और स्वभाव दिखाये हैं जिनमें उनके भावी वीरत्व का संकेत मिलता है।

श्याम नारायण प्रसाद

श्याम नारायण प्रसाद भी वात्सल्य का वर्णन करने वाले कवियों में से एक हैं। इस दृष्टि से इनके दो ग्रन्थों को लिया गया है 'झाँसी की रानी' और 'पन्ना धाई'। 'झाँसी की रानी' में पहले तो मनूबाई (लक्ष्मीबाई) के प्रति उसके माता पिता का वात्सल्य भाव वर्णित है परन्तु वह बहुत संक्षिप्त है। इसी पुस्तक में वात्सल्य का दूसरा आलम्बन झाँसी की रानी का पुत्र है। उसके प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य-वर्णन अपेक्षाकृत अधिक है। परन्तु वहाँ भी कवि ने शिशु को दुलार करते हुए माँ के मनो भावों की ही अभिव्यक्ति की है और वात्सल्यानुभूति का आश्रय लक्ष्मी बाई है। कवि ने लक्ष्मी बाई का अपने पुत्र को दुलार करने का वर्णन किया है। वे कहते हैं कि रानी अपने पुत्र के साथ बड़े आनन्द के समय बिताती थी और उसको नाना भाँति से खिलाती थी। रानी के अपने पुत्र को खिलाने की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार की है—

> "रानी कभी उठाकर शिशु को,
> कन्धे पर थी बढ़ाती।
> कभी सुलाकर पलने पर वह,
> चुम्बन से लेकर गाती।"[1]

लक्ष्मी बाई वीर माता हैं। वे अपनी सन्तान को भी भारत के अतीत के प्रसिद्ध वीरों की श्रेणी का देखने की अभिलाषा करती हैं। रानी के वीरत्वपूर्ण चरित्र का उनकी अभिव्यक्ति पर भी प्रभाव है। अपने पुत्र के प्रति उनकी अभिलाषा निम्न लिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

> "चुटकी बजा बजाकर कहती,
> लाड बड़ हो जाओ तुम।
> वीर शिवा राणा प्रताप सा,
> कर्म क्षत्र अपनाओ तुम।"[2]

रानी का चरित्र आदर्श है। अतः अपने पुत्र को भी वैसा ही बनाने का प्रयत्न करती हैं। घोड़े पर चढ़ना सिखाना, बरछा, भाले तीर आदि चलाना और देश

१ झाँसी की रानी पृ० ११४

२ झाँसी की रानी, पृ० ११४

के अतीत के गौरवगान आदि के साथ-साथ वह उसके अध्ययन के लिए गीता पढ़ाने की अभिलाषा करती हैं। इन भावनाओं को रखते हुए एक माता होने के नाते उस पर वात्सल्य भी उछलती जाती है। उसकी अभिव्यक्ति करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है—

'यही गीत गा गाकर रानी,
शिशु को पुन उठाती थी।
आंचल से ढक दूध पिलाकर
चुम्बन सहित सुलाती थी।'[1]

पन्नादाई नामक पुस्तक में स्वामिभक्त पन्ना का अपने पुत्र कचन और राणा सग्रामसिंह के पुत्र उदयसिंह के प्रति वात्सल्य वर्णित है। कचन और उदयसिंह दोनों ही उसके नेत्रों के तारे हैं। वह उन दोनों की सुख समृद्धि की ईश्वर से मनौती करती है। और दोनों को एक सा प्यार करती है। उसका ममत्व दोनों पर सम है। इसी से वह कहती है—

'मेरी ममता का तरुवर है सम्मुख खड़ा विशाल।
कचन और उदयसिंह दोनों हैं उसकी दो डाल॥'[2]

बच्चा के साथ क्रीड़ा करते हुए पन्ना का वर्णन है। चन्द्रमा को देखकर वह बच्चा को प्रसन्न करने के लिऐ यह कहती है कि चन्दा मामा आकर इस बच्चे को दूध पिला जा और अपने ठंढे हाथों से उसके शरीर को सहलाकर आनन्दित कर जा। उधर शिशु भी हाथ उठाकर अपनी तोतली बोली बोलकर चन्द्रमा को बुलाता है और इस प्रकार सबको आनन्दित करता है—

'प्रमुदित बालक भी उठकर
उगली से चाँद बुलाता।
उसकी तुतली बोली में
रसमयी दृग हो जाता।'[3]

परिस्थितिवश पन्ना स्वामिभक्ति के अतिरेक के कारण उदयसिंह की रक्षा के लिए अपने पुत्र कचन को बलिदान कर देती है। जब बलवीर उदयसिंह की हत्या करने आता है तो वह कचन को ही उदयसिंह बतला देती है। उस समय उसकी स्थिति अन्तर्द्वन्द्व से परिपूर्ण हो जाती है। वात्सल्य और स्वामिभक्ति के उतार चढ़ाव के झूले में वह झूलने लगती है। उस समय की उसकी स्थिति द्रष्टव्य है—

शयन कक्ष मे पन्ना कचन,
का मुख देख रही थी।

---

१ झाँसी की रानी पृ० ११८
२ पन्नादाई, पृ० २७
३ पन्नादाई पृ० ६४

ममता मे वह बनी बावरी
रह रह सोच रही थी।[1]

कवि ने पन्ना के अन्तर्द्वन्द्व का विस्तार के साथ वर्णन किया है । वह सोचती है कि पुत्र बिना संसार मे कुछ नही है। एक पुत्र के लिए कितने जप तप करने पडते है। मेरा तो अकेला ही पुत्र है। वह नित्य मन को प्रसन्न करता रहता है। यह अबोध न जाने कितनी आशाओ को लिए सो रहा होगा। सोच रहा होगा कि मेरी रक्षा मे मेरी मा पास मे खडी हुई है वह सारे विघ्नो को दूर कर देगी। जब मेरा बेटा ही नही रहेगा तो मैं भी जीकर क्या करूगी ? क्या इस राजमुकुट के लिए अपने बेटे की बलि दे दू ?[2] पन्ना के वात्सल्याभिभूत मानस की अभिव्यंजना और उसकी द्वन्द्वात्मक स्थिति का वर्णन करते हुए कवि लिखता है—

कितना विकट दृश्य यह होगा
सुत को कत्ल कराऊ।
या आंचल मे इसे छिपाकर,
सारा भेद बताऊ।[3]

श्याम नारायण प्रसाद के वात्सल्य वर्णन मे शिशु क्रीडा और संयोग के समय की मातृ अनुभूति के चित्र ही दिये गये हैं। पन्नादाई मे माता के अन्तर्द्वन्द्व की अवस्था का मनोवैज्ञानिक चित्रण है। इनका वात्सल्य वर्णन संक्षिप्त ही है परन्तु इन्होंने इतिहास प्रसिद्ध नारी पात्रो को अपने वर्णित वात्सल्य का आश्रय बनाया है। लक्ष्मी बाई और पन्नादाई दोनो ऐसी ही वीरागनाए हैं। इसमे उनके महत्व को भुलाया नहीं जा सकता।

परमेश्वर 'द्विरेफ'

परमेश्वर द्विरेफ' ने मीरा नामक महाकाव्य लिखा है। मीरा' मे मीरा के प्रति उनकी माता पिता का वात्सल्य अभिव्यक्त किया गया है। वैसे बाल क्रीडा का वर्णन करते हुए मीरा के भाई जयमल का भी नामोल्लेख है परन्तु वह वात्सल्य भाव का विशेष आलम्बन नही है। मीरा के प्रति जो उसकी माँ के वात्सल्यमय उद्गार हैं वे संयोग वात्सल्य के हैं और उनमे भी बाल-स्वभाव बाल क्रीडा और मातृ मनोभावो का विशेष रूप से वर्णन हैं।

मीरा अभी बच्ची ही है। छोटी है। सुन्दर है। मा उसे देखते हुए नही अघाती[4], फिर जब मीरा धूलधूसरित हुए पृथ्वी पर लोटी हुई होती है उसे ऐसा स्व-

---

१ पन्नादाई पृ० ९८
२ क्या उस राजमुकुट के हित मे सुत कुर्बान करू
—पन्नादाई पृ० ८५
३ पन्नादाई पृ० १०१
४ मीरा पृ० ३

कर उसकी माँ प्यार करती है।[1] इसके पश्चात कवि ने शिशु की बाल सुलभ जिज्ञासा की अभिव्यक्ति की है। मीरा अपनी माँ के साथ किसी के घर विवाहोत्सव में गई है। वहाँ दूल्हा और दुलहिन देखती है। वह अपने भोलेपन के साथ माता से पूछती है कि मेरा वर कहाँ है ? और मैं किसकी दुलहिन हूँ ? बच्ची के भोलेपन से माँ वात्सल्य स्नेह के मारे रोमांचित हो जाती है।[2] यही बच्ची का दिल न टूटे इसलिए विहँसकर माँ कह देती है कि तेरा पति श्रीकृष्ण है।[3] बच्चे के कोमल मानस में वात्सल्य के संस्कार प्रबल प्रभाव जमा लेते हैं। मीरा बड़ी होकर भी उसी बात को याद रखती है। वह कभी कहती है कि माँ मुझको भी श्रीकृष्ण बुलाते हैं और कभी कृष्ण चरित्र सुनने का आग्रह करती है। माँ बच्चे की हठ को प्रायः पूरा कर ही देती है। मीरा की माँ उसके कहने से कृष्ण की कथा सुनाने लगती है।[4]

जयमल मीरा का भाई है। मीरा जयमल के साथ ही खेलती है। कवि ने मीरा और जयमल की बाल क्रीड़ा का वर्णन किया है। बच्चे जैसा देखते हैं वैसा करते हैं। विवाह आदि के समय सुन्दर वस्त्रालंकारों को मीरा ने देखा है। वह अपनी गुड़ियों के खेल में गुड़िया और गुड्डे का विवाह करती है और जयमल से कहती है—

> बोली मीरा भैया जयमल
> मेरी गुड़िया का विवाह कल।
> देखो यह पहनेगी मखमल
> रत्नांकित ॥ [5]

मीरा और जयमल आपस में बातें कर रहे हैं। उनकी भोली बातें बड़ी मनोहर लगती हैं। जयमल कहता है कि चन्दा हमारे मामा हैं।[6] मीरा कहती है कि उसमें काला चिह्न है वह बुढ़िया है जो वहाँ बैठकर सूत कात रही है।[7] बच्चे खेलते खेलते जो आपस में यों ही झगड़ पड़ते हैं। मीरा और जयमल के उस रूप का कथन करते हुए, कवि ने बाल क्रीड़ा का स्वाभाविक चित्रण किया है—

> 'मीरा का भर मिट्टी से तन,
> जयमल करने लग गया रुदन।
> उसने भी उसका किया वदन
> रुदनोत्सुक। [8]

---

१ मीरा पृ० ४
२ मीरा पृ ७
३ मीरा पृ० ८
४ मीरा पृ० ४६
५ मीरा पृ० १२
६ मीरा पृ० १४
७ मीरा पृ० १५
८ मीरा पृ० १६

मीरा महाकाव्य में वात्सल्य की दृष्टि से मातृ मनोभाव द्रष्टव्य हैं। माँ को बच्चे के स्वास्थ्य की बड़ी चिन्ता है। मीरा को दुबली देखकर उसकी माँ व्यथित होती है। खाना पीना छोड़ कर खेल में ही लगे रहने से वह आशंकित होती है और अपने पति से मीरा की स्थिति का वर्णन करती है। बच्चे को तनिक कुछ हुआ माता आशंका करने लगती है कि नजर तो नहीं लग गई। और नजर लगने की औषधि वैद्य या डाक्टरों के पास नहीं होती और न माँ को उन पर विश्वास होता है। नजर की आशंका वाली माँ 'जन्तर' और 'मन्तर' में ही विश्वास करती है। मीरा की माँ भी ऐसी ही है। वह अपने पति से कहती है—

'मंदिर के बूढ़े बाबा से,
कहा आपको लाना जन्तर।
बिटिया के हो गई नजर है
पंडित से पढ़वाओ मन्तर॥'[1]

छोटी बच्ची मीरा माँ के साथ सबेरे उठकर माँ की भाँति ही ध्यान और चिन्तन करती है। माँ को इससे बड़ी प्रसन्नता होती है और वह कहती है—

"मुझको अपनी नन्हीं बिटिया
बहुत बहुत प्यारी लगती है।
साथ साथ मेरे प्रात ही
ध्यान चिन्तना को जगती है॥[2]

बच्ची के मुख से नटनागर को प्रियतम कहते और पुकारते सुनकर माँ कुछ विचार नहीं करती वरन् हास और वात्सल्य से युक्त उक्तियाँ कहती है—

"इस छोटी सी ही दुलहिन ने,
अपना प्रिय पहचान लिया है।
जग जीवन क्या है इसने तो
इसी आयु में जान लिया है॥"[3]

मातृ-मनोभावों के उपयुक्त वर्णन के साथ कवि ने मीरा की माँ के मानस की विराग-व्यथित दशा का भी वर्णन किया है। बेटी के विषय में यह कल्पना करके कि वह अनजाने परिवार में जायेगी वहाँ किस प्रकार रहेगी, मीरा की माता आशंकित होती है। उसे नाना भाँति की चिन्ता रहती है। मीरा के वियुक्त होने की भावी कल्पना करके वह सोचती है—

'लगी सोचने मीरा बेटी,
अनजाने घर में जायेगी।

---

१ मीरा, पृ० २४
२ मीरा, पृ० ३७
३ मीरा पृ० ३६

और न जाने कितने दिन,
पश्चात लौट पीहर आयेगी॥"[1]

पुत्री विवाह के पश्चात् सुखी रहेगी। उसके सुख की कल्पना से माता के हृदय में पुत्री वियोग के सहन करने की क्षमता आती है। पुत्री अपने सुख के क्षण में माँ को चाहे विस्मृत कर दे, परन्तु माँ का निश्छल प्रेम सम्बन्ध पुत्री को मन से अलग नहीं होने देता। मीरा की माँ अपनी पुत्री के विषय में नाना भाँति के विचार करके व्यथित होती है और पुत्री के वात्सल्य में विभोर हो जाती है। कवि ने उसके मनो भावों से युक्त वात्सल्य पूरित स्थिति का चित्रण करते हुए लिखा है—

"सोचती यों हो जाती खिन्न
सुता को बुलवाती फिर पास।
शीश पर हाथ फिरा मुख चूम
मनोरम करती हास विलास।"[2]

माता सोचती है कि पुत्री के पति के घर चले जाने पर उसकी चिन्ता कौन करेगा? इससे पुत्री को अच्छी प्रकार खिला पिला और सुख देकर उसको कुछ संतोष मिलता है। वह अपनी पुत्री को जितना प्रेम करना चाहे अब कर ले फिर वह दूर चली जायेगी। वात्सल्य-स्नेह के कारण ऐसा सोचकर मीरा की माँ अपने आप उसका लालन पालन करती है—

खिलाती और पिलाती नित्य,
करों से ही नित भोजन पान।
दृगों में देती अंजन मंजु,
कराती हाथों से ही स्नान।[3]

मीरा के विवाह के समय के वियोग का भी कवि ने वर्णन किया है परन्तु वहां वियोग वात्सल्य की विशेष अभिव्यक्ति नहीं की है। मीरा पति के घर जा रही है। उस समय के वियोग के वातावरण का कथन करके ही वह चुप हो जाते हैं। परिजनों की ओर से पुत्री के सुख आदि के लिये प्रार्थना करने की कुछ स्वाभाविक बातों का ही वर्णन द्रष्टव्य है।[4]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मीरा महाकाव्य में वर्णित वात्सल्य में पुत्री के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति मुख्य है। उसमें आश्रय माता है पिता तो केवल धूमधाम से विवाह

१ मीरा, पृ० ३२
२ मीरा पृ० ४६
३ मीरा पृ० ४७
४ मीरा पृ० ८०

करने की बात कह कर ही इति करते हैं।[1] कवि ने संयोग वात्सल्य का ही वर्णन किया है। उसमे भी स्वाभाविक बाल क्रीडा और मात-मनोभावो की विशेष रूप से अभिव्यक्ति की है। पुत्री वियोग के अवसर आने के पूर्व ही माता के हृदय की व्यथा का वर्णन स्वाभाविक हुआ है।

डा० रामकुमार वर्मा

एकलव्य' महाकाव्य रामकुमार वर्मा की उत्कृष्ट काव्य-कृति है। इन्होंने इस ग्रन्थ म वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। वसे तो 'एकलव्य महाकाव्य म द्रोणाचाय का अपन पुत्र अश्वत्थामा के प्रति और कुन्ती का अर्जुन के प्रति भी वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है। परन्तु वह अत्यन्त न्यून और गौण है। मुख्य रूप से वात्सल्य का आलम्बन एकलव्य ही है। एकलव्य के प्रति अभिव्यक्ति वात्सल्य के आश्रय एकलव्य के माता पिता और गुरु द्रोणाचाय हैं।

कवि ने एकलव्य की माता के मनोभावो का वर्णन विशेष विस्तार के साथ किया है। जिस समय एकलव्य द्रोणाचाय को गुरु बनाने के लिये चिन्तित है और भोजन भी नही करता उस समय उसकी माता उसे साग्रह भोजन के लिये मनाती है। पिता भी इसी प्रकार भोजन का आग्रह करते हैं कि कहीं रूठो से भी धनुष विद्या आ सकती है? परन्तु उनकी अभिव्यक्ति इतनी मार्मिक नही है एकलव्य द्रोणाचाय स शिष्य रूप मे अस्वीकृत होकर किसी को बिना बताये वन मे धनुर्वेद का अभ्यास करने के लिय चला जाता है तो उसकी माता को बहुत चिन्ता होती है। वह एकलव्य की स्मति करके पुत्र विरह से दुखी होकर नाना भाति से विलाप करती है। बार-बार बाट देखत देखते बहुत दिन हो जाते हैं और किसी प्रकार का सदेश भी नही मिलता तो वे कहती हैं—

> मेरा लाल न अब तक आया।
> मार्ग देखकर थकी, न कोई, उसका कुशल सदेशा लाया।[2]

यह नाना भाति से एकलव्य के प्रति प्रदर्शित अपने वात्सल्य का स्मरण करती है। फिर उसके अभाव का अनुभव करके और भी अधिक अधीर होती है। कभी सोचती है कि पुत्र को मैंने इस स्थान पर गोदी म खिलाया था, यहाँ सुलाया था अब मन कितने दिन से अपने लाल के लिये सोने को बिछौना नही बिछाया। उसे सभी सासारिक सुख की वस्तुएं पुत्र के बिना नीरस लग रही है—

> "जीवन के सुख मुझे सलौने,
> लाल बिना लग रहे अलौने।"[3]

---

१ मीरा पृ० ४६ पिता मीरा की करते बात
रचेगा धूमधाम से व्याह"

२ एकलव्य प० १४७

३ एकलव्य, पृ० १४८

माता एकलव्य से प्रिय कहती है कि क्या ही अच्छा होता मैं भी तुम्हारे साथ चली जाती। वहाँ मैं, तुम्हें शीघ्र उठाती छाती से लगाती और आशीर्वाद देती। तुम्हें अभ्यास करने को धनुष बाण देती अभ्यास से थक कर आते तो भोजन खिलाती तुम्हें प्रसन्न रखती और तुम्हारे कष्टों का निवारण करती रहती।[1]

एकलव्य की वस्तुओं को देखकर माता के उर में और भी अधिक विरह बढ़ता है। जब वह एकलव्य के छोटे से धनुष को देखता है तो बेचैन हो जाती और कहती है—

'यह छोटा सा धनुष तुम्हारा।
इसने तीखा विरह बाण क्यों मेरे मन में मारा?'[2]

जब एकलव्य घर पर था तो उसके बहुत से साथी आते रहते थे। अब उसके न रहने पर कोई भी नहीं आता। माता इससे बड़ी दुखी होती है वह एकलव्य को याद करती हुई कहती है—

'घर में आज न आया कोई।
हाय तुम्हारे सभी साथियों की भी ममता खोई।'[3]

कवि ने एकलव्य की माता द्वारा विरहाभिव्यक्ति षट्ऋतुओं के अनुसार भी कराई है। प्रत्येक ऋतु के आने पर माता को अपने पुत्र प्रेम के कारण अनिष्ट की आशंका होती है। ग्रीष्म की ऊष्णता को देखकर और अपने पुत्र की कोमलता का अनुमान करके वह कहती है—

हे तीक्ष्ण रश्मियो! वहाँ न तपना
जहाँ कि मेरा गया लाल।
वह चन्द्र किरण सा है कोमल,
छोटे वय वाला एक बाल।[4]

इसी प्रकार वर्षा ऋतु को सम्बोधित करते हुए कहती है—

'मैं बैठी हूँ, यहाँ सोचती,
कठिन भाग्य की बात।
देख, भिगोना मत अपनी,
बूँदों से सुत, का गात।'[5]

शरद हेमन्त शिशिर और बसन्त ऋतु में भी इसी प्रकार व्यथित होने पर

---

१ एकलव्य पृ० १४६
२ एकलव्य पृ० १५१
३ एकलव्य पृ० १५२
४ एकलव्य पृ० १५६
५ एकलव्य पृ० १५७

वह विलाप करती है। उसे यह परेखा रह गया कि वह पुत्र को विदा भी न दे पाई। कभी यह वेदना होती है कि मुझसे पुत्र ने मचल मचल कर कुछ नहीं मांगा। कहने का तात्पर्य यह है कि कवि ने एकलव्य के विरह में मातृ हृदय की नाना भांति से अभिव्यक्ति की है। इन सबका निचोड़ उन्होंने इन पंक्तियों में रख दिया है जबकि एकलव्य की माता कहती है—

> "मैं माता का हृदय लिये,
> असहाय और अति व्याकुल।
> केवल कुशल कामना करती
> मात तुम्हारी प्रतिपल।"[1]

मातृ हृदय की एक दूसरे स्थल पर भी सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। जिस समय गुरु द्रोणाचार्य को एकलव्य गुरु दक्षिणा में अपना अंगुष्ठ काटकर दे देता है। उसी समय उसकी माता भी मेरे लाल! मेरे लाल! चिल्लाती हुई वहां पहुंच जाती है। बहुत दिनों के पश्चात पुत्र से मिलकर वह हर्षाश्रु बहाती है। वह उसे अंक में भर लेती है और मेरे लाल मेरे लाल कहकर पुकारती है—

> "भर लिया एकलव्य को विकल अंक में
> मेरे लाल कहकर माथे पर अश्रु दो,
> डाल दिये और रुद्ध कंठ से यही कहा,
> एकलव्य! मेरे लाल लाल मेरे मेरे रे।"[2]

और जब वह अपने पुत्र के कटे हुए अंगूठे को देखती है तो पुत्र प्रेम से विह्वल हुई गुरु द्रोण से कहती है। उसके इन शब्दों में मातृ हृदय की अच्छी अनुभूति अभिव्यक्त की गई है—

> "आपके विधान में नियम यदि ऐसा हो,
> शिष्य माता से भी दक्षिणा में लिया जाता हो।
> तो विनीत मेरी प्रार्थना है देव सुनिए
> नैन मेरे लीजिये पुनीत निज सेवा में
> जिससे न देख सकूं खंडित अंगुष्ठ से,
> निज प्रिय लाल के सलोने उस हाथ का।"[3]

एकलव्य महाकाव्य में गुरु द्रोणाचार्य का भी एकलव्य के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है। जब एकलव्य के पास द्रोणाचार्य जाते हैं तो वह उनका वाण संचालन के लाघव से स्वागत करता है। उसका कंठ गद्‌गद हो जाता है और हर्षाश्रु

१ एकलव्य, पृ० १६२
२ एकलव्य, पृ० ३००
३ एकलव्य पृ० ३०४

निकलने लगते हैं। उसकी गुरु भक्ति देखकर द्रोण बड़े प्रसन्न होते हैं और एकलव्य से कहते हैं—

'वत्स उठो म प्रसन्न हू तुम्हारी श्रद्धा से
तुमने आदर्श रखा सच्चा गुरु भक्ति का।'[1]

उस समय द्रोणाचार्य का हृदय वात्सल्य भाव से परिपूर्ण हो जाता है—

"हसकर आर्य द्रोण ने वात्सल्य भाव से
देखा निज शिष्य को जो पद मे विनत था।[2]

जब एकलव्य को पता चलता है कि गुरु द्रोण ने अर्जुन को अद्वितीय धन्वी बनाने का प्रण किया है पर वह स्वय अर्जुन से बढ़कर है तो गुरु भक्त्योद्रेक से वह प्रतिज्ञा करता है कि म कभी धनुष बाण ही हाथ म नही लू गा। गुरु इससे बड़े प्रभावित होते हैं और कहते हैं—

"वत्स एकलव्य तुम धन्य हो।
गुरु की प्रतिज्ञा पूर्ति मे प्रयत्नवान हो।[3]

इसके पश्चात जब गुरु दक्षिणा के निमित्त एकलव्य अपना दक्षिण अगुष्ठ काट देता है उस समय गुरु द्रोण के हृदय म बड़ी पीड़ा होती है और वे कहते हैं—

क्या किया है एकलव्य! तुमने!
मेरी प्रण पूर्ति मे विनष्ट निज साधना,
एक क्षण मे ही कर डाली शिष्य धन्य हो,
कस कर बाहु बीच खींचा एकलव्य को
रक्त सिक्त होके बोल उठे—
एकलव्य है।[4]

एकलव्य महाकाव्य म जो वात्सल्य के उदाहरण मिले हैं उनमे वात्सल्य की दृष्टि से कोई तारतम्य नही है। कथा प्रवाह जैसे जसे चलता गया है वस ही वसे वात्सल्याभिव्यक्ति भी हुई है। कवि का अभीष्ट विषय भी यह नही है। प्रसगवश वात्सल्य का वर्णन आ गया है। इसी स वह न तो इतना गहरा है और न सागोपाग। एकलव्य क धनुर्वेद क अभ्यास क लिये चले जान पर उसकी माता का विलाप विस्तृत है और मार्मिक भी है। उसम मातृ हृदय की अनूठी अभिव्यक्ति की गई है। कवि ने वात्सल्य भाव की अनुभूतियो को प्रकृति क पदार्थों म भी व्यजित किया है। एकलव्य के अतिरिक्त उनके आधुनिक कवि म भी ऐसे उदाहरण मिले हैं।[5]

---

१ एकलव्य पृ० २८२
२ एकलव्य पृ० २८३
३ एकलव्य पृ० २९१
४ एकलव्य, पृ० २९६
५ आधुनिक कवि रामकुमार वर्मा पृ० ९९

वात्सल्य वर्णन से युक्त इनका 'चित्तौड़ की चिता' शीर्षक एक और भी ग्रन्थ है। उसमें वात्सल्य का आलम्बन उदयसिंह और आश्रय संग्रामसिंह की पत्नी कर्णा है। कवि ने उदयसिंह के शिशु रूप का अच्छा वर्णन किया है। उसके कोमल चिक्कन बाल है और मुख की शोभा कमनीय है। जो भी उसे देखता है वही उसका चुम्बन लेना चाहता है—

> 'सुचिक्कण काले काले केश,
> कान्ति मुख की थी क्या कमनीय,
> न होती थी इच्छा दमनीय,
> एक चुम्बन की लख कर वेश।[1]

शिशु की कोमलता लालिमा और हास आदि की शोभा का भी कवि ने वर्णन किया है—

> "सुकोमल थे छोटे से हाथ,
> लालिमा का था मुख में वास।
> जब कभी होता वदन सहास,
> लालिमा बढ़ती स्मिति के साथ।"[2]

इसके अतिरिक्त कवि ने उदयसिंह की चंचलता, क्रीड़ा तथा उसका माता द्वारा खिलाया जाना आदि वर्णित किया है। इनमें सबसे अधिक आनन्ददायक उसके तोतले वचन होते हैं। उसके मनमोहक तोतले वचनों का एक उदाहरण दिया जाता है। माता से उदयसिंह कहता है—

> "अबी तुम छोती लानी औ न ?
> तुझे मैं पहनाऊंगा मकुत,
> पाछ जब ओगी छेना बहुत,
> कलेगा बलावली पिल कौन ?"[3]

इस पुस्तक में वस्तुतः करुण रस ही प्रधान है क्योंकि बहादुरशाह के चढ़ आने पर करणा अपनी सहायता के लिए हुमायूं को चिट्ठी लिखती है परन्तु उसके आने से पहले ही चिता में जल जाती है। किन्तु इसके प्रारम्भ में वात्सल्य का वर्णन है।

गिरजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

गिरिजादत्त शुक्ल ने 'तारक वध' नामक महाकाव्य में वात्सल्य का वर्णन किया है। 'तारक वध' का कथानक बड़ा विस्तृत है। कथा विस्तार में कई प्रासंगिक

---

१ चित्तौड़ की चिता, पृ० ५६
२ चित्तौड़ की चिता पृ० ५७
३ चित्तौड़ की चिता, पृ० ५६

कथाओ के वर्णन से विविधता आ गई है। इसलिये वात्सल्य की अभिव्यक्ति के आश्रय आलम्बन भी अनेक है और वे निम्नलिखित है—

(१) ब्रह्मा जी का अपनी पुत्री शारदा के प्रति वात्सल्य।
(२) विभाडक मुनि का अपने पुत्र शृगी के प्रति।
(३) दशरथ तथा अन्य अयोध्यावासियो का शान्ता के प्रति।
(४) हिमालय और मैना का पार्वती के प्रति।
(५) देवो का कार्तिकेय के प्रति।
(६) तारका की पत्नी का अपने पुत्र तारकाक्ष के प्रति।

तारक वध मे ब्रह्मा जी की शारदा के विरह से व्यथित स्थिति दिखलाई गई है। शारदा मृत्यु लोक मे है। प्राय स्नेह मे अनिष्ट की बडी आशका होता है। ब्रह्मा जी शारदा के विषय मे स्नेहवश व्यथित होकर चिन्ता प्रकट करते है। यदि अपने से वियुक्त सतति के पास कोई अपना आदमी जाता है तो उसके मिलन से जो सुख सन्तान को होगा उसकी कल्पना करके पिता को कुछ सहारा मिलता है। ब्रह्मा भी नारद से अपनी बात कहते हुये इसी भाव की अभिव्यक्ति करते हैं—

बोले विधि मुनि नाथ। हृदय गति क्या बतलाऊ
कन्या विषम वियोग- जलधि किस विधि तर पाऊ।
जाओ जो तुम मर्त्यलोक की ओरअ आये,
निरवलम्ब वह बाल एक अवलम्बन पाये।[१]

ब्रह्मा जी का मन कन्या मे ही लगा हुआ है। अत उसका प्रसग चलने पर विरह की अनुभूति और भी तीव्र होती है और वे नारद से अपनी अधीरता व्यक्त करते है।[२]

वात्सल्य का दूसरा आलम्बन शृगी है। शृगी का शरीर बडा सुन्दर है। वह नवीन प्रफुल्ल कज की भाँति सुशोभित होता है। उसकी बाल छवि का वर्णन करते हुए कवि ने उसके लाल मसूढो से दिखलाई देते हुए दातो की सुन्दरता का कथन किया है—

'अरुण मसूढ़ो बीच दतुलिया निकली जब अभिराम
रक्त कमल पर दिखीं सहज ही बूँदें ओस ललाम॥[३]

शृगी के रूप वर्णन के पश्चात कवि ने उसकी ऐसी चेष्टाए वर्णित की हैं जिनमे वात्सल्य उद्दीप्त होता है। वात्सल्य के उद्दीपन मे बाल विनोद, उसका लड़खड़ाकर चलना, पिता का हाथ पकड़कर खड़ा होना और धूल धूसरित होकर किल-

१ तारक वध पृ० ६६
२ तारक वध पृ० ७६
३ तारक वध पृ० ६६

कारी मारत हुय माँ की गोद मे जाना आदि आनन्द को बढाने वाले कृत्यों का वरणन विशेषत हुआ है।

कवि ने वात्सल्य का व्यापकता की सवत्र व्यजना की है। विरक्त मुनि को भी वा सत्य भाव स अभिभूत वर्णित किया है। विभाडक मुनि विरक्त थ परन्तु कण्व की भाति सन्तान के प्रेम से प्रभावित हुए विना वह भी न रह सके, उह अपन बच्चे के साथ क्रीडा करने मे भगवान के ध्यान से बढ़कर आनन्द आता है।

कवि न विभाडक मुनि के मनोभावो का वरणन करत हुय एक बडा स्वाभाविक चित्रण किया है। कई बार ऐसा होता है कि जब बच्चे का प्यार करते हैं ता वह रोने लगता है। फिर चुप हो जाता है। इस प्रकार बार बार छेडन म बडा आनन्द आता है। यदि कभी बच्चा सचमुच ही अधिक रोन लग तो भाति भाति से मनाना पडता है। विभाडक मुनि द्वारा बच्चे के साथ की क्रीडा का कवि न इसी प्रकार का वरणन किया है। कभी-कभी तो वे प्यार करने के लिय इतने अधीर हो जात है कि सोते हुय भृ गी को भी जगा देते हैं। कभी उसको प्यार करके रुला देते है। रो जान पर पुन बहलात हैं। फिर उसको पूववत प्रसन्न देखकर वे आनन्दित होत है। इसका वरणन कवि की निम्नलिखित पक्तियों मे द्रष्टव्य है—

'प्यारा मे ही उसे रुलाते, फिर कर विविध उपाय,
तरह तरह से उलझाते थे, बहले किसी विधि जाय।'[1]

× × ×

सुख दुलार की चोट भुलाकर हँस बता था बाल,
मोती की माला सी पाकर होते पिता निहाल।[2]

भृ गी कवि के प्रति विभाडक मुनि का ही वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है। सारी वात्सल्याभिव्यक्ति म सयाग सुख का ही वरणन है। उसमे भी बाल छवि बाल विनोद और पिन मनोभाव द्रष्टव्य है।

तारक वध मे दशरथ की पुत्री शान्ता के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य प्रधान है। कवि ने पुत्री क वात्सल्य का विस्तृत वरणन किया है। बल्कि या कहा जाय तो और ठीक है कि पुत्री क वात्सल्य का जितना विस्तृत वरणन इस ग्रन्थ मे हुआ है उतना हिन्दी के सम्भवत किसी कवि ने नही किया। यह दूसरी बात है कि वह इतना सर्वांगीण नहीं है क्योकि इसमे शान्ता के प्रति वियोग वात्सल्य की ही अभिव्यक्ति की गई है। जस हरिऔध' जी ने प्रिय प्रवास' म कृष्ण के वियोग का सविस्तार वरणन किया है वस ही गिरीश जी ने तारक वध' मे शान्ता के वियोग का वरणन किया है।

---

१ तारक वध पृ० ६६

२ तारक वध पृ० ६७

अयोध्या में वर्षों से वृष्टि न होने के कारण अकाल पड़ा हुआ है। शान्ता शृंगी ऋषि के पास जाय और उन्हें किसी प्रकार अयोध्या में लायें तो वृष्टि हो जाय और सबके कष्ट दूर हो जायें। परन्तु शान्ता को सार्वजनिक हित के लिए भी भेजना किसी को सह्य नहीं है। शान्ता का गमन निश्चित हो जाने पर पुत्री के विरह से सारी अयोध्या व्यथित हो जाती है। कवि ने बड़े विस्तार से सबकी स्थिति का कथन किया है। शान्ता के विरह के तीन आश्रय हैं—

(१) राजा दशरथ
(२) कौशल्या आदि रानियाँ
(३) पुरजन

शान्ता के वन में जाने की बात पर दशरथ नारद से कहते हैं कि हम यहाँ आराम से रहें और कन्या वन को चली जाय यह कैसे सहन किया जा सकता है कन्या के प्रेम के कारण राजा को उसके वियोग में अनिष्ट की आशंका होती है और वह कहते हैं—

'एकाकी जायगी विपिन मे, विपदा जहाँ कराला।
जीवन अन्त जहाँ करती, हिंसक जीवों की माला॥'[1]

अनेक कारणों से जब शान्ता का जाना निश्चित हो जाता है तो वे अत्यन्त व्याकुल होते हैं। जाते समय राजा शृंगी ऋषि को चिट्ठी लिखते हैं ताकि कहीं उसके अपराधों के कारण पुत्री को कष्ट न हो। उनके इन उद्गारों में पुत्र-प्रेम पूर्णतः परिलक्षित होता है—

"पिता और माताओं की जो, एकमात्र जीवन आधार
आज जा रही है सेवा में इसे कृपा कर देना प्यार।
बड़ी हठीली सरस बालिका, कभी कभी यदि ले हठ ठान।
ज्ञानवान हैं आप न उसका किसी कभी लें मन में मान।[2]

तत्काल ही लिखी गई पत्रिका को दशरथ पुनः देखते हैं परन्तु उनकी ऐसी दशा हो जाती है कि चिट्ठी को पढ़ भी नहीं सकते स्नेहातिरेक से रुद्ध कण्ठ गद्गद् वाणी और अश्रु संचार होने लगता है।[3]

शान्ता के जाने पर सब रो रहे हैं। राजा आते हैं और ढाढ़स बंधाते हुए रोना बन्द करने का आदेश देते हैं। किन्तु उनके आदेश का किसी पर प्रभाव नहीं होता क्योंकि स्वतः भी वे बड़े कातर हो रहे हैं। उनकी इस स्थिति का वर्णन कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में किया है—

'किसको यह आदेश दिया था भूप ने
कोई भी यह समझ नहीं पाया वहाँ।

---

१ तारक वध पृ० १३१
२ तारक वध पृ० १४३
३ तारक वध पृ० १४

उसे मानता कौन ? उन्हीं की आख मे,
जब आंसू का स्रोत उमड आया वहा।' [१]

कौशल्या आदि रानियो का जब शान्ता के वन गमन का वृत्तान्त ज्ञात होता है तो वे भी ऐसे ही व्यथित होती हैं। वे तुरन्त पुत्री को बुलाती हैं। शान्ता के आने पर रानियो के उमडते हुए वात्सल्य की अभिव्यक्ति कवि ने इस प्रकार की है—

"लिया गोद मे कौशल्या ने यो वह आगे बढकर
सरल रूप धर उर ही आया दृग मे मानो कढकर।
बडे वेग से चली सुमित्रा दौड पडी कैकेयी
लोचन जल से सिंचित करने लता प्यार से सेयी॥"[२]

शान्ता के विरह म तीनो रानियो की अत्यन्त दयनीय स्थिति हो गई है। वे एकदम सज्ञाहीन और गतिहीन-सी हो जाती है। उन्हे लकवा-सा मार जाता है और वे कुछ भी बोल सकने की सामर्थ्य नही रखती। शान्ता जब चलने लगती है तो रानियाँ नाना भाँति के अनिष्ट की आशका करके दुखी होती हैं। उनकी दशा अत्यन्त विषादमयी हो जाती है। वे कहती कुछ नही हैं आँसुओ से आचल को भिगो देती हैं। रानियो के विरह मे कौशल्या की मनोदशा विशेषत द्रष्टव्य है। कन्या की सब प्रकार की सुख सुविधा का प्रबन्ध यहाँ माता ही करती थी। अब वन म माँ कहा से आयेगी। यहाँ तो हठपूर्वक पुत्री को अच्छी अच्छी वस्तुए खिलाई जाती थी। वहा ऐसा अवसर कहाँ आयेगा। ऐसा विचार करके कौशल्या कहती है—

"वहा तुम्हारी कौन करेगी अब रखवाली
सूख जायेगी बेलि प्राण जीवन से खाली।
तुम्हें कलेवा कौन खिला कर ही मानेगा
खा लो माखन कौन इसी का हठ ठानेगा। [३]

कौशल्या के अन्तस म नाना भाव आ रहे हैं। वह सोचती है कि वन मे शीत से या आतप से पुत्री की कौन रक्षा करेगा। इन बातो की कल्पना करके वह शान्ता से कहती है—

'हो न शीत से हानि बचाती कौन रहेगी
लू न तुम्हें लग जाय छिपाती कौन रहेगी॥' [४]

इसी प्रकार अन्यान्य भावों से कवि ने कौशल्या की दुखानुभूति का वर्णन किया है।

---

१ तारक वध, पृ० १७६
२ तारक वध पृ० १३६
३ तारक वध, पृ० १८२
४ तारक वध, पृ० १८३

अन्त में रानियां व्यथित दशा हो जाती है। कभी वे धैर्य धारण का प्रयत्न करती हैं पर पुत्री के वियोग-दुःख की नाना कल्पनाओं में उनका धैर्य छूट जाता है। उनकी दशा का कवि ने बड़ा मार्मिक चित्रण किया है—

नागिन सी हो विवस रानियां सिर धुनती थीं।
धीरज धरतीं और कभी धीरज खोती थीं। [1]

शान्ता के प्रति अयोध्या के सारे समाज का वात्सल्य है। नगर के लोग अनावृष्टि के कारण दुःखी रहना पसन्द कर रहे हैं परन्तु शान्ता का वन गमन उन्हें अभीष्ट नहीं। अतः वे कहते हैं—

हमें नहीं कामना रंच भर अन्न की
ओठ हमारे वारि बिना सूखे रहें।
बेटी कानन को कभी न जा पायगी।
हम हों प्यासे या दिन पड़ें भूखे रहें॥ [2]

सार्वजनीन व्यापक वात्सल्य की अभिव्यक्ति यहाँ की गई है। नगर के लोगों के लिए तो शान्ता सर्प की मणि के समान है। उसके बिना वे जीवित कैसे रह सकते हैं।[3]

सारी अयोध्या शान्ता के विरह में अत्यन्त बेचैन हो जाती है। कुछ लोग तो धैर्य खोकर और चेतनाशून्य होकर एक स्थान पर बैठ जाते हैं। राजा शान्ता को विदा करने जा रहे हैं कुछ बड़े हृदय के व्यक्ति शान्ता के साथ-साथ थोड़ी दूर तक चलते हैं। परन्तु उनके नेत्रों से भी अजस्र अश्रुओं की धारा प्रवाहित होती रहती है। कवि ने उनकी दशा की अभिव्यंजना इस प्रकार की है—

'जिन्हें कलेजा मिला कड़ाई से भरा,
वे ही जन दस पांच नृपति के संग थे।
आकर्षण अत्यन्त अजय जल हेतु था।
जल वर्षण के अहा निराले ढंग थे। [4]

निष्कर्ष यह है कि शान्ता के वियोग का कवि ने विस्तृत वर्णन किया है। शान्ता के प्रति वात्सल्य सार्वजनीन एवं व्यापक है। सारा नगर उस विरह का तीव्र अनुभव करता है। दशरथ के वचनों में पितृ हृदय की मार्मिक अभिव्यक्ति की गई है। पुत्री के वियोग का ऐसा विस्तार अन्यत्र दुर्लभ है। पर कवि ने संयोग सुख का वर्णन नहीं किया है।

---

१ तारक वध पृ० २०१
२ तारक वध पृ० १६७
३ तारक वध पृ० १६७
४ तारक वध पृ० १७४

'तारक वध' मे पार्वती के प्रति हिमालय और मेना का वात्सल्य वर्णित है। पार्वती शंकर को प्राप्त करने के लिए तपस्या मे लग जाती है। अकेली बेटी है अत इस दुख को कैसे देखा जाय? ऐसे समय मे नारद भी आ जाते हैं। हिमालय अपने वात्सल्यमय हृदय को स्पष्ट करते हुए नारद से प्रार्थना करते हैं, ताकि वे ही कुछ ऐसी युक्ति बतलावें जिससे पार्वती तप करने से रुक जाय—

'कोई जुगुत बताओ मुनिवर भाव विषम नस जाय।
बेटी उर मे बात हमारी किसी तरह बस जाय॥'[1]

पार्वती के प्रति मेना के मातृ मनोभाव अपेक्षाकृत अधिक विस्तार के साथ अभिव्यक्त हुए है। माता को इस बात मे बडा सुख और सन्ताप मिलता है कि उनकी पुत्री का विवाह किसी योग्य वर से हो। मेना जब यह देखती हैं कि पार्वती तो शिव में अनुरक्त है जो एक भिखमगे की तरह नग धडगे फिरते हैं तो उसे बडा दुख होता है। ऐसे वर के साथ विवाह होने से तो सारा समाज दुखी होगा अत वह हिमालय से कहती है—

"गिरिजा की जननी मेना ने दग मे भर कर नीर,
कहा देखकर इसकी शिव रति मे तो नाथ अधीर।
भिखमगे सग राजकुमारी के विवाह की बात,
गिरि प्रदेश मे प्रति जन उर मे देगी अति आघात।[2]

पार्वती जब तपस्या से लौटकर आती है तो माता पिता बडे प्रसन्न होते हैं। माँ बाप को सतति के स्वास्थ्य की बडी चिन्ता रहती है। पार्वती को कमजोर देखकर वे कहते हैं कि बेकार ही तपस्या करने को गई है—

बेटी के बहु विधि दुलार मे भूल गये अपने को।
कितनी दुबली होकर आई, व्यर्थ गई तपने को।[3]

पार्वती के प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य मे मेना का मातृ मनोभाव देखने योग्य है। जब उनको शकर के साथ पार्वती के विवाह के निश्चय की बात ज्ञात होती है तो वे शकर के स्वभाव का स्मरण करके दुखी होती हैं। शकर भग पीने वाले हैं। जरा सी देर मे शाप दे देते हैं। अगर कही भग आदि मे देर हो गई, जिसका पार्वती को अभ्यास भी नही है तो शाप मे ही जला दी जाएगी। उनकी निम्नलिखित अभिव्यक्ति वात्सल्यपूर्ण है और उसमे मातृ हृदय की स्वाभाविकता मिलती है—

"कहीं तनिक सी देर होगी भग न दे पायगी
तो कराल शापानल मे जल मिट्टी हो जायेगी।

---

१ तारक वध पृ० ८३
२ तारक वध पृ० ८५
३ तारक वध पृ० ४१४

जिसे सतत आती पल-पल में उस चपल के पाले,
पकड़ कर होंगे मेरी रानी के जीवन के लाले।[1]

मेना फिर सोचती है कि शिव के गले में साँप रहते हैं। पार्वती ने कहीं साँप कहाँ देखे हैं ? वह तो उनके फुफकारने से ही डर जाया करेगी। इस तरह पुत्री सदैव दुःखी ही रहेगी ऐसी आशंका करके मेना बड़ी चिन्तित होती है—

"साँपों की फुफकार सुनकर डर जायेगी बेटी,
फिर तो हाय ! बिना मारे ही मर जायेगी बेटी।
जो न मरेगी तो मरने के भय में होगी प्रतिपल,
यह सत्य सौ सौ मरने की पीड़ा देगा पविचल॥"[2]

इसी प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति करके वे अधीर हो जाती हैं।

इस रूप में कवि ने पार्वती के प्रति भी वियोग वात्सल्य का ही वर्णन किया है। उसमें भी मातृ मनोभाव विशेष द्रष्टव्य है। पार्वती के किशोर रूप के प्रति वात्सल्य की अभिव्यक्ति की गई है।

कार्तिकेय के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति में कवि ने उसके जन्म के उत्सव का ही कथन किया है। जन्मोत्सव पर ब्रह्मा नारद और कामदेव आदि सब प्रसन्न होते हैं और दान आदि देते हैं।[3] ब्रह्मा जी को प्रसन्नता और उत्साह असीम होता है। वे जन्मोत्सव का दिन निश्चित करते हैं और सभी देवताओं को उस सुअवसर पर आमन्त्रित करते हैं।

कवि ने इस ग्रन्थ में वात्सल्याभिव्यक्ति का एक और भी आलम्बन रखा है। वह तारक का पुत्र तारकाक्ष है। तारक की पत्नी अपने पुत्र तारकाक्ष के प्रति असीम वात्सल्य रखती है। वह तारक की क्रूरता के कारण पुत्र को ऐसा व्यवहार करना सिखाती रहती है जिससे उसका पिता कहीं क्रुद्ध न हो जाय। यह स्वाभाविक है कि मां बच्चे का पक्ष अधिक लेती है। उनके पारस्परिक वार्तालाप के समय का वात्सल्य का चित्र कवि ने प्रस्तुत करते हुए लिखा है—

'चूमे मां के धवल हाथ यों ही समझाकर,
झूमे मां के अधर चुम्बन—मस्तक पर जाकर।
गौरव ही आशीश प्राप्त कर जाने का था
स्वर्ग लोक का स्वप्न धरा पर लाने को था।'[4]

तारकाक्ष के युद्ध को जाने के समय वात्सल्यमयी जननी उसे आशीर्वाद देती हैं उसका माथा चूमती है और मंगल कामना करती है—

---

१ तारक वध पृ० ४१४
२ तारक वध पृ० ४१५
३ तारक वध पृ० ४२७
४ तारक वध, पृ० ४२८

'हाथ फेर मोहिनी शीश पर चूमा बारी बारी,
राज जननि ने उसको आशिश दिये प्रफुल्लितकारी।
तारकाक्ष को विदा किया तब माया चूम मनोहर,
जाओ बेटा पथ तुम्हारा हो सब विधि मंगलकर ॥"[1]

'तारक वध' के वात्सल्य वर्णन के अध्ययन से जो निष्कर्ष निकलते हैं वे इस प्रकार हैं—

(१) गिरीश जी ने वात्सल्य वर्णन के आश्रय और आलम्बन अनेक रखे हैं विभिन्न परिस्थितियों में अनेक रूपों में वात्सल्य का वर्णन हुआ है।

(२) उन्होंने पुत्र और पुत्री दोनों के प्रति वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति की है।

(३) इनकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि इन्होंने पुत्र के वात्सल्य की अपेक्षा पुत्री का वात्सल्य विस्तृत और प्रधान रूप से वर्णित किया गया है।

(४) पुत्रों के संयोग वात्सल्य और पुत्रियों के वियोग वात्सल्य का विशेष रूप से वर्णन किया है।

(५) शास्ता के वात्सल्य में व्यापकता और सार्वजनीनता है। माता पिता के अतिरिक्त पुरवासी भी पुत्री विरह से व्यथित होते हैं।

(६) इनका वात्सल्य भाव बड़ा व्यापक है। एक ओर तो देवता और विरक्त ऋषि उससे प्रभावित हुये बिना नहीं रहते और दूसरी ओर राक्षस भी इस भाव से अभिभूत हैं। तारक की पत्नी इसका उदाहरण है।

रघुवीरशरण 'मित्र'

रघुवीर शरण 'मित्र' ने जननायक महाकाव्य लिखा है। जिसने जग को अपने वात्सल्य का आलम्बन बनाया वे स्वयं इस पुस्तक में वर्णित वात्सल्य के आलम्बन हैं। इस महाकाव्य में गांधी जी के सम्पूर्ण जीवन चरित का चित्रण है। उनके माता पिता द्वारा उनके शैशव में उनके प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति भी की गई है। उस अभिव्यक्ति में भी उनकी माता पुतलीबाई के मनोभाव द्रष्टव्य हैं।

पुतलीबाई मोहनदास को बड़े प्यार से खिलाती थी। कभी उन्हें झोंटे दे देकर झुलाती थी और कभी खिला पिलाकर गोद में लेकर प्यार करती थी। कवि ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

"कभी पिलाती दूध कभी वह चूम चूमकर लाड़ चढ़ाती।
कभी पिता की गोदी में से मां मोहन को पास बुलाती ॥
कभी बदलती वस्त्र कभी वह, अच्छी अच्छी बात सुनाती।
कभी लगाती चपत कभी वह—अपनी छाती से चिपकाती ॥'[2]

---

१ तारक वध, पृ० ५२८
२ जननायक पृ० २६

इसके अतिरिक्त कभी वे लोरिया देकर उन्हें सुलातीं, कभी उन्हें राम कृष्ण सा होने का आशीर्वाद देती थीं, यदि कभी मोहनदास दोषी ठहरते तो उनके हाथ बाध देती, मुँह से चाहे कुछ भी वह लेती परन्तु हृदय म उनके प्रति अटूट प्रम भर रहती थी। इन भावो मे मात हृदय की सच्ची अभिव्यक्ति है और उसको कवि न निम्नलिखित पक्तियो म चित्रित किया है—

"कभी लोरियां दे देकर मां कहती मेरे मुन्ना सोजा।
कभी प्यार से वर देती यह तू भी राम कृष्ण सा हो जा॥
कभी बाधती हाथ डाट स मन मोहन के दोष देख यह।
मुह से कहती मर जा गड जा मन स कहती सदा अमर रह॥"[1]

मोहनदास भी अपनी शिशु क्रीडा से मां को आनन्दित किया करते थे। व अपनी तुतली बोली में मां स कहते है कि मां तू पकड मैं दौडता हूँ—

'ले मा पकल दौलता' हू म शिशु ने मां को खेल खिलाये।[2]

इसी तरह की और भी क्रीडायें व करते थे। कभी अपनी उगली का वीणा की तरह पकडकर मां को बीन सुनाते तो कभी चन्दा मामा स होड करते कि ल मुझ पकड ले।

जननायक म मोहनदास के पिता का भी उनके प्रति वात्सल्य वर्णित है। जब वे बीमार थ तब पित भक्त मोहनदास की सेवाओ से पिता बड गदगद हुए उन्हें छाती स लगाया और उन्हें आशीर्वाद देते रह। उनके वात्सल्य प्रदर्शन का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

मोहन की मधु सेवाओ स रोगी का मानस भर आया।
प्यार उमड कर चला दृगों स सुत को छाती स चिपकाया।'[3]

कवि न गाधी जी और कस्तूरबा के विवाह के समय कस्तूरबा के माता पिता का अपनी पुत्री क विदा होने क समय वात्सल्य विभोर होना भी अभिव्यक्त किया है—

बारह वर्ष रही गोदी मे अब बिटिया हो गई पराई।
करते समय विदा कन्या को डब डब डब आखें भर आई।[4]

साराश यह है कि जननायक म भी वात्सल्य का वर्णन है। वह इतना निरन्तर और मार्मिक नहीं है वर्णन मात्र मात्र ही है। परन्तु कवि ने वात्सल्य का आलम्बन एस व्यक्ति को बनाया है जो अपने आप म बहुत महत्वपूर्ण है। अत

१ जननायक पृ० २६
२ जननायक पृ० २६
३ जननायक पृ० ४५
४ जननायक पृ० ५५

उसको इस वात्सल्य का वर्णन की परम्परा में समाविष्ट करने में कोई आपत्ति नहीं है।

श्री करील

श्री करील' जी ने देवाचन नामक महाकाव्य लिखा है। इसमें गोस्वामी तुलसीदास के जीवन वृत्त का वर्णन है। इस पुस्तक में १६ सर्ग हैं। इसके पंचम, षष्ठ और सप्तम सर्गों में तुलसीदास के 'तारक' नामक पुत्र के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति की गई है। यद्यपि यह कथा कवि की कल्पना प्रसूत है परन्तु बालक की चेष्टा और क्रीडाओं का कवि ने स्वाभाविक वर्णन किया है। दूसरी बात यह है कि कवि ने बच्चे का जन्म से लेकर जैसे जैसे वह बड़ा होता जाता है उसी आयु के क्रम के अनुसार उसकी चेष्टा और क्रीडा आदि का वर्णन किया है।

तारक के जन्मोत्सव पर सर्वत्र आनन्द छा जाता है। स्त्रियां बधाइयां देने लगती हैं। वृद्धाएं आशीर्वाद देने लगती हैं, तरुणियां सोहर गीत गाने लगती हैं और बालाएं उत्सुकता पूर्वक शिशु को देखने लगती हैं। कवि ने नवजात शिशु तारक की उस समय की सुन्दरता का वर्णन करते हुए लिखा है जबकि चन्द्रलता (तुलसीदास का पालन पोषण करने वाली कल्पित धर्म माता कमला एवं चिन्तामणि की पुत्री) उसे गोद में लेती हुई होती है—

> 'जीर्ण पर अति स्वच्छ वस्त्रों से लिपट कर कुलबुलाता।
> चन्द्रलेखा थी लिए वह फूल सा शिशु चुलबुलाता॥
> अंक में उसके पड़ा नवजात शिशु मन मोहता था।
> ज्यों कला की गोद में शृंगार शैशव सोहता था॥"[1]

श्री रूप (चिन्तामणि के मित्र की पत्नी भारती का पुत्र) तारक को जो उनका भतीजा लगता था, चुम्बन देकर हँसा देते हैं। जब तारक कुछ और बड़ा होता है, तो स्वाभाविक चपलता से कभी चाचा (श्री रूप) के सफेद वस्त्रों में काजल लगा देता है—

> 'चाचा के सित वस्त्रों पर जब उसने काजल फेरा।"[2]

कुछ और बड़ा होने पर वह 'ता 'ता' कह कर अपने छोटे हाथों को गाली में फैलाता था तो चाचा को बड़ा आनन्द आता था—

> 'चाचा की मृदु गोदी में शैशव ने प्राण जगाये।
> 'ता' 'ता' कहकर बेटे ने जब उन्हें हाथ बढ़ाये।"[3]

कुछ और बड़ा होने पर तारक की तोतली बोली से सारे घर में रस बरसने लगता है। चाचा उसे बड़ा प्यार करते हैं। अतः कभी कभी वह माँ की गोदी से

---

१ जननायक, ५।१३
२ देवाचन, ६।७८
३ देवाचन ६।१००

इसके अतिरिक्त कभी वे लोरियां देकर उन्हें सुलाती, कभी उन्हें राम कृष्ण सा होने का आशीर्वाद देती थी यदि कभी मोहनदास दोषी ठहरते तो उनके हाथ बांध देती, मुंह से चाहे कुछ भी कह सकती परन्तु हृदय में उनके प्रति अटूट प्रेम भरे रहती थी। इन भावों में मातृ हृदय की सच्ची अभिव्यक्ति है और उसको कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में चित्रित किया है—

"कभी लोरियां दे देकर मां कहती मेरे मुन्ना सोजा।
कभी प्यार से वर देती यह तू भी राम कृष्ण सा हो जा॥
कभी बांधती हाथ डांट से मन मोहन के दोष देख यह।
मुंह से कहती मर जा गड जा मन से कहती सदा अमर रह॥"[1]

मोहनदास भी अपनी शिशु क्रीडा से मां को आनन्दित किया करते थे। वे अपनी तुतली बोली में मां से कहते हैं कि मां तू पकड़ मैं दौड़ता हूँ—

"ले मा पकल दौलता हूं मैं" शिशु ने मां को खेल खिलाये।[2]

इसी तरह की और भी क्रीडायें वे करते थे। कभी अपनी उंगली को वीणा की तरह पकड़कर मां को बीन सुनाते तो कभी चन्दा मामा से होड करते कि वे मुझे पकड़ लें।

जननायक में मोहनदास के पिता का भी उनके प्रति वात्सल्य वर्णित है। जब वे बीमार थे तब पिता सेवा मोहनदास की सेवाओं से पिता बड़े गदगद हुए उन्हें छाती से लगाया और उन्हें आशीर्वाद देते रहे। उनके वात्सल्य प्रदर्शन का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

मोहन की मधु सेवाओं से रोगी का मानस भर आया।
प्यार उमड़ कर चला दृगों से सुत को छाती से चिपकाया।[3]

कवि ने गांधी जी और कस्तूरबा के विवाह के समय कस्तूरबा के माता पिता का अपनी पुत्री के विदा होने के समय वात्सल्य विभोर होना भी अभिव्यक्त किया है—

बारह वर्ष रही गोदी में अब बिटिया हो गई पराई।
करते समय विदा कन्या को डब डब डब आंखें भर आईं।[4]

सारांश यह है कि जननायक में भी वात्सल्य का वर्णन है। वह इतना विस्तृत और मार्मिक नहीं है वर्णन मात्र सा ही है। परन्तु कवि ने वात्सल्य का आलम्बन ऐसे व्यक्ति को बनाया है जो अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है। अतः

१ जननायक पृ० २६
२ जननायक पृ० २६
३ जननायक पृ० ४५
४ जननायक पृ० ५५

उसको इस वात्सल्य का वर्णन की परम्परा में समाविष्ट करने में कोई आपत्ति नहीं है।

श्री करील

श्री 'करील' जी ने 'देवाचन' नामक महाकाव्य लिखा है। इसमें गोस्वामी तुलसीदास के जीवन वृत्त का वर्णन है। इस पुस्तक में १६ सर्ग हैं। इसके पंचम, षष्ठ और सप्तम सर्गों में तुलसीदास के 'तारक' नामक पुत्र के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति की गई है। यद्यपि यह कथा कवि की कल्पना प्रसूत है परन्तु बालक की चेष्टा और क्रीडाओं का कवि ने स्वाभाविक वर्णन किया है। दूसरी बात यह है कि कवि ने बच्चे का जन्म से लेकर जैसे जैसे वह बड़ा होता जाता है उसी आयु के क्रम के अनुसार उसकी चेष्टा और क्रीडा आदि का वर्णन किया है।

तारक के जन्मोत्सव पर सर्वत्र आनन्द छा जाता है। स्त्रियां बधाइयां देने लगती हैं। वृद्धाएं आशीर्वाद देने लगती हैं, तरुणियां सोहर गीत गाने लगती हैं और बालाएं उत्सुकतापूर्वक शिशु को देखने लगती हैं। कवि ने नवजात शिशु तारक की उस समय की सुन्दरता का वर्णन करते हुए लिखा है जबकि चन्द्रलेखा (तुलसीदास का पालन पोषण करने वाली कल्पित धर्म माता कमला एवं चिन्तामणि की पुत्री) उसे गोद में लेती हुई होती है—

"जीर्ण पर अति स्वच्छ वस्त्रों से लिपट कर कुलबुलाता।
चन्द्रलेखा थी लिए वह फूल सा शिशु चुलबुलाता॥
अंक में उसके पड़ा नवजात शिशु मन मोहता था।
ज्यों कला की गोद में शृंगार शैशव सोहता था॥"[1]

श्री हृष (चिन्तामणि के मित्र की पत्नी भारती का पुत्र) तारक को जो उनका भतीजा लगता था, चुम्बन देकर हँसा देते हैं। जब तारक कुछ और बड़ा होता है, तो स्वाभाविक चपलता से कभी चाचा (श्री हृष) के सफेद वस्त्रों में काजल लगा देता है—

'चचा के सित वस्त्रों पर जब उसने काजल फेरा।'[2]

कुछ और बड़ा होने पर वह 'ता' 'ता' कह कर अपने छोटे हाथों को गगन में फैलाता था तो चाचा को बड़ा आनन्द आता था—

'चाचा की मृदु गोदी में शैशव ने प्राण जगाये।
'ता' 'ता' कहकर बेटे ने जब नन्हें हाथ बढ़ाये।'[3]

कुछ और बड़ा होने पर तारक की तोतली बोली से सारे घर में रस बरसने लगता है। चाचा उसे बड़ा प्यार करते हैं। अतः कभी कभी वह माँ की गोदी से

१ जननायक, ५।१३
२ देवाचन, ६।७८
३ देवाचन, ६।१००

माता की गोदी में जाने को मचल पड़ता है। [illegible] उसे लिटाए रहती है। जब वह कुछ और बड़ा हो जाता है तो बाल स्वभाव के अनुसार कुछ चंचलता दिखाने लगता है

कोमल करों से निरोध्य खींचता हुआ।
जननी के पाछे [illegible] तारक [illegible]।[1]

माता उसके छोटे हाथ पकड़ती है और गोद में बिठाती है। [illegible] लगा हुआ होता है और वह किसी प्रकार से बच्चा का [illegible] नहीं करता। माँ ज्यों ही गोद में बिठाती है कि थोड़ा-सा अवसर मिलते ही पुत्र [illegible] उछलकर अपने पिता की ओर जाने लगता है—

"पुत्र को सप्रेम दोनों हाथों से समेटती,
स्नेहमयी जननी ने ले बिठाया गोद में।
किन्तु अब तारक तनिक कुछ डोल था
पहुंचा पिता के पास घुटनों के बल से।"[2]

इसी प्रकार की और चंचलताओं का वर्णन कवि ने किया है। वह कभी हँसकर दूध के दो दाँत दिखलाता है तो कभी लड़खड़ाते पगों से डगमग चलता हुआ सबको प्रसन्न करता है। अनजानी वस्तु की ओर बच्चा बड़ी शीघ्रता से आकर्षित होता है। उस समय वह या तो उसे पकड़ना या खाना ही चाहता है। तारक ने तुलसीदास के माथे पर चन्दन लगा देखकर जो अपनी चेष्टा की वह द्रष्टव्य है—

"चन्दन से चर्चित पिता के उच्च भाल को।
देखकर तारक चकित जैसा हो गया॥
बायें हाथ को उठा अंगुलियां मनोहरा।
ध्यानमग्न होकर खरोंचने उसे लगा॥"[3]

तुलसीदास उसे स्नेहपूर्वक रोकते हैं और गोदी में उठा लेते हैं। यहाँ पर कवि ने एक बड़ा स्वाभाविक चित्र अंकित किया है। कभी-कभी छोटे बच्चे को प्यार करते हुए पिता उसे कसकर पकड़ लेता है या ऊपर उछाल देता है ऐसा करने से प्रायः शिशु को उल्टी हो जाती है जिसे दूध डालना भी कहा जाता है। माताओं को इसका अधिक ध्यान रहता है। तुलसीदास भी जब तारक को ऊपर उछालते हैं तो रत्नावली उनसे किस प्रकार मना करती है। इन पंक्तियों में मातृ हृदय की अच्छी अभिव्यंजना हुई है—

---

१ देवाचन ७।११
२ देवाचन, ७।१३
३ देवाचन ७।१६

'ज्योंही युग बाहुओं से ऊपर उछालते वे,
विहँस खिलाने लगे उस प्रिय पुत्र को ॥
क्या है यह अरे कहीं यह भी किया जाता है।
दूध डाल देगा बोली जननी समाकुला ॥'[1]

तारक कुछ बड़ा होकर ऐसी चेष्टाएं करता है, जिससे माता पिता को बड़ा आनन्द आता है। कभी पिता गोदी में लिये होते हैं तो माँ की ओर वह घुटनों के बल दौड़ता है और मा की गोदी मे जाकर छिप जाता है। दूध पीने लगता है, दूध पीकर फिर हँसता आता है कभी पिता की ओर आता है और जब वे हाथ बढ़ाकर गोदी मे लेना चाहते तो माता की ओर दौड़कर उनके गले को पकड़कर पीठ से चिपक जाता है और पिता की ओर झाकने लगता है। ये चेष्टायें बड़ी स्वाभाविक हैं। कवि ने इस क्रीड़ा का चित्रण निम्नोद्धृत पंक्तियों मे किया है—

"हाथों को बढ़ाता घुटनों से चलता हुआ।
पहुचा पिता के पास आखों मे हुलास ले ॥
किंतु देख उनको बढ़ाते हाथ अपने।
लौटा जननी की ओर फिर हसता हुआ ॥
चातुरी से जननी की पीठ से चिपकता,
दक्षिण की ओर कम्बु कण्ठ लघु मोड़ता,
काजल से काले लम्बे लोचनों मे हसता।
तारक पिता की ओर अब झाकने लगा ॥"[2]

बालक क्रीड़ा की पुनरावृत्ति को बड़ा पसन्द करता है। माँ बाप तारक की क्रीड़ा से बड़े आनन्दित होते है। कुछ और बड़ा होने पर वह बाल सुलभ कौतुक भी करने लगता है—

जानकर तारक हसाने लगा सबको।
चाचा के कटोरे की मिठाई भर मुंह मे
दूध पी पिता का छलकाता वह था कभी।
मुंह खोलता था कभी जननी के पास आ ॥[3]

इस प्रकार हम देखते है कि 'देवाचन' मे तुलसीदास के पुत्र तारक की बाल चेष्टाओं और क्रीड़ाओं का कवि ने बड़ा स्वाभाविक चित्रण किया है। तारक के वयक्रम के अनुसार ही उसके रूप और चेष्टा आदि का वर्णन है। इनके वर्णन में अत्युक्ति नही है क्योंकि कवि का लक्ष्य किसी असामान्य बालक का चित्रण नहीं है।

१ देवाचन, ७।१८
२ देवाचन, ७।३१ ३२
३ देवाचन, ७।१२६

जैसे साधारण परिवारों में बच्चे प्रायः खेलते और क्रीड़ा करते देखे जाते हैं उन्हीं का वर्णन है। इनका सारा वर्णन वात्सल्य का उद्दीपन करने वाला है और इस उद्दीपन का प्रसार कवि ने शायद इसीलिए किया है जिससे आगे का अन्तर्निहित करुण रस और भी पुष्ट हो सके। क्योंकि कवि ने लाल की लीलाओं के बाद मृत्यु भी दिखलाई है।

कवि ने वात्सल्य के ऐसे आश्रयों का भी वर्णन किया है जो रक्त की दृष्टि से आलम्बन के वस्तुतः कुछ नहीं लगते। चन्द्रलेखा और श्रीहरि राम ही आश्रय हैं क्योंकि तुलसीदास तो इस परिवार के पोष्य पुत्र हैं। यह दूसरी बात है कि अब वे सब एक परिवार की तरह रहने लगे हैं।

शम्भुदयाल सक्सेना

शम्भुदयाल सक्सेना की एक मात्र पुस्तक 'पालना'[1] प्राप्त होती है। 'पालना' शीर्षक से ही ऐसा लगता है कि इसमें वात्सल्य का वर्णन होगा। कवि ने केवल पालने के ऊपर ही कविताएँ न लिखकर बच्चों से सम्बन्धित और अनेक भाव रखे हैं। इस प्रकार ऐसी पचासों कवितायें पालना में संगृहीत हैं। कवितायें बहुत साधारण हैं। परन्तु कहीं कहीं वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति बहुत अच्छी मिलती है। कवि ने बच्चे को लक्ष्य करके उसके अंगों की सुकुमारता, चापल्य, किलकारी, गल चुम्बन, खिलाना, झुलाना और लोरी गाना आदि विविध बातों के ऊपर विचार अभिव्यक्त किये हैं। उनके इस प्रकार के वर्णन में कोई क्रम नहीं है।

कवि के लिए शिशु ही सब कुछ है। मथुरा, काशी, रामायण और गीता सब कुछ वही है। उसके रोने और हँसने में मोती और फूल झड़ते हैं। लल्ला और मुन्नी के रहने पर कोई भी कष्ट दुखदायी नहीं होता। कवि शिशु के प्रति आकर्षण का कारण भी देता है—

> "इनकी बोली मधु घोली,
> मैं उनके रस की प्यासी।
> छवि इनकी भूख मिटाती
> मैं इनके बिना उपासी।"

बच्चों से ही घर स्वर्ग बनता है। उनके समक्ष हीरे, मोती, पन्ने कुछ महत्व नहीं रखते। लाखों मनौतियाँ व्रत, नेम आदि करके यह धन प्राप्त होता है। इसी से बच्चे को पाकर माँ अपने भाग्य को सती, रमा और इन्द्राणी से भी बड़ा समझती है। कवि क्षण भर के लिए भी शिशु से विलग नहीं होना चाहता—

> "प्राणों में इसे छिपाकर
> रख लेने को जी होता।

---

[1] पालना पृ० ६

बहता रहता है तो भी
अपशकार्यों का सोता।"[1]

माता कभी पालना झुलाकर बच्चे के प्रति प्यार प्रदर्शित करती है वह कभी निंदिया रानी को बुलाती है। मौसी, बुआ दादी सबके नाम से पालने को झोटा लगाती है। पलन का गीत गाती है कि इस पलने मे राम, लक्ष्मण, दाऊ जी और कृष्ण भी झूले थे। माता का पालना झुलाते समय लोरी गाना उसके आनन्द का द्योतक है। कवि ने लोरी गान के लिए निम्नलिखित शब्दो म बडा अच्छा भाव रखा है—

"झोंके लेता है जब पलना,
मा का मन लहराता।
अन्तर का मदु भाव तभी।
लोरी बन कर वह जाता।"[2]

पुत्र की तरह बिटिया के प्रति भी माता का वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है। मां चाहती है कि बेटी को गोदी मे ले लेकर थपकी देकर सुला दे। बिटिया का रोना भी बडा अच्छा लगता है। उसकी सिसकियां और पग पग चलना भी मन को भाता है—

"कितना मीठा रोता है,
सिसकी कसी अलबेली।
फिरती है कसी रच रच,
धरती पग चारु सहेली॥"[3]

कभी बेटी को माता सुलाती है तो कभी परछाई के भय को दूर करती है। वह यह भी कामना करती है कि बिटिया सीता और सावित्री की तरह बन जाये। माँ चाहती है कि भोली बच्ची बडा से सदगुणा को सीख ले। उसे देखकर माँ को अपना बचपन याद आ जाता है। वह सोचती है कि मानो मेरे बचपन को ही यह बिटिया दुहरा रही है।

बच्चा क्या है मानो यह तो एक बन्दर है। वह नाना भांति के कौतुक करता है। कभी अचल खींचता है तो कभी चीजो को ऊपर उलट पुलट कर देता है। उसके नटखटपन का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है—

इस नटखट की बातें देखो
मूछ पिता की खींचे।

---

१ पालना पृ० ३४
२ पालना पृ० ३३
३ पालना, पृ० २६

भया को यह चोटी मोंचे,
याया के बुग मींचे।"[1]

कभी-कभी माँ बहकाकर बच्चे से नाना काजल लगवाना नाना आदि काय कराती है कि मैं जब तक आँखें मींच हूँ देखें कोई काजल लगवा ले। बच्चे का स्वभाव उस समय उन कामों को बडी तत्परता से करने का होता है। वह माँ के बिना देखे ही ऐसे काय करा लेते हैं। कवि ने इस प्रकार का वर्णन सुन्दर ढंग से किया है—

"म आँखें मींचे हू जब तक,
आकर लाले कोई।
म आँखें मींचे जब तक,
चोटी गुथवा ले कोई।"[2]

बच्चे की क्रीडा सारी चिन्ताओं को दूर कर देती है। बालक कभी आँख मूँदता है और कभी मुस्काता है तो बड़ों को भी अपने साथ बच्चा बना लेता है। माता अपने बच्चों को क्रीडा करते देखकर प्रसन्न ही रहती है चाहे उसे उनके लिए कितना ही कष्ट उठाना पड़े। नीचे की पंक्तियों में बिटिया की क्रीडा का माँ ने कैसा प्रसन्न होकर वर्णन किया है—

'छुनुन मुनुन घर अगना री।
रुन झुन पायल कगना री।
मेरी रानो फिरे थिरकती।
मुझे रात भर जगना री।'[3]

अंत में कवि ने यह भी अभिव्यक्त किया है कि प्रत्येक क्रिया पर माँ उसका चुम्बन लेती है। ऐसी बहुत सी क्रियाओं को क्रम क्रम करके कवि ने गिनाया है यहाँ पर एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"चुम्बन एक हसी जब छूटे।
चुम्बन एक नींद जब टूटे।
चुम्बन एक स्नान से पहले।
चुम्बन एक न जी जब बहले।"[4]

निष्कर्ष यह है कि शम्भुदयाल सक्सेना ने 'पालना' पुस्तक में बच्चों के प्रति वात्सल्य प्रदर्शन के नाना भावों से समन्वित कविताएं लिखी हैं। कवितायें साधारण हैं, पर उनके द्वारा बच्चों के स्वभाव चंचलता और माता के हृदय की अच्छी अभि

१ पालना पृ० ३७
२ पालना पृ० ४०
३ पालना, पृ० ४६
४ पालन, पृ० ५७

व्यक्ति की गई है। विशेषत आलम्बन के प्रति स्नेह प्रदर्शन मात मनोभाव, बाल क्रीडा, बाल-स्वभाव नटखटपन आदि के चित्र कवि ने दिये हैं। पुत्र और पुत्री दोनो के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित कराया है। एक विशेषता इनकी अभिव्यक्ति म यह है कि पुत्र और पुत्री को प्राय प्यार मे जिन नामो स पुकारते हैं—लाला लल्लन लल्ला बिटिया, बन्नी आदि—उन्ही शब्दो का प्रयोग किया है। वस्तुत इनके 'पालने' मे वात्सल्य भाव झोके खा रहा है।

सुमित्रा कुमारी सिनहा

सुमित्रा कुमारी सिनहा हिन्दी की ख्यातनाम स्त्री कवियो म से एक हैं। वात्सल्य की अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से इनका नाम और भी अधिक उल्लेखनीय है। यह एक सर्वस्वीकृत सत्य है कि स्त्री पुरुष की अपेक्षा अधिक वात्सल्यमयी होती है। परन्तु इसके साथ यह विचारणीय है कि हिन्दी की स्त्री कवियों ने अपने वात्सल्यपूर्ण हृदय का परिचय वात्सल्याभिव्यक्ति के द्वारा बहुत कम दिया है। सुभद्राकुमारी चौहान की कुछ कविताओ मे वात्सल्य रस का वर्णन हुआ है। इनके अतिरिक्त तीन स्त्री-कवियो की वात्सल्य वर्णन की कविताए पुस्तको मे प्रकाशित हुई हैं[1] और लगभग १२ स्त्री कवियो की वात्सल्य वर्णन की कविताए विभिन्न पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुई हैं।[2] इन स्त्री-कवियो की वात्सल्य की अभिव्यक्ति की यह सख्या और मात्रा पुरुषो की अपेक्षा बहुत कम है। सुमित्राकुमारी सिनहा ने इन सभी स्त्री कवियो की अपेक्षा वात्सल्य का वर्णन अधिक विस्तार के साथ किया है। इनकी वात्सल्य विभोर रचनाओ के तीन सग्रह 'आगन के फूल', 'हस दो' और 'दादी का मटका' नाम से प्रकाशित हुए हैं। इनके अतिरिक्त सामयिक पत्र पत्रिकाओ म भी इनकी वात्सल्य विभोर रचनायें प्रकाशित हैं तथा एक लोरियों का सग्रह भी अभी प्रकाशित होने वाला है।[3] इसके साथ यह भी अवेक्षणीय है कि सुमित्राकुमारी सिनहा केवल बालोपयोगी साहित्य की ही रचना करती हैं।[4] इससे बहुत स स्थलो पर इनकी अभिव्यक्ति बहुत अनूठी है। साराश यह है कि वात्सल्य रस का वर्णन करने वाली स्त्री कवियो म इनका नाम सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

कवयित्री स्वत भी बडी वात्सल्यमयी हैं। बच्चो के साथ रहना और हसना बोलना उन्हें प्रिय है। वे सदव बच्चो के लिए मगल कामना करती रहती हैं। बच्चे देश के रत्न हैं। घर और आगन की शोभा उन्ही से है। सूना घर बच्चो से जगमगा जाता है।[5] वे अत्यन्त सुकुमार हैं। प्रकृति के पदार्थों की सारी सुकुमारता के दर्शन

१ दे० परिशिष्ट न० १
२ दे० परिशिष्ट न० २
३ कवयित्री से लेखक को पत्र द्वारा सूचना प्राप्त हुई।
४ कवयित्री से लेखक को पत्र द्वारा सूचना प्राप्त हुई।
५ दादी का मटका, पृ० ११

भया की यह चोटी नौंचे,
माया ये दृग मीचे।"[1]

कभी-कभी माँ बहलाकर बच्चे से खाना काजल लगवाना नहाना आदि काम कराती है कि मैं जब तक आँखें मीचे हू देखें कोई काजल लगवा ले। बच्चे का स्वभाव ऐसे समय उन कामो को बडी तत्परता से करने का होता है। वह माँ के बिना देखे ही ऐसे काय करा लेत हैं। कवि ने इस प्रकार का वर्णन सुन्दर ढग से किया है—

"म आखें मीचे हू जब तक,
आकर खाले कोई।
म आखें मीचे जब तक,
चोटी गुथवा ले कोई।"[2]

बच्चे की क्रीडा सारी चिन्ताओ को दूर कर देती है। बालक कभी आँख मूदता है और कभी मुदवाता है तो बडो को भी अपने साथ बच्चा बना लेता है। माता अपने बच्चो को क्रीडा करत देखकर प्रसन्न ही रहती है चाहे उसे उनके लिए कितना ही कष्ट उठाना पडे। नीचे की पक्तियो मे बिटिया की क्रीडा का माँ ने कसा प्रसन्न होकर वर्णन किया है—

'छुनुन मुनुन घर अगना री।
रुन झुन पायल कगना री।
मेरी रानो फिरे थिरक्ती।
मुझे रात भर जगना री।'[3]

अन्त मे कवि ने यह भी अभिव्यक्त किया है कि प्रत्येक क्रिया पर माँ उसका चुम्बन लेती है। ऐसी बहुत सी क्रियाओ को क्रम क्रम करके कवि ने गिनाया है यहाँ पर एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

'चुम्बन एक हसी जब छूटे।
चुम्बन एक नींद जब टूटे।
चुम्बन एक स्नान से पहले।
चुम्बन एक न जो जब बहले।'[4]

निष्कर्ष यह है कि शम्भुदयाल सक्सेना ने पालना' पुस्तक मे बच्चो के प्रति वात्सल्य प्रदर्शन के नाना भावो से समन्वित कविताए लिखी हैं। कवितायें साधारण हैं पर उनके द्वारा बच्चा के स्वभाव चचलता और माता के हृदय की अच्छी अभि

१ पालना, पृ० ३७
२ पालना पृ० ४०
३ पालना, पृ० ४६
४ पालन, पृ० ५७

व्यक्ति की गई है। विशेषत: आलम्बन के प्रति स्नेह प्रदर्शन, बाल मनोभाव, बाल क्रीडा बाल-स्वभाव, नटखटपन आदि के चित्र कवि ने दिये हैं। पुत्र और पुत्री दोनों के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित किया गया है। एक विशेषता इनकी अभिव्यक्ति में यह है कि पुत्र और पुत्री को प्राय: प्यार में जिन नामों से पुकारते हैं—लाला, लल्लन लल्ला, बिटिया बेटी आदि—उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है। वस्तुत: इनके 'पालने' में वात्सल्य भाव झांक रहा है।

सुमित्रा कुमारी सिनहा

सुमित्रा कुमारी सिनहा हिन्दी की ख्यातनाम स्त्री कवियों में से एक हैं। वात्सल्य की अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से इनका नाम और भी अधिक उल्लेखनीय है। यह एक सर्वस्वीकृत सत्य है कि स्त्री पुरुष की अपेक्षा अधिक वात्सल्यमयी होती है। परन्तु इसके साथ यह विचारणीय है कि हिन्दी की स्त्री कवियों ने अपने वात्सल्यपूर्ण हृदय का परिचय वात्सल्याभिव्यक्ति के द्वारा बहुत कम दिया है। सुभद्राकुमारी चौहान की कुछ कविताओं में वात्सल्य रस का वर्णन हुआ है। इनके अतिरिक्त तीन स्त्री-कवियों की वात्सल्य वर्णन की कविताएं पुस्तकों में प्रकाशित हुई हैं[1] और लगभग १२ स्त्री-कवियों की वात्सल्य-वर्णन की कविताएं विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं।[2] इन स्त्री-कवियों की वात्सल्य की अभिव्यक्ति की यह संख्या और मात्रा पुरुषों की अपेक्षा बहुत कम है। सुमित्राकुमारी सिनहा ने इन सभी स्त्री कवियों की अपेक्षा वात्सल्य का वर्णन अधिक विस्तार के साथ किया है। इनकी वात्सल्य विभोर रचनाओं के तीन संग्रह 'आंगन के फूल', 'हंस दो' और 'दादी का मटका' नाम से प्रकाशित हुए हैं। इसके अतिरिक्त सामयिक पत्र पत्रिकाओं में भी इनकी वात्सल्य विभोर रचनायें प्रकाशित हैं तथा एक लोरियों का संग्रह भी अभी प्रकाशित होने वाला है।[3] इसके साथ यह भी अवेक्षणीय है कि सुमित्राकुमारी सिनहा केवल बालोपयोगी साहित्य की ही रचना करती हैं।[4] इससे बहुत से स्थलों पर इनकी अभिव्यक्ति बहुत अनूठी है। साराश यह है कि वात्सल्य रस का वर्णन करने वाली स्त्री कवियों में इनका नाम सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

कवयित्री स्वत: भी बड़ी वात्सल्यमयी हैं। बच्चों के साथ रहना और हंसना बोलना उन्हें प्रिय है। वे सदैव बच्चों के लिए मंगल कामना करती रहती हैं। बच्चे देश के रत्न हैं। घर और आंगन की शोभा उन्हीं से है। सूना घर बच्चों से जगमगा जाता है।[5] वे अत्यन्त सुकुमार हैं। प्रकृति के पदार्थों की सारी सुकुमारता के दर्शन

१ दे० परिशिष्ट न० १

२ दे० परिशिष्ट न० २

३ कवयित्री से लेखक को पत्र द्वारा सूचना प्राप्त हुई।

४ कवयित्री से लेखक को पत्र द्वारा सूचना प्राप्त हुई।

५ दादी का मटका पृ० ११

बच्चों के रूप में किए जा सकते हैं। जब प्रकृति की वस्तुएं आनन्द से भरपूर हैं तो नन्हे सुकुमार बच्चों को भी कवयित्री सदैव ऐसा ही आनन्द से युक्त देखना चाहती हैं। इस प्रकार की बच्चों के प्रति उनकी अभिलाषा नाना भांति से अभिव्यक्त हुई है। उदाहरणार्थ निम्नोद्धृत पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

नदियाँ हँसती उछला पड़ता लहरों का सुन्दर मन,
धवल हिमालय हँसता लेती चोटी नभ का चुम्बन।
नन्हें बच्चो तुम भी हँसकर जगती का मन लूटो,
नन्हे कर नन्हे अधरों तुम हास्य स्रोत बन फूटो॥[1]

आलम्बन का रूप चित्रण भी इनकी कविताओं में मिलता है। यहाँ केवल रूप का वर्णन न होकर उनकी अभिव्यक्ति से प्रतीत होता है कि वात्सल्य स्नेह से ही शिशुओं को सिक्त कर रही हैं। शिशु के शारीरिक अवयवों की सुकुमारता का वर्णन करते हुए उन्होंने उसके कपोल नेत्र बाल होंठ मस्तक वाणी, शरीर और मन की सुन्दरता की अभिव्यक्ति की है। उनकी प्रकृति की सुन्दर वस्तुओं से समता देकर अपने कथन को और भी अधिक प्रभावोत्पादक बना दिया है—

गालों में हैं भरे गुलाब
आँखों में खिल गये कमल,
बालों पर भौंरों की टोली,
होठों मूंगे गये पिघल,
चांद सूर्य सा ऊंचा भाल,
मां की गोदी के हम लाल।[2]

बच्चों का वर्णन करते समय कवयित्री ने सर्वत्र स्वाभाविकता का निर्वाह किया है। बच्चों के हँसने बोलने क्रीडा करने और त्योहार आदि के अवसर पर आनन्द मनाने के बहुत से चित्र इनकी अभिव्यक्ति में मिलते हैं। इनमें कुछ प्रसंग वात्सल्य के उद्दीपन के भी हैं। बच्चे का तोतली बोली उनमें से एक है। तोतली बोली में अपनी दादी के प्यार का कथन करते हुए एक बच्चे की अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है—

लोली गा गा लोज लात को दादी हम छुलाती है।
बले छबेले हमे जगा कर वो मुंह हाथ धुलाती है॥[3]

बच्चों की स्वाभाविक जिज्ञासा का वर्णन भी बहुत से स्थलों पर हुआ है। नवीन वस्तु, व्यापारों को देखकर बच्चे प्राय उनके विषय में अपनी जिज्ञासा

१ आँगन के फूल पृ० ४ (प्रथम सं० १९५६ आराधना प्रकाशन ६४।४४ गोला दीनानाथ वाराणसी)

२ आँगन के फूल, पृ० १६

३ नादी का मटका पृ० ५

प्रकट करते हैं। नव वर्ष के आने पर बच्चों ने इसी प्रकार की जिज्ञासाएँ प्रकट की है। कहीं कहीं तो बहुत से बच्चों की सामूहिक रूप से जिज्ञासा एकदम प्रश्नों की झडी के द्वारा व्यक्त हुई हैं। वसंत के आगमन पर चतुर्दिक आनन्द और उल्लास के वातावरण को देखकर बच्चों की नाना भांति की जिज्ञासा की अभिव्यक्ति निम्नोद्धृत पंक्तियों में की गई है—

कोयल कूक मचाती क्यों?
सेमल फूल खिलाती क्यों?
भंवरे क्यों छेड़ें शहनाई?
टेसू ने क्यों पाग बधाई?[1]

कवयित्री ने बाल मनोभावों का वर्णन भी बड़ी सफलता के साथ किया है। उनके लड़ने झगड़ने रूठने, मनाने और नाना भाँति की शरारत करने के बहुत से चित्र इन्होंने अंकित किये हैं। किस त्योहार पर या किस ऋतु में बच्चों की किस प्रकार की क्रीड़ाएं होती हैं उनका वर्णन बड़ी स्वाभाविकता के साथ हुआ है। जैसे वर्षा ऋतु के आगमन पर बच्चों का झूलना पानी में कागज की नाव चलाना और कीचड़ में लथपथ होकर सुध बुध खोये रहना इसी प्रकार के वर्णन हैं। इसी प्रकार बच्चों के दैनिक कृत्या की भी अभिव्यक्ति की है। किसी वस्तु के लिये मचलना बिस्तर पर पिल्ले को लाकर बैठाना दाल भात को मुंह में भरना हाथों को उससे लथपथ कर लेना और नहाने के पश्चात पुनः धूल धूसरित होना आदि शिशु स्वभाव के अनेक चित्रों की अभिव्यंजना वात्सल्य रस से युक्त अभिव्यक्त की गई है। गृह में स्थित कई बच्चों के लड़ने झगड़ने और शरारत करने का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में विशेषतः द्रष्टव्य है—

काटे हाथ छुरी से चुनमुन,
दूध दूध रटती टुनिया।
कभी फिसलकर गिरते चुनमुन,
जलती बत्ती से टुनिया।
काटा कूटी नोच खसोटी,
मीठे बिस्कुट पर मचती।
टुनिया चिल्लाती चुनमुन से,
जब न तनिक बरफी बचती।[2]

बच्चों के कौतुकों का वर्णन भी इसी प्रकार अनेक स्थलों पर किया गया है। उनके नये अनुभव करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति कभी कभी दूसरों के मनोरंजन का

१ नानी का मटका, पृ० १६
२ आँगन के फूल पृ० ६१

इस प्रकार हम देखते हैं कि सुमित्रा कुमारी सिनहा ने अपनी रचनाओं में बच्चों के प्रति नाना भाँति से अपने हृदय-गत भावों की अभिव्यक्ति की है। इनकी अभिव्यक्ति में वात्सल्य वर्णन के संयोग के चित्र ही हैं और उनमें भी बाल रूप, बाल क्रीडा, बाल-स्वभाव और कौतुक आदि का वर्णन मुख्य रूप से हुआ है। वात्सल्य का वर्णन करते हुए शिशु के आयु क्रम आदि के अनुसार चित्रण इनकी रचनाओं में नहीं है। इनकी अभिव्यक्ति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने बच्चों से भरपूर वातावरण का सजीव चित्रण किया है। बच्चों के सहगान, हँसने और खेलने आदि के वर्णन कहीं ऋतुओं के साथ और कहीं सप्ताह के दिनों के साथ परिवर्तित होते हुये वर्णित किये गये हैं। तरह-तरह के त्यौहार और उत्सव आदि के अवसरों पर जगमगाते हुए वातावरण में बच्चों के मनोभावों की अभिव्यक्ति इन्होंने भूयाभूय की है। उनकी स्पर्धा और हठ आदि का भी वर्णन है। इनके वात्सल्य के आलम्बन बच्चे और बच्ची दोनों हैं। इसके साथ यह भी अवलोकनीय है कि कवयित्री बच्चों के साथ में कभी कभी अपने बचपन की स्मृति का भी वर्णन करती है और वे उन स्वाभाविक भावों की अभिव्यक्ति करती हैं जो शिशु सामान्य में पाये जाते हैं। किलकना, मचलना माता की थपकी, लोरी, बिल्ली द्वारा कान काटे जाने का भय और बालू के महल आदि का वर्णन ऐसे ही भाव हैं। अन्त में यह भी स्पष्ट है कि इनकी वात्सल्याभिव्यक्ति पर युग का प्रभाव है। वात्सल्य वर्णन के साथ साथ देश प्रेम और देशोन्नति के विचारों का व्यामिश्रण इस तथ्य का प्रमाण है।[1]

वात्सल्य-रस के अन्य कवि

२० वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पत्र-पत्रिकाओं में समय समय पर अनेक ऐसी रचनाएं प्रकाशित हुई हैं जो वात्सल्य रस से पूर्ण हैं। उनका सामूहिक अध्ययन यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। इस सामयिक साहित्य में प्राचीन परम्पराओं का पालन भी हुआ है और नवीन उद्भावनायें भी की गई हैं। स्वाभाविक है कि अपने समय का इस पर प्रभाव भी है। इसकी सामान्य विशेषताएं दो वर्गों में विभक्त की जा सकती हैं—(१) विशुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति (२) दूसरे भावों के साथ मिलकर वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति। दूसरे विभाग में प्रायः तीन अन्य भावों का मिश्रण हुआ है वे हैं—१ विगत शैशव का स्मरण २ राष्ट्रीय भावना ३ समाज की दयनीय दुरवस्था आदि। पहले विभाग में ये भाव सामान्य रूप से व्यक्त हुए हैं। १ पुत्रपणा २ बालहठ ३ बालक की क्रीडाएं व कौतुक ४ पालने में झुलाना ५ रोना ६ लोरी ७ उद्दीपन और बच्चे की तोतली बोली ८ सामान्य शिशु के प्रति भावोद्गार और ९ मातृ हृदय। इनमें से कुछ भाव आश्रय के और शेष आलम्बन के स्वभाव, चेष्टा

१ उपर्युक्त पृष्ठों में जिन कवियों की वात्सल्याभिव्यक्ति का विवेचन किया गया है उनके अतिरिक्त आधुनिक काल के कुछ और कवि भी हैं। उनकी सूची परिशिष्ट संख्या १ में द्रष्टव्य है।

क्रीडा आदि के हैं। जैसे पुत्रैषणा मातृ हृदय आश्रयगत तत्व है और शेष आलम्बन गत अर्थात् शिशु की चेष्टाएं व क्रीडाएं आदि हैं।

पुत्रैषणा

पुत्रैषणा की अभिव्यक्ति इन रचनाओं का एकमत विषय है। पं० गयाप्रसाद शास्त्री ने 'चाँद' पत्रिका में एतद्विषयक विचार अभिव्यक्त किये हैं। वे कहते हैं कि चाहे मणि, मोती और रत्न चाहे घर में भरे हुए हों और घर इन्द्र के भवन के समान सुन्दर लगते हों। चाहे नाना भाँति की श्री सम्पन्नता वर्तमान हो परन्तु यदि किसी के पुत्र नहीं है तो सब सूना ही सूना लगता है। इसी प्रकार के भाव अभिव्यक्त करते हुए वे कहते हैं—

> ऋद्धि सिद्धि से चाहे चमर को चाहे सदा डुलाती हो,
> रति रम्भा सी नवल वधूटी मन्दिर में इठलाती हो।
> कितने ही हो लाल बिना इक लाल, शून्य संसार सभी,
> मिलता है क्या नेत्र-ज्योति बिन दिव्य दृश्य का सार कभी।[1]

बाल हठ

चन्द्रमा के लिए बच्चे का मचलना प्राचीन काल से वर्णित होता आया है। हिन्दी के सूर आदि अनेक कवियों ने चन्द्रमा के लिए शिशु के मचलने का वर्णन किया है। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में बच्चे को नवीनता लगती है और चन्द्रमा उसके आकर्षण की परम सुन्दर वस्तु है। पत्र पत्रिकाओं में भी चन्द्रमा के लिए बच्चों के मचलने का वर्णन मिलता है। नलिन विलोचन शर्मा ने बालक में चन्द्रमा के लिए बच्चे की हठ का वर्णन किया है। बच्चा ऊं ऊं करके रोता है और चन्द्र खिलौना माँगता है। सस्ते से खिलौने को वह नहीं चाहता और कहता है कि चाँदी के समान चमचमाते चन्द्र खिलौने को उसी वायुयान से खींच कर ला दो।[2] इस प्रकार की रचनाओं में लक्ष्मी नारायण ठाकुर की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं। चन्द्रमा को देखकर बालक जिज्ञासावश माँ से पूछता है कि यह क्या है जो चमचम करता है? यह अभी कहाँ से आया है। मेरे मन को बहुत अच्छा लगता है। माता बच्चे की हठ देखकर कहती है कि यह चन्दा है। इस चन्द को हमने अभी किसी को नेता है। बच्चा चन्द्रमा के लिए हठ करते करते फिर गा जाता है—

> आओ लाल तुम आओ गोदी यह तो सुन्दर चन्दा है
> खाने गया खेल लो तब तक खेलो रहो यह फन्दा है।
> सुनते लखते और बिलखते बालक आये चन्द हुए,
> लक्ष्मी नारायण द्विज की आशा हठी बालक के साथ गई॥[3]

1 चाँद मई १९२८ पृ० ६३-६८
2 बालक मई १९३४ पृ० २२७
3 बालक वार्षिक सं० १९३६ पृ० २३२

बालक की क्रीडा एव कौतुक

बच्चो का चाचल्य उनका स्वाभाविक गुण है । नाना भाँति की चचलता दिखलाना ही उनकी क्रीडा है । बाल क्रीडा का वर्णन बहुत-सी पत्रिकाओ मे मिलता है । कृष्णमनोहर सिंह 'माडल' ने अपनी भाजी की क्रीडा का वर्णन किया है कि वह बडो को भी डाटती है । बाबा पर भी हाथ उठाने लगती है और बडी मरदानी है ।[1] 'रसिक' जी ने मुन्नू की क्रीडा का वर्णन किया है कि वह किसी से भी नही डरता, घर भर में दौडता फिरता है । लाठी का घोडा बना लेता है । कभी किसी को डराता है किसी से लडाई करता है और किसी की गोदी म चढ जाता है ।[2] सूर्यदेव उपाध्याय ने अपनी बहिन के चापल्य का वर्णन किया है कि मुन्नी मुझे रोटी दिखाकर ललचाती है । जब मैं रोटी छीनकर 'छूमन्तर' कह देता हू तो 'ऊ ऊ' करके रो देती है और मचल मचलकर अपनी रोटी माँगती है । वह ठुनमुन ठुनमुन खेलती रहती है और मन को हर लेती है । काम करके आने पर मुन्नी की चपलता का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं—

"देख हमारा आना तत्क्षण,
निकट दौड कर आती है।
भया भया कह कर हसती
कन्धे पर चढ जाती है।"[3]

श्रीमती 'अनसूया गुप्ता' ने मुन्ना की बाल क्रीडा का वर्णन किया है । मुन्ना मेरी आँखों का तारा है । वह किलकारी मारकर मन को मतवाला बना देता है । वह चाची को देखकर गोदी म आने के लिए हाथ उठाता है । अगर कोई डाटे तो आँसुओ से रोने लगता है । वह सबका प्यारा है । उसकी क्रीडा का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है—

"ताली बजा बजाकर कहता मामा पापा काका ताता ।
कभी खिलखिलाकर वह अपने, नन्हें नन्हें दांत दिखाता ।
कभी ओट मे वह छिप जाता, ताता करके शोर मचाता ।
यदि गोदी मे लेते तो फिर पुच्ची को वह मुह फसाता ।।"[4]

इसी प्रकार सुन्दरमन ने लल्ला माई की क्रीडा का वर्णन किया है । व कहते हैं कि लल्ला माइ को यदि गुस्सा आ जाये तो वह लेटा-लेटा डोलता है । वह मौसी की गोदा म बठकर ताली को भी नहीं लेन देता । कभी ताली खो देता है तो

१ खिलौना दिसम्बर १९३७, पृ० ३७६
२ खिलौना अक्टूबर १९३७ पृ० ३११
३ बालक अप्रल १९४० पृ० २११
४ बालसखा नवम्बर १९४५ पृ० ३४७

कभी और और तरह की चचलता दिखलाता है। उसका वर्णन करते हुए वे लिखते हैं—

'मेरा छोटा लल्ला भाई कैसा मीठा पाजी है
चोरी से वह मेरी माला ले जाने म राजी है।
मली कीनो बीबी जी की नीली सिल्की साडी है
छोटी बीबी रोती डोलें कापी मेरी फाडी है।'[1]

बच्चे घर की वस्तुओ को भी उलट पुलट कर तोड देते हैं। वीरेन्द्र प्रकाश ने बच्चे के कौतुको का वर्णन करते हुए लिखा है कि उनका लल्ला जूता को ताड-मरोड देता है। कभी छिप छिपकर मिठाई खा जाता है। कभी दाँत पीसकर हाथ म डडा लेकर क्रोध दिखलाता है और अपने छोटे छोटे हाथो म चपत मारता है।[2] बच्चो की शरारत का और उस पर माता के परेशान होकर क्रोध प्रकट करने का बडा अच्छा वर्णन कुमारी शान्ति कपूर' ने किया है—

'भड भड भड भड चीजें गिरती माता दौडी आती है
पकड हाथ और खींच कान फिर गुस्से मे फरमाती है।
बिबबी तुमने नाक मे दम अब मेरी कर डाली है,
कहा प रक्खू चीजें सारी इतनी ऊची अलमारी है।'[3]

पालने में झलाना

जहा बच्चे हैं वहा बच्चो की प्रथम आवश्यक वस्तु पालना भी है। बच्चो के पालने मे भी झुलाने के भी वर्णन पत्रिकाओ मे हुए हैं। प० कन्हैयालाल मत्त ने पालने म झुलाने का वर्णन करते हुए लिखा है कि तू मेरे मन मन्दिर का उजियाला है और मेरी आखो का तारा है। तुझसे ही मेरा आगन जगमगा जाता है। आ तुझे पालना झुलाऊ। इसी प्रकार का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

'श्याम सुन्दर ! झुलाऊ तुझे पालना।
तेरी बतिया ये न्हीं सी प्यारी लगें।
तेरी मुनी सी अखिया दुलारी लगें।
हाथ मे खिलौना तेरे बाजना ॥'[4]

रोना

बच्चा जब तक क्रीडा करता रहे तो ठीक है परन्तु यदि वह रो उठे तो उसको चुप करना बडा कठिन है। बच्चे के रोने पर उसे चुप कराने के अनेक उपाय किये

---

१ बालसखा अगस्त १९४१ पृ० ३१८
२ बालसखा जुलाई १९५० पृ० २१०
३ बालसखा-मार्च १९४१ पृ० १३५
४ खिलौना-मई १९४१ पृ० १४४

जाते हैं। कवियों ने चुप कराने के बहुत से भावों को कविता बद्ध किया है। स्वर्ण सहोदर' रोती हुई बिटिया को कभी खिलाने की वस्तुएं देकर चुप करने की बात कहते व तो कभी उसको तरह-तरह से नाम लेकर चुप करने का प्रयत्न करती हैं।[1] देवदत्त 'शुक्ल' रोते हुए लल्ला को चुप कराने के लिए उसका ब्याह कराने के लिए, उसे दुलहिन दिलाने के लिए और लाल लाल मिठाई देने के लिए कहते हैं।[2] प० राम दयाल त्रिपाठी बच्चे का ध्यान आकर्षित करने के लिए कभी उसे रंग बिरंगे फूल दिखाते हैं कभी सूरज दिखलाते हैं कभी बालकों को दिखाते हैं तो कभी खिलौने एवं मिठाई लाने का वायदा करते हैं।[3] रोते हुये बच्चे के चुप करने का बड़ा मनोवैज्ञानिक एवं स्वाभाविक तथा वात्सल्य रस में ओत प्रोत वर्णन देवेन्द्र कुमार बख्शी 'देव' ने किया है। वे अभिव्यक्त करते हैं कि मुन्नू के रोने से वात्सल्य रस पूर्ण हृदय वाले सम्बन्धियों की क्या दशा हो जाती है और किस प्रकार मुन्नू रोने से चुप होता है? उनकी कविता इस दृष्टि से बड़ी महत्वपूर्ण है और उससे वात्सल्य रस की पूर्ण निष्पत्ति होती है। कवि ने बच्चे के रोने के समय के वात्सल्य से पुष्ट वातावरण का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया है—

'नभ में मानों आंधी उठती पृथ्वी में कम्पन उठता है,
जब जब मुन्नू रो उठता है।
हरदम पलंग पर जो रहते दादा बिस्तर से उठते हैं।
दादी के शिथिल जीर्ण तन मन, उस क्षण चंचल हो उठते हैं।
मां ने छोड़ा भोजन गृह भाजी चावल जल जाते हैं।
बाबू उठते सब काम छोड़ कागज दवात गिर जाते हैं।
'चाचा दिखलाते चांद उसे फिर भी वह रोता जाता है।
सुखिया को गाली पड़ती है कोलाहल बढ़ता जाता है।'
सब खूब मनाते मुन्नू को गोदी में ले बारी बारी।
कुछ प्रेम कभी कुछ गुस्से में निष्फल होतीं बातें सारी।
मोती हलवाई आकर के लड्डू बर्फी दिखलाता है।
या जमादार भीषण मुख कर, ले जाने को धमकाता है।
मुनिया पटविन गुड़िया देती फिर भी मुन्नू चिल्लाता है।
आंसू की बूंदें गिरा गिरा वर्षा को भी शर्माता है।
जब सब समझा कर थक जाते हैं दादा दादी के सिर दुखते।
मां उलझन में आंसू ढोती बाबू कोने में सिर धुनते।

१ खिलौना अप्रैल १६ ६ पृ० १०६

२ खिलौना अगस्त १६२६ पृ० ३२५

३ खिलौना दिसम्बर १६३० पृ० ३५३

सोये मेरा नन्हा गुडडा
राजा सा होके सुन सुन।
आ आ तितली गुप चुप आना,
पर फला सुन्दर अपने।
निंदिया मीठी मीठी लाना
अच्छे नये नये सपने।''[1]

सुलाने की भांति जगाने के लिए भी लोरियाँ गाई जाती हैं। शोभाराम धनु सेवक ने उस समय माता द्वारा यह अभिव्यक्त कराया है कि बच्चे उठो भगवान का नाम लो मुह हाथ धोओ, मक्खन खाओ और अपना पाठ याद करो।[2] इसी प्रकार नींद बुलाने[3], और रोने से चुप कराने के लिये[4] भी लोरियां रचयिता ने पत्र पत्रिकाओं म लिखी है।

उद्दीपन और बच्चे की तोतली बोली

बच्चा अपने आप मे बडा सरल निश्छल और भोला भाला होता है। उसके द्वारा जो अभिव्यक्ति होती है वह उसी के मानसिक स्तर और अनुभव के आधार पर होती है। बड़े व्यक्ति बच्चा की उस प्रकार की बातों से आनन्दित होते है। दूसरे शब्दो म यो कह सकते हैं कि आलम्बन की उक्तियां वात्सल्य को उद्दीप्त करने म सहायक होती है।

पत्र पत्रिकाओं म इस प्रकार की भी अभिव्यक्ति की गई है। जीवनराम ने बच्चे द्वारा अपनी मा से प्रार्थना कराई है कि वह भी पढने जायेगा उसे पट्टी खडिया भी मगा दो और रुमाल म चने बांध दो। फिर वह छुट्टी मिलने पर घर आ जायेगा।[5] इसी प्रकार नन्हा खिलौना लाने के लिए बच्चे की अभिव्यक्ति जगदीश प्रसाद गुप्त ने की है।[6] मां से जब बच्ची बहुत सी वस्तुए मांगने के लिए प्रार्थना करती है तो भी वात्सल्य का उद्दीपन होता है। श्रीमती शान्तिदेवी न रोटी चप्पल दूध और पानी आदि के लिये याचना करती हुई बच्ची का वर्णन किया है। साथ साथ वह खिलौना भी मागती है—

'मुझे खिलौना मां तू दे
खेलू साथ सहेली।''[7]

---

१ शिशु जनवरी १९५५ पृ ३७
२ चांद १९२८, पृ० १९३
३ ले० मूलचन्द्र श्रीवास्तवी खिलौना-जनवरी १९३६, पृ० ९
४ झुनझुना, ले० कु० शैलबाला, सफलानी अक्टूबर १९४० पृ० ८
५ माधुरी अगस्त-जनवरी १९२९-३०, पृ० ४५३
६ लल्ला अंक १४ वर्ष २, पृ० ४८
७ खिलौना-जनवरी १९२९ पृ० ६० ६१

सुखिया अपना बच्चा लाती उस तीन साल के रामू को।
रामू हसाता मुन्नू को सब वह चुप होता सब रामू को।
क्षण भर म दोनों चलते हैं बातों मे गुस्साते हसाते।
सब काम काज म लग जाते बस ये दो आपस म हसाते।[1]

लोरी

वात्सल्य वर्णन म लोरियों का भी बड़ा महत्त्व है। बच्चे को सुलाते समय या जगाने समय प्यार भरे शब्दों म माता कुछ न कुछ गुनगुनाया करती है। गीत रूप म जो उसका अन्तर्निहित प्यार है वही लोरी बनकर आता है। पत्र पत्रिकाओं म बहुत से कवियों ने लोरियाँ लिखी हैं। उनम से कुछ बच्चे को सुलाते समय और कुछ बच्चे को जगाने के लिए कुछ नींद बुलाने के लिए और कुछ रोते हुए बच्चे को चुप करने के लिए हैं।

माता कभी तो बच्चे को राजकुमार कहकर सोने को कहती है कभी कहती है कि छमछम करती नींद आ रही है वह तुम्हें घोड़ा हाथी और मिठाई लायेगी इस लिये जल्दी सो जा।[2] मातायें प्राय प्यार भी करती जाती हैं और लोरी भी गाती जाती हैं। श्रीनिवास 'शोना' ने ऐसा ही वर्णन किया है कि माता मुन्नी को सुलाती है। मुख भी चूमती जाती है। कभी गीत सुनाती है तो कभी नींद को बुलाने के लिए भंवरे को भेजती है।[3]

लक्ष्मीदेवी वर्मा 'चन्द्रिका' ने लल्ला को सुलाने के लिए लोरी गाई है तो कभी थपकी देकर सुलाने को कहा है कभी चन्दा मामा के आने की बात कही है कि वह लल्ला को दूध भरा कटोरा लायगा। नगेन्द्र ने लोरी गाते समय यह कहा कि तेरे पालने को परियाँ झुलाएगी इसलिए मेरे लालन तू सो जा।[4] प० गिरधर शर्मा ने माता के उस भाव को अभिव्यक्त किया है जबकि वह बार-बार बच्चे से सोने को कहती है—

सो जा बबी सोजा सोजा चन्दा सोजा।
सो जा भैया सोजा सोजा सोजा सोजा ॥[5]

भालचन्द्र जोशी ने बच्चे के सोने पर भावपूर्ण लोरी लिखी है—

गा गा कोयल ! तू गा लोरी,
नाच नाच चिड़िया चनचुन।

---

१ बाल सखा सितम्बर १९५० पृ० २८२
२ ले० शिवनन्दन कपूर बाल-सखा नवम्बर १९५२ पृ० ४२४
३ बाल सखा अप्रैल १९४८ पृ० ११०
४ बाल सखा १९४७ १४२
५ बाल सखा अप्रैल १९५० पृ० ११८
६ सरस्वती १९१३ पृ० ३६

सोये मेरा नन्हा मुडडा
राजा सा होके सुन सुन।
आ आ तितली चुप चुप आना,
पर फला सुन्दर अपने।
निंदिया मीठी मीठी लाना
अच्छे नये नये सपने।'[1]

सुलाने की भांति जगाने के लिए भी लोरियां गाई जाती हैं। शोभाराम धनु सेवक ने उस समय माता द्वारा यह अभिव्यक्त कराया है कि उच्चे उठो भगवान का नाम लो मुह हाथ धोओ मक्खन खाओ और अपना पाठ याद करो।[2] इसी प्रकार नींद बुलाने[3] और रोने से चुप कराने के लिये[4] भी लोरियां कवियों ने पत्र पत्रिकाओं म लिखी है।

उद्दीपन और बच्चे की तोतली बोली

बच्चा अपने आप म बड़ा सरल निश्छल अज्ञ और भोला भाला होता है। उसके द्वारा जो अभिव्यक्ति होती है वह उसी के मानसिक स्तर और अनुभव के आधार पर होती है। बड़े व्यक्ति बच्चा की उस प्रकार की बातों से आनन्दित होते हैं। दूसरे शब्दो म यो कह सकते हैं कि आलम्बन की उक्तियां वात्सल्य को उद्दीप्त करने म सहायक होती हैं।

पत्र पत्रिकाओं म इस प्रकार की भी अभिव्यक्ति की गई है। जीवनराम ने बच्चे द्वारा अपनी मा से प्रार्थना कराई है कि वह भी पढने जायगा उसे पट्टी खड़िया भी मगा दो और रुमाल म चने बांध दो। फिर वह छुट्टी मिलने पर घर आ जायेगा।[5] इसी प्रकार नन्हा खिलौना लाने के लिए बच्चे की अभिव्यक्ति जगदीश प्रसाद गुप्त ने की है।[6] मा से जब बच्ची बहुत सी वस्तुए मांगने के लिए प्रार्थना करती है तो भी वात्सल्य का उद्दीपन होता है। श्रीमती शान्तिदेवी ने रोटी चप्पल,दूध और पानी आदि के लिये याचना करती हुई बच्ची का वर्णन किया है। साथ साथ वह खिलौना भी मांगती है—

'मुझे खिलौना मा तू दे
खेलू साथ सहेली।'[7]

---

१ शिशु-जनवरी १९५५, पृ ३७
२ चांद १९२८ पृ० १९३
३ ले० मूलचन्द्र श्रीवास्त्री खिलौना-जनवरी १९३६, पृ० ९
४ झुनझुना, ले० कु० शैलबाला सफलानी अक्टूबर १९४० पृ० ८
५ माधुरी अगस्त-जनवरी १९२९-३० पृ० ४५३
६ लल्ला अक १४ वर्ष २, पृ० ४८
७ खिलौना-जनवरी १९२९ पृ० ६० ६१

बच्चे जिज्ञासावश बहुत सी वस्तुओं को पूछा करते हैं। उनकी उस समय की सरसता बड़ी अच्छी लगती है। तारा, आकाश, तोता, बादल और बिजली को देखकर बच्चा माँ से पूछता है कि ये क्या हैं ?¹ इसी प्रकार का एक प्रश्न आरसी प्रसाद ने माँ से कहलाया है जबकि बच्चा चमकते तारों को आसमान में देख कर विस्मय में पूछता है—

"माँ ये आसमान में कौन।
भिलमिल भिलमिल करते मौन॥¹

तोतली बोली में बोलता हुआ बच्चा बड़ा अच्छा लगता है। बच्चा द्वारा तोतली बोली की अभिव्यक्ति कराना आधुनिक हिन्दी काव्य की निजी विशेषता है। पत्र पत्रिकाओं में भी बच्चों की तोतली बोली की अभिव्यक्तियाँ अंकित हैं। बच्चा की तोतली बोली में यही बच्चे द्वारा अपने भैया के गिनान सिखाने और उनके अच्छे लगने का वर्णन है।³ यहाँ भगवान से तोतली बोली में बल विद्या और गुणों का वरदान माँगा गया है।⁴ क्षेमचन्द्र सुमनचन्द्र ने बच्चे द्वारा घोड़े को चलाते समय जो तोतली बोली अभिव्यक्त कराई है वह निम्नांकित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

मेले घोले चल ले चल। कभी मचाना मत गल बल॥
कान पकल कल मालूँगा मैं। खाना भी नहीं डालूँगा मैं॥
चाबुक लगते ही दो चाल। उल जावेगी तेली खाल॥
जोल जोल से चलना घोले। मत चलना तू होल होल॥
मैं हूँ लाजा बाबू तेला। तू है प्याला घोला मेला॥⁵

इसी प्रकार क्षेमचन्द्र स्नेही ने तोतली बोली में अपनी नाव के लिये बच्चे द्वारा अभिव्यक्ति कराई है। बच्चे की कागज की नाव ऐसी है जो बिना मल्लाह और बिना पतवार के तरती है और फिर लौटती भी आती है। इसी प्रकार का वर्णन करते हुये कवि कहता है—

'महा मेली कागज की नाव
तला कलती तालाबों में।
न थने की है कुछ दलकाल
बहा कलती है लहलो में।
हमाला गुड्डा इष पल बैथ
यातला हलदम तलता है।

---

१ ले० प्रेम नारायण शिशु जुलाई १९४९ पृ० ३०
२ बालक-नवम्बर १९३६ पृ० ६०८
३ बाल सखा ले० लीलावती डी० सिंह जनवरी १९३६ पृ० ९
४ ले० गिरिजाशंकर मिश्र बालिका-जनवरी १९२९ पृ० १४५
५ खिलौना अप्रेल १९३४ पृ० १३०

दियाकल नित्य निलाला घग
मोद यह मन मे भलता है।"[१]

सामान्य शिशु के प्रति भावोद्गार

पत्र पत्रिकाओ म जो वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है उसमे शिशु का लक्ष्य करके बहुत सी कविताए लिखी गइ है। उनमे से कुछ मे तो अपने लल्लू अथवा मुन्नी को देखकर माताओ द्वारा अभिव्यक्ति कराई गई है और दूसरे प्रकार की एसी कविताए हैं जिनमे शिशु अथवा बालक के ऊपर कवि के विचार हैं। ऐसी कविताओ में आलम्बन कोई अपना पुत्र आदि विशेष बालक न होकर साधारण बच्चा की ओर सामूहिक रूप स वात्सल्याभिव्यक्ति की गई हैं। जहा माता की अपने पुत्र के प्रति अभिव्यक्ति है वहाँ उसन बच्च के बालपन ताली, किलकारी सवेरे उठने, पढने जाने, गाल, बाल बाली और मुख के सौन्दय और हसने मचलन आदि का वणन किया है। इस प्रकार की बहुत सी रचनाए हैं उनम से अनन्त जी की निम्नलिखित पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

मेरा मुन्ना हसमुख भोला, नित आगन मे खेला करता,
अपनी प्यारी किलकारी से मेरे अन्तर मे मधु भरता।
चू चू करती चिडिया आती, जिनके पीछे दौड लगाता
अपन कोमल कर से हस कर तुतला कर है पास बुलाता।'[२]

जहाँ सामान्य शिशु और बालक को लक्ष्य करके कवि ने विचार अभिव्यक्त किये हैं वहाँ इस प्रकार लिखा है कि हे शिशु! तुम अल्हडपन के इतिहास हो, मेरा प्रत्यक्ष बालपन हो मेरी गोद मे तुम्हारा पूण चन्द्रमा के समान उदय हुआ है जहाँ तुम ठुमक ठुमककर पर रखते हो वह धरती धन्य हो जाती है। तुम प्रकृति के सुदर खिलौने हो मात हृदय की मूर्ति और स्नेहलता के पुष्प हो। तुम्हारा शरीर मन-मोहक है। तुम मानव मन का माह लत हो। माता का गोदी के तो साक्षात शृगार हो। उमेश जी ने शिशु को लक्ष्य करके जो अभिव्यक्ति की है वह सामान्य शिशु के प्रति कवि की अनुभूति का उत्कृष्ट उदाहरण है—

प्रेम—मसि अकित तुम्हारी मजु मूर्ति वह,
मिटती कभी न मद मानस दुकूल से।
जनमन भाई शुभ सहज लुनाई सख
अति भयदायो दुख जाते सब मूल से।
चन्द्र कात मणि से भी शीतल स्वभाव के हो,
कान्ति मे मदन से कि शान्ति सुख मूल हो।

---

१ खिलौना-जुलाई १९३८ पृ० १७६
२ बाल सखा जुलाई १९५४, पृ० २१४

बालक की विशेषता बतलाई है और उसे संसार का सर्वश्रेष्ठ रत्न कहा है—

"जो हसते हसते रो दे जो झगडा कर उछले कूदे,
जो अम्मा पर गुस्सा करके अपनी ही आंखें मूदे।
जिसका हृदय विकार शून्य हो पर जो मचल जाय छन मे,
और मनाये जाने को जो देखा करे राय मन मे॥
× × ×
जो अम्मा को देखे रो दे और वही हस पडे तुरत
जिसके भोले भावों का कोई भी पावे कहीं न अन्त।
भाई बहिन और प्राणी पर भी जिसका समान हो यत्न
बालक वही कहाता है, है वह दुनिया का उत्तम रत्न॥

शिशु और बालक को लक्ष्य करके कवियो ने पत्र पत्रिकाओ मे और भी बहुत सी कविताए लिखी हैं। अपने अपने विचारो से सभी ने बच्चे की महिमा का गान किया है और अपने प्रशसनीय शब्दो की इति कर दी है। अन्त मे एक उदाहरण और द्रष्टव्य है। प० ईशदत्त पाडेय 'श्रीश' के शब्दो मे अद्वितीय गुणो से युक्त बालक मानो अनोखा रूप लिए भगवान ही तो नही है। ऐसी अभिव्यक्ति की गई है—

है उपमान तुम्हारा न कोई आप ही आप समान हो बालक
रूप अनूप ले भू पर क्या तुम आ गये हो! भगवान हो बालक।"[1]

मातृ हृदय

शैशव-स्मृति की भाँति कुछ कवियो ने अपनी माँ के अतीत के व्यवहार का स्मरण किया है और माँ की महिमा भी गाई है। परन्तु इससे वात्सल्य की अनुभूति नही होती। हा एकाध स्थल ऐसे अवश्य हैं जिनसे मातृ हृदय की अच्छी अनुभूति होती है। माँ शिशु को ऐसे समझती है जैसे उसका बुढापा नया बनकर खेल रहा हो। माता का हृदय ही वस्तुतः बच्चे का घर होता है। माँ को बच्चे का तनिक सा भी कष्ट सहन नही होता। इसके लिए मातादीन शुक्ल की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

'अटन देखकर जरा सिहर कर थी जग जाती।
कह उठती थी अरे दबी जाती है छाती।
उसी वक्ष पर धरा आज यह विश्व भार है।
इतना बोझिल है कि नहीं उसका सभार है॥'[2]

---

१ बालक फरवरी १९३८, पृ० ५७
२ माधुरी १९२९ ३० पृ० ८७८

ठीक है वास्तव में माँ को शिशु का कितना ध्यान रहता है यह किसी मान हृदय के अनुभव करने की ही वस्तु है अभिव्यक्ति की नहीं। इसी प्रकार माता का हृदय अपने पुत्र की भावी उन्नति और विकास के लिए उत्सुक रहता है। इस विषय में प द्वनाथ जो मालवीय यागीन की निम्नलिखित पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

जिसे चाहती बने नृपति यह
अथवा होवे राजकुमार।
जिसे चाहती भू मडल मे
पावे ख्याति और अधिकार।[1]

विगत शशव की स्मृति

आधुनिक काल के बहुत से कवियो की यह विशेषता रही है कि उन्होंने जहाँ वात्सल्य का वर्णन किया है वहाँ कभी कभी अपने शशव की भी बड़ी उत्कट स्मृति की है। कई स्थानो पर स्मृति का साधारण वर्णन होने से कोई विशेष अनुभूति नहीं होती पर तु कुछ कवियो ने अतीत की उस स्मृति को इतनी सूक्ष्मता से जागत करके उसके एक एक तत्व का चित्र खींचा है जिससे वात्सल्य के भावो का उद्रेक होना है। बच्चे के कार्यों का स्वाभाविक और सजीव चित्र हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है। इस विषय मे वीरेन्द्रसिंह के भाव उद्धृत करने योग्य हैं। कवि अपनी माँ से पुन शिशु होकर जिन अनुभावो की अभिलाषा करता है उनम से एक को देखिए—

हो माँ शिशु बनकर जब जागू
लगा लगा पीछे म भागू।
फिर जब उकडू बठ साथ वाली घुटनों पर
दाल बीनती हो तू झुककर।
म बाहर से शोर मचाता दौड़ा आऊँ।
अम्मा कहते हुए भूल कधे से जाऊँ।[2]

माँ के पीछे लगे लग भगना और दाल बीनती हुई माँ के कन्धे से झूलना, ये भाव शिशु स्वभाव का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार कवि ने और भी भाव रखे है। हलवाई से वस्तु लेने म यह कभी न देखना कि कितनी तोली है मा का गरम दूध को फूक फूक कर पिलाना, रूठने पर मनाना आदि ऐसे ही भाव हैं। नाराज होने पर बच्चे के स्वभाव का एक चित्र और द्रष्टव्य है। नाराज होकर बच्चा जमीन को या दीवार को खुरचने लगता है साथ ही यह भी देखता जाता है कि उसे मनाने माँ आ रही है या नहीं। माँ के न आने पर पग पीटने आदि का काय करता है ताकि माँ का ध्यान उसकी नाराजी की ओर आकर्षित हो जाय और वह उसे मनाने आ जाय। रूठ हुए बच्चे को अपनी माँ के द्वारा मनाये जाने पर और

---

१ चाद १९२४ पृ० १७७
२ चाँद-मई से अक्टूबर १९३५ पृ० १९८

अधिक रूठते जाने में बड़ा आनन्द आता है। यह बड़ी स्वाभाविक बात है जिनका कवि ने अपने शैशव की स्मृति करते हुए चित्र खींचा है—

'मेरा वह दीवाल खुरचना
चुप चुप तुझे कोर से लखना।
फिर थक कर कुछ बैठ, पास की उठा छड़ी को,
फश पीटना कभी खाट की ही पटरी को।'[१]

कवि इसी से कभी कभी शिशु बनना चाहता है। किसी किसी ने अपने शैशव को पाने के लिये बड़ी आतुरता दिखाई है—कहाँ! किधर पाऊं? कैसे?[२] इसी प्रकार के शैशव के प्रति लोभ और स्मृति की बहुत सी कवितायें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। शैशव की स्मृति का एक चित्र और द्रष्टव्य है—

पूज्य पिता के आगे जाकर
ओनामासी पाठ सुनाकर।
उनसे मैं पैसे लेता था,
तुरत उसे मां को देता था।"[३]

राष्ट्रीय भावना

वात्सल्य वर्णन में भी बहुत से स्थलों पर कवियों ने राष्ट्रीय भावनाओं का समावेश कर दिया है। कहीं कवि स्वदेश उत्कर्ष[४] के लिये बच्चे से आशा करता है तो कहीं शिशुओं को राष्ट्र के वैभव मानकर आशीष देता है।[५] कहीं कवि कहता है युग की आवश्यकताओं की पूर्ति होने पर ही उन्नति भी सम्भव हो सकती है। माताओं द्वारा लोरी गाने समय भी ऐसे विचार अभिव्यक्त कराये हैं—हे बच्चे तू सो जा। तू नई नई शिक्षा पढ़ना और सकड़ों आविष्कार करके जननी जन्म भूमि के दुखों को दूर करना—

"आविष्कार सकड़ों करना,
जन्म भूमि मां के दुख हरना।"[६]

स्वदेशी आन्दोलन के समय महात्मा गांधी ने चर्खा और तकली पर कातने और स्वदेशी वस्त्रों की अभिवृद्धि तथा उन्हें पहनने के लिये बढ़ावा दिया था।

---

१ चांद मई से अक्टूबर १९३५ पृ० १९८
२ चांद ले० राम इकबाल सिंह राकेश १९३५ पृ० ४८९
३ सरस्वती ले० उदयशंकर भट्ट १९३३, पृ० २३१
४ चांद १९२४ पृ० १९३
५ चांद १९३५, पृ० १८१
६ सरस्वती १९१३, पृ० २६

कवियो ने लोरियो मे भी उसकी अभिव्यक्ति की है।[1] देशकम पूर्वजो के कर्म और निर्भय होकर जन्म भूमि के लिये मरने के भावो को कवियो ने भूयोभूय अभिव्यक्त किया है।[2] नीचे इस प्रकार की आशा रखने वाली एक माता लोरी गाते हुए कहती है---

> तू अच्छी विद्या सीखेगा पढ लिख तू विद्वान बनेगा
> भारत मा की लाज रखेगा मेरी भी नैया खेवेगा।
> मेरे एक सहारे सो जा
> सो जा मेरे प्यारे सो जा।[3]

बच्चा को जागत समय भी माताओ ने ऐसी अभिव्यक्ति की है। इस समय का वातावरण ऐसा था कि भारत पराधीन था और स्वतन्त्रता आन्दोलन छिडा हुआ था। अत मा को आजाद करना है। बधन से इसे छुडाना है।[4] ऐसे भावो की अभिव्यक्ति स्वाभाविक थी। फलत बच्चो को भी उस ओर कटिबद्ध होकर प्रस्तुत रहने के भावो का कवियो ने वर्णन किया है। नीचे बच्चा को जगाते हुए अतराम चित्रगुप्त के भाव द्रष्टव्य हैं---

> भारत जननी हृदय हीन है
> भारत जननी पराधीन है
> काटो इसके दुख फन्द जाल
> जागो मा के सुकुमार लाल॥[5]

इसके अतिरिक्त सामान्यत भावाभिव्यक्ति करते हुए भी तत्कालीन राष्ट्रीय विचार आ गये हैं। बालक को लक्ष्य करके कवि विचार व्यक्त करता है। उसको यह बात नही भूलनी कि देश की कमी दशा है? बच्चो को बलिदानो के लिये पाल पोष कर तैयार करने मे ही उस समय के लोगो को आत्मतुष्टि होती रही है। इस प्रकार के भाव रामकुमार स्नातक की निम्नलिखित कविता से भली भाँति दृष्टिगत किये जा सकते हैं---

> मातृ भूमि उत्सर्ग हेतु पाला है तुमको
> बलिदानो के नव सॉचे मे ढाला तुमको।
> यह ससार साइसे मेरे समरांगण है
> अन्धकार से घिरा आज क्षिति का आंगन है।[6]

---

१ बालसखा १९४७ पृ० २१०
२ सरस्वती १९३३ पृ० ६०४
३ खिलौना-जनवरी १९३३ पृ० १९ २०
४ खिलौना सितम्बर १९३७ पृ० ३६७
५ खिलौना-सितम्बर १९३७ पृ० ३६७
६ [illegible] १९४० पृ० १५

अस्तु, यह भली भाँति स्पष्ट है कि आधुनिक काल के कवियों न वात्सल्य वर्णन करते समय देश प्रेम देशोन्नति और जननी जन्म-भूमि के हित प्राणों के सहष उत्सर्ग करने के भावों को अभिव्यक्त किया है । बात आज भी ऐसी है परन्तु स्वतन्त्रता से पूव पराधीन जनता के स्वातन्त्र्य के लिये विचाराभिव्यक्ति प्रधान थी और आज देश प्रेम और देशोन्नति के लिए । वात्सल्य म इस प्रकार के विचारा की अभिव्यक्ति आधुनिक युग की निजी विशेषता है ।

सामाजिकता

आधुनिक युग के काव्य की यह एक विशेषता रही है कि कवियो ने अपने आलम्बन अलौकिक और आदश गुणो से युक्त नही रख वल्कि यथाथ मे जसी प्रकृति और चारित्रिक विशषतायें साधारण बच्चो म होती हैं उन्ही का वर्णन किया । इस प्रकार कहीं बच्चे की सामान्य आदतो का व्यक्तिकरण है तो कही बच्च मिलजुल कर प्राय किस प्रकार का आचरण घर आगन मे करते रहते हैं उसका वर्णन भी किया गया है । ऐसे बहुत से वर्णन देखने मे आते हैं जिनमे बच्चा के समूह का एक चित्र उपस्थित हो जाता है । उदाहरण क लिये हरि कृष्णदास 'हरि' की एक कविता द्रष्टव्य है । सामान्यत बच्चा स भरपूर गहस्थ मे बच्चे कसा आचरण करते हैं उसकी बडी स्वाभाविक अभिव्यक्ति कवि ने की है । गाजर का हलुवा बन रहा है ता जिज्ञासा और आस्वादन की भावनाओ स बच्च चारा ओर बठ हैं । छाटे बच्च अपनी भावनाओ को नही राक पाते अत हलुवा माँगने लगते हैं—

> हलवा गाजर का बनता है
> कौंचा खचर खचर चलता है ।
> घेरा डाले बच्चे बठे
> मचल मचल कर मन चलता है ।
>
> खिली कली सी छोटी मुन्नी,
> तनिक नहीं अब रह पाती है ।
> मां मा मुझको हलवा दे दे
> हाथ बढाती कह जाती है ।"[1]

इसी के साथ आगे का हास्यमय वर्णन भी उद्धरण देने योग्य है—

> 'गम बहुत है हाथ जलेगा,
> मा कहती रुक बिटिया रानी ।
> तो मरे मुह मे ही दे मां,
> उत्तर देती बडी सयानी ॥'[2]

---

१ बाल सखा मई १९५५ पृ० १५६

२ बाल सखा मई १९५५ पृ० १५६

जगदीश झा 'विमल' ने एक और भी स्वाभाविक चित्र उपस्थित किया है। यह एक ऐसे बालक का वर्णन है जिसकी माता मर गई है और पिता तथा विमाता के दुर्व्यवहार से तंग आकर वह घर से निकल पड़ता है। उसकी दशा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

"खड़ा शिशु कौन अचल सा यहाँ,
सिसकता भरता लम्बी—हाय
बहाता दृग झरनों से नीर,
कभी कहता अब कौन उपाय ?"[1]

कवि दयार्द्र होकर उसकी ओर बढ़ा और उससे पूछने लगा तो शिशु ने बताया कि मैं अभागा हूँ। मेरी माँ मुझे छोड़कर भगवान के पास चली गई। मेरे पिता ने उसके बाद मुझसे रुख बदल लिया। विमाता आई और उसने मुझको डाँटा और कहा जहाँ जी चाहे चला जा तो मैं अपनी माँ के पास जा रहा हूँ। अब रास्ता भूल गया वह किधर से गई थी कुछ पता नहीं चलता। फिर वह कहता है—

'इसी से रोता हूँ मैं यहाँ
बता दो मार्ग क्या जो हुई।
मिला दोगे माता से मुझे
तुम्हें देगी वह पस कई।"[2]

शिशु के वचन सुनकर कवि का हृदय भर आया। उसने उसे उठाकर गोद में लिया और वात्सल्य स्नेहवश मुख चूमा तथा उस पिता को बुरा भला कहा जिसने अपना प्यारा सुत इस प्रकार छोड़ दिया—

हृदय भर आया शिशु के वचन
उठा मुख चूम गोद में लिया।
गिरे ऐसे पितु के सिर गाज
छोड़ जिसने प्यारा सुत दिया॥"

इस स्थान पर यह उल्लेखनीय है कि इस कविता में प्राधान्य करुण रस का है। अन्त में वात्सल्याभिव्यक्ति है। आलम्बन भी वात्सल्य का पात्र है। अतः यहाँ करुण से पोषित वात्सल्याभिव्यक्ति समझनी चाहिये।

पत्र पत्रिकाओं में अभिव्यक्त वात्सल्य के अध्ययन से ये निष्कर्ष निकलते हैं—

१ इस वात्सल्याभिव्यक्ति में वात्सल्य वर्णन के संयोग के चित्र ही देखने में

१ चाँद १९२४ पृ० १२२
२ चाँद १९२३, पृ० १२२
३ चाँद १९२४ पृ० १२२

आते हैं। बात यह है कि एक कवि की एक समय मे एक कविता प्रकाशित है। उसम उसने बच्चे को लक्ष्य करके जम भाव रगन चाह रख दिये हैं। इन रचनाओ म वात्सल्य के वियोग की अभिव्यक्ति उपेक्षित रही है।

२ कविया ने अपने आलम्बन मानवीय ही रखे है और वे भी साधारण बालक ही हैं जिनके व्यवहार को उन्होने प्रत्यक्ष देखा है। अत स्वाभाविकता का अपेक्षाकृत अधिक निर्वाह हुआ है।

३ कही कही कविया ने गृहस्थ मे एकत्रित बच्चा के वात्सल्य वर्णन का स्वाभाविक चित्र बडी सफलता के साथ उपस्थित कर दिया है।

४ राष्ट्रीय भावनाओ की अभिव्यक्ति इस युग की विशेषता है। पत्र-पत्रि-काओ मे प्रकाशित रचनाओ मे इसका वर्णन अपेक्षाकृत अधिक हुआ है।

५ तोतली बोली द्वारा वात्सल्याभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा म की गई है। वात्सल्य के उद्दीपन के क्षेत्र को इससे अधिक विस्तार मिला।

६ कवियो ने वात्सल्य वर्णन म सामाजिकता का पुट भी ला दिया है। उसम समाज के दैन्य और दुख का प्रभाव वात्सल्याभिव्यक्ति पर भी पड गया है।

७ पत्र पत्रिकाओ म अभिव्यक्त वात्सल्य म सवत्र मौलिकता मिलती है। आलम्बन के साथ-साथ उसकी चेष्टाए, उद्दीपन और अनुभव आदि अपने पूव कविया की अभिव्यक्ति से प्रभावित नही है। उनम नवीनता की बहुलता है।

८ कविया के अतिरिक्त बहुत सी कवयित्रियो ने भी वात्सल्य की कविताए लिखी हैं। पुस्तको म जहा वात्सल्य का वर्णन करने वाली कवयित्रियो का स्थान बहुत न्यून है, उसकी कुछ पूर्ति पत्र-पत्रिकाओ के अवलोकन स होती है।

९ कवियों ने सामान्य शिशु को लक्ष्य करके वात्सल्याभिव्यक्ति सबस अधिक मात्रा मे की है।

१० सम्बन्ध की दृष्टि से जो विषयालम्बन प्राप्त होत है उनम पुत्र और पुत्री क अतिरिक्त भतीजे, भाजी बहिन और छोटे भाई को भी वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है।[१]

---

१ जिन कवियो की वात्सल्याभिव्यक्ति का सामूहिक अध्ययन यहां प्रस्तुत किया गया है उनकी सूची परिशिष्ट २ म देखिए।

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक हिन्दी-काव्य के आधार पर वात्सल्य-रस का शास्त्रीय-विवेचन

आलम्बन

आधुनिक हिन्दी काव्य में निरूपित वात्सल्य के आलम्बनों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है—वस्तु की दृष्टि से और सम्बन्ध की दृष्टि से। वस्तु की दृष्टि से वर्णित आलम्बनों के मुख्य दो रूप हैं—विशिष्ट और सामान्य। विशिष्ट विषयालम्बन तीन वर्गों में रखे जा सकते हैं—पौराणिक ऐतिहासिक तथा सामाजिक या लोक साधारण। सामान्य आलम्बन वे हैं जिनमें वत्स विशेष का चित्रण न करके शिशु-सामान्य का ही वर्णन किया गया है। उदाहरणार्थ—

> मेरे भोले भाले लड़के।
> लाल लाल हैं हाय तुम्हारे जसे टटके बड़के पत्ते॥
> जी करता है चूम उन्हें लूं है उनकी प्रति भली ललाई।
> देख अनूठी प्यारी रंगत भला न किसकी आंख लुभाई॥[1]

उपर्युक्त उद्धरण में शिशु का जो चित्रण किया गया है उसके नाम जाति कुल आदि का कोई उल्लेख नहीं है। वह सामान्य शिशु है और भावक के वात्सल्य भाव का व्यंजक है। सामान्य आलम्बनों के विषय में यह तथ्य विशेष रूप से अवेक्षणीय है कि उनका वर्णन मुक्तक काव्यों में ही किया गया है। प्रबन्ध-काव्य में शिशु भी पात्र विशेष से सम्बद्ध होने के कारण विशेषता प्राप्त कर लेते हैं। अतएव उनकी सामान्यता का प्रश्न ही नहीं उठता।

पौराणिक विषयालम्बन तीन प्रकार के हैं—देव मानव और दानव। देवों में कृष्ण और राम मुख्य हैं। इनका वर्णन भी दो प्रकार का हुआ है—एक में तो वे शिशु के साथ कवि के इष्टदेव भी हैं और दूसरे में शुद्ध मानव। जहाँ वे कवि के इष्ट देव के रूप में भी चित्रित किये गये हैं वहाँ वत्सल भक्ति का वर्णन है और जहाँ उनका वर्णन शुद्ध मानवीय है वहाँ शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति है। पहला

---

१ पद्य प्रसून पृ० २४४

वर्णन सूर तुलसी की भाँति भक्त कवियों की परिपाटी का है दूसरा इससे भिन्न। वहाँ कृष्ण और राम के चरित्र का चित्रण शुद्ध मानवीय धरातल पर उतार कर किया गया है। उसमें अलौकिकता का पुट नहीं है। वह होता तो वत्सल भक्ति होती। अत इस प्रकार का वर्णन करने वाले कवियों ने शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की है। सूर आदि में भी जहाँ भक्ति है वहाँ शुद्ध वात्सल्य नहीं है। इस दृष्टि से आधुनिक युग के इन कवियों का वात्सल्य, भक्ति के मिश्रण से अलग होने के कारण श्रेष्ठ है। क्योंकि भक्ति का पुट होने से वात्सल्य रस में व्याघात ही पहुँचता है। जिस प्रकार कोई सीधी स्वच्छ सड़क पर सप्रवाह अबाध गति से चला जा रहा है पर यदि बीच बीच में कुछ कंकड़ पत्थर आ जाए तो उसकी गति और प्रवाह में अवरोध ही होगा उसी प्रकार वात्सल्य रस की अनुभूति में भक्ति और भगवद्-स्मरण से व्याघात पहुँचता है। यह दूसरी बात है कि अनुभव की तीव्रता और प्रभाव की दृष्टि से इन कवियों का वात्सल्य वर्णन हेय हो, पर इन्होंने शुद्ध मानवीय भावों की अभिव्यक्ति करके उसे भक्ति और अलौकिकता के व्यामिश्रण से बचाया है।

कृष्ण के आलम्बनत्व का जिन पुस्तकों में वर्णन है वे ये हैं—भारतेन्दु ग्रन्थावली, प्रिय प्रवास, द्वापर कृष्णायन पुरुषोत्तम और माधव माधुरी। राम के आलम्बनत्व का चित्रण करने वाली ये पुस्तकें हैं—रामस्वयंवर, रामचरित चिंतामणि साकेत प्रलक्षिणा, साकेत सत ऊर्मिला कैकेयी काकली और कविता कुसुम। इनमें से भारतेन्दु ग्रन्थावली कृष्णायन और माधव-माधुरी में कृष्ण के और रामस्वयंवर में राम के प्रति वात्सल्य वर्णन के साथ साथ वात्सल्य भक्ति भी वर्णित है। भारतेन्दु अपने वर्णन के साथ साथ कभी कृष्ण पर बलिहारी जाने की बात कहते हैं तो कभी राधा कृष्ण की जोड़ी का स्मरण करके आनंदित होते हैं। रामस्वयंवर और कृष्णायन में कृष्ण के अलौकिक रूप और ईश्वरत्व का वर्णन है। कहीं कहीं माधव-माधुरी में भी ऐसा वर्णन है। इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि इन कवियों ने जो स्थल वत्सल भक्ति के वर्णित किए हैं वे गौण हैं। प्रसंगवश भगवान के ईश्वरत्व का स्मरण कर लिया गया है। वस्तु प्राधान्य शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति का ही है। अत इनकी वत्सल भक्ति की अभिव्यक्ति न तो सूर तुलसी की भाँति प्रचुर मात्रा में ही है और न इतनी हृदय की तल्लीनावस्था का ही प्रकटीकरण करती है। उपर्युद्धत अन्य पुस्तकों में कृष्ण और राम को आलम्बन मानकर मानवीय भावों की अभिव्यक्ति हुई है।

राम और कृष्ण के रूप वर्णन करने वाले इनमें केवल तीन ग्रंथ हैं—राम स्वयंवर कृष्णायन और माधव माधुरी। शेष कृतियों में उनके जीवन के किसी अंश विशेष का ही वर्णन है। रूप प्राप्ति की प्रतिष्ठा तो तभी हो सकती है जब कवि जन्म से लेकर वर्णन प्रारम्भ करें। इन तीन पुस्तकों में भी आलम्बन के रूप-वर्णन में कोई आधुनिकता की पुष्टि नहीं होती। जैसे सूर तुलसी ने रूप चित्रण किया है वैसे ही

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक हिन्दी-काव्य के आधार पर वात्सल्य-रस का शास्त्रीय-विवेचन

आलम्बन

आधुनिक हिन्दी काव्य मे निरूपित वात्सल्य के आलम्बनो का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है—वस्तु की दृष्टि से और सम्बन्ध की दृष्टि से। वस्तु की दृष्टि से वर्णित आलम्बनो के मुख्य दो रूप हैं—विशिष्ट और सामान्य। विशिष्ट विषयालम्बन तीन वर्गों म रखे जा सकते हैं—पौराणिक ऐतिहासिक तथा सामाजिक या लोक साधारण। सामान्य आलम्बन वे हैं जिनमें वत्स विशेष का चित्रण न करके शिशु सामान्य का ही वर्णन किया गया है। उदाहरणार्थ—

मेरे भोले भाले लडके।
लाल लाल हैं हाथ तुम्हारे जसे टटके बडके पत्ते॥
जो करता है चूम उन्हे लू है उनकी अति भली ललाई।
देख अनूठी प्यारी रगत भला न किसकी आख लुभाई॥[1]

उपयुक्त उद्धरण मे शिशु का जो चित्रण किया गया है उसके नाम जाति कुल आदि का कोई उल्लेख नही है। वह सामान्य शिशु है और भावक मे वात्सल्य भाव का व्यजक है। सामान्य आलम्बनो के विषय में यह तथ्य विशेष रूप स अवेक्षणीय है कि उनका वर्णन मुक्तक काव्यो मे ही किया गया है। प्रबन्ध काव्य मे शिशु भी पात्र विशेष से सम्बद्ध होने क कारण विशेषता प्राप्त कर लते है। अतएव उनकी सामान्यता का प्रश्न ही नही उठता।

पौराणिक विषयालम्बन तीन प्रकार के हैं—देव मानव और दानव। देवा म कृष्ण और राम मुख्य है। इनका वर्णन भी दो प्रकार का हुआ है— एक म तो व शिशु के साथ कवि के इष्टदेव भी हैं और दूसरे म शुद्ध मानव। जहाँ वे कवि के इष्ट दव क रूप म भी चित्रित किये गये हैं वहाँ वत्सल भक्ति का वर्णन है और जहाँ उनका वर्णन शुद्ध मानवीय है वहाँ शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति है। पहला

---

१ पद्य प्रसून पृ० २४४

के समान मुख की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों का भी बाल्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र, ध्वज, अंकुश आदि के चिह्नों का वर्णन करण के शैशव वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन वीर बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके उत्तर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रसन्नता दिखलाना, दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बातें का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भाँति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहीं है। शैशव क्रीडा का वर्णन मानव में भी वामन, कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उसमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अतः कार्तिकेय कभी सांपों को पकड़ना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीडा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार॥
> पकड़ने को भाल का विधु बढ़ाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। शारदा शाता, दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती, सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य, हठ, क्रीडा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। शारदा शाता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही वृत्तान्त प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अतः पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों ही का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ, राहुल, महावीर, निताई, कुणाल, कोणक, उदयसिंह, चन्दन, बादल, छत्रसाल, महाराणा प्रताप का पुत्र, छत्रसाल का पुत्र, झाँसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

१ पार्वती पृ० २६६

कुछ इन्होंने किया है। फलत आलम्बन के केश ललाट भकुटि रेख, नेत्र, नासिका वदन अधर दाँत और कपाल आदि की सुन्दरता का वर्णन तो है पर उसमें कोई नवीनता नहीं है और आभूषण भी वैसे ही हैं जैसे कठुला मोतियों की माला, विजायठ आदि ये सब वर्णन प्राचीन कवियों ने कर दिये हैं। माता द्वारा टोपी, झगुला आदि सब पहनाना तथा डिठौना आदि लगाना मोरपख कमल की माला आदि सब प्राचीन वस्तुएं हैं पुनश्च सूर ने शिशु जन्म से लेकर जब बच्चे के लाल पर होते हैं, धीरे धीरे बढते हुये रूप का जैसा चित्रण किया है वैसा अन्यत्र नहीं है। बस दाँत निकलने पद धावन और खड़ होने आदि का वर्णन कवियों ने किया है। बच्चे के रूप का चित्रण, गोद में पालने पर और पृथ्वी पर सब जगह किया गया है। बाल क्रीड़ा का वर्णन कृष्ण का तो वैसा ही हुआ है जैसा सूर ने किया है जैसे— घुटनों चलना, दधि लपटाना प्रतिबिम्ब को माखन खिलाना चन्द्रमा के लिए मचलना और दूध दधि चुराना आदि। परन्तु राम की क्रीड़ा के वर्णन में रामस्वयंवर में कवि के निजी व्यक्तित्व का प्रभाव है। रघुराजसिंह स्वयं राजा थे अत उनके राम राजोचित क्रीड़ा करते हैं व राजा के आंगन में खेलते हैं कभी हाथी पर चढ़ते हैं तो कभी मणियों के हिरन व पक्षियां आदि को लड़ाते हैं और कभी व आपस में युद्ध करके जग जीत लेते हैं और बड़े आनन्दित होते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियां द्रष्टव्य है—

कहू नृप अगन में खेल बाल सगन में, कहू नृप अगन में दौरि लपटाते हैं।
चढते मतगन में कबहू तुरगन में, कबहू सतागन में दूरि कढि जाते हैं॥
सौंधनि उतगनि अरोहि के उमगन में, मणिन कुरगन विहगन लराते हैं।
बाल केलि जगन में जीति रस रगन में रघुराज चित्त चोप चगन चढाते हैं॥[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृष्ण और राम आदि आलम्बनों के रूप,आभूषण और क्रीड़ा आदि का प्राय प्राचीन परिपाटी जैसा ही वर्णन है। कहीं कहीं थोड़ा बहुत अन्तर है पर वह भी आधुनिकता से प्रभावित नहीं है।

पुराणों के दूसरे आलंबन बालक और बालिका दोनों ही है। जिन बालकों को विषयालंबन बना करके वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है उनके नाम ये हैं—मानव, दा गी, कार्तिकेय वामन ध्रुव रोहितास लक्ष्मण भरत लव, कुश कर्ण अश्वथामा, अर्जुन, नकुल एकलव्य बभ्रुवाहन और अभिमन्यु आदि बालिका आलम्बनों के नाम ये है— शारदा शाता पार्वती सीता उर्मिला, दमयन्ती और शकुन्तला आदि। कवियों ने जिन बालकों को आलम्बन बनाया है उनमें से मानव दा गी वामन कार्तिकेय, ध्रुव रोहितास, लव कुश कर्ण और अश्वत्थामा के शैशव का भी वर्णन किया है। उनमें उनकी खुली हुई लटें धूल धूसरित तन लाल मसूढों के बीच दाँतों का सौन्दर्य, कमल

---

1 रामस्वयंवर पृ० १६७

के समान मुख की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों का भी कार्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र, ध्वज अंकुश आदि के चिन्हों का वर्णन करने के शैशव वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन वीर बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके इतर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रेम जताना दिखलाना दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बात का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भाँति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहीं है। शैशव क्रीडा का वर्णन मानव नागी श्यामा कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उसमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अतः कार्तिकेय कभी सांपों को पकड़ना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीडा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार॥
> पकड़ने को भाल का विधु बढ़ाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। शारदा शाता दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती, सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य हठ क्रीडा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। शारदा, शाता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही वात्सल्य प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अतः पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों ही का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ राहुल, महावीर, रिताई कुणाल, चाणक्य, उदयसिंह कंचन चन्द्र, छत्रसाल, महाराणा प्रताप का पुत्र, छत्रसाल का पुत्र झाँसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

१ पार्वती पृ० २६६

कुछ इन्होंने किया है। फलत आलम्बन के केश ललाट भृकुटि रेख नेत्र, नासिका वदन अधर दांत और कपाल आदि की सुन्दरता का वर्णन तो है पर उसमे कोई नवीनता नहीं है और आभूषण भी वसे ही हैं जसे कठुला मोतियो की माला, विजायठ आदि ये सब वर्णन प्राचीन कवियो ने कर दिये हैं । माता द्वारा टोपी, झगुला आदि सब पहनाना तथा डिठौना आदि लगाना मोरपख कमल की माला आदि सब प्राचीन वस्तुए है पुनश्च सूर ने शिशु ज म से लेकर जब बच्चे के लाल पर होते हैं, धीरे धीरे बढते हुये रूप का जसा चित्रण किया है वसा अयत्र नहीं है। बस दांत निकलने पद धावन और खड हान आदि का वर्णन कवियो न किया है । बच्चे के रूप का चित्रण गोद म पालने पर और पथ्वी पर सब जगह किया गया है । बाल क्रीडा का वर्णन कृष्ण का तो वसा ही हुआ है जसा सूर न किया है जस— घुटनो चलना दधि लपटाना, प्रतिबिम्ब को माखन खिलाना च द्रमा के लिए मचलना और दूध दधि चुराना आदि । परन्तु राम की क्रीडा के वर्णन म रामस्वयवर म कवि क निजी व्यक्तित्व का प्रभाव है। रघुराजसिंह स्वय राजा थे अत उनके राम राजोचित क्रीडा करत हैं वे राजा के आगन मे खेलत हैं कभी हाथी पर चढते हैं तो कभी मणियो के हिरन व पक्षिया आदि को लडाते है और कभी व आपस मे युद्ध करके जग जीत लेत है और बड आनदित हाते हैं। उदाहरणाथ निम्नलिखित पक्तियां द्रष्टय है—

कहू भूप आगन में खेल बाल सगन में, कहू भूप अगन में दौरि लपटाते हैं।
चढते मतगन में कबहू तुरगन में, कबहू लतागन में दूरि कढि जाते हैं॥
सौधनि उतगनि अरोहि के उमगन में, मणिन कुरगन विहगन लराते हैं।
बाल केलि जगन में जीति रस रगन में रघुराज चित्त चोप चगन चढ़ाते हैं॥[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृष्ण और राम आदि आलम्बना के रूप, आभूषण और क्रीडा आदि का प्राय प्राचीन परिपाटी जसा ही वर्णन है । कहीं कहीं थोडा बहुत अतर है पर वह भी आधुनिकता से प्रभावित नहीं है।

पुराणो के दूसरे आलबन बालक और बालिका दोनो ही है । जिन बालको को विषयालबन बना करके वात्सल्याभियक्ति हुई है उनके नाम ये हैं—मानव ध्रुव गणेश, कार्तिकेय, वामन ध्रुव रोहिताश्व लक्ष्मण भरत लव कुश कर्ण अश्वत्थामा अर्जुन, नकुल, एकलव्य बभ्रुवाहन और अभिमन्यु आदि बालिका आलम्बना के नाम ये हैं— शारदा, शाता पार्वती सीता उर्मिला, दमयन्ती और शकुन्तला आदि । कविया ने जिन बालको को आलम्बन बनाया है उनमे स मानव गणेश वामन कार्तिकेय, ध्रुव रोहिताश्व लव कुश कर्ण और अश्वत्थामा के सौन्दर्य का भी वर्णन किया है। उनम उनकी खुली हुई लटें, मुख घुघरित तन लाल मसूढो के बीच दांतो का सौन्दर्य, कमल

1 रामस्वयवर पृ० १६७

के समान मुख की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों का भी बाल्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र, ध्वज, अकुंश आदि के चिह्नों का वर्णन करने के शैशव वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन और बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके इतर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रसन्नता दिखलाना, दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बात का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भांति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहीं है। शैशव क्रीडा का वर्णन मानव, गणेश, वामन, कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उनमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अत कार्तिकेय कभी सांपों को पकडना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीडा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार॥
> पकडने को भाल का विधु बढ़ाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है, उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। आरम्भ शाता दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती, सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य, हठ, क्रीडा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहां पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। आरम्भ शाता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही वृत्तान्त प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अत पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों ही का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ, राहुल महावीर, निताई, कुणाल, कोणक, उदयसिंह, कंचन वात्सल, छत्रसाल, महाराणा प्रताप का पुत्र, छत्रसाल का पुत्र, झांसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

1 पार्वती पृ० २६६

कुछ इन्होंने किया है। फलतः आलम्बन में नैन सरोज, भृकुटि रेख, नख, नासिका, वदन, अधर, दाँत और कपोल आदि की सुन्दरता का वर्णन तो है पर उसमें कोई नवीनता नहीं है और आभूषण भी वैसे ही हैं जैसे बघना, मोतियों की माला, विजायठ आदि ये सब वर्णन प्राचीन कवियों ने कर दिये हैं। माता द्वारा टोपी, झगुला आदि सब पहनाना तथा डिठौना आदि लगाना, मोरपख, कमल की माला आदि सब प्राचीन वस्तुएं हैं पुनश्च मर न निगु क्रम सा लेकर जब बच्चे य लार पर होते हैं, धीरे धीरे बढ़ने हुये रूप का जैसा चित्रण किया है वैसा अन्यत्र नहीं है। बस दाँत निकलने, पद धावन और रद हाथ आदि का वर्णन कवियों न किया है। बच्चे के रूप का चित्रण गोद में पालने पर और पृथ्वी पर सब जगह किया गया है। बाल क्रीडा का वर्णन कृष्ण का तो वैसा ही हुआ है जैसा सूर ने किया है जैसे— घुटनों चलना, दधि लपटाना, प्रतिबिम्ब को माखन खिलाना, चन्द्रमा के लिए मचलना और दूध दधि चुराना आदि। परन्तु राम की क्रीडा के वर्णन में रामस्वयंवर में कवि के निजी व्यक्तित्व का प्रभाव है। रघुराजसिंह स्वयं राजा थे अतः उनके राम राजोचित क्रीडा करते हैं, वे राजा के आँगन में खेलते हैं कभी हाथी पर चढ़ते हैं तो कभी मणियों के हिरन व पक्षियों आदि को लड़ाते हैं और कभी वे आपस में युद्ध करके जग जीत लेते हैं और बड़े आनन्दित होते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

कहुँ नृप अगन में खेल बाल सगन में, कहूं नृप अगन में दौरि लपटाते हैं।
चढ़ते मतंगन में कबहूं तुरंगन में कबहूं स्तनन में दूरि कढ़ि जाते हैं॥
सौंधनि उतंगनि आरोहि के उमगन में, मणिन कुरगन विहंगन लराते हैं।
बाल केलि जगन में जीति रस रंगन में रघुरान विरस चोप चगन चढ़ाते हैं॥[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृष्ण और राम आदि आलम्बनों के रूप, आभूषण और क्रीडा आदि का प्रायः प्राचीन परिपाटी जैसा ही वर्णन है। कहीं-कहीं थोड़ा बहुत अन्तर है पर वह भी आधुनिकता से प्रभावित नहीं है।

पुराणों के दूसरे आलंबन बालक और बालिका दोनों ही हैं। जिन बालकों को विषयालंबन बना करके वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है उनके नाम ये हैं—मानव, शृंगी, कार्तिकेय, वामन, ध्रुव, रोहितास, लक्ष्मण, भरत, लव, कुश, कर्ण, अश्वथामा, अर्जुन, नकुल, एकलव्य, बभ्रुवाहन और अभिमन्यु आदि बालिका आलम्बनों के नाम ये हैं— शारदा, शाता, पार्वती, सीता, उर्मिला, दमयन्ती और शकुन्तला आदि। कवियों ने जिन बालकों को आलम्बन बनाया है उनमें से मानव, शृंगी, वामन, कार्तिकेय, ध्रुव, रोहितास, लव, कुश, कर्ण और अश्वत्थामा के शैशव का भी वर्णन किया है। उनमें उनकी खुली हुई लटें, धूल धूसरित तन, लाल मसूढ़ों के बीच दाँतों का सौन्दर्य, कमल

---

[1] रामस्वयंवर, पृ० १६७

के समान मुख की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों को भी बाल्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र ध्वज अंकुश आदि के चिन्हों का वर्णन करके वे शैशव वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन वीर बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके इतर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रसन्नता दिखलाना, दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बात का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भाँति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहीं है। शैशव क्रीड़ा का वर्णन मानव, शुभी, वामन, कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उसमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अतः कार्तिकेय कभी साँपों को पकड़ना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीड़ा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार॥
> पकड़ने को भाल का विधु बढ़ाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। शारदा, शान्ता, दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती, सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है, परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य, हठ, क्रीड़ा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। शारदा, शान्ता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही वृत्तान्त प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अतः पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों ही का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ, राहुल, महावीर, निताई, कुणाल, कोणक, उदयसिंह, कचन, बादल, छत्रमाल, महाराणा प्रताप का पुत्र, छत्रसाल का पुत्र, झाँसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

१ पार्वती, पृ० २६६

कुछ इन्होने किया है। फलत आलम्बन के केश ललाट भ्रकुटि नेत्र, नेत्र, नासिका वदन अधर दाँत और कपोल आदि की सुन्दरता का वर्णन तो है पर उसमे कोई नवीनता नही है और आभूषण भी वैसे ही हैं जैसे कठुला मोतियो की माला, विजायठ आदि ये सब वर्णन प्राचीन कवियो ने कर दिये हैं। माता द्वारा टोपी, झगुला आदि सब पहनाना तथा डिठौना आदि लगाना मोरपरा कमल की माला आदि सब प्राचीन वस्तुए हैं पुनरुक्त सर ने निज जन्म ॥ लेकर जब बच्चे व लाल पर होते हैं, धीरे धीरे बढते हुये रूप का जैसा चित्रण किया है वैसा अन्यत्र नही है। बस दाँत निकलने पद धावन और राड हाल आदि का वर्णन कवियो ने किया है। बच्चे के रूप का चित्रण गोद मे पालने पर और पृथ्वी पर सब जगह किया गया है। बाल क्रीडा का वर्णन कृष्ण का तो वैसा ही हुआ है जैसा सूर ने किया है जैसे— घुटनो चलना, दधि लपटाना प्रतिविम्ब को माखन खिलाना चन्द्रमा के लिए मचलना और दूध दधि चुराना आदि। परन्तु राम की क्रीडा के वर्णन म रामस्वयवर म कवि के निजी व्यक्तित्व का प्रभाव है। रघुराजसिंह स्वय राजा थे अत उनके राम राजोचित क्रीडा करते हैं व राजा के आगन मे खेलते हैं कभी हाथी पर चढते हैं तो कभी मणियो के हिरन व पक्षियो आदि को लडाते हैं और कभी वे आपस म युद्ध करके जग जीत लेते हैं और बडे आनन्दित होते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पक्तिया द्रष्टव्य है—

कहू नप अगन में खेल बाल सगन सें, कहू नृप अगन में दौरि लपटाते हैं।
चढते मतगन में कबहू तुरगन में कबहू सतागन में दूरि कढि जाते हैं॥
सौधनि उतगनि अरोहि के उमगन में, मणिन कुरगन विहगन लराते हैं।
बाल केलि जगन में जीति रस रगन में, रघुराज चित्त चोप चगन चढाते हैं॥[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृष्ण और राम आदि आलम्बनो के रूप, आभूषण और क्रीडा आदि का प्राय प्राचीन परिपाटी जैसा ही वर्णन है। कही कही थोडा बहुत अन्तर है पर वह भी आधुनिकता से प्रभावित नही है।

पुराणो के दूसरे आलबन बालक और बालिका दोनो ही हैं। जिन बालको को विषयालबन बना करके वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है उनके नाम ये हैं—मानव, गणेश, कार्तिकेय वामन ध्रुव रोहितास लक्ष्मण भरत लव कुश, कर्ण अश्वत्थामा, अर्जुन, नकुल एकलव्य बभ्रुवाहन और अभिमन्यु आदि बालिका आलम्बनो के नाम ये हैं— शारदा गाता पार्वती सीता उर्मिला, दमयन्ती और शकुन्तला आदि। कवियो ने जिन बालको को आलम्बन बनाया है उनमे से मानव गणेश वामन कार्तिकेय ध्रुव, रोहितास लव कुश कर्ण और अश्वत्थामा के शैशव का भी वर्णन किया है। उनम उनकी खुली हुई लटें, धूल धूसरित तन लाल मसूढो के बीच दाँतो का सौन्दर्य, कमल

1. रामस्वयवर पृ० १६७

के समान मुरा की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों का भी बाल्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र ध्वज अंकुश आदि के चिह्न का वर्णन करने के शैशव वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन वीर बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके इतर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रसन्नता दिखलाना दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बात का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भाँति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहीं है। शैशव क्रीडा का वर्णन मानव शृंगी वामन कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उसमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अतः कार्तिकेय कभी साँपों को पकड़ना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीडा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुकार॥
> पकड़ने को भाल का विधु बढ़ाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। पारम्भ शांता दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य हठ क्रीडा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। शारदा, शांता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही काव्यारम्भ प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अतः पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों हो का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ राहुल, महावीर, निताई कुणाल कारक उदयसिंह कचन, बादल, छत्रसाल महाराणा प्रताप का पुत्र छत्रसाल का पुत्र, झाँसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

---

1 पार्वती पृ० २६६

कुछ इन्होंने किया है। फलतः आलम्बन के केश ललाट भकुटि रेखा, नेत्र, नासिका वदन अधर दाँत और कपाल आदि की सुन्दरता का वर्णन तो है पर उसमें कोई नवीनता नहीं है और आभूषण भी वैसे ही हैं जैसे पहले। मोतियों की माला, विजायठ आदि ये सब वर्णन प्राचीन कवियों ने कर दिये हैं। माता द्वारा टोपी, झगुला आदि सब पहनाना तथा डिठौना आदि लगाना मोरपंख बघनख की माला आदि सब प्राचीन वस्तुएं हैं पुनरुक्त सार न शिशु जन्म ॥ लकर जब बच्चे में लाल पर होते हैं, धीरे धीरे बढ़ते हुये रूप का जैसा चित्रण किया है वैसा अन्यत्र नहीं है। बस दाँत निकलने पद धावन और शब्द ज्ञान आदि का वर्णन कवियों ने किया है। बच्चे के रूप का चित्रण गोद में पालने पर और पृथ्वी पर सब जगह किया गया है। बाल क्रीड़ा का वर्णन कृष्ण का तो वैसा ही हुआ है जैसा सूर ने किया है जैसे— घुटनों चलना दधि लपटाना प्रतिबिम्ब को माखन खिलाना चन्द्रमा के लिए मचलना और दूध दधि चुराना आदि। परन्तु राम की क्रीड़ा के वर्णन में रामस्वयंवर में कवि के निजी व्यक्तित्व का प्रभाव है। रघुराजसिंह स्वयं राजा थे अतः उनके राम राजोचित क्रीड़ा करते हैं, वे राजा के आँगन में खेलते हैं कभी हाथी पर चढ़ते हैं तो कभी मणियों के हिरन व पक्षियों आदि को लड़ाते हैं और कभी वे आपस में युद्ध करके जग जीत लेते हैं और बड़े आनन्दित होते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

कहूँ नृप अँगन में खेल बाल सगन में, कहूँ नृप अँगन में धौरि लपटाते हैं।
चढ़ते मतंगन में कबहूँ तुरंगन में, कबहूँ लतागन में दूरि कढ़ि जाते हैं॥
सौधनि उतंगनि अरोहि के उमंगन में, मणिन कुरंगन विहंगन लराते हैं।
बाल केलि जंगल में जीति रस रंगन में रघुराज चित्त चोप चंगल चढ़ाते हैं॥[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृष्ण और राम आदि आलम्बनों के रूप, आभूषण और क्रीड़ा आदि का प्रायः प्राचीन परिपाटी जैसा ही वर्णन है। कहीं कहीं थोड़ा बहुत अन्तर है पर वह भी आधुनिकता से प्रभावित नहीं है।

पुराणों के दूसरे आलंबन बालक और बालिका दोनों ही हैं। जिन बालकों को विषयालंबन बना करके वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है उनके नाम ये हैं—मानव शृंगी, कार्तिकेय वामन ध्रुव रोहितास लक्ष्मण भरत लव कुश, कर्ण अश्वत्थामा, अर्जुन, नकुल एकलव्य बभ्रुवाहन और अभिमन्यु आदि बालिका आलम्बनों के नाम ये हैं— शारदा, शान्ता पार्वती सीता उर्मिला, दमयन्ती और शकुन्तला आदि। कवियों ने जिन बालकों को आलम्बन बनाया है उनमें से मानव शृंगी वामन कार्तिकेय, ध्रुव रोहितास लव कुश कर्ण और अश्वत्थामा के शैशव का भी वर्णन किया है। उनमें उनकी खुली हुई लटें धूल धूसरित तन लाल मसूढ़ों के बीच दाँतों का सौन्दर्य कमल

1 रामस्वयंवर, पृ० १६७

के समान मुख की सुन्दरता आदि का वर्णन है। कवि ने इनके महान होने के लक्षणों का भी बाल्य रूप के वर्णन करते समय वर्णित किया है। जैसे हाथ में वज्र, ध्वज, अंकुश आदि के चिन्हों का वर्णन करण के शरीर वर्णन में अभिव्यक्त है। इसके आगे और इन वीर बालकों के शैशव सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया गया है। स्यात यह इसलिए है कि कवियों का लक्ष्य उनके इतर गुणों के विस्तार की ओर अधिक रहा है। फिर भी जन्मोत्सव पर प्रसन्नता दिखलाना, दान देना और अन्नप्राशन कराने आदि संस्कारों की बात का कवियों ने वर्णन किया है। उस समय राम और कृष्ण की भांति तरह तरह के वस्त्राभूषणों के पहनने का वर्णन नहा है। शैशव क्रीडा का वर्णन मानव नागी वामन कार्तिकेय और लव कुश के शैशव में द्रष्टव्य है। उसमें स्वाभाविकता भी देखने को मिलती है। जैसे—कार्तिकेय को शंकर लेकर खिला रहे हैं। शंकर के गले में सर्प और भाल पर इन्दु है। अतः कार्तिकेय कभी सांपों को पकडना चाहता है और उनकी फुफकार सुनकर डर जाता है और कभी मयंक को हस्तगत करने के लिए हाथ प्रसारित करता है। शिशु की इस अनोखी क्रीडा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

> गोद में लेकर कभी यदि ईश करते प्यार।
> खेलता था पन्नगों से सुन अभय फुंकार॥
> पकडने को भाल का विधु बढाता लघु हाथ।
> स्नेह निर्भर शम्भु सुख से झुकाते निज माथ॥[1]

जिन बालिकाओं को वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है उसमें से भी अधिकांश में वयस्क रूप का ही वर्णन है। पारम्भ माता दमयन्ती और शकुन्तला के शैशवावस्था का कोई वर्णन नहीं है। पार्वती सीता और उर्मिला के बाल्यकाल का वर्णन हुआ है परन्तु उसमें कवि ने इनके रूप का चित्रण कहीं भी नहीं किया। शैशव सुलभ चापल्य, हठ क्रीडा और जिज्ञासा आदि भावों की अभिव्यक्ति ही कर दी गई है। यहाँ पर एक बात द्रष्टव्य है कि कवियों ने पुत्रियों के प्रति वियोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की प्रधानता की है। शारदा, शान्ता और शकुन्तला के प्रति तो वियोगाभिव्यक्ति से ही वृत्तान्त प्रारम्भ होता है। पार्वती और दमयन्ती का भी आगे चलकर वियोग वर्णित है। अतः पुत्रियों के प्रति संयोग से अधिक वियोग वात्सल्य की ही व्यंजना की गई है।

जिस प्रकार पुराण में प्रसिद्ध आलम्बनों की गणना की गई है उसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध आलम्बन भी कुछ कम संख्या में नहीं है इनमें भी बालक और बालिका दोनों ही का वर्णन है। ऐतिहासिक बालक आलम्बन ये हैं—सिद्धार्थ राहुल, महावीर, निताई कुणाल कार्णिक, उदयसिंह कंचन बादल, छत्रसाल महाराणा प्रताप का पुत्र, छत्रसाल का पुत्र, झांसी की रानी का पुत्र और दुर्गावती का पुत्र। बालिका

१ पार्वती पृ० २६६

आलम्बनो म मीरा, पन्नाधरा, नूरजहाँ, नूरजहाँ की पुत्री (लला), मनुबाई छत्रसाल की पत्नी गण्णा प्रताप की पुत्री रानवदे और वांसन्त हैं। इन आलवनो का चित्रण दो प्रकार का है। पहला धारावाहिक अर्थात आलम्बन विशेष का जन्म स लेकर शशव और बालपन और किशोरावस्था पयन्त का वर्णन है। दूसरा आकस्मिक अर्थात आलम्बन की किसी एक अवस्था विशष का वर्णन है। पहले प्रकार क चित्रण म जन्मोत्सव माता पिता आदि का आनन्द प्रदर्शन शिशु क्रीडा और चपलता आदि का समावेश है। वस्तुत इमस वात्सल्य की अनुभूति अधिक होती है। दूसरे प्रकार के चित्रण म वात्सल्य का वह गुण नही है। प्राय उनके जीवन की किसी मार्मिक घटना के वर्णन करने पर कवियो का विशेष ध्यान रहा है। उस मम का और अधिक पुष्ट करने क लिए वात्सल्याभिव्यक्ति की गई है। उदाहरणाथ पन्नादाई म कथन और उदयसिंह के प्रति पन्ना की वात्सल्याभिव्यक्ति प्राण होन वाल करुण दृश्य को और अधिक मार्मिक बना देती है। झासी की रानी म लक्ष्मीबाई का पुत्र प्रम उसके भावी दुख की पराकाष्ठा की पुष्टि करता है। अत इस प्रकार के वात्सल्य वणन म मार्मिकता तो ह पर उतनी व्यापकता और गहनता नही है।

जिन आलम्बनो के व्यापक शशवकाल का वणन है व ये है—सिद्धाथ वद्धमान उदयसिंह मारा कुणाल नूरजहाँ और लला (नूरजहाँ की पुत्री) आदि। इनम स कुछ के शशवकाल के धारावाहिक वर्णन क अतिरिक्त दूसरी पुस्तको म आकस्मिक वणन भी हुआ है। जसे कि सिद्धाथ उदयसिंह और कुणाल के शैशव का क्रमश भिक्षुणी पन्नादाई और तक्षशिला नामक पुस्तको मे आकस्मिक वर्णन है। उपयुक्त आलम्बनो के वणन मे यह भागभेद विशेष उल्लेखनीय है।

आलम्बनो के शशव काल के धारावाहिक वणन म माता पिता की प्रसन्नता और उत्सव आदि का वणन तो किया गया है परन्तु विभिन्न सस्कारो, छटी अन्न प्राशन कण छेदन आदि का वणन नही है। रूप चित्रण भली भाँति किया गया है। शिशुओ की सुन्दरता सुकुमारता और चचलता का वणन भी किया है। उनक हसने रोने और किलकारी मारन नटखटपन और धूल धूसरित होने के विविध स्वाभाविक चित्रण भी हैं। अग प्रत्यग की सुन्दरता का कथन भी इन आलम्बनो का हुआ है और उसमे उनके पद नख पदतल त्रिवली नाभि कर कठ चिबुक कण कपोल दात नेत्र और लट आदि के सौन्दय का वणन किया गया है। कही कही आभूषणो स सुसज्जित बच्चे का भी वणन है और उनमे झिगुली पजनी और वलय आदि को मुख्यत रखा है पर वस्त्राभूषणो से सुसज्जित होने का वणन अधिक नही है। शिशु का क्रम क्रम करके बढते रहने का भी वणन है और तदनुसार गोद की और पथ्वी पर घटनो चलने की शोभा की अभिव्यक्ति की गई है। राम और कृष्ण की भाति पालने पर झुलाने और उन्ह गा-गाकर सुलाने का अथवा जगाने का वणन इस प्रकार के आलम्बनो के चित्रण म नही आता है।

देवो की भांति दानवो को भी आधुनिक युग मे वात्सल्याभिव्यक्ति का आलम्बन बनाया गया है। इन आलम्बनो का वर्णन दैत्यवश और रावण महाकाव्य म हरदयालुसिंह ने विशेषत किया है। द्वापर मे मैथिलीशरण गुप्त न भी कस क प्रति उग्रसेन की वात्सल्यमयी उक्तिया वर्णित की हैं। शेष जिन दानवो का वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया ह उनके नाम य हैं—तारकाक्ष (तारक का पुत्र) बाणासुर असकद (बाणासुर का पुत्र) बाणासुर की पुत्री ककसी (रावण की माता) रावण कुम्भकरण विभीषण, मेघनाद और अरिमदन (रावण की दूसरी पत्नी धान्यमालिनी का पुत्र)। इनम स असकद, मेघनाद और अरिमदन तीन दानवो का आलम्बनत्व उल्लेखनीय है। इनक वर्णन मे विस्तार अधिक है। कवि ने जन्म स लेकर धीरे धीरे बडे होने क रूपो और चेष्टाओ का चित्रण किया है। जन्म के समय बहुत कुछ उसी प्रकार के हर्ष और उल्लास आदि का वर्णन है जस अन्य पौराणिक देव अथवा मानवो के जन्म क समय बहुत स कवियो ने किया है। फलत पुत्र के जन्म पर आनन्द मानना, दान देना, आशीर्वाद देना, बधाई व सोहर गाना तथा ज्योतिषियो से भाग्यफल दिखलाना आदि का वर्णन दानवो म भी वैसा ही है। उदाहरण के लिय मेघनाद के जन्म के समय का वर्णन द्रष्टव्य है—

ल सुत जन्म को मगलम,
समाचार कौ दासि नरेस प आई।
तासन जो कछु पास हुतो
मनिमाल सुमालिहु दीन्हो लुटाई।
सवस दान दियो दसकधर,
छत्र औ चामर दोऊ बिहाई।
आनद जो उमगो गढ़ लक मे,
सो केहु भाति कह्यो नहिं जाई॥[1]

दानवो के शिशुओ का वर्णन करत हुए उनकी शोभा का गोद म पालन मे, पलग पर और भूमि पर सभी जगह पर निरीक्षण किया गया है। शिशु की मुख-शोभा मुस्कान दूध के दात हसना किलकारी मारना आदि चेष्टाओ की भी अभिव्यक्ति की गई है। कुछ बाल स्वभाव के चित्रण भी हैं जसे जीभ निकालना आरसी म प्रतिबिम्ब का देखना लेखनी का स्याही म उल्टी डुबोना, खरिया को उगली से मिलाकर लिखना तथा बालिकाओ म गुडियो का खेल आदि। दानवो के विषयालम्बनो मे चित्रण म कवि ने भावो को उधार नही लिया है। वे मौलिक हैं। कही-कही उनमे दानवोचित बातें लाकर स्वाभाविकता और भी बढ़ा दी गई है। वे खेल खेलते हैं तो साधारण बच्चा जसे खेल नही खेलते। मतवाले हाथियो का मुण्ड

१ रावण पृ० ९४

पकड कर दौड जाना शेर के दाँतो को गिनने लगना तारो के ऊपर चढना तथा शेरनी का दूध पीते हुए सिंह शावको को बरबस खीच लाना आदि कृत्य उनकी बाल क्रीडा के वर्णित किये गये हैं।

बालक आलम्बनो की भाँति बालिका आलम्बनो का भी वर्णन किया गया है पर उनके शैशव के और बाल रूप के चित्रण नहीं हैं। केवल एकाध स्थल उषा के बाल वर्णन का है जब वह गुडियो आदि से खेलती हुई चित्रित की गई है। पुत्री के विवाह की चिन्ता अथवा विवाहोपरान्त वियोगावस्था से व्यथित माता पिताओ का वर्णन किया गया है। सारांश यह है कि वात्सल्याभिव्यक्ति के प्रसंग मे देव मानव अथवा दानव मे कोई अन्तर नही है। इस उत्कट भाव से सभी समान रूप से अभिभूत होते हुए चित्रित किये गये हैं।

मानव बालको को वात्सल्य का आलम्बन बनाना बीसवीं शताब्दी के कवियो की मौलिक उद्भावना है। सम्भवत ये प्रजातन्त्रीय मान्यता का फल हो जहाँ समाज मे समान अधिकार मानव मात्र का आदर और उसका महत्व उदारता के साथ समझा जाता है। अछूतोद्धार के आन्दोलन की छाया मे कवियो मे इन भावो का होना अत्यन्त स्वाभाविक है।

पुराण और इतिहास प्रसिद्ध आलम्बनो के अतिरिक्त कवियो ने सामाजिक व्यक्तियो को भी वात्सल्य का आलम्बन बनाया है। अर्थात जन साधारण के व्यक्ति विशेष भी वात्सल्य के विषयालम्बन बनाये गये हैं। परन्तु इस प्रकार के आलम्बनो की संख्या बहुत थोडी है। इनमे से मुख्य ये हैं—नारायण (जय मानव), मघ (अनघ) ज्ञानधर (उन्मुक्त), सुरभि (अनघ), गाधी और कस्तूरबा (जन नायक) इनके वर्णन मे न तो विस्तार ही है और न शैशव से लेकर क्रम क्रम करके बढती हुई अवस्था के बाल स्वभाव और बाल चेष्टा आदि की अभिव्यजना। माता पिता का किसी परिस्थिति विशेष मे स्नेह सवलित होना मात्र ही वर्णित है। अत ये वात्सल्य के आलम्बन की दृष्टि से विशेष महत्व के नहा हैं।

वात्सल्य रस अपनी व्यापकता के कारण जातीय और समुदाय की सीमाओ को उलाघ जाता है। सब जाति और सब समुदाय के बच्चो ने हिन्दी कवियो को मोहित किया है। इस प्रकार के आलम्बन गुरु हरिकृष्ण (गुरुकुल) अब्दुल्ला (काबा और कर्बला) और सोहराब (सोहराब और रुस्तम) हैं। इनका चित्रण महत्वपूर्ण तो नहीं है पर रस की मधुमती भूमिका मे पहुचकर कवि का हृदय इतना उदार और निष्पक्ष हो जाता है यह समझने के लिये ये वर्णन पर्याप्त हैं।

सामान्य शिशु को विषयालम्बन बना कर जो वात्सल्य वर्णन हुआ है उसमे बालक और बालिका दोनो का चित्रण है परन्तु उनका शिशु रूप ही लिया गया है। उनमे भी छोटे-बडे का भेद है जैसे गर्भस्थ शिशु दुधमुहा शिशु और दूध के दाँत वाला शिशु। शिशुओ को अनेक प्रकार के प्यार भरे शब्दो से जैसे घर मे सम्बोधित

किया जाता है उसी की अभिव्यक्ति कविता में भी हुई है। बच्चे के लिये सामान्यत मुन्ना, मुनू लालन, लल्ला भाई लल्लू लाल छौना भया, राजकुमार, नैनों का तारा, राजदुलारा, प्राण प्यारा स्याम सलोना और चन्द्रहार आदि शब्दो का प्रयोग किया गया है। बच्ची के लिये मुन्नी, मुनो, मुनिया मुनोरानी बिटिया, बिट्टो, राजदुलारी और पिकी आदि प्यार भरे शब्दो का प्रयोग है। इन शिशुओ का रूप वर्णन परम्परा से वर्णित रूप वर्णनो स भिन्न है। शिशु के अग प्रत्यगो की शोभा का वर्णन नाना भाँति के अलकारो के भार से बोझिल नही है जैसा कि अन्य कवियो ने किया है। जिस कवि ने निसगत जैसा अनुभव किया है वैसा ही वर्णन किया है। अत शिशु रूप की असम्भृत सुन्दरता का ही चित्रण कवियो ने किया है। शिशु के शरीरावयवो के लिये जो सौन्दर्याभिव्यक्ति हुई है वह निम्नलिखित प्रकार से है—

शरीरावयव	सौन्दय की अभिव्यक्ति के शब्द
पैर	नन्हे नन्हे
हाथ	लाल लाल, सलौने, नन्हें नन्हे
बाहु	कोमल
ओष्ठ	लाल लाल, पतले, खुले हुए, नन्हें स्मित
दाँत	नन्हे चमकीले
मुख	कोमल, सुन्दर, खिला हुआ, विकसित, मोहन भोला
गाल	गोरे गोरे, लाल लाल, कोमल प्यारे, गुलाबी
गला	छोटा
नेत्र	निर्मल, सलौने, चमकीले
भौंहे	विस्मित
बाल	धूल भरे घुघराले काले, कुचित
शरीर	ओस से धोया छोटा

शिशुओ के वस्त्राभूषणो का चित्रण प्राय कम हुआ है। परन्तु जो स्थल वस्त्राभूषण पहने हुए शिशु के वर्णन के हैं व आधुनिकता स प्रभावित हैं—जैसे फ्राक, साडी खादी के वस्त्र हाथो के कडे और पर म जूते आदि। इस प्रकार सामान्य शिशु को विषयालबन बना कर जो वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है वह अपने नवीन रूप मे सामने आई है और उस पर आधुनिक युग का प्रत्यक्ष प्रभाव है। कृत्रिमता से दूर रहने के कारण वात्सल्य की सहजाभिव्यजना इन आलम्बनो के प्रसग में अधिक रसमयी है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पक्तियो को देखिए—

> प्यारे लडकों को न रुलावो,
>
> हसो खल के ये पुतले हैं।

सलिल में तुम हमको नहलाओ
प्यार करो मुख चूमो मेरा
बातों से हमको बहलाओ
लिये हुए सुन्दर मुखड़े को
मत कुम्हलाया फूल बनाओ।[1]

सम्बन्ध की दृष्टि से वात्सल्य के विषयालम्बन चार वर्गों में रखे जा सकते हैं—१ पुत्र २ पुत्री ३ अन्य सम्बन्धी और ४ असम्बन्धी। पुत्र के प्रति माता और पिता दोनों ही आश्रय हैं। पुत्री के प्रति भी माता पिता होंगे। इस काल के पुत्र और पुत्री के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों को भी आलोच्य युग के कवियों ने वात्सल्य का वर्णन करते समय आलम्बन के रूप में चित्रित किया है। अन्य सम्बन्धी विषयालम्बनों में शिशु स्वरूप भैया भाभी भतीजी भतीजा भानजा पौत्र प्रपौत्र और पौत्र पुत्र आदि हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी विषयालम्बन हैं जिनका आश्रय से कोई सम्बन्ध नहीं है जैसे कोई भी सामान्य शिशु। अन्य सम्बन्धी और असम्बन्धी विषयालम्बनों के विषय में यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि कवियों की अभिव्यंजना इन विषयालम्बनों का चित्रण करने में बहुत कम मार्मिक हुई है और इनके प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य के प्रति रसत्व भावना की ही आनन्दानुभूति कराते हैं जैसे कि निम्नोक्त उदाहरण से स्पष्ट होता है—

छोटी सी भांजी सुकुमारी
गोरी गोरी प्यारी प्यारी।
अति दुलार करती है मानो,
मेरी बिटिया मेरी रानी।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में वात्सल्य की भावानुभूति रसदशा तक नहीं पहुंच पाई है। इसी प्रकार के और भी अनेक प्रसंग नियच्छकाल के अन्य सम्बन्धी विषयालम्बनों की वात्सल्याभिव्यक्ति के प्रसंग में मिलते हैं।

उद्दीपन

वात्सल्य रस के उद्दीपन के विषय में विस्तृत शास्त्रीय सिद्धांत नहीं मिलते। केवल आचार्य विश्वनाथ ने 'उद्दीपनानि तच्चेष्टा विद्याशौर्यदयादयः' शब्दों के द्वारा बच्चे की चेष्टा विद्या शूरता और दया आदि का आख्यान मात्र करके वात्सल्य रस के उद्दीपनों की इति कर दी है। ऐसा होना स्वाभाविक भी था, क्योंकि जब वात्सल्य के रसत्व तक की मान्यता ही सदिग्ध रही तो उसके अंग उपांगों की व्याख्या कैसे

१ पद्य प्रसून पृ०, २३८
२ खिलौना दिसम्बर १९३८, पृ० ३७६

असम्भव हो सकती थी। आधुनिक काल के विद्वानों ने प्राय इसी के आधार पर वात्सल्य के अंग उपांगों की व्याख्या की है। आधुनिक काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य के आधार पर वात्सल्य रस के उद्दीपन के सम्बन्ध में हमारा निजी मत निम्न-लिखित है।

उद्दीपन के दो प्रकार हैं—आलम्बनगत और आलम्बन बाह्य। आलम्बनगत उद्दीपनों में शिशु के गुण प्रसाधन और चेष्टाएं समन्वित किए जाते हैं। इनमें से गुण और प्रसाधनों की अभिव्यक्ति चेष्टाओं की अपेक्षा कम हुई है। परन्तु उनका पूर्णत अभाव नहीं है। शिशु के गुणों में शारीरिक सौन्दर्य विद्या, बुद्धि चातुर्य और दया आदि को समन्वित किया जाता है। काव्य में शारीरिक सौन्दर्य और बुद्धि चातुर्य के उदाहरण अपेक्षाकृत अधिक मिल जाते हैं। आधुनिक कवियों के शिशु-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के विचार दो प्रकार के हैं—एक तो प्राचीन परिपाटी के जिनमें नाना भाँति की नाना उपमा और उत्प्रेक्षाएं देकर उसे प्रभावशाली बनाया गया है।[1] और दूसरे नवीन रूप में।

नवीन रूप में जो शिशु सौन्दर्य वर्णन हुआ है उसकी अभिव्यक्ति उद्दीपन के रूप में अधिक हुई है। इसलिए भावक पर शिशु रूप का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

जिसको विलोक मुग्ध होता है सबका मन,
मुख पर छाया कैसा विमल प्रकाश है।
मंद मंद मंजुल मधुर मुसकान द्वारा,
करता प्रकट शिशु अतुल हुलास है॥[2]

शिशु के बुद्धि चातुर्य को देखकर वात्सल्य रस का उद्दीपन विशेषत होता है। उसके चातुर्य को देखकर वात्सल्य रस की सहायता में हास्य की अनुभूति भी हुआ करती है। नीचे इसी प्रकार का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है। माता को समीप आया देखकर शिशु पयपान की इच्छा से उसके पास घुटनों के बल जाता है। फिर कंधे को पकड़कर माता के मुख को देखने लगता है। धीरे धीरे वह माँ की गोदी में सरक जाता है और हँसते हुए अपने दोनों हाथों से पयोधरों को खोजने लगता है। बच्चे का पहले कंधे को पकड़ कर खड़े होना फिर धीरे धीरे गोदी में जाना,

---

१ लुटेरे केश कैसे सावक सम छोटे मृदु घुंघरारे।
जननि पाणि पोंछे ओछे नहिं सुरभित अतर अपारे॥
अध इंदु इव लघु ललाट पर लाग तीनि दिठौना।
सुधा पियन हित मनहु शीश मधि लस भुवगम छौना॥
रामस्वयंवर, पृ० ११८

२ माधवी पृ० ३३

उसकी इस चातुर्य का प्रकट करता है कि वह अपने नवीन व्यापार के लिए किस प्रकार भूमिका तैयार कर रहा है। और माता की छवि पर स्नेह हम रहा है। इसमें वात्सल्य का भली भांति उद्दीपन हो सकता है। उसके भाव का वात्सल्य के उद्दीपन के साथ विमोहन पंक्तियों में चित्र प्रस्तुत किया गया है—

"माँ बैठी पलने पर आकर,
स्मित से सो शिशु का वदन खिला,
घुटनों पर घस कर हत पहुँचा
पग को पकड़ गड़ा मुख मुड़,
वह देख रहा जननी का मुख।
धीरे धीरे सो गया सरस
माँ की गोदी में पटु बालक,
हँसते हैं उसके मधुर अधर
खोजते पयोधर दोनों कर,
कितना नटखट कहती हँसकर,
फिर देती है अपनी मृदुतर।"[1]

इसके अतिरिक्त बच्चे के गुणों में उसका शील, पितृ भक्ति, कल्पना करना और सोत्साह कथन आदि भी वर्णित मिलते हैं।

प्रसाधन में बच्चे के वस्त्र, आकल्प, मंडन आदि को समन्वित किया जाता है। बच्चे के छोटे से शरीरावयवों पर उसी के अनुसार छोटे छोटे वस्त्र और आकल्प आदि बड़े मोहक लगते हैं। कवि रघुराजसिंह के राम आदि कुमारों के वात्सल्य-वर्णन के प्रसंग में उनका वस्त्रालंकार आदि से युक्त प्रसाधन के द्वारा वात्सल्योद्दीपन का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत हुआ है—

छोटे छोटे झीन ताप टोपी लसे छोटी छोटी
छोटी सी रतन राजी छोटे लगे गोटे हैं।
छोटे छोटे मोती कान छोटे कठुला त्यों कंठ,
छोटे से बिजायठ कटक दुति मोटे हैं।
छोटी छोटी झगुली झलाझल झलकदार,
छोटी सी छरी को लिये छोटे राज ढोटे हैं।
छोटे छोटे पायन विहारि रघुराज आज,
करत विकुण्ठ सुख ओघ आगे छोटे हैं।[2]

---

१ धरती और स्वर्ग, पृ० २४

२ रामस्वयंवर पृ० १२०

शिशु की चेष्टाओं का वर्णन आधुनिक हिन्दी काव्य में बहुत अधिक मात्रा में हुआ है। उनमें कुछ चेष्टाएं तो उसी प्रकार की हैं जैसी कि प्राचीन कवियों ने वर्णित की हैं, जैसे चन्द्रमा के लिए मचलना, घुटनों चलना, पृथ्वी पर लोटना, हाथ मुँह लथपथ कर लेना, लड़खड़ाकर चलना, मिट्टी खाना, हठ करना और खेलने के लिए दूर चल जाना आदि। इनके अतिरिक्त और अनेक चेष्टाएं अपने पूर्णत नवीन रूप में अंकित की गई हैं। ये चेष्टाएं शिशु की वाणी, शिशु-स्वभाव और शिशु कौतुक की श्रेणियों में विभक्त की जा सकती हैं। वाणी में बच्चे का गीत गाना, मीठी बोली बोलना, 'माँ माँ' कहना और अस्फुट उच्चारण करना आदि हैं। इनमें सबसे अधिक उद्दीपन बच्चे की तोतली भाषा है। तोतली भाषा की अभिव्यक्ति वात्सल्य के उद्दीपनों में सबसे अधिक विशिष्ट कही जानी चाहिये और यह केवल आधुनिक कवियों की ही विशेषता है। शिशु की तोतली भाषा का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है—

> महा मेली कागद की नाव
>
> चला कलती तालाबों में।
>
> न येने भी है कुछ तलकाल,
>
> वहा कलती है लहलों में॥[1]

शिशु-स्वभाव की चेष्टाओं में से कुछ तो शिशु की मूल प्रवृत्त्यात्मक विशेषताएं हैं जैसे जिज्ञासा विशेष कौतूहल इतराना और झगड़ना आदि और कुछ आधुनिक युग के वातावरण के अनुसार शिशु के यथार्थ चापल्य के स्वाभाविक चित्रण हैं। शिशु को चेष्टाएं करते हुए देखकर वात्सल्य उद्दीप्त होता है। उदाहरणार्थ कुछ स्वाभाविक चेष्टायें द्रष्टव्य हैं—प्रसकद कभी एक नौ पाँच सात आदि क्रमहीन संख्याओं की गणना करता है, कभी स्याही में लेखनी को उल्टी डुबो देता है। कभी उंगली से तख्ती के ऊपर लिखता है और कभी उससे खरिया को मिलाता है, कभी बुलाने पर पर भी बोलता नहीं और कभी शोर मचाने लगता है। वह अचल प्रतिमा की भाँति बैठा रहता है पर पुकारने की ध्वनि सुनकर ही शक्ति लगाकर भाग जाता है। कवि हरदयालुसिंह ने उपयुक्त वात्सल्य के उद्दीपनों की अभिव्यक्ति अपने दैत्यवंश नामक ग्रंथ में इस प्रकार की है—

> एक नौ सात 'प' ना सा पढ कबौं लेखनो कौं उल्टी मसि बोर।
>
> आगुरी सौं पटिया प लिख खरिया तेहि माहि मिलाय क बोर।
>
> नेकु बोलाये न बोल कबौं खोजि क केतो मचावति सोर।
>
> मूरति लौं गडी बठी रहै प पुकार सुने ही भग वर जोर।[2]

---

[1] खिलौना जुलाई १६३८

[2] दैत्यवंश, पृ० १६६

शिशु स्वभाव जन्य अन्य अनेकों चेष्टाओं की अभिव्यक्ति आधुनिक हिन्दी काव्यान्तर्गत की गई है। उनमे से मुख्य मुख्य चेष्टाएं ये हैं—बच्चे का अंक में बैठने का ललकना कुछ पकड़ने को हाथ ऊंचे करना गले मे बांह डालना उछलना, गिरना कंठ को पकड़ कर माता के पेट पर चढ़ना ताली बजाना ऊंचे हाथ उठाना, पैसा पाकर भाग जाना दूसरे बच्चों को गोदी मे न लेने देना माता के सिर का वस्त्र खींचकर प्रसन्न होना और ढील पाते ही माता के पास से भाग जाना आदि। बालिकाओं के विषयालम्बन बनाने के प्रसंग मे प्रायः उनका गुड़ियों से खेलना आदि ही संक्षिप्ततः वर्णित है।

उपर्युक्त उद्दीपनों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी प्रसंग आये हैं जहां वात्सल्य का उद्दीपन कर्त्ता कोई एक शिशु विशेष न होकर एकाधिक शिशु मिलकर सामूहिक स्वाभाविक क्रीडा आदि में तत्पर होते हैं। महाराज रघुराजसिंह ने राम आदि कुमारों की क्रीड़ाओं की अभिव्यक्ति से शिशुओं की सामूहिक चेष्टाओं के उद्दीपनों का सफल चित्रण किया है—

जानु सों धावत भर्राहिं मद स्वच्छंद गिर उठि के पुनि धाव।
त्यों ही परस्पर पाणि गहे घसि लै हसि हेरि हुलास बढ़ाव।
श्री रघुराज नर्पागन में निज अंगन को अंगराग लगाव।
लै रज पाणि उड़ाव लला नहिं आव जब उठि मातु बुलाव।[1]

उपर्युक्त छन्द मे शिशुओं का साथ साथ घुटनों के बल दौड़ना गिरना और फिर उठकर दौड़ना आपस मे एक दूसरे का हाथ पकड़ कर घसीटना और प्रसन्न होना धूल धूसरित होना और धूल आदि को उड़ाना बहुत से उद्दीपनों का शिशु समूह की क्रीड़ा के प्रसंग मे आलेखन किया गया है।

शिशु की चेष्टाओं के प्रसंग मे उसके कौतुक भी आते हैं अपने ज्ञान राहित्य और अनुभवहीनता के कारण बालक कुछ ऐसे कार्य करता है जो या तो निष्प्रयोजन और या परिणाम मे प्रतिकूल होते हैं। उनसे उसके कौतुक की प्राप्ति होती है। वयस्क पुरुष द्वारा ऐसे कार्य किये जाने पर घृणा क्षोभ और कलह के उत्पादक हो जाते हैं परन्तु बालक के ऐसे कार्य वात्सल्य को उद्दीप्त करते हैं।

मनोवैज्ञानिक ढंग से इस प्रवृत्ति की व्याख्या इस तरह की जा सकती है कि इसके मूल मे बच्चे की जिज्ञासा बैठी रहती है और वह परिणाम की चिन्ता न करता हुआ अपने आस पास के जगत को जानना चाहता है। इसी को उसके कौतुक की संज्ञा दी जाती है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण पर ध्यान दीजिए—

घोपी मार गया लड़कों को
काट चिकोटी उन्हें रुलाया।

---
१ रामस्वयंवर पृ० ११७

चिढ़ा गया उंगलिया नचाकर
बन्दर सा किलकिला डराया।
घर में घुसकर घूम मचाई,
छीन ले गया सुई—तागा।
कैसा है यह नटखट लड़का,
छोड़ कान में 'टू' कर भागा॥[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में भौंह मटकाना, उंगलियाँ नचाना और दूसरे बच्चों का चिढ़ाना, सुई तागा छीन कर ले जाना कान में टू कर देना, बन्दर सा किलकिलाना और घर में घूम मचाना आदि बातें बालक के कौतुक के अन्तर्गत ही परिगणित की जावेंगी। ये कार्य यद्यपि परिणामतः श्रेयस्कर नहीं हैं पर बालक द्वारा ऐसा किये जाने पर भी वात्सल्य का उद्दीपन होता है। इसी प्रकार के अन्य कौतुकों का भी वर्णन आधुनिक हिन्दी काव्य में हुआ है। उनमें से मुख्य कौतुक ये हैं—टोपी फेंकना, चिनगारी से खेलना, दृग मींचना दांत पीसना जूतों की तोड़ मरोड़ करना, शोर मचाना, कपड़ों पर काजल फेर देना, दूध छलका देना कीचड़ से लथपथ होना और काटा कूटी करना आदि। इनमें अनेक ऐसी चेष्टाएं हैं जिनका पुराने साहित्य में वर्णन नहीं हुआ है और वात्सल्य भाव के क्षेत्र में इस दिशा में इसी युग के काव्य में अधिक नवीनताएं आई हैं।

उद्दीपन सम्बन्धी जो विवेचन अब तक किया गया है वह सब आलम्बनगत उद्दीपन के वर्ग से सम्बन्ध रखता है। अब थोड़ा सा दृष्टिपात आलम्बन बाह्य उद्दीपनों के ऊपर भी कर लेना अप्रासंगिक न होगा। इस सम्बन्ध में यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आलम्बन बाह्य उद्दीपनों का वर्णन अत्यल्प मात्रा में हुआ है। और वह वात्सल्य के वियोग में ही अधिक हुआ है। यह स्वाभाविक है क्योंकि आलम्बन के सामने होने पर ध्यान का केन्द्र वही रहता है। पर जब बच्चा नहीं होता तो उसके साहचर्य की वस्तुएं वियोग वात्सल्य का उद्दीपन करती हैं। ऐसी स्थिति के आलम्बन दो प्रकार के मिलते हैं। १—पुत्र के न होने पर आंगन को पुत्रों की क्रीड़ा से शून्य देखकर पुत्रैषणा के प्रादुर्भाव के साथ साथ वात्सल्य भाव का उद्दीपन। रस शास्त्र की भाषा में इसी को वात्सल्य का पूर्वराग कहेंगे।

२—वत्स के प्रवास के समय उसके साहचर्य की वस्तुओं को देखकर वियोग वात्सल्य की वृद्धि। यह प्रवास पुत्री का भी होता है और पुत्र का भी होता है। विवाह के समय पुत्री अलग हो जाती है और विद्याध्ययन युद्ध या अन्य कार्यवश पुत्र अलग हो जाता है। माता पिता को दोनों के वियोग का ही अनुभव होता है।

इनमें से पुत्रैषणा के प्रादुर्भाव के साथ वात्सल्य का आलम्बन-बाह्य उद्दीपन

---

१ मम स्पर्श पृ० ११६

(सिद्धार्थ) महाकाव्य में हुआ है। 'शकुन्तला' नामक पुस्तक में पुत्री के पतिगृह गमन के समय उसकी साहचर्य की वस्तुओं को देखकर उद्दीपन वर्णित है।[1] पुत्र के प्रवास चले जाने पर आलम्बन बाह्य उद्दीपनों का वर्णन एकलव्य महाकाव्य में मिलता है। यह ही आलम्बन बाह्य उद्दीपन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। धनुर्विद्याभ्यास के लिए एकलव्य के प्रस्थान कर जाने पर उसकी ममतामयी मां छटपटाती तड़पती है। उस एकलव्य के बिना सभी सांसारिक वस्तुएं नीरस प्रतीत होती हैं। फिर जब वह एकलव्य के क्रीड़ा करने के छोटे से धनुष को देखती है तो और भी अधिक पुत्र विरह की पीड़ा से व्याप्तमानस हो जाती है। इसका उदाहरण निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है—

यह छोटा सा धनुष तुम्हारा,
इसने तीखा विरह बाण क्यों मेरे मन में मारा?[2]

इस प्रकार आधुनिक काल के वात्सल्य भाव के उद्दीपन पक्ष पर सामूहिक विचार यदि किया जाय तो यह निष्कर्ष मिलता है कि इन कवियों ने आलम्बनगत और आलम्बन बाह्य दोनों प्रकार के उद्दीपनों का परिगणन तो बहुत किया है। अनेक नई-नई चेष्टाओं और नई नई वस्तुओं के नाम गिनाये हैं परन्तु उनके वर्णन रसात्मक कम हैं। कवि ने हृदयस्थित कल्पना का पुट देकर उसे रसनीय नहीं बनाया जैसे यह सूर तुलसी आदि भक्त कवियों में बड़े विस्तृत रूप में मिलता है।

आश्रय

जिस प्रकार वात्सल्य के विषयालम्बनों के स्वरूप का निरूपण दो दृष्टियों से किया गया है—वस्तु की दृष्टि से और सम्बन्ध की दृष्टि से उसी प्रकार आश्रय के स्वरूपों का निरूपण भी इन्हीं दो दृष्टियों से करना समीचीन है। वस्तु की दृष्टि से पौराणिक ऐतिहासिक और सामाजिक तीन प्रकार के आश्रय मिलते हैं। पौराणिक आश्रयों के पुनः तीन प्रकार हैं—देव मानव और दानव। देवों में ब्रह्मा शंकर पार्वती सीता तथा अन्य पुरुष और स्त्री देवता आश्रय हैं परन्तु इनकी मनोभावाभिव्यक्ति में कोई अलौकिकत्व नहीं है। साधारणतः जिस स्थिति में जैसे भावों की अनुभूति किसी सहृदय व्यक्ति से की जा सकती है वैसे ही इन सब आश्रयों की अनुभूति है। उदाहरणार्थ ब्रह्मा अपनी पुत्री शारदा के मृत्युलोक को चले जाने

---

१ सुत तव स्मृति चिह्न तपोवन में बहुतेरे
देते थे जो महामोद मानस में मेरे।
उदासीनता बरसा रहे हैं आज सभी ये
कुछ के कुछ हो गये दृश्य सब अहा अभी ये॥
—शकुन्तला, पृ० २६

२ एकलव्य पृ० १५१

पर साधारण सहृदय व्यक्ति की भांति अपनी पुत्री की मनोदशा की कल्पना करके शोकाकुल होते हैं—

आत्म विस्मृता वहां नहीं होगी अब कन्या।
मेरे हिय उर ताप शमन कर थात न अन्या॥[1]

और शंकर अपने पुत्र कार्तिकेय के साथ ऐसे ही वात्सल्यानंद को प्राप्त करते हैं जैसे कोई भी वात्सल्य भरित मानस वाला पिता पुत्र के संयोग सुख की अनुभूति करता है।

पौराणिक मानव आश्रयों में पुरुष और स्त्री दोनों हैं। पुरुष आश्रयों के नाम निम्नलिखित हैं—विभाडक मुनि, हिमालय दशरथ, जनक, नन्द, वसुदेव, उग्रसेन, द्रोणाचार्य, अधिरथ, एकलव्य के पिता, ध्रुव के पिता हरिश्चन्द्र, कण्व और दुष्यन्त आदि। स्त्री आश्रयों में श्रद्धा, मेना अदिति, यशोदा, देवकी, कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी कुन्ती, राधा (कर्ण का पालन पोषण करने वाली अधिरथ नामक सूत की पत्नी) एकलव्य की माता और ध्रुव की माता आदि हैं।

देव और मानवों की भांति दानवों का भी आधुनिक काल के कवियों ने वात्सल्य के आश्रम के रूप में चित्रण किया है। इनमें भी पुरुष आश्रय और स्त्री आश्रय दोनों ही हैं। दानव पुरुष आश्रयों में विरोचन, बाणासुर रावण सुमाली और माल्यवान आदि हैं। स्त्री आश्रयों में तारक की पत्नी बाण की माता केतुमती, कैकसी, मन्दोदरी, धन्यमालिनी और नाग स्त्रियाँ आदि हैं। दानवों का आश्रय के रूप में चित्रण करते समय कवियों ने पुरुषों की अपेक्षा दानव स्त्रियों को ही अधिक वात्सल्यमयी वर्णित किया है। पुरुष आश्रयों का तो केवल साधारण और संक्षिप्त ही वर्णन है। इसी सम्बन्ध में यह भी ध्यान देने योग्य तथ्य है कि दानवों की वात्सल्यानुभूति की अभिव्यक्ति में भी कवियों ने किसी प्रकार का व्यतिक्रम नहीं रखा है। इसके साथ ही यह भी अधिगम्य है कि दानव शिशुओं को खिलाने के लिये आश्रयगत चेष्टाएं भी सब साधारण के समान हैं। इसी प्रकार उनके आन्तरिक भावों की कोमलता की भी परख की गई है। उदाहरण के लिए बाणासुर की माता की बाणासुर के मिलने के समय की दशा का वर्णन द्रष्टव्य है—

आन को देखत ही तिय ने दुख पाय घने असुवा बरसायौ।
ज्यों निधनी धन पाव कोहू लखि के तेहि बाम को धीरज आयौ॥
सूंघि के माथ बिठाय समीप भुजा भरि के तेहि कंठ लगायौ।
बोलन कीन्हों प्रयास तऊ भरि आयौ गरो न कछू कहि आयौ॥[2]

वस्तु की दृष्टि से दूसरे प्रकार के वात्सल्य ऐतिहासिक आश्रय हैं इन आश्रयों की संख्या भी कुछ कम नहीं है। इनमें भी पुरुष और स्त्री दोनों हैं। पुरुष आश्रयों

१ तारक वध, पृ० ३
२ दैत्य वंश, पृ० १६०

के नाम ये हैं —शुद्धोधन, यशोधरा के पिता सिद्धार्थ अशोक बिन्दुसार मनुबाई के पिता मीरा के पिता महाराणा प्रताप तुलसी श्रीहर्ष आदि। ऐतिहासिक स्त्री आश्रय पुरुषो की अपेक्षा सख्या म अधिक हैं वे निम्नलिखित हैं—शुद्धोधन की रानी यशोधरा की माता यशोधरा त्रिशला कुणाल की माता कुशला, करुणा पन्नादाई सारगा मीरा की माता, मनुबाई की माता दयमन्ती की माता महारानी दुर्गावती छत्रसाल की पत्नी छत्रसाल की पत्नी की माता निताई की माता, महाराणा प्रताप की पत्नी बादल की माता मुनबाई, लक्ष्मी बाई नूरजहा का पालन पोषण करने वाली धाय और नूरजहा आदि।

सामाजिक आश्रय सख्या म बहुत कम हैं और उनम पुरुष आश्रय केवल चार ही हैं—काका गाधी महात्मा गाधी कस्तूरबा के पिता और राष्ट्रीय आदोलन म भाग लेने वाले एक पिता। इनकी वात्सल्यानुभूति का अत्यन्त सक्षेप म कथन मात्र ही है और उसम कोई विशेषता नही है। स्त्री आश्रया म पुतली बाई कस्तूरबा की माता ज्ञानधर की माता मध की माता मालिन और ठकुरानी हैं।

वस्तु की दृष्टि स वर्गीकृत सभी आश्रयो के सम्बन्ध मे यह विशेष रूप स उल्लखनीय है कि सभी वर्गों क पुरुष आश्रया की अपक्षा स्त्री आश्रया का अधिक वात्सल्यमय होने का चित्रण किया गया है और यह स्वाभाविक भी है। माता का अधिक वात्सल्यमयी होना मन शास्त्रियो को भी मान्य है। फिर काव्य म उसकी विस्तृत और मार्मिक अभिव्यक्ति होने म आश्चय ही क्या है?

आश्रया का द्वितीय प्रकार का वर्गीकरण सम्बन्ध की दृष्टि से किया गया है। इसक भी चार भेद हैं—माता पिता अन्य सम्बन्धी और असम्बन्धी। इन सभी प्रकार क आश्रयो म अनुभूति की दृष्टि से न्यूनता या अधिकता का कोई क्रम नही है। माता और पिता का पुत्र और पुत्री दोनो के प्रति वात्सल्य वर्णित है। अन्य सम्बन्धी आश्रयो म चाचा भाई मामा नाना दादा परदादा गुरु और पालन पोषण करने वाला पिता है। असम्बन्धी आश्रयो की परिकल्पना दो प्रकार क आलम्बनो के प्रति हुई है। उनम एक तो अभिमन्यु लव कुश और बभ्रुवाहन आदि ख्यात नाम हैं और दूसरे कोई भी सामान्य शिशु। इसक आश्रय कोई भी सहृदय व्यक्ति और स्वय कवि है। इस प्रकार क आश्रया का वर्णन मुक्तक काव्य म हा हुआ है और उसकी अभिव्यक्ति करने वाल कवि निम्नलिखित हैं—हरिऔध लाला भगवानदीन सियारामशरण गुप्त पन्त गोपालशरण सिंह आरसी प्रसाद सिंह डा० देवराज शम्भूदयाल सक्सना और सुमित्रा कुमारी सिन्हा आदि। यह हम कह चुक हैं कि सामान्य शिशु क प्रति अभिव्यक्त वात्सल्य क आश्रय स्वय कवि और कोई भा भावक हो सकत हैं। उसका उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है—

नदियाँ हसती उछला पडता लहरों का सुदर मन।
धवल हिमालय हसता सती चोटी नभ का

नन्हे बच्चो, तुम भी हसकर जगती का मन लूटो।
नन्हे उर नन्हे अधरों तुम हास्य स्रोत बन फूटो ॥[1]

उपयुक्त पक्तियो म सुमित्रा कुमारी सिनहा ने नन्हे बच्चो को वात्सल्य का आलम्बन बनाया है। वे स्वय उसकी आश्रय हैं कोई भी सहृदय उसका आश्रय हो सकता है।

अनुभाव और आश्रयगत चेष्टायें

भावो के हृदय म उदबुद्ध होने के पश्चात् जो आश्रय की चेष्टाए होती हैं व अनुभाव कहलाती हैं। ये हृदयगत भावो को बाहर प्रकाशित करने वाले होते हैं। वात्सल्य के अनुभावो के वणन मे आचाय विश्वनाथ ने आलिगन, अगस्पश सिर चूमना टकटकी बाधकर देखना पुलक और आनन्दाश्रुओं की गणना की है।[2] परवर्ती हिन्दी आचार्यों के मत भी प्राय उन्ही के अनुसार हैं। परन्तु आधुनिक हिन्दी कविता के वात्सल्य की पर्यालोचना करने पर हम और भी बहुत से अनुभावो की प्रतीति होती है। उनका विवरण यहा प्रस्तुत किया जाता है।

सयोग और वियोग दोनो दशाओ मे वात्सल्य की अभिव्यजना होने के कारण अनुभाव भी दो वर्गों म विभाजित किये जा सकते हैं—सयोगावस्था मे वर्णित अनुभाव और वियोगावस्था म वर्णित अनुभाव। सयोगावस्था म वर्णित अनुभावो को दो कोटि म बाट सकते हैं। कुछ चेष्टाए तो आश्रय पयवसित हैं और दूसरी वे हैं जो आश्रय से बाहर निकलकर आलम्बन का स्पश करती हैं। पहले प्रकार की चेष्टाओ मे भाव का आवेग कम होता है इसलिए ऐसी हल्की चेष्टाए उठती हैं जो केवल अनुभविता तक ही सीमित रहती हैं जसे चुटकी बजाना, गाना और शिशु को झुलाना आदि। उदाहरण के लिए निम्नलिखित उद्धरण दिया जाता है—

पलना पर पारि क वा सिसु को तिय मन्दहि मद झुलाव कोई।
हलरावनि और दुलरावनि मे अनुराग के रागनि गाव कोई ॥[3]

इन पक्तियो मे पालने पर झुलाना सुलाना हलराना, दुलराना और प्रेम पूवक गाना आदि एसे अनुभाव हैं जो आश्रय के अपने ही शरीर से सम्बन्ध रखते हैं। ये आश्रय पयवसित अनुभाव हैं। विवेच्य काल मे इस प्रकार के और भी बहुत से अनुभावो की अभिव्यक्ति हुई है और उनम मुख्य मुख्य ये हैं—सुलाना, जगाना, पास बुलाना लोरी गाना प्यार से रुलाना, खडा होना सिखलाना चलना सिखलाना,

---

१ आँगन के फूल, पृ० ४

२ आलिगनागसस्पश शिरश्चुम्बनमीक्षणम्।
पुलकानन्द वाष्पाद्या अनुभावा प्रकीर्तिता ॥

—साहित्यदपण, पृ० १६६

३ दत्यवश, पृ० १४७

कहानी कहना, पारिवारिक जनो के नाम और सम्बन्ध बतलाना बच्चे के छोटे रूप की न्यग्य से हसी उडाना आशीर्वाद देना और सस्नेह देखना आदि ।

आश्रय पर्यवसित मे भी कुछ अनुभाव ऐसे हैं जो चेष्टा रूप म व्यक्त न होकर शरीर विकार के रूप मे प्रकट होते हैं । आचार्यों न उन्हे सात्विक भाव कहा है। इनमे से आधुनिक काल म निम्नलिखित सात्विको की अभिव्यक्ति मिलती है—अश्रु रोमाच गद्गद कम्प ववण्य स्तम्भ, प्रलय और स्तन स्राव आदि । उदाहरण के लिए निम्नोद्धत पक्तियो म अश्रु कम्प और पुलक सात्विक भावो का बहुत सुन्दर वर्णन मिलता है। ध्रुव क मिलन पर चिर प्रतीक्षा रत ममतामयी मा की अनुभावित स्थिति का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

माता बडी विह्वल हो गयी थी
प्रसन्नता से वह कांपती थी।
विलोचनों मे जल छा गया था,
शरीर मे भी पुलकावली थी।[1]

काव्य शास्त्रियो ने सात्विक भाव ८ ही माने हैं और वे य है—स्तम्भ स्वेद रोमाच गदगद्, वपथु वैवण्य, अश्रु और प्रलय। परन्तु वात्सल्य रस म स्तनस्राव एक नया सात्विक भाव होता है। निम्नलिखित उद्धरणो म स्तनस्राव सात्विक भाव की निबन्धना भली भांति द्रष्टव्य है—

राधा ने शिशु हित खोला निज अक द्वार को,
अनुराधा नक्षत्र मिला ज्यो नव कुमार को।
उमड पडा जननीत्व, मानवी अन्तस्तल का,
अचल भीगा, दुग्ध पयोधर से जब छलका ॥[2]

तथा

सुनीति ने ज्यों ध्रुव कान्ति देखी
पयोधरों मे पय आगया त्यों।
आमोद में बालक को करो से
स्वगोद में ही उसने बिठाया ॥[3]

दूसरे प्रकार की चेष्टाए अर्थात आलम्बन स्पर्शी चेष्टाए भाव की तीव्र अनुभूति के कारण उठती हैं और उनका रूप एसा व्यक्त हुआ है जिससे आश्रयगत भाव का आवेग प्रत्यक्ष प्रकट होता है जसे छाती से लगाना चुम्बन लेना और गोद में

१ ध्रुवचरित, पृ० १०१
२ मगराज, पृ० २४
३ ध्रुवचरित पृ० १०१

उठाना आदि। उदाहरणार्थ अधोलिखित उद्धरण देखिये—

रानी कभी उठाकर शिशु को,
कंधे पर थी बठाती।
कभी सुलाकर पलने पर वह,
चुम्बन लेकर थी गाती।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में शिशु को उठाकर कंधे पर बिठाने और चुम्बन लेने आदि अनुभावों में आलम्बन का स्पर्श हुआ है। अत इन चेष्टाओं को आलम्बनस्पर्शी कह सकते हैं। आधुनिक काल में इस प्रकार की और भी बहुत-सी आलम्बनस्पर्शी चेष्टाओं की अभिव्यक्ति हुई है और उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—मुख से मुख लगाना, हाथ चूमना, चिबुक चूमना, तन सहलाना, मस्तक पर हाथ रखना, शरीर पर हाथ फेरना, मुख पोंछना, कपड़े से धूल पोंछना, केश सभालना, अंजन लगाना, ऊपर उछालना, गोद में बिठाना, चपत लगाना, कोमल थपकी देना और खिलाना पिलाना आदि।

इन चेष्टाओं के सम्बन्ध में यह विशेषत अधिगम्य है कि इनमें से कुछ चेष्टाए तो अलग अलग व्यक्त हुई हैं परन्तु कुछ की अभिव्यक्ति सामूहिक रूप से हुई है। उदाहरण के लिए आश्रय-गतवसित चेष्टाओं में लोरी गाना है। माता उसको गोद में भर कर केवल लोरी ही गाती है। उस समय अन्य अनुभावों की अभिव्यक्ति हुई है—

सोजा लल्ला सो जा लल्ला।
चंदा आया चंदा आया।
साथ बहुत से तारे लाया,
मीठा दूध कटोरा लाया
सोजा लल्ला सो जा लल्ला।[2]

इसी प्रकार टकटकी मारकर देखने का अनेक स्थलों पर ऐसा वर्णन हुआ है कि उसके साथ अन्य अनुभावों का अवच्छुरण नहीं है। शंकर और पार्वती का कार्तिकेय के रूप को देखते समय इसी प्रकार का वर्णन है।

मुग्ध होते उमा और शिव रूप कान्ति निहार।
देखते अनिमेष रहते मौन काम विसार॥[3]

आशीर्वाद देने[4], कहानी कहने[5] पारिवारिक सम्बन्धियों के नाम बतलाने[6]

---

१ झांसी की रानी पृ० ११४
२ बालसखा सन १९४७ पृ० १४२
३ पार्वती पृ० २९९
४ अंगराज पृ० ३५
५ मीरा पृ० ४७ रावण पृ० २१४
६ आरसी—पहचान, पृ० २३३

और खिलाने[1] आदि के अनुभावों की भी अभिव्यक्ति एक एक अनुभाव की एक-एक स्थान पर ही हुई है।

जहाँ सामूहिक रूप से अनुभावों की अभिव्यक्ति हुई है वहाँ तीन प्रकार का व्यामिश्रण मिलता है—१—केवल आश्रय २—केवल आलंबनस्पर्शी अनुभावों का वर्णन, आश्रय पर्यवसित चेष्टाओं का वर्णन ३—आश्रय पर्यवसित और आलंबनस्पर्शी चेष्टाओं का मिश्रण।

प्रथम प्रकार के मिश्रित अनुभावों का (अर्थात् केवल आश्रय पर्यवसित अनुभावों का) वर्णन सिद्धार्थ महाकाव्य में सिद्धार्थ के प्रति अभिव्यक्ति वात्सल्य में द्रष्टव्य है। उनकी माता पालने पर सुलाने मुख को देखने झुलाने और गुन गुनाकर गान आदि चार अनुभावों को एक साथ अभिव्यक्ति हुई है और ये सभी अनुभाव आलम्बन को स्पर्श करके अभिव्यक्त नहीं हुए हैं—

पलंग से पलना पर धार के,
जननि आनन्द इन्दु विलोकती
तनुज को कर दोलित एकदा
गुनगुनाकर गायन गा उठी।[2]

दूसरे प्रकार के सामूहिक रूप से अभिव्यक्ति अनुभावों में केवल आलम्बन स्पर्शी अनुभावों का एक साथ वर्णन किया गया है। इसका वर्णन हरदयालुसिंह के दैत्यवंश महाकाव्य में बहुत सुन्दर हुआ है। नेत्रों में अंजन लगाना सिर के बाल सँवारना प्रसन्न होकर गोद में लेना और हाथों से ऊपर उछालना आदि अनुभावों का एक साथ वर्णन है और उसका वर्णन बड़े मार्मिक शब्दों में हुआ है—

दृग अंजन रंजन कोऊ करे सुठि सीस के बार सवारे कोऊ
हुलसाय के गोद में लेय कोऊ कर कंजनि मंजु उछारे कोऊ।
मुसकानि पे सुन्दर या सिसु की मनि मानिक सौं मन वारे कोऊ
लगि जाइ न दीठि कहूँ यहि के अरि नैन न बाल निहारे कोऊ।[3]

अनुभावों के तीसरे प्रकार के सामूहिक वर्णन में उपयुक्त दोनों प्रकार के अनुभावों का एक साथ मिश्रण है। इस प्रकार के अनुभावों की अभिव्यक्ति आलोच्य काल के कवियों ने अधिक मात्रा में की है। उदाहरण के लिये जननायक में दूध पिलाने शाक चटाने पास बुलाने और अच्छी अच्छी बातें सुनने आदि आश्रयपर्यवसित और चूमने चपत लगाने और छाती से चिपटाने आदि आलम्बनस्पर्शी अनुभावों के एक साथ ही वर्णन हैं—

---

१ चित्तौड़ की चिता पृ० ५८
२ सिद्धार्थ पृ० ३५
३ दैत्यवंश पृ० १८६

कभी पिलाती दूध कभी वह चूम चूम कर गाल चटाती,
कभी पिता की गोदी में से मां मोहन को पास बुलाती।
कभी बदलती वस्त्र कभी वह अच्छी अच्छी बात सुनाती,
कभी लगाती चपत कभी वह अपनी छाती से चिपटाती।[1]

इसी प्रकार का एक उदाहरण 'माधव माधुरी' से भी उद्धृत किया जाता है। इसमें और भी अधिक संख्या में अनुभावों का एक साथ मिश्रण और वर्णन है—

मुख चूमत हलरावत इत उत उदर बाल लपटाई,
छन पलना हलरावत निज कर दृष्टि अनत नहिं जाई।
मुख निरखत पुलकित जस गावत स्तन पान कराई,
सकल अंग शिशु निजकर फेरत पुनि पुनि पलना पवढाई।
पुनि ललना कहि लेइ पलना कर गोद लाइ सुख पाई,
चलत सोवत बैठत उर गहि शिशु एह यशोमति निपुनाई॥[2]

उपर्युक्त उद्धरण में मुख चूमना, स्तन पान कराना, अंगों का स्पर्श करना, गोद में लेना और हृदय से लगाना आलम्बनस्पर्शी अनुभाव है। इनके साथ में पुलक सात्विक भाव की भी अभिव्यंजना हुई है।

संयोग वात्सल्य के वर्णन में प्रसंग में आश्रय की चेष्टाओं की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। वियोग वात्सल्य वर्णन के प्रसंग में भी उनकी अभिव्यक्ति मिलती है परंतु वह अधिक मात्रा में नहीं हुई और कुछ ही चेष्टाओं का वर्णन है। वे चेष्टाएं ये हैं—बिलपना, सिर धुनना, रोना, अधीर होना, बार-बार कुशल पूछना, नींद न आना, लकवा सा मार जाना, प्राणशून्य सा हो जाना, मूक हो जाना और पृथ्वी पर गिर पड़ना। उदाहरण के लिए मूक हो जाने का वर्णन कुंती और कर्ण के प्रसंग में रामधारीसिंह दिनकर ने 'रश्मिरथी' पुस्तक में किया है, रोने, विलपने और धैर्य खोने का वर्णन शास्ता के वियोग के प्रसंग में तारकवध में हुआ है। बार बार कुशल पूछने के विषय में निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है—

माता अतिशय मुदित हुई सुन उद्धव का यों आना
फिर फिर पूछा—उद्धव मेरा राजी तो था कान्हा?
सांस मार चुप हुई दगों ने छोड़ी अविरल धारा।
आंखों आगे खड़ा हो गया बाल चरित यह सारा॥[3]

कृष्ण के विरह में व्यथित यशोदा से जब उद्धव मिलते हैं तो वह बार-बार अपने पुत्र की कुशल क्षेम पूछती हैं।

---

[1] जननायक, पृ० २६
[2] माधव माधुरी, पृ० ६६
[3] पुरुषोत्तम, पृ० ८१

दुख के कारण अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ने के उदाहरण सिद्धार्थ और रामस्वयंवर मे मिलते हैं। सिद्धार्थ में सिद्धार्थ के घर से चले जाने की सूचना सुनकर उनकी इसी प्रकार की दशा हुई है—

ज्योंही जाना अवनिपति ने वत्स तो यक्ष टूटा।
भू प ऐसे वे गिर पड़े शुष्क एरंड जैसे॥[1]

रामस्वयंवर में राम के वियोग दुख की कल्पना मात्र से राजा दशरथ की वियोग के कारण इतनी वेदना बढ़ जाती है कि वे चेतना शून्य होकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। कवि ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

भन रघुराज रघुराज को बिरह जानि,
मुख पियराय गयो कोशल भुआल है।
परम कसाला पाय ह्वै गयो बिहाला अति,
गिरिगो सिंहासन ते भूमि भूमिपाल है।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि विवेच्यकाल में उक्त दोनों प्रकार के अनुभावों की अभिव्यंजना बड़ी सफलता के साथ हुई है और वह अपने नवीन रूप में भी आई है।

सचारीभाव

रस की प्रक्रिया में कुछ भाव ऐसे होते हैं जो कुछ क्षण के लिए आते हैं और विलीन हो जाते हैं। इस प्रकार संचरण करने के कारण उनको काव्यशास्त्रियों ने सचारी भाव अथवा व्यभिचारी भावों की संज्ञा दी है। वात्सल्य में सचारी भावों के परिगणन में आचार्य विश्वनाथ ने अनिष्ट की आशंका, हर्ष और गर्व आदि को लिया है।[3] आधुनिक हिंदी काव्य के अध्ययन के पश्चात हमें जो सचारी भाव दृष्टिगत हुये हैं वे निम्नलिखित हैं—चिन्ता आशंका वितर्क हर्ष गर्व, स्मृति स्वप्न दैन्य पश्चात्ताप आवेग और जड़ता आदि। इन्हीं की समीक्षा यहां प्रस्तुत की गई है।

चिन्ता

चिन्ता सचारी भाव की अभिव्यक्ति अनेक स्थलों पर हुई है। अपनी सन्तान के विषय में माता पिता को अत्यन्त साधारण सी बातों की भी चिन्ता हो जाती है। सामान्यत विवेच्यकाल के कवियों द्वारा निम्नलिखित बातों की चिन्ता अभिव्यक्त की गई है—स्वास्थ्य की शिक्षा की सन्तान के दुखी होने की पुत्री के लिये योग्य वर

१ सिद्धार्थ, पृ० २१०
२ रामस्वयंवर, पृ० १७४
३ सचारिणोऽनिष्टशंका हर्ष गर्वादयो मता
—साहित्यदर्पण, पृ० १६६

प्राप्ति की, विवाह की खाने की सुविधा की और पुनर्मिलन की। इनमे से पुनर्मिलन का उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है—

> लगी सोचने मीरा मेरी,
> अनजाने घर मे जायेगी।
> और न जाने कितने दिन,
> पश्चात लौट पीहर आयेगी।[1]

उपर्युक्त पक्तियों में मीरा की माँ के द्वारा मीरा के पति गृह जाने के पश्चात् पुनर्मिलन की चिन्ता अभिव्यक्त की गई है। शेष चिन्ताओ की अभिव्यक्ति इन पुस्तको म हुई है—स्वास्थ्य की (तारक वध)[2] शिक्षा की (स्वर्ण किरण)[3], सन्तान के दुखी होने की (तारक वध)[4],पुत्री के लिये योग्य वर प्राप्ति की (अनघ)[5], विवाह की (शकुन्तला)[6] और खाने की सुविधा की (तारक वध)[7] मे।

अनिष्ट की आशका

स्नेह मे अनिष्ट की आशका बडी होती है। प्रिय के अनिष्ट होने की कल्पना से ही मनोव्यथा बढ जाती है क्योकि कष्ट सदिग्ध रहता है इसलिये इस अनुभति को आशका कहते है अर्थात् कही ऐसा न हो जाये ये भावना मन को उद्वेलित करती है। प्रस्तुत प्रसग में अनेक भाँति के अनिष्टों से आश्रय के आशकित मानस के उद्वेलित होने का वर्णन प्राप्त होता है जसे मार्ग का कष्ट सहन न कर सकने की[8],खाने की[9], धूप आदि लगने की[1] और हिंसक जीवो के पास जाने मेंजीवनके अनिष्ट की आशकाए[11] आदि। आशका का एक बहुत सुन्दर उदाहरण तारक वध मे मिलता है। शकर के गले मे साँपो को लपटे हुए देखकर मना बडी आशकित होती है वह सोचती है कि पार्वती साँप की फुफकार से ही डर जाया करेगी और शकर के पास सदैव सप रहते हैं तो या

१ मीरा पृ० ३२
२ तारक वध पृ० ४१४
३ स्वर्ण किरण, पृ० १२०
४ तारक वध, पृ० ६३ ६४
५ अनघ पृ० ४०
६ शकुन्तला, पृ० ५
७ तारक वध, पृ० १८२
८ विष्णु प्रिया, ८६
९ तारक वध, पृ० १६८
१० एकलव्य, पृ० १५६
११ तारक वध, पृ० १३१

तो वह डर कर मर जायेगी या प्रत्येक क्षण भयभीत होती रहेगी। इस भाव का वर्णन अत्यन्त मार्मिक शब्दों में कवि की लेखनी से इस प्रकार हुआ है —

> सांपों की फुफकार देख कर डर जायेगी बेटी,
> फिर तो हाय बिना मारे ही मर जायेगी बेटी।
> जो न मरेगी तो मरने के भय में होगी प्रतिपल,
> यह संशय सौ सौ मरने की पीड़ा देगा अविचल।[1]

वितर्क

वितर्क संचारी भाव उस स्थल पर होता है जहाँ आश्रय के मन का एक भाव तत्क्षण किसी दूसरे भाव से भी अभिभूत हो जाता है। भावों के आलोड़न प्रलोडन की द्वन्द्वात्मक स्थिति के कारण आश्रय वितर्क की स्थिति को प्राप्त होता है। इसे करूं अथवा इसे करूं यह भाव उस समय आता रहता है। इस प्रकार की स्थिति के मुख्यतः तीन प्रसंग आधुनिक काव्य में मिलते हैं —

१—सिद्धार्थ के महाभिनिष्क्रमण के समय गृहत्याग और राहुल के वात्सल्य के विषय में वितर्क।[2]

२—करुणा के सती होने के समय कर्त्तव्य पालन और पुत्र को प्रेम करने के लिये जीवित रहने की स्थिति का वितर्क।[3]

३—पन्नादाई का अपने पुत्र को उदयसिंह के बदले कत्ल कराने अथवा बचाने का वितर्क।[4]

यह ऊपर कहा जा चुका है कि वितर्क के समय मन की दशा चंचल हो जाती है। निर्णय न कर सकने तक ही वितर्क रहता है। उदाहरणार्थ पन्नादाई की वितर्क पूर्ण स्थिति देखिये—

> कितना विकट दृश्य यह होगा
> सुत को कत्ल कराऊं।
> या आंचल में इसे छिपा कर,
> सारा भेद बताऊं।[5]

हर्ष

अपनी सन्तान के गुण स्वभाव, क्रीड़ा और उन्नति आदि की वृद्धि के साथ आश्रय को हर्ष होता है। वात्सल्य का अपने विषयालम्बों में निष्काम प्रेम की

१ तारक वध पृ० ४१४
२ वासवदत्ता, पृ० ६३
३ चित्तौड़ की चिता पृ १२३
४ पन्नादाई पृ० १०१
५ पन्नादाई, पृ० १०१

भावना रखता है। उसके सुख के साथ सुखी होकर प्रसन्नता का अनुभव करना उसके लिये स्वाभाविक है। हर्ष की अनुभूति वात्सल्य वर्णन के प्रसंग में अनेक स्थलों पर होती है। उदाहरण के लिए 'पार्वती' महाकाव्य में कार्तिकेय के विजयी होकर आने पर शंकर और पार्वती के प्रसन्न होने का जो वर्णन किया गया है उसकी अभिव्यंजना में हर्ष संचारी भाव वर्णित है—

> कर विनत पुत्र को भेंट हर्ष से फूली
> हो उमा स्नेह से गद्गद सुध बुध भूली।
> शंकर प्रसन्न थे प्रणत पुत्र की जय से,
> कैलास धन्य था नव जीवन समुदय से।[1]

गर्व

जिस प्रकार आलम्बन के अभ्युदय और सुखोत्कर्ष के अवसर पर हर्ष होता है उसी प्रकार गर्व की भी अनुभूति आश्रय को होती है। ऐसी अनुभूति के अवसर पर गर्व संचारी भाव की अभिव्यक्ति होती है। इस प्रकार के उदाहरण विवेच्य-काल में कम मिलते हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में पार्वती के तप से लग्न होने पर और उस तप की कीर्ति के फैलने पर माता पिता को हर्ष के साथ गर्व की भी अनुभूति होती है। कवि ने इसकी अभिव्यक्ति करते हुए इस प्रकार लिखा है—

> सुन उमा के कठिन तप की कीर्ति पितु औ मात।
> हर्ष से गर्वित स्मरण करते सुकोमल गात॥[2]

स्मृति

स्मृति संचारी भाव का वर्णन वियोग-वात्सल्य के अन्तर्गत होता है। संयोग सुख से सम्बन्धित सारी बातें स्मृति द्वारा पुनः मस्तिष्क में प्रवेश कर जाती हैं और इससे वियोग-वात्सल्य की अनुभूति और तीव्र होती है। स्मृति के दो रूप आधुनिक काल में मिलते हैं—प्रवास जाने से पहले सन्तान की अतीत की स्मृति और प्रवास में स्थित रहने पर स्मृति। उदाहरण के लिये निम्नोद्धृत पंक्तियाँ देखिए—

> शान्ता का कमनीय वदन देखा किया,
> आँखों में ही उसे बिठा रक्खा सदा।
> कानों द्वारा सुनी तोतली बोलियाँ,
> बार बार बलि गयीं अमृत अवसर सदा॥[3]

इन पंक्तियों में शान्ता के वन जाने के समय वशिष्ठ जी ने रानियों से उसके अतीत की चर्चा का कथन किया है। यहाँ स्मृति संचारी भाव है। प्रवास में स्थित

---

१ पार्वती, पृ० ३८६
२ पार्वती, पृ० १४४
३ तारकवध, पृ० १५२

होने पर वियोग वात्सल्य में स्मृति का वर्णन निम्नलिखित उदाहरण में और अधिक स्पष्टता से परिलक्षित होता है—

तात मार चुप हुई दृगों ने छोड़ी अविरल धारा।
मानों बाण पड़ा हो गया वास चकित यह सारा॥[1]

स्वप्न

स्वप्न संचारी भाव का उदाहरण एकलव्य महाकाव्य में मिलता है। एकलव्य के वियोग में व्यथित उसकी माता को कभी कभी ऐसा लगने लगता है कि जैसे उसका पुत्र आ गया है और मुस्कराकर कुछ कह रहा है परन्तु वह जैसे ही उसे देखने लगती है तो उसे सूनापन ही दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार की भावनाओं के व्यक्तीकरण में स्वप्न संचारी भाव है—

कभी कभी ऐसा लगता है
वह आया कुछ कह मुस्कराया।
चौंक उसे जब लगी देखने,
सूनापन सब ओर समाया।[2]

दैन्य

ओजस्विता के अभाव के प्रसंग में दैन्य संचारीभाव की अभिव्यक्ति होती है। वात्सल्य के वर्णन में भी दैन्य का उदाहरण मिल जाता है। इसकी अभिव्यक्ति 'जय भारत' काव्य में द्रष्टव्य है। कुन्ती और कर्ण के प्रसंग में जब कुन्ती कर्ण को उसके जन्म का रहस्य भी बतला देती हैं परन्तु फिर भी उसे अपने पक्ष में मिलाने के काम में असमर्थ होती है, उस समय वह कर्ण का सूत पत्नी राधा के प्रति मातृ प्रेम देखकर दीनता से भरे वचन कहती है। उन शब्दों में दैन्य संचारी भाव की अभिव्यक्ति है—

जैसे तू जाने राधा पर प्रीति प्रकट करना मेरी।
मैं दुखिनी देवकी सी हूं वहीं यशोदा माँ तेरी॥[3]

आवेग

घबराहट को आवेग कहते हैं। वात्सल्य वर्णन में यह भाव वियोग के समय उत्पन्न होता है। तारक वध में इसका उदाहरण मिलता है। जिस समय शान्ता वन को जा रही है उस समय की उनकी दशा के वर्णन में आवेग संचारी भाव की अभिव्यक्ति हुई है—

---

१ पुरुषोत्तम, पृ० ८१
२ एकलव्य, स० १४८
३ जय भारत, पृ० ३३४

नागिन सी हो विकल रानियाँ सिर धुनती थीं।
धीरज धरतो और कभी धीरज खोती थीं॥[1]

जडता—

अनिष्ट के दर्शन अथवा श्रवण से उत्पन्न निश्चल्य विमूढता को 'जडता' कहते हैं। प्राणशून्य सा या जडवत होने जैसा जहाँ वर्णन होता है वहाँ यही संचारी भाव होता है। विवच्य वात्सल्य वर्णन मे इसकी अभिव्यक्ति माता के वियोग के समय हुई है। उदाहरण के लिये निम्नलिखित उद्धरण ध्यानावगम्य है—

मार गया लकवा सा तीनों को न बोल पायीं वे।
प्राण शून्य पाषाण मूर्ति सी होना दिखलायीं वे।[2]

× × ×

इसी प्रकार शंकर के साथ पार्वती के विवाह के प्रसंग में मेना की दशा द्रष्टव्य है—

अचल शिला सी हिली न डोली निर्निमेष थे नैन,
लकवा—हत मानो रसना थी कहा न कोई बैन।[3]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि विभाव और अनुभावों की भाँति संचारी भावों का वर्णन भी विवच्यकाल में विस्तार को प्राप्त हुआ है। वात्सल्य वर्णन के विस्तार और वैविध्य को देखकर ऐसा होना स्वाभाविक ही है।

आधुनिक हिन्दी-काव्य मे वात्सल्य के विविध रूपों की अभिव्यक्ति

वात्सल्य भाव

जिस स्थान पर उच्च कोटि की रसानुभूति नहीं होती वहाँ पर भाव-दशा होती है। वात्सल्य के शास्त्रीय विवेचनान्तर्गत यह स्पष्ट किया गया है कि वात्सल्य में कहीं भाव दशा की अनुभूति होती है तो कहीं रस दशा की। आधुनिक हिन्दी काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य भी दोनों कोटि का मिलता है। वात्सल्य भाव का वर्णन अपेक्षाकृत रस वर्णन से अधिक हुआ है। उसका कारण यह है कि छोटे बड़े सभी कवियों की रचनाओं में अभिव्यक्त वात्सल्य प्रस्तुत अध्ययन का विषय रहा है। उसमें से बहुत से प्रसंग अत्यन्त साधारण हैं। वे सब भाव के अन्तर्गत ही समाविष्ट किये जाने चाहिए। इतना ही नहीं प्रसिद्ध कवियों की अनुभूति भी सर्वत्र समान रूप से नहीं होती। उनके वर्णन कहीं रसनीयता की दृष्टि से अत्यन्त उच्च होते हैं

---

१ तारक वध पृ०, २०१
२ तारक वध, पृ० १४०
३ तारक वध पृ० ८६

तो वही बिल्कुल साधारण। आधुनिक काल के सब्य प्रतिष्ठ कवि मैथिलीशरण गुप्त की कतिपय पंक्तियाँ हमारे कथन की पुष्टि करती हैं। उदाहरण के लिए उनका निम्नलिखित उद्धरण लीजिए—

जिसे गोद में पाया है
जो उर का उजियाला है।
यत्न सुमित्र घसा वहो,
जहाँ हिंस्र पशु पूर्ण मही।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में राम के वन जाते समय कौशल्या के उद्गार हैं। पुत्र के वियोग की कल्पना करके वे दुखित होती हैं और वन में हिंसक पशुओं की सम्भावना से आशंकित भी होती हैं। परन्तु इन पंक्तियों में उनके उद्गार भाव दशा के ही हैं। वे रस दशा तक नहीं पहुंच पाये हैं।

वात्सल्य भाव के वर्णन दोनों प्रकार के हैं—संयोग वात्सल्य भाव और वियोग वात्सल्य भाव। संयोग वात्सल्य भाव का वर्णन प्रबन्ध काव्य और मुक्तक दोनों में मिलता है। परन्तु वियोग वात्सल्य भाव का वर्णन प्रबन्ध काव्यों में ही हुआ।

संयोग वात्सल्य भाव का उदाहरण

मेरी मुनियाँ चन्द्र हार है
उससे शोभा मेरी।
उसके रहते पास न आती
मेरे रात अंधेरी।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में माता द्वारा अपनी पुत्री के सामीप्य सुख का कथन करके संयोग वात्सल्य की अभिव्यक्ति की गई है परन्तु वह उच्च कोटि की रसानुभति नहीं कराती अतः यहाँ पर संयोग वात्सल्य भाव की व्यंजना है।

वियोग वात्सल्य भाव का उदाहरण

गूंजता करुणा प्रपूरित था विदा का गीत,
परिजनों की कल्पना में भावना में प्रीत।
जा रही दुहिता हमारी आज अपने धाम,
पवन तुम रहना सुशीतल शुचि नहीं उद्दाम।[3]

उपरिलिखित उद्धरण में मीरा के विवाह के समय परिजनों की पुत्री के

---

१ साकेत, पृ० १०८
२ पालना पृ० ५३
३ मीरा पृ० ८०

वियोग की दशा का वर्णन है। परन्तु उसके उद्‌गारों का ऐसा वर्णन नहीं है जो मर्म को छू ले। अतः यहाँ पर वियोग वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति है।

वात्सल्य भाव के विवेचन के सम्बन्ध में यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि इस प्रकार की रचनाएं आधुनिक युग में अधिक मात्रा में हुई हैं। और इसका कारण यह है कि कवियों का दृष्टिकोण इस वैज्ञानिक युग में विचार प्रधान अधिक है। इससे भावों की वह गहराई जो रस दशा की अनुभूति कराये कम मात्रा में ही मिलती है।

वात्सल्य रस

जिस प्रकार वात्सल्य भाव के संयोग और वियोग दोनों दशाओं के वर्णन मिलते हैं उसी प्रकार वात्सल्य रस के भी वर्णन मिलते हैं।

संयोग

जान एक ओस राम भोर ही ते रोय
पय करत न पान राई लोन को उतारी है।
वामदेव औ वशिष्ठ तुरत बोलायो औन,
हाथ हू देवायो नारी मन्त्र पढ़ि भारी है।
लै लै हलराय रानवाय त्यों देखाय चित्र,
अमित खिलौनन खिलाय देत तारी है।
रघुराज पालने झुलाय बजवावें बाज
जननी अनेकन जतन करि हारी है॥[1]

इस छन्द में राम के रोने और पयपान न करने पर वात्सल्यमयी माता के हृदय की सुन्दर व्यंजना हुई है। वह पुत्र को सुखी देखने के लिए कभी गुरुजन का हाथ रखवाती और कभी बहलाने का प्रयत्न करती हैं। हलराना, बहलाना खिलौने से खिलाना ताली देना और पालना झुलाना आदि अनेक अनुभावों की अभिव्यक्ति तथा आशंका संचारी भाव की व्यंजना होने से यहाँ संयोग वात्सल्य की पूर्ण निष्पत्ति है।

वियोग

संयोग वात्सल्य की भाँति वियोग वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति का उदाहरण भी द्रष्टव्य है—

माता अतिशय मुदित हुई सुन उद्धव का यों आना।
फिरि फिरि पूछा—"उद्धव मेरा राजो तो था कान्हा?"
सांस मार चुप हुई, दृगों ने छोड़ी अविरल धारा।
आखों आगे खड़ा हो गया बाल चरित यह सारा॥[2]

---

१ रामस्वयंवर पृ० १२१
२ पुरुषोत्तम पृ० ८१

इन पंक्तियों में तुलसीराम शर्मा दिनेश ने पुरुषोत्तम महाकाव्य में उद्धव के आगमन पर यशोदा की विरह व्यथित दशा का वर्णन किया है। रस की पूर्ण अनुभूति कराने वाली ये पंक्तियाँ वियोग वात्सल्य रस का उत्कृष्ट उदाहरण है।

आधुनिक हिन्दी काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य के प्रसंग में यह भी अवलोकनीय है कि वह शुद्ध और मिश्रित दोनों रूपों में अभिव्यक्त हुआ है। जहाँ पर किसी अन्य भाव या रस के साथ वात्सल्य का मिश्रण नहीं है वहाँ पर वह शुद्ध वात्सल्य रस है जैसा कि उपर्युक्त उद्धरण है। ये दोनों संयोग और वियोग के शुद्ध वात्सल्य रस के उदाहरण हैं। परन्तु जिस स्थान पर वात्सल्य के साथ हास या शृंगार आदि रसों का भी व्याभिश्रण होता है वहाँ पर वह मिश्रित वात्सल्य रस होता है। आधुनिक काल में एकाध स्थल पर यशोधरा में शृंगार के साथ और अनेक स्थलों पर हास्य के साथ वात्सल्य रस का मिश्रण हुआ है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण द्रष्टव्य है—

> कहत काह में गयेऊ डेरायी
> लुकेउ विकल ऊखल तल जायी।
> सुनि शिशु वचन हँसे नर नारी,
> गवने गृह विस्मय हिय धारी।[1]

इस स्थान पर कृष्ण के बुद्धि चातुर्य को देखकर वात्सल्य के साथ हास्य की भी अनुभूति होती है अतः यहाँ पर मिश्रित वात्सल्य रस है।

वत्सल-भक्ति रस

भक्तिकाल के कवियों ने वात्सल्य के साथ वत्सल भक्ति का भी निरूपण किया है। उस परम्परा के कुछ कवि आधुनिक काल में भी हुये हैं। इसीलिये उनकी कविता में भी वत्सल भक्ति रस का निरूपण हुआ है। हाँ यह बात अवश्य है कि इन कवियों ने वत्सल भक्ति वर्णन प्रसंगतः किया है और वह भी इसलिए क्योंकि राम और कृष्ण के भक्तिकालीन कवियों के वर्णन से इन्होंने प्रभाव ग्रहण किया है। वत्सल भक्ति का न्यूनाधिक अंश में वर्णन करने वाले आधुनिक काल के निम्नांकित ग्रन्थ हैं—भारतेन्दु ग्रंथावली माधव-माधुरी कृष्णायन और रामस्वयंवर। इनमें से प्रथम तीनों में कृष्णभक्ति का और रामस्वयंवर में रामभक्ति का यत्र तत्र पुट है।

संक्षिप्त अंश में अभिव्यक्त वत्सल भक्तिरस भी दोनों ही प्रकार का मिलता है—शुद्ध वात्सल्य भक्ति रस और मिश्रित वत्सल भक्ति रस। इन दोनों के उदाहरण निम्नांकित पंक्तियों में द्रष्टव्य हैं—

शुद्ध वत्सल भक्ति रस

> १ सुनत श्याम यशुमति वचन कीन्ह वदन विस्तार।
> विकल मातु निशु मुख लखेउ, कोटिन विश्व प्रसार॥[2]

---

१ कृष्णायन पृ० ४७
२ कृष्णायन पृ० ४१

\+ \+ \+

२ जासु मन को मन तें विश्व चलत नहिं जाय।
ते नयननि मे कौसला काजर दियो लगाय ॥[1]

उपर्युक्त उद्धरणों में क्रमशः कृष्ण के और राम के ईश्वरत्व का स्पष्ट उल्लेख है। अतः ईश्वर को वत्स रूप में लेकर भावाभिव्यक्ति करने से यहाँ वत्सल भक्तिरस है। फिर इस भाव के साथ अन्य किसी भाव का मिश्रण न होने से यहाँ शुद्ध वत्सल भक्ति है।

मिश्रित वत्सल भक्तिरस

वत्सल भक्ति भाव के कुछ प्रसंग ऐसे मिलते हैं जहाँ वर्णन तो शुद्ध वात्सल्य का होता है परन्तु अन्त में भक्ति का पुट भी कवि भक्ति भावोद्रेक के कारण समय समय पर लगाता चलता है। ऐसे स्थलों पर वात्सल्य रस और भक्ति रस दोनों की साथ साथ न्यूनाधिक अंश में अनुभूति होने पर मिश्रित वत्सल भक्ति रस अथवा वात्सल्य रस मिश्रित वत्सल भक्तिरस होता है। इस प्रकार का उदाहरण निम्न लिखित है—

रुन भुनुक्त रुन चलत जानुकर फिरि फिरि बहु अंग नया,
गोपी गन सुनि सुनि सब आई देखत शिशु सुख पया।
बाल विनोद करत अंगना हरि गोपिन प्रति बढ़या,
रहसि विहसि चितवत इत उत कोइ कोइ छन दोउ लपटया ॥[2]

इस उद्धरण मे कृष्ण की बाल क्रीडा के प्रसंग में उनका हरि करके स्मरण करने से भक्ति का पुट भी लग गया है। अतः यहाँ भक्ति के साथ वात्सल्य का मिश्रण होने से वत्सल भक्ति रस या वात्सल्य रस मिश्रित भक्ति रस समझना चाहिए। इस सम्बन्ध में यह अवेक्षणीय है कि विवेच्यकाल में वत्सल भक्ति का वर्णन प्रासंगिक रूप से ही हुआ है। अधिकांश कवियों की रचनाएं इससे एकदम मुक्त हैं।

---

१ रामस्वयंवर पृ० ८६
२ माधव-माधुरी पृ० ६५

पंचम अध्याय

तुलनात्मक अध्ययन

प्राचीन हिन्दी-काव्य एवं आधुनिक हिन्दी-काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य-रस की तुलनात्मक समीक्षा

द्वितीय और तृतीय अध्याय के अन्तर्गत प्राचीन हिन्दी काव्य और आधुनिक हिन्दी काव्य के अनेक कवियों के वर्णन का स्वरूप परिचय दिया जा चुका है। इनके अध्ययन से प्रतीत होता है कि प्राचीन और अर्वाचीन कवियों की वात्सल्याभिव्यंजना कुछ अर्थों में समान और कुछ अर्थों में एक दूसरे से भिन्न है। इसलिये यह अपेक्षित है कि इन दोनों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय। इस अध्याय में यही प्रयत्न किया जा रहा है।

समान धर्म

बाल-स्वभाव का मनोवैज्ञानिक चित्रण

वात्सल्य वर्णन करने वाले कवियों की यह एक महती विशेषता रही है कि उन्होंने बाल-स्वभाव का चित्रण करने में शिशु की अन्तः प्रकृति के साथ सामञ्जस्य स्थापित करके उनकी स्वाभाविक क्रियाओं का ऐसा हृदयग्राही अंकन किया है कि उनके नेत्रों के समक्ष शिशु स्वभाव का साक्षात् चित्र उपस्थित हो जाता है। इस प्रकार के वर्णन में कवि को तभी सफलता मिल सकती है जबकि उसकी दृष्टि बाल मनोविज्ञान से भली भाँति परिचित हो। कहना न होगा कि प्राचीन और अर्वाचीन दोनों धारा के कवियों ने इस तथ्य का बड़ी सावधानी के साथ अपनी कृतियों में निर्वाह किया है। कुछ उदाहरण इस कथन की पुष्टि के लिए पर्याप्त होंगे। सूरदास के कृष्ण चन्द्र खिलौने के लिए हठ कर रहे हैं। यशोदा उन्हें बहलाने के लिए एक युक्ति निकाल लेती है। यह बात मनोविज्ञानाश्रित तथ्य है कि बच्चा मात्र परिवर्तन में अपनी पिछली बात को भूल जाता है। बाल-स्वभाव के इस गुण का परिचय सूर के निम्नलिखित उदाहरण में मिलता है—

> आप आउ बाल सुनि मेरी बलन्चहि न जनहौं।
> हरि समुझावति कहति जसोमति नई दुलहिया व ह्वौं॥

तेरी सों मेरी सुन मया अबही वियाहन जहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती गीत सुमगल गहौं॥[1]

आधुनिक काल म भी बाल-स्वभाव के मनोवैज्ञानिक चित्र कवियो ने प्रस्तुत किय हैं। इस प्रकार का एक उदाहरण महाराज रघुराजसिंह के काव्य से उद्धत किया जाता है। एक बार राम नाराज हो गये। माता दूध पिलाने के लिए अनेक यत्न करके हार गई परन्तु दूध नही पीया। उस समय एक चतुर स्त्री ने सुनहरी कपड का कल्पित हाथी बनाकर उनको डरा दिया कि देखो सोने का हाथी आया घर को भागा जाता तम जल्दी दूध पीलो। बच्चे का यह स्वभाव है कि सहसा चक पकाहट के साथ बात कहने पर वह निर्देश के प्रभाव म शीघ्र आ जाता है। राम एकदम माता की गोदी म छिप जाते हैं और दूध पीने लगते हैं। बाल-स्वभाव का इस प्रकार का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक वर्णन कवि की निम्नलिखित पक्तियो म किया गया है—

जब ना रगाने राम रमणी चतुर कोई
आतु ही कनक पट वारण बनायो है।
हे है लाल हाथी एक आयो भागो भौन आई
करो पय पान अस कहि डरवायो है।
झर्भारि भगाने मातु अक मे लुकाने जाइ
किये पय पान रघुराज हर्षि गायो है॥[2]

इसी प्रकार और भी बाल मनोविज्ञान का परिचय देने वाले बहुत स उदाहरण प्राचीन और आधुनिक कवियो की कृतियो म समान रूप स अभिव्यक्त हुए हैं जसे कि चन्द्रमा क लिय हठ करना मुह को खाद्य पदार्थ से लपपथ करना, अपने साथ खाने वाले के मुख मे स्वय खिलाना खेल को त्याग कर न आना जिज्ञासा ईर्ष्या और स्पर्धा आदि के भाव रखना और नय नये अनुभव करने की रुचि प्रदर्शित करना आदि भाव दोना काल के कवियो की रचनाओ म बडी स्वाभा विकता और मनोवैज्ञानिकता के साथ वर्णित हुये हैं।

वात्सल्याभिव्यक्ति में क्रमबद्धता

सयोग वात्सल्य की एक ऐसी विशेषता है जो उसे शृगार से भिन्न बना देती है। शृगार के सयोग म यह बात नही है उसम एक द्वयक्ता है। पर वात्सल्य क सयोग मे उज्वलता और मोहकता बनी रहती है। इसीलिय सयोग वात्सल्य का वर्णन सयोग शृगार वर्णन की अपेक्षा उज्ज्वल और मधुर है।

---

१ सूरसागर पद ८११

२ रामस्वयवर पृ० १२१

शिशु के संयोग सुख का वर्णन दोनो कालो के कवियो ने किया है। संयोग सुख के वर्णन मे सूर तुलसी आदि कवियो ने जन्म से लेकर आलम्बन के वयस्क होने का वर्णन शृंखला बद्ध किया है। अर्थात पहले छोटे शिशु का वर्णन फिर उससे बडे होने पर बाल रूप का वर्णन फिर किशोर रूप का वर्णन। सूर की मुक्तक पदो मे रचना होते हुये भी उसमे वही क्रम मिलता है। उसी के अनुसार उसकी क्रीडा और चेष्टाए आदि वर्णित की हैं। उदाहरण के लिये यदि दूध के दांत दिखलाई देते समय का वर्णन है तो फिर वैसे ही हसना किलकारी मारना आदि चेष्टाए व्यक्त की है। जब बडे हो जाते हैं पग धावन करने लगते है तब फिर शिशु रूप का वर्णन नही है। ऐसा होता तो क्रमबद्धता न रहती और स्वाभाविकता भी जाती रहती। इसी प्रकार का वर्णन क्रमबद्धता के साथ ही आधुनिक काल के कवियो ने किया है। कही कही पर यदि गोद मे खिलाने और कुछ अन्य क्रीडाए करने का सक्षिप्त ही वर्णन है तो वहां भी क्रम का निर्वाह है। उदाहरण के लिये रावण महाकाव्य मे मेघनाद के जन्म के वर्णन मे कवि ने पहले शिशु के अत्यन्त सुकुमार रूप का वर्णन किया—

> नील सरोरुह सो सिसु को
> वर आनन देख्यो मदोदरि रानी।[1]

इसके पश्चात् जब कुछ बडा हो गया तो उसके दूध के दांत निकल आये हैं और वह कुछ चेष्टाए भी करने लगा है। छोटे शिशु रूप से कुछ बडे होने का वर्णन होने से इसमे क्रमबद्धता है—

> दूध के दांत विलास कवौं।
> हंसि के किलकारिन को क्यों मारे॥[2]

इसी प्रकार का क्रम प्राचीन और नवीन सभी कवियो के वात्सल्य-वर्णन मे मिलता है और उससे वर्णन की स्वाभाविकता मे सर्वत्र वृद्धि हुई है।

प्रबन्ध काव्य और मुक्तक दोनों में वात्सल्य वर्णन

प्राचीन हिन्दी के कवियो ने प्रबन्ध काव्य और मुक्तक-काव्य दोनो मे वात्सल्य का वर्णन किया है। पद्मावती चित्रावली, रामचरितमानस, लाडसागर और व्रज विलास आदि प्रबन्ध काव्यो मे तथा सूरसागर कवितावली, गीतावली, परमानन्द सागर और घनानन्द पदावली आदि मुक्तक काव्यो मे वात्सल्य का वर्णन हुआ है। इसी प्रकार आधुनिक काल मे भी दोनो प्रकार के काव्यो मे वात्सल्य वर्णन हुआ है। प्रबन्ध काव्यो मे रामस्वयवर प्रियप्रवास अगराज वर्द्धमान सिद्धार्थ, कृष्णायन, एकलव्य दैत्यवंश रावण और दवाचन आदि बहुत से काव्य ग्रंथ हैं और मुक्तक काव्यो मे पद्य प्रसून पद्य प्रमोद पाग चौपदे, आरसी पारना पल्लव, पल्लविनी,

---

1 रावण महाकाव्य पृ० ६४
2 रावण महाकाव्य पृ० ६५

स्वर्णकिरण आधुनिक कवि गोपालशरण सिंह आदि पुस्तकें तथा पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाएं हैं। अतः प्रबन्ध काव्य और मुक्तक दोनों में वात्सल्य का वर्णन दोनों कालों के कवियों ने किया है।

वात्सल्य के विविध रूपों की अभिव्यक्ति

वात्सल्य की दो दशाएं होती हैं—संयोग और वियोग। दोनों दशाओं का वर्णन दोनों कालों के कवियों ने किया है। इसके साथ साथ वात्सल्य भाव, वात्सल्य रस और वत्सल भक्ति रस की अभिव्यक्ति भी दोनों कालों में हुई है। जिस प्रकार भक्त कवियों के काव्य में भक्ति भाव का प्राधान्य होते हुए भी शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति हुई है उसी प्रकार आधुनिक काल में शुद्ध वात्सल्य रसाभिव्यक्ति का प्राधान्य होते हुए भी वत्सल भक्ति की व्यंजना की गई है। और वह इसलिए सम्भव है, क्योंकि कुछ व्यक्ति आधुनिक काल में भी भक्ति परम्परा के हुए हैं। उदाहरण के लिए महाराज रघुराजसिंह रामभक्ति परम्परा के भक्त हैं। उनके काव्य में शुद्ध वात्सल्य रस वर्णन के होते हुए भी कहीं-कहीं राम के ईश्वरत्व का स्पष्ट शब्दों में उल्लेख हुआ है जैसा कि अधोलिखित सवैये में उनका वत्सल भक्ति भाव प्रदर्शित किया गया है—

> जाको सदै मन चन्द्रमा चाह सुनन हैं सुरज बाहु सुरेशू।
> जो करता भरता हरता अज मानत लोकप जासु दिनेशू।
> सो बरण रघुराज को भाग्य हूरो प्रगटे जेहि आइ निवेशू।
> अगन में शनि सूर देखावत पानि में सूपन ल अवधेशू॥[1]

वत्सल भक्ति के और भी इस प्रकार के उदाहरण आधुनिक काल में मिल जाते हैं। इसी प्रकार वात्सल्य भाव और वात्सल्य रस (संयोग व वियोग का) दोनों की अभिव्यक्ति दोनों काल के कवियों ने की है।

विभिन्नता

जिस प्रकार प्राचीन हिन्दी-काव्य में अभिव्यक्त वात्सल्य रस और आधुनिक हिन्दी-काव्य में वर्णित वात्सल्य रस की कुछ समताओं का विवेचन किया गया है उसी प्रकार दोनों की पारस्परिक तुलना से कुछ विषमताएं भी निरूपित होती हैं। और उनका कारण यह है कि कवि और युग एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। आधुनिक काल के वातावरण और सामाजिक मान्यता आदि का प्रभाव कवियों की रचनाओं पर भी पड़ा है। इससे जहाँ वात्सल्य-वर्णन इस काल में प्रचुर है वहाँ इनकी एतद्विषयक अभिव्यक्ति की कुछ विशेषताएं भी हैं। ये प्रायः प्राचीन कवियों के काव्य में उल्लिखित नहीं मिलती। उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

---

१ रामस्वयंवर, पृ० ६८

वत्सल भक्ति और शुद्ध वात्सल्याभिव्यक्ति

हिन्दी-काव्य म वात्सल्य की अभिव्यक्ति की एक शृखला मिलती है। प्राचीन हिन्दी काव्य से ही इसका प्रारम्भ होता है। इस वर्णन की दो प्रमुख धाराए हैं। प्रथम तो वह धारा है जिसके अतगत अन्य प्रसगो के वर्णन के साथ म वात्सल्य वर्णन भी आ गया है। इस प्रकार की वात्सल्याभिव्यक्ति अत्य सक्षेप म ही हुई है क्योकि उसका वर्णन प्रासगिक रूप स हुआ है। जसे चन्दवरदाई जायसी उसमान आदि कवियो ने अपनी कृतियो म किया है। दूसरी धारा उस प्रकार के वात्सल्य वर्णन की है जिसका वर्णन प्रचुर मात्रा म हुआ है और इस प्रकार का वर्णन करना कवियो का लक्ष्य रहा है। ऐसा वर्णन सूर तुलसी परमानन्ददास और चाचा हित वृन्दावनदास आदि कवियो की काव्य कृतियो म प्राप्त होता है। परन्तु इस वर्णन की प्रमुख विशेषता यह है कि यह वर्णन भगवान का वत्स रूप म लेकर किया गया है इससे उसके साथ भक्ति का पुट है। दूसरे शब्दो म हम या कह सकते हैं कि प्राचीन काल मे जो वात्सल्य वर्णन प्रचुर मात्रा म हुआ है वह भक्त कवियो द्वारा हुआ है और उसका कारण यह है कि भक्ति के पाँच विशिष्ट भावो म से वात्सल्य भी एक है। अत भक्त कवियो ने वात्सल्य के माध्यम से अपने भक्ति पूर्ण उदगारो को व्यक्त किया है। य व्यक्ति भक्त होने के साथ साथ प्रत्युत्पन्नमति भी थे इसस इनके वर्णन म विस्तार मार्मिकता और सरसता है। किसी किसी कवि की रचना में तो वात्सल्य रस अगीरस के रूप म वर्णित हुआ है जसे कि चाचा हितवृन्दावनदास का लाडसागर है।

आधुनिक हिन्दी-काव्य म भी प्रारम्भ के कवियो—रघुराजसिंह और भारतेन्दु आदि की रचनाओ म प्राचीन परम्परा के भक्त कवियो की भाँति वात्सल्य के साथ भक्ति का पुट है। परन्तु आगे चलकर राम और कृष्ण आदि के प्रति भी शुद्ध वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की है। फलत प्राचीन काल के कवियो की रचना म जसे वत्सल भक्ति की रचनाओ का प्राचुर्य है उसी प्रकार आधुनिक काल के काव्य म शुद्ध वात्सल्य रस की प्रचुरता है। सारांश यह है कि भक्त कवियो ने वात्सल्य रस की महिमा बढाई है और आधुनिक काल के कवियो न अपनी वात्सल्याभिव्यक्ति को भक्ति के आरोप स पृथक करके उस और भी अधिक लौकिक बना लिया है। उदाहरण के लिए तुलसीराम शर्मा मथिलीशरण गुप्त आदि न रचनाओ के प्रसग म भी लौकिक वात्सल्य का वर्णन किया है।

मध्यकालीन साहित्य की प्रतिक्रिया

मध्यकाल के कवियो की सौन्दर्यानुभूति नारी पर ही केन्द्रित रही। नारी के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की मात्रा पराकाष्ठा को पहुच गई तब द्विवेदी युग म उसकी प्रतिक्रिया हुई। तब नारी के सौन्दर्य की अपेक्षा बालक के सौन्दर्य ने कवियो को अधिक प्रभावित किया। बालक का रूप निश्छल अकृत्रिम और अप्रतिम होता है।

उसका प्रेम करना निष्काम प्रेम है। अतः कवियों को बालक को विषयालम्बन बना कर अपनी मनोभावाभिव्यक्ति का एक नया स्थल मिल गया। इसलिए वात्सल्य-वर्णन की प्रचुरता आधुनिक हिन्दी काव्य में स्पष्ट परिलक्षित होती है।

राष्ट्रीयता

बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय भावनाएं चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुई। देश प्रेम और देशोद्धार की भावनाओं का सर्वतोव्याप्त प्रसार होने लगा। देश के बालकों को देशोद्धार का सहायक मानकर उनके प्रति सजग भाव सजग हो गए। बालकों को भावी रूप में देखना और उनके विषय में उच्चाभिलाषाएं करना व्यक्तियों का स्वभाव बन गया। इसी प्रेरणा से प्रेरित होकर आधुनिक काल के कवियों ने बाल-वर्णन किया। बाल वर्णन के साथ-साथ राष्ट्रीय विचारों की अभिव्यक्ति में उपर्युक्त तथ्य मूल रूप से निहित रहा है। बाल-वर्णन के साथ साथ राष्ट्रीय विचारों की अभिव्यक्ति इसलिए हुई है और यह इस युग के वात्सल्य-वर्णन की एक महती विशेषता है। प्राचीन कवियों के सामने ऐसी कोई समस्या नहीं थी। अतः उनके काव्य में राष्ट्रीय विचारों को कोई स्थान नहीं मिला। आधुनिक काल में तो आशीर्वाद तक देने में राष्ट्रीयता का भान होता है। जैसे—

> चिरजीव हे वत्स स्वप्न निज,
> शीघ्र सामने सत्य करो।
> भारत मा के सूने घर में,
> पुनः विभव आह्लाद भरो।[1]

इसी प्रकार के और भी बहुत से राष्ट्रीय विचारों की अभिव्यंजना इस काल के कवियों का वैयक्तिक वैशिष्ट्य है।

सामाजिकता

प्राचीन हिन्दी काव्य में जो वात्सल्य का वर्णन हुआ है उससे समाज का आदर्श चित्र ही सामने आया है। आधुनिक काल के कवियों ने वात्सल्य के साथ समाज की यथार्थ दशा का भी चित्रण किया है। इसलिए यथार्थतः समाज की दयनीय दुरवस्था से पीड़ित बच्चों के वर्णन को इन कवियों की रचनाओं में प्रश्रय मिला है। देश के बच्चों की दीनता का प्रश्न पहले है और उनको स्नेह करने का बाद में। यही काव्य में भी अभिव्यक्त हुआ है। इस प्रकार के वर्णन का एक उदाहरण हमारे उपर्युक्त कथन की पुष्टि में प्रस्तुत किया जाता है—

> क्या? तुम कहते हो—
> ये बच्चे जो पल रहे हैं धरा गोद में
> नगरों में, ग्रामों में, मांओं की गोदी में।

---

१ छत्रमाल, पृ० २१६

> उनमे कितन फटे पुरान वस्त्र पहनत,
> और तरसते कुछ बड़ो को अन्न मात्र को।[1]

पत जी ने भी ग्राम्य कविता म यही ग्राम्य की दीन हीन अवस्था का ऐसा चित्र दिया है।

प्रसार

वात्सल्य वर्णन की परम्परा पर दृष्टिपात करन से यह विदित होता है कि सस्कृत साहित्य से या सत्य का वर्णन किसी न किसी रूप म होता आया है। परन्तु वह इतना कम रहा है कि अधिकाश विद्वाना न उस रस न मानकर भाव मात्र की सज्ञा ही दी है। सूर आदि हिन्दी के भक्ता न इस वर्णन को अपन काव्य म विस्तार क साथ किया। उसके पश्चात् वात्सल्य-वर्णन विराम सा प्राप्त हो गया। आधुनिक काल म उसका पूर्णत विकसित रूप मिलता है। उसका कारण यह है कि लोगो का ध्यान बच्चो की ओर गया। वात्सल्य म आचार प्रधान प्रकृति क व्यक्ति भी सौन्दर्य का दर्शन कर सकत हैं शृगार म नहीं। समाज सुधार की प्रवृत्ति के फलस्वरूप शृगार क स्थान पर वात्सल्य आया। शिशु के सौन्दर्य की अनुभिमता ने उसे इस युग म शृगार से अधिक प्रिय बना दिया। शृगार की साक्षात मूर्ति परम सुन्दर नारी भी शिशु सौन्दर्य पर मुग्ध होती रही है। इस युग म वात्सल्य की रचना करने वाला की सख्या पिछले कवियो से बहुत अधिक है। गत अध्यायो के विवेचन से यह बात भली भाँति स्पष्ट हो चुकी है।

विषयालम्बनो की नवीनता

हिन्दी के प्राचीन काल के कवियो न वात्सल्य के विषयालम्बन देवता या प्रख्यात पुरुष रखे हैं। आधुनिक काल म समय और वातावरण के अनुसार उनम परिवर्तन होना प्रारम्भ हो गया। देवता और प्रख्यात व्यक्तियो को छोडकर साधारण पात्र भी वात्सल्य के विषयालम्बन बने। इससे भी अधिक प्रभावपरक बात यह है कि कवियो ने उन व्यक्तियो को भी वात्सल्य जसे निश्छल और निष्काम प्रम का पात्र बनाया है जो अब तक घृणा और क्रोध के पात्र रहे हैं। इस प्रकार आलम्बन दानव हैं। मानवो को विषयालम्बन बनाने का वर्णन ख्यात इन कवियो ने देशव्यापी अछूतोद्धार की भावनाओं से प्रेरित होकर किया है। दीन दुखी निधन असभ्य शूद्र आदि के प्रति समान रूप से भावाभिव्यक्ति करना आधुनिक काल की ही विशेषता है जिससे प्राचीन हिन्दी के वात्सल्य वर्णन करने वाले कवि सवथा असम्पृक्त रहे ह।

दूसरी बात यह है कि अपने पुत्र और पुत्री को तो वात्सल्य का आलम्बन बनाया ही गया है पर साथ में ही भतीजा भतीजी अथवा पौत्र प्रपौत्री शिष्य जन साधारण और अनाथ बच्चो के प्रति भी उसी प्रकार के भावो की अभिव्यक्ति

---

[1] धरती और स्वर्ग पृ० ८५

की गई है। वात्सल्य के विविध विषयालम्बनों का प्रसार जितना आधुनिक काल के कवियों ने किया है उतना प्राचीन कवियों ने नहीं। हाँ तुलसीदास ने अपने काव्य में इस प्रकार विषयालम्बना का क्षेत्र विस्तृत किया है परन्तु सम्बन्धी तथा असम्बन्धी इतने प्रकार के आलम्बन उनके काव्य में भी नहीं मिलते। भगवान का अपने भक्तों के प्रति वात्सल्य उनकी निजी विशेषता है इस प्रकार का वर्णन तुलसी के पश्चात् और किसी ने भी नहीं किया। आधुनिक काल में उसका प्रश्न और भी दूर है क्यों कि यहाँ तो भक्ति भाव आदिक रूप में ही आ पाया है।

मुक्तक काव्य का वात्सल्य वर्णन

प्राचीन काल और आधुनिक काल दोनों में ही प्रबन्ध काव्य के साथ-साथ मुक्तक काव्य में भी वात्सल्य की अभिव्यंजना हुई है, परन्तु आधुनिक काल की मुक्तक काव्य की वात्सल्याभिव्यक्ति भिन्न प्रकार की है। प्राचीन काल के सूर तुलसी आदि कवियों ने मुक्तकों में ही संयोग और वियोग दोनों दशाओं का सविस्तार वर्णन किया है। आधुनिक काल में वह बात नहीं है। इन कवियों ने मुक्तक काव्यों में केवल संयोग वात्सल्य का ही वर्णन किया है वियोग का नहीं। इस प्रकार यह मुक्तक प्रणाली से भिन्न है। इन मुक्तकों में कवियों ने शिशु का नाना भाँति का चित्रण किया है परन्तु वह उस अवस्था में किया है जबकि शिशु उनके समक्ष है। वियोग की अनुभूति का कोई स्थान मुक्तकों में नहीं रहा। आरसीप्रसाद सिंह के 'आरसी' और शम्भूदयाल सक्सेना के 'पालना' नामक मुक्तक संग्रह इस कथन की भली भाँति पुष्टि करते हैं।

भाव गाम्भीर्य

प्राचीन कवियों में से विशेषकर सूर और तुलसी ने एक एक बात के वर्णन में बहुत समय लगाया है। इससे एक ओर तो उनकी अभिव्यक्ति में पुनरावृत्ति आ गई है और दूसरी ओर उनकी अभिव्यक्ति मार्मिक भी अपेक्षाकृत अधिक हो गई है। वे वर्णन करते करते उस दशा विशेष की तह में पहुँचते चले गये हैं। आधुनिक काल के कवियों की अभिव्यक्ति में वह बात नहीं है। उनकी पहुँच प्रत्येक बात की तह तक नहीं हो सकी। उसका कारण स्यात यही है कि वे लोग तो भक्त थे। भगवान की लीला का गान करना ही उनका एकमात्र कार्य था। नित्य नये पद बनाते रहे। उनमें कहाँ साधारण भावाभिव्यक्ति हुई तो वहीं विशिष्ट भी हुई। इसलिए एक एक विषय को सूक्ष्म दृष्टि से देखने का उन्हें अवसर स्वभावतः मिलता ही चला गया। दूसरे वे प्रतिभावान थे ही। साथ ही उनका जीवन कृत्रिमता से परे था, अतः उनके काव्य में नैसर्गिकता और गहराई स्वभावतः ही आ गई। आधुनिक काल के कवियों ने इस दृष्टि से वर्णन नहीं किया। न वे स्वभावतः ऐसे रहे और न उनकी परिस्थितियाँ ही ऐसी हैं। अतः उनकी अभिव्यंजना में वह गहराई नहीं है जो उन प्राचीन कवियों की रचना में मिलती है इस प्रकार वात्सल्य रस बीसवीं शताब्दी के कवियों ने

अनुभूति तो की है इसलिए भाव क्षेत्र बढ़ गया है लेकिन काव्य की शैली विचार प्रधान होने के कारण उसको कल्पना संबंधित विस्तार नहीं मिला। इस कथन की पुष्टि के लिये आलम्बन-बाह्य उद्दीपन का एक उदाहरण लीजिये। एकलव्य महाकाव्य में एकलव्य की माता उसके खेलने के धनुष को देखकर वियोग वात्सल्य से अभिभूत होती है। कवि ने उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार की है—

यह छोटा सा धनुष तुम्हारा।
इसने तीखा विरह बाण क्यों मेरे उर में मारा॥

आलम्बन बाह्य उद्दीपन का आधुनिक काल की कविताओं में अभिव्यक्त यह सबसे उत्कृष्ट उदाहरण है। परन्तु इसमें वह मार्मिकता नहीं है जो तुलसी की इसी प्रकार की आलम्बन-बाह्य उद्दीपन की निम्नलिखित पंक्तियों में है—

जननी निरखत बान धनुहियां।
बार बार उर नैनन लावति प्रभु जू की ललित पन्हैयां॥

तोतली बोली

आधुनिक काल के कवियों ने शिशु के यथार्थ चित्रण के साथ उसके स्वभाव की कुछ ऐसी बातें अभिव्यक्त की हैं जो प्राचीन काल के किसी कवि ने कहीं भी नहीं की। बच्चा अपने आप में इतना कोमल, मधुर, सुखद, सुन्दर, निश्छल और पवित्र होता है कि उसको प्रेम करना मानव का स्वभाव है। उसकी प्रत्येक क्रिया आनन्द प्रदान करती है। उसमें से उसके तोतले बोल भी हैं। इन तोतले बोलों को कवियों ने शिशु की भाषा ही रखकर अपने वर्णन की स्वाभाविकता बढ़ा दी है। इन वचनों से वात्सल्य भाव का उद्दीपन अपेक्षाकृत अधिक होता है। उदाहरणार्थ क्रीडा करते हुए बच्चे की तोतली बोली देखिए—

मेले घोले चल ले चल। कभी मचाना मत गलबल।
कान पकल कल मालूं गा मैं। खाना भी नहीं डालूं गा मैं।
चाबुक लगते ही वो चाल। उल जावेगी तेली खाल।
जोल जोल से चलना घोले। मत चलना तू होले होले।[1]

उपर्युक्त गीत में बच्चे की बोली की स्वाभाविकता हृदय में एक गुदगुदी पैदा कर देती है। और फिर नित्य ही सर्वत्र इन तोतले शब्दों की मार्मिक अभिव्यक्ति पाठक को अपने अभीष्ट शिशु से साम्य स्थापित करके जो आनन्दानुभूति कराती है वह प्राचीन कवियों में वात्सल्य वर्णन में अप्राप्य रही है।

स्त्री कवियों द्वारा वात्सल्याभिव्यक्ति

प्राचीन और अर्वाचीन दोनों कालों के हिन्दी में वात्सल्य वर्णन का अध्ययन करने से पता चलता है कि कवियों में हृदय में मातृ हृदय की अनुभूति अपेक्षाकृत

---

१ खिलौना-अप्रैल १९३४, पृ० १३०

अधिक रही है। माता की आँखों से देखकर जहाँ वात्सल्य वर्णन हुआ है वहाँ मार्मिकता स्वभावतः आ गई है। परन्तु यह आश्चर्य की बात है कि स्त्री कवियों ने जिनको वात्सल्यकी अनुभूति स्वभावसिद्ध है वात्सल्य वर्णन उतनी प्रचुर मात्रा में नहीं किया। प्राचीनकाल में तो कोई स्त्री कवि है ही नहीं जिसने वात्सल्य का वर्णन किया हो, आधुनिक काल में स्त्री कवियों का इस विषय में कुछ योगदान है। सुभद्राकुमारी चौहान और सुमित्राकुमारी सिनहा के काव्य के अतिरिक्त पत्र पत्रिकाओं में भी बहुत सी स्त्री कवियों की कविताएँ मिल जाती हैं। इसलिए प्राचीन काल से आधुनिक युग के वात्सल्य वर्णन में यह भी एक नवीनता है कि स्त्री कवियों ने उसे अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। जो स्त्रियों ने वात्सल्य वर्णन किया है वह अपने आप में पूर्ण और अधिक प्रभावशाली है। सुभद्राकुमारी चौहान की 'मैं बचपन को बुला रही थी' कविता सारे हिन्दी जगत में फैल गई है। हो सकता है भविष्य में कुछ और स्त्री कवि ऐसी हों जो वात्सल्य वर्णन की दिशा में और आगे बढ़ सकें।

अन्य रसों को पुष्ट करने के लिये वात्सल्य वर्णन

आधुनिक हिन्दी-काव्य में वात्सल्य व्यंजना कई स्थलों पर दूसरे रसों को पुष्ट करने के लिये की गई है। मैथिलीशरण गुप्त ने यशोधरा में राहुल के प्रति जो यशोधरा के वात्सल्य का वर्णन किया है वह अनेकशः उनकी विप्रलम्भ शृंगारमयी अभिव्यक्ति को पुष्ट करने के लिए हुआ है। उदाहरण के लिए निम्नांकित पंक्तियाँ देखिए—

> कैसा सुन्दर कैसा छौना
> क्या ही मधुर सलौना।
> क्यों न हसूँ गाऊँ रोऊँ मैं लगा मुझे यह टौना।
> आय पुत्र आओ सचमुच में दूँगी चन्द खिलौना।

उपर्युक्त पंक्तियों में यशोधरा का राहुल के प्रति वात्सल्य वर्णन के साथ साथ यह भी अभिव्यंजित है कि वह सुन्दर सुखद सलौने शिशु की क्रीड़ा देखने को यदि सिद्धार्थ भी होते तो कितना अच्छा रहता? यशोधरा का प्रधीरस विप्रलम्भ शृंगार मान लेने से राहुल का बहुत सा बाल वर्णन उसकी पुष्टि में ही नियद्धित किया गया है।

इसी प्रकार करुण रस की पुष्टि में भी वात्सल्य का वर्णन हुआ है। 'देवार्चन' महाकाव्य में तुलसी के पुत्र तारक की क्रीड़ाओं का बड़ा हृदयग्राही और यथार्थ चित्रण कवि ने किया है। वह सब वर्णन तारक की भावी मृत्यु के शोक को और भी अधिक पुष्ट कर देता है। पहले जिस शिशु का इतना स्वतान्त्र्य आनन्द-प्रसार का वर्णन हुआ है उसकी मृत्यु होने पर उसका शोक अपेक्षाकृत अधिक ही होगा। इस प्रकार इन रसों की पुष्टि में वात्सल्य का वर्णन आधुनिक काल के कवियों की ही विशेषता है।

सौंदर्य

प्राचीन काल के कवियों और आधुनिक कवियों के शिशु सौन्दर्यानुभूति के दृष्टिकोण में बड़ा अन्तर रहा है। शिशु सौन्दर्य का वर्णन सूर तुलसी आदि भक्त कवियों ने विशेष सफलता के साथ किया है। परन्तु उनके शिशु कोई साधारण मानव न होकर भगवान हैं। अतः उनकी अभिव्यक्ति में भगवान का रूप सौन्दर्य ही सामने रहा है। उनकी दृष्टि उनके सौन्दर्य के एक एक रहस्य को उदघाटन करने में बहुत अधिक जमी है। जैसे कि सूर का निम्नलिखित पद है—

हरि जू की बाल छवि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि मनोज सोभा हरनि।
भुज भुजंग सरोज नैननि बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि।
मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरत भूषन भरनि।
मनहु सुभग सिंगार सिसु तरु फरयौ अदभुत फरनि।
चलत पद प्रतिबिम्ब मनि आंगन घुटुरुवनि करनि।
जलज संपुट सुभग छवि भरि लेत उर जनु धरनि।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नंद घरनि।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि॥[1]

आधुनिक काल के कवियों के (कुछ भक्त कवियों को छोड़कर) विषयालम्बन लौकिक बालक हैं। उनके प्रति कवि की भावी आशाएं हैं। अतः वह रूप वर्णन के साथ साथ उनके भावी उत्कर्ष की क्षमता पर भी अपनी दृष्टि केंद्रित करके उन भावों को अपनी अभिव्यक्ति में ले आता है। वीर अभिमन्यु, लवकुश और साधारण शिशु कवियों के इसी प्रकार के भावों के आलम्बन हैं। अतः दोनों काल के कवियों के रूप वर्णन के दृष्टिकोण में अन्तर है। सारांश यह है कि प्राचीन कवियों ने रूप सौंदर्य और चेष्टा सौंदर्य में ही अपनी कल्पना को सीमित कर दिया है किन्तु नवीन कवियों ने उनके विषय में अनेक प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं जिनमें जीवन की बहुत सी समस्याएं आ जाती हैं।

पुत्री के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति

आधुनिक हिन्दी-काव्य में वर्णित विषयालम्बनों के वैविध्य के प्रसंग में पुत्री के प्रति वात्सल्याभिव्यक्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्राचीन हिन्दी कवियों में से किसी ने भी पुत्री के प्रति वात्सल्यमय उद्गार व्यक्त नहीं किये। लेकिन आधुनिक हिन्दी-काव्य में पुत्री के प्रति वात्सल्य भाव वैसा ही है जैसा पुत्र के प्रति। पुत्री के वात्सल्य की संयोग और वियोग दोनों दशाओं का चित्रण अनेक ग्रन्थों में बड़ी

१ सूरसागर, पद ७२७

सफलता के साथ हुआ है। संयोग चित्रण में उनकी सुकुमारता, चापल्य और बालकोचित क्रीडाओं का वर्णन उसी तन्मयता से किया गया है जिस पुत्र के संयोग सुख वर्णन के प्रसंगों में हुआ है।

पुत्री के वियोग वर्णन में कवियों ने और भी अधिक रुचि ली है। उनका वियोग प्रायः उनके विवाह के समय हुआ है। इस सम्बन्ध में सबसे अधिक महत्वपूर्ण वियोगाभिव्यक्ति तारकवध नामक ग्रन्थ में दशरथ की पुत्री शान्ता के प्रति की गई है। सूर की भाँति कृष्ण के वियोग में तो प्राचीन और नवीन बहुत से कवियों ने विस्तार के साथ अपने भाव रखे हैं। परन्तु पुत्री के वियोग के सम्बन्ध में इतना विस्तार के साथ वर्णन आधुनिक काल की ही विशेषता है। शान्ता के शृंगी ऋषि के यहां जाने के समय का राजा रानी और पुरवासी स्त्री-पुरुष आदि सबके मानसी दशाओं का वर्णन अध्याय संख्या ३ के अन्तर्गत विवेचित है। एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है—

> शान्ता का कमनीय वदन देखा किया
> आंखों में ही उसे बिठा रक्खा सदा।
> कानों द्वारा सुनी तोतली बोलियां
> बार बार बलि गई अमृत चक्खा सदा ॥[1]

कवि की स्व संतति के प्रति वात्सल्याभिव्यंजना

इस प्रसंग में एक यह भी भेद प्रतीत होता है कि कवि ने अपने पुत्र अथवा पुत्री को वात्सल्य का आलम्बन बनाकर उपस्थित किया है। यह विशेषता एक व्यापक प्रणाली का अंग है। और वह व्यापक प्रणाली काव्य में आत्मप्रधान शैली है जिसके द्वारा कवि समाज से प्राप्त अपनी अनुभूतियों को इस ढंग से व्यक्त करता है कि उसका आश्रय वह स्वयं रहता है और वात्सल्य रस के प्रसंग में उसका आलम्बन ही उसके पुत्र पुत्री बन गये हैं। छायावादी कवियों में यह शैली अनेक अर्थों में देखने को मिलती है। पद्यकारों ने तो एक व्यवस्थित शैली के रूप में इसको अपनाया है। वात्सल्य में आकर उसका यह स्वरूप हुआ है। जैसे श्रीमती अनुसूया गुप्ता ने अपने पुत्र के प्रति वात्सल्य की अभिव्यंजना की है—

> मेरा मुन्ना राज दुलारा है मेरी आंखों का तारा
> देख देख पुलकित होता मन ऐसा है वह चांद सितारा।
> मेरी आशाओं का घर है मेरे घर का है उजियाला
> उसकी किलकारी को सुनकर हो जाता है मन मतवाला।[2]

इसी प्रकार सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी पुत्री के प्रति भी वात्सल्य रस

---

१ तारकवध प० १५२

२ बालसखा-नवम्बर १९४५, पृ० ३४७

से सिक्त भावों का वर्णन किया है। बच्ची रोती है तो वात्सल्यमयी माँ कहती है—

मैं सुनती हूँ मेरा कोई
मुझको कहीं बुलाता है।
जिसकी करुणापूर्ण चीख से
मेरा केवल नाता है॥[1]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि अपने पुत्र के प्रति ही कवयित्री के वात्सल्य उद्गार हैं और यह इस युग की उल्लेखनीय विशेषता है।

शिशु-सामान्य के प्रति वात्सल्य

प्राचीन साहित्य में कवियों ने अपनी वात्सल्याभिव्यक्ति किसी शिशु विशेष के प्रति की है। उसके जन्म जाति और कुल आदि का विधिवत ज्ञान होने से उसका किसी न किसी कथा से सम्बन्ध रहा है। आधुनिक काल में इस प्रकार के वर्णन तो हुए ही हैं परन्तु इसके साथ शिशु सामान्य को भी वात्सल्य का आलम्बन बनाया गया है। शिशु-सामान्य कोई व्यक्ति नहीं है बल्कि विचार है। और उसमें समस्त शिशुओं का शैशव आलम्बन बनता है। उदाहरणार्थ निम्नोद्धृत पंक्तियों में सामान्य शिशु ही वात्सल्य का आलम्बन है—

चपलता चारु चुराती चित्त
तुम्हारी भोली चितवन नित्त।
विहँस कर हृता वसुधी वसि,
वारते जिस पर तन मन वित्त।[2]
कान्ति कोमलतापूर्ण अनन्य॥

इस नवीन परम्परा के कारणों का अनुमान किया जा सकता है और वे एक से अधिक हैं। प्रथमतः प्रजातन्त्रीय विचारों का प्रचार जिसके फलस्वरूप जैसे मनुष्य मात्र स्नेह और श्रद्धा का विषय है वैसे ही बालक मात्र वत्सलता का आलम्बन बना है। दूसरा कारण हिन्दी-साहित्य के ऊपर अंग्रेजी का एतद्विषयक प्रभाव है। अंग्रेजी साहित्य में भी बालकपन किंवा बालक सामान्य काव्य का विषय अनेक कविताओं में बना है। इस नवीन परम्परा में वात्सल्य रस के माध्यम के द्वारा हिन्दी साहित्य ने सही अर्थों में वसुधैव कुटुम्बकम् की उदारता का प्रसार किया है। शिशु-सामान्य का वर्णन करने में कवियों के सामने यह भावना रही है कि शिशु आगे चलकर न जाने क्या बन सकता है? और आज के युग में लोगों ने यह भली भाँति प्रत्यक्ष देख भी लिया कि गांधी नेहरू आदि दलितों का उद्धार करने वाले महान पुरुष भी पहले

---

१ मुकुल पृ० ६३
२ माधुरी सन् १६२८ पृ० ७२८

बालक ही थे। अत उन्हे शिशु का रूप बडा रहस्यमय और अप्रतिम लगने लगा। शिशु को देश धम और जाति का सम्बल मानकर उसकी व्यजना कविता म हुई—

देश की धम की और समाज की जीवित जाग्रत शान हो बालक,
प्रान पिता के तथा ममतामयी मा के महा अभिमान हो बालक
है उपमान तुम्हारा न दूसरा आप ही आप समान हो बालक
रूप अनूप से भू पर क्या तुम आ गये हो ! भगवान हो बालक।[1]

ससार मे राजा योद्धा कवि पण्डित और साधु सब इस शैशवावस्था म होकर आय हैं इसलिये हमको चाहिये कि शिशु के प्रति अच्छे भाव रखें न जाने यही शिशु भविष्य म क्या बन जाय। इस प्रकार की भावना न किसी किसी कवि के मुख तो स्पष्टत ही यह भाव मुखरित करवाया है। उदाहरण के लिये बाबूलाल जी की ये पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

नृपति योद्धा कवि पण्डित साधु
हुए शिशु से ही विकसित सभी।
इसी से शिशु के प्रति सदभाव
नहीं हो सकते निष्फल कभी।
उतारेगा अवसर पा कभी,
पूव पुरुषों के ऋण का भार।
सभी कर देगा पूण अभीष्ट,
इसी स करते अमित दुलार।[2]

कवि शिशु के नसगिक रूप से प्रभावित तो है ही क्योंकि उसको आलिंगन करने म उस सारे सष्टि के सुख फीके लगते हैं—

अहा ! शिशु का आलिंगन मात्र
सष्टि सुख को कर देता मात।[3]

परन्तु युग की और समाज की तात्कालिक भावनाए जो शिशु द्वारा देशोन्नति की आशा रखते हैं उसस विस्मृत नहीं होती और कवि कहने लगता है—

इनके कोमल कधों पर है प्रिय भविष्य का आशा भार
जीवित रहें राष्ट्र के वैभव स्नेह मूर्ति ये शिशु सुकुमार।[4]

साराश यह है कि शिशु सामान्य को आलम्बन बनाकर आधुनिक काल म

---

१ वात्सल्य फरवरी १९३८ पृ० ५७
२ चाँद जुलाई १९२७, पृ० ३६०
३ चाँद जुलाई १९२७, पृ० ३६०
४ चाँद सन १९ ५ पृ० १८१

उपसहार

आधुनिक हिन्दी काव्य के अनुशीलन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि बीसवी शताब्दी के कवियो का ध्यान अन्य भावो की भाँति वात्सल्य वर्णन की ओर भी पर्याप्त रूप से गया है। यह इस युग की उल्लेखनीय विशेषता है कि यहा वात्सल्य रस का आलेखन विशुद्ध लौकिक भूमि पर प्रचुर मात्रा मे हुआ है। इसके साथ साथ पुराने कवियो की वत्सल भक्ति का चित्रण भी पहले से अब तक निर्बाध रूप से चला आता रहा है।

आधुनिक हिन्दी-काव्य मे निरूपित वात्सल्य रस का मूल्याकन करने के पश्चात हम गत अध्यायो के निष्कर्षित तथ्यो का सार यहा प्रस्तुत करते हैं। वात्सल्य को रस मानने और न मानने की परम्परा अज्ञात अतीत से चली आई है। भोज वात्सल्य के रसत्व का उल्लेख करने वाले प्रथम आचार्य हैं। उन्होने भी वात्सल्य को रस मानने वाले अज्ञात नाम आचार्यों के मतो का ही उल्लेख किया है। उसके पश्चात समय समय पर वात्सल्य को रस मानने और न मानने वाले काव्य शास्त्री होते रहे हैं। इनमे वात्सल्य रस का सागोपाग विवेचन करने वाले काव्य शास्त्री आचार्य विश्वनाथ हैं। भक्ति के आचार्यों ने मुख्यत रूपगोस्वामी और मधुसूदन सरस्वती ने भक्ति के पाँच विशिष्ट भावो के प्रसग मे वात्सल्य की महिमा का विस्तृत आख्यान किया है। हिन्दी के अधिकाश विद्वानो ने भी वात्सल्य को रस रूप मे माना है और उसके अग उपागो का सागोपाग वर्णन किया है। वात्सल्य भाव की व्याप्ति की स्वाभाविकता मनोवैज्ञानिको को भी मान्य है।

वात्सल्य वर्णन की परम्परा न्यूनाधिक अश मे सस्कृत-साहित्य से ही चली आई है। वाल्मीकि व्यास बाण दण्डी कालिदास भवभूति दिडनाग और कवि नाथ कृष्ण भारिव ग्रन्थो मे वात्सल्य का वर्णन हुआ है अपभ्रश साहित्य का वात्सल्य वर्णन भी इस शृ खला का जोडता है। हिन्दी मे वीरगाथा काल भक्तिकाल और रीति काल मे वात्सल्य का वर्णन करने वाले कवि हुए हैं। इनमे इस दृष्टि से सबसे अधिक गौरवशाली सूरदास और तुलसीदास हैं। सूरदास का वात्सल्य वर्णन तो वात्सल्य के रस रूप मे प्रतिष्ठित होने मे मुख्य कारण बना है। उनके वात्सल्य वर्णन मे मनोवैज्ञानिकता सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति और गहराई अधिक है। तुलसीदास के वात्सल्य वर्णन मे विविधता और व्यापकता की व्याप्ति का सर्वतोव्याप्त प्रसार है।

आधुनिक हिंदी काव्य मे वात्सल्य का वर्णन करने वाले बहुत से कवि हुए हैं। उनमें से महाराज रघुराजसिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, अनूपशर्मा, तुलसीराम शर्मा 'दिनेश', आरसीप्रसाद सिंह, द्वारका प्रसाद मिश्र, हरदयालु सिंह, आनन्दकुमार, रामानन्द तिवारी, रामकुमार वर्मा, गिरजा दत्त शुक्ल और सुमित्रा कुमारी सिन्हा आदि मुख्य हैं। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पत्र-पत्रिकाओं में भी वात्सल्य का वर्णन पर्याप्त मात्रा में हुआ है। इस काल के कवियों की वात्सल्याभिव्यंजित प्रबन्ध और मुक्तक दोनों प्रकार के काव्यों में हुई है। आधुनिक युग में वात्सल्य के क्षेत्र में विस्तार के अतिरिक्त अनेक नवीन उद्भावनाएं भी प्रस्तुत की हैं जैसे वात्सल्य का आलम्बन किसी बालक विशेष को न बना कर सामान्य शिशु को बनाना, राष्ट्रीय भावनाओं से प्रेरित होकर शिशु के विषय में आदर्श मानवीय गुणों की आशा करना, देश, संस्कृति और धर्म आदि के उद्धार की उससे कामना रखना आदि आदि। ये भाव भक्त कवियों के एतद्विषयक साहित्य में नहीं हैं क्योंकि उन्होंने भक्ति विमोहित हृदय से भावना को आलम्बन बनाकर वात्सल्य का वर्णन किया है और उसमें भी भगवल्लीलाओं का गान किया है। लौकिक मानवीय जीवन की आशा आकांक्षाएं उन कवियों की अभिप्रेत नहीं हैं।

इस काल के वात्सल्य साहित्य का रस शास्त्रीय विश्लेषण करने से वर्णन विस्तार के कारण, उसमें विभाव, अनुभाव और संचारीभाव आदि के सम्बन्ध में बहुत सी नवीनताएं भी प्राप्त होती हैं।

प्राचीन हिंदी काल और आधुनिक हिंदी काल के एतद्विषयक साहित्य पर यदि तुलनात्मक दृष्टिपात करें तो प्रतीत होता है कि उसमें परस्पर में अनेक समानताएं भी हैं। स्वाभाविक है कि समानताएं परम्परा की देन हैं और विषमताएं युग की।

वात्सल्य भाव का जीवन में महत्तम स्थान है। इसकी उपादेयता सामाजिक दृष्टि से और भी अधिक है। भारतीय महान आत्माओं में जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भावों की प्रचुरता रही है उसके मूल में भी उनका वात्सल्य होना अनुमित होता है। गौतमबुद्ध, ईसामसीह और महात्मा गांधी आदि जो उदार सिद्ध हुए उनका कारण भी यही था कि उनका हृदय वात्सल्य प्रेम से परिपूर्ण था। स्वसंतति प्रेम से आगे बढ़कर, दूसरों के बच्चों से प्रेम, फिर देश भर के बच्चों से प्रेम, फिर संसार भर के बच्चों से प्रेम और फिर प्राणीमात्र से प्रेम करना वात्सल्य भाव के उदात्तीकरण के आदर्श के सोपान हैं। यह इसलिए और स्वाभाविक हो जाता है कि शिशु में मानव का सबसे अधिक उज्ज्वल, निश्छल, सुन्दर और सरल रूप हमें मिलता है। इसी से शिशु को भगवान का साक्षात् रूप और मानव को स्वर्ग कहा गया है। यदि संसार का प्रत्येक प्राणी शिशु जैसा ही सरल हो जाय तो सम्भवतः कोई समस्या न

रहे और राजनीति व कूटनीति जैसे शास्त्रो की आवश्यकता न पड़े। आज के युग में बाल-स्नेह के महत्त्व पर ध्यान दिया गया है। देश और विदेश में बालक को शिक्षा का केन्द्र बनाने की ओर ध्यान देना इसी भाव की प्रचुरता का परिणाम है। पं० जवाहरलाल नेहरू का देश और विदेश के बच्चो को देखकर स्नेहार्द्र होना उनके वात्सल्यमय हृदय के विस्तार का द्योतक है। विश्व भर के बच्चो के पारस्परिक संगम और सम्बन्ध स्थापित करने आदि के प्रयत्न इस भावना के विकास में और भी सहायक हो सकते हैं। इसमें कुछ सन्देह नही कि वात्सल्य भाव का शोधित और उदात्त रूप संसार की अनेक समस्याओ को सुलझाने में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

परिशिष्ट-१

वात्सल्य वर्णन करने वाले अन्य कवि

कवि	वात्सल्याभिव्यंजित की पुस्तक
१ श्रीधर पाठक	मनोविनोद तृतीय खण्ड
२ श्याम बिहारी मिश्र तथा शुकदेव बिहारी मिश्र	लवकुश चरित्र
३ लाला भगवान दीन	वीर पंचरत्न
४ रामचरित उपाध्याय	राम चरित चिन्तामणि
५ कौशलेन्द्र	काकली
६ हितैषी	कल्लोलिनी
७ विद्याभूषण विभु	सुहराब और रुस्तम
८ इलाचन्द्र जोशी	विजनवती
९ देवी दयाल चतुर्वेदी 'मस्त	महारानी दुर्गावती
१० रामनरेश त्रिपाठी	पथिक
११ सियारामशरण गुप्त	मृन्मयी उन्मुक्त नकुल अनाथ
१२ श्यामनारायण पाण्डेय	हल्दीघाटी जौहर तुमुल
१३ हरिवंशराय 'बच्चन'	बुद्ध और नाचघर प्रारम्भिक रचनाए
१४ डा० बलदेवप्रसाद मिश्र	साकेत संत
१५ सूर्यदेव मिश्र	ध्रुव-चरित्र
१६ ताजीमी सरदार	नल नरेश

१७ दिनेश नन्दिनी — परिछाया
१८ प० अम्बिकादत्त व्यास — कविता कुसुम
१९ आनन्द मिश्र — चन्देरी का जौहर
२० माखन लाल — हिमतरंगिनी
२१ जनेन्द्र किशोर — कविता कुसुम
२२ नाथूराम शंकर शर्मा — अनुराग रत्न
२३ देवेन्द्र सत्यार्थी — बन्दनवार
२४ श्रीमती तारा पाण्डे — वेणुकी
२५ पुरुषार्थवती — अन्तर्वेदना
२६ रामेश्वरदयाल दुबे — चले चलो
२७ ब्रह्मदत्त दीक्षित 'ललाम' — जय-मानव
२८ हरिश्चन्द्र — कविता कुसुम
२९ महेन्द्रसिंह प्रमथन — भिक्षुणी
३० राजेन्द्र देव सेंग — सारंधा
३१ लालधर त्रिपाठी 'प्रवासी' — छत्रसाल
३२ कुमुद विद्यालंकार — तथागत
३३ शंकर शरण गुप्त — प्रतापसिंह का प्रताप
३४ अतुलकृष्ण गोस्वामी — नारी

परिशिष्ट-२

पत्र-पत्रिकाओं मे जिन कवियो ने वात्सल्याभिव्यक्ति की है उनकी नामावली निम्नलिखित है

कवि	वात्सल्याभिव्यक्ति की पत्रिका
१ रामचरित उपाध्याय	सरस्वती १९११, १९३१
२ प० गिरधर शर्मा	सरस्वती १९१३
३ उमेश	सरस्वती १९३२
४ जगदीश झा 'विमल	चाँद १९२४
५ शोभाराम 'धेनुसेवक'	चाँद १९२४
६ गयाप्रसाद शास्त्री साहित्याचार्य	चाँद १९२४
७ जनार्दन प्रसाद झा द्विज'	चाँद १९२४
८ हृदयेश जी बी० ए०	चाँद १९२४
९ रामकुमार लाल वर्मा	चाँद १९२४
१० चन्द्रनाथ मालवीय वारीश'	चाँद १९२४
११ गंगानारायण द्विवेदी	चाँद १९२४
१२ श्री हरि	चाँद १९२४
१३ आनन्दी प्रसाद श्रीवास्तव	चाँद १९२४
१४ श्रीमती चुन्नीदेवी विनोदनी	चाँद १९२५
१५ श्रीमती शान्तीदेवी शुक्ल	चाँद १९२६
१६ बाबूलाल विशारद	चाँद १९२७
१७ रामचन्द्र शुक्ल 'सरस'	चाँद १९२८
१८ प० खेदहरण शर्मा 'प्राणेश'	चाँद १९३१
१९ कुमार	चाँद १९३४
२० प्रभात कुमार बी० ए० एल० एल० बी०	चाँद १९३५
२१ रामइकबालसिंह 'राकेश'	चाँद १९३८
२२ वीरेन्द्रसिंह एम० ए०	चाँद १९३५

२३ वैशम्पायन	चाँद १९४१
२४ वागीश्वर	माधुरी संवत १९८१
२५ द्विज श्याम	माधुरी १९२९ ३०
२६ मातादीन शुक्ल	माधुरी १९२९ ३०
२७ हितैषी	माधुरी १९२९ ३०
२८ जीवनराम	माधुरी १९२९ ३०
२९ बलभद्र	माधुरी १९२९ ३०
३० रत्नाम्बर दत्त चन्दोला रत्न	महारथी १९२९
३१ देवीदत्त शुक्ल	शिशु १९२६
३२ सुमित्रा पाण्ड्या	शिशु १९३३
३३ प्रेम नारायण	शिशु १९४६
३४ सुरेन्द्रप्रसाद सिंह रसिक	शिशु १९४९
३५ मालचन्द्र जोशी बी० ए०	शिशु १९५५
३६ निरंकार देव सेवक एम० ए०	शिशु १९५६
३७ श्री 'रघु'	खिलौना १९२७
३८ रमामोहन मथपिया विशारद	खिलौना १९२७
३९ स्वर्ण सहोदर	खिलौना १९२८ ३१
४० श्रीमती शान्ती देवी	खिलौना १९२९
४१ अब्दुल रहमान शिराक	खिलौना १९३३
४२ रामचन्द्र रोमश चन्द्र	खिलौना १९३४
४३ मूलचन्द्र श्रीवानी	खिलौना १९३६ ३७
४४ अनन्तराम चित्रगुप्त	खिलौना १९३७
४५ रसिक	खिलौना १९३७
४६ कृष्ण मनोहर सिंह 'साहस'	खिलौना १९३७
४७ रामचन्द्र स्नेही	खिलौना १९३८
४८ प० जमुनादास त्रिपाठी नह	खिलौना १९३९
४९ प० कन्हैयालाल मत्त	खिलौना १९४१
५० प्रद्युम्न चन्द्र जोशी	बालक संवत् १९८१
५१ प० गौरम पागल	बालक संवत १९८६
५२ लक्ष्मी नारायण ठाकुर	बालक संवत् १९८९
५३ नलिन विलोचन शर्मा	बालक सन् १९३४
५४ विनान—	बालक १९३६

५५ प० ईश्वरदत्त पांडय 'श्रीश' शास्त्री	बालक १९३८
५६ अनिरुद्धलाल कमनील	बालक १९३७
५७ महेश्वरी प्रसाद	बालक १९३८
५८ सूयन्व उपाध्याय अनुरागी	बालक १९४०
५९ इन्दुबाला	बालक १९४०
६० शिवशंकर मिश्र 'विशारद	बालिका १९२९
६१ जगदीश प्रसाद गुप्त	सल्ला अंक १४
६२ रामजीवन शर्मा	विशाल भारत १९३२
६३ कुमारी शैलबाला सकलानी	झुनझुना १९४०
६४ भगत जी	झुनझुना १९४०
६५ रामकुमार स्नातक	झुनझुना १९४०
६६ लीलावती डी० सिंह	बालसखा १९३६
६७ कुमारी सौम्यलता साइल	बालसखा १९३९
६८ सुन्दरमल	बालसखा १९४१
६९ कुमारी शान्ति कपूर	बालसखा १९४१
७० शिवनन्दन कपूर	बालसखा १९४२
७१ मदन मोहन	बालसखा १९४३
७२ श्रीमती अनसूया गुप्ता	बालसखा १९४५
७३ श्रीनिवास सोना	बालसखा १९४५
७४ धर्मेन्दु कुमार	बालसखा १९४६
७५ आशुतोष बी० ए०	बालसखा १९४७
७६ सुश्री लक्ष्मीदेवी वर्मा	बालसखा १९४७
७७ वीरेन्द्र प्रकाश	बालसखा १९५०
७८ नगेन्द्र	बालसखा १९५०
७९ देवेन्द्रकुमार बख्शी देव	बालसखा १९५२
८० अनन्त	बालसखा १९५४
८१ हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि'	बालसखा १९५५
८२ लीला दुबे	साप्ताहिक हिन्दुस्तान १९५१

५५ प० ईश्वरदत्त पाडय 'श्रीन' शास्त्री	बालक १९३८
५६ अनिरुद्धलाल कमनील	बालक १९३७
५७ महेश्वरी प्रसाद	बालक १९३८
५८ सूयन्व उपाध्याय अनुरागी'	बालक १९४०
५९ इन्दुबाला	बालक १९४०
६० शिवशकर मिश्र 'विशारद	बालिका १९२९
६१ जगदीश प्रसाद गुप्त	लल्ला अक १४
६२ रामजीवन शर्मा	विशाल भारत १९३२
६३ कुमारी शैलबाला सकलानी	भुनभुना १९४०
६४ भगत जी	भुनभुना १९४०
६५ रामकुमार 'स्नातक'	भुनभुना १९४०
६६ लीलावती डी० सिंह	बालसखा १९३६
६७ कुमारी सौन्यलता साडल	बालसखा १९३६
६८ सुन्दरमल	बालसखा १९४१
६९ कुमारी शान्ति कपूर	बालसखा १९४१
७० शिवनन्दन कपूर	बालसखा १९४२
७१ भवन मोहन	बालसखा १९४३
७२ श्रीमती अनसूया गुप्ता	बालसखा १९४५
७३ श्रीनिवास सोना	बालसखा १९४५
७४ धर्मेन्दु कुमार	बालसखा १९४६
७५ प्रभुताप बी० ए०	बालसखा १९४७
७६ सुश्री लक्ष्मीदेवी वर्मा	बालसखा १९४७
७७ वीरेन्द्र प्रकाश	बालसखा १९५०
७८ नगेन्द्र	बालसखा १९५०
७९ दवन्द्रकुमार बख्शी देव	बालसखा १९५२
८० अनन्त	बालसखा १९५४
८१ हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि'	बालसखा १९५५
८२ लीला दुबे	साप्ताहिक हिन्दुस्तान १९५१

२३ वैशम्पायन	चांद १६४१
२४ वागीश्वर	माधुरी सवत १६८१
२५ द्विज श्याम	माधुरी १६२६ ३०
२६ मातादीन शुक्ल	माधुरी १६२६ ३०
२७ हितैषी	माधुरी १६२६ ३०
२८ जीवनराम	माधुरी १६२६ ३०
२६ बलभद्र	माधुरी १६२६ ३०
३० रत्नाम्बर दत्त चन्दोला रत्न	महारथी १६२६
३१ देवीदत्त शुक्ल	शिशु १६२६
३२ सुमित्रा पाण्डया	शिशु १६३१
३३ प्रेम नारायण	शिशु १६४६
३४ सुरेन्द्रप्रसाद सिंह 'रसिक	शिशु १६४६
३५ मालचन्द्र जोशी बी० ए०	शिशु १६५५
३६ निरंकार देव सेवक एम० ए०	शिशु १६५६
३७ श्री रघु	खिलौना १६१७
३८ समामोहन अवधिया विशारद	खिलौना १६२७
३६ स्वर्ण सहोदर	खिलौना १६२८ ३१
४० श्रीमती शान्ती देवी	खिलौना १६२६
४१ अब्दुल रहमान निराक	खिलौना १६३३
४२ यमचन्द्र सेमका 'चन्द्र	खिलौना १६३४
४३ मूलचन्द्र श्रीवास्त्री	खिलौना १६३६, ३७
४४ अनन्तराम चित्रगुप्त	खिलौना १६३७
४५ रसिक'	खिलौना १६३७
४६ कृष्ण मनोहर सिंह 'साहस	खिलौना १६३७
४७ क्षेमचन्द्र स्नेही	खिलौना १६३८
४८ पं० शम्भुदयाल त्रिपाठी नह	खिलौना १६३६
४६ पं० कन्हैयालाल मत्त	खिलौना १६४१
५० प्रफुल्ल चन्द्र ओझा	बालक सवत १६८३
५१ पं० गौतम पाण्डेय	बालक सवत १६८६
५२ तृप्ति नारायण ठाकुर	बालक सवत १६८६
५३ नलिन विलोचन शर्मा	बालक मनु १६३४
५४ चिन्तन	बालक १६३६

५५ पं० ईश्वरदत्त पाण्डेय 'धीर' शास्त्री — बालक १९३८
५६ अनिरुद्धलाल कमनीय — बालक १९३७
५७ सत्यवती प्रकाश — बालक १९३८
५८ भूपेन्द्र उपाध्याय अनुरागी — बालक १९४०
५९ इन्दुबाला — बालक १९४०
६० शिवशंकर मिश्र 'विशारद' — बालिका १९२९
६१ जगदीश प्रसाद गुप्त — नन्हा सच १४
६२ रामजीवन शर्मा — विशाल भारत १९३२
६३ कुमारी शैलबाला सक्सेना — झुनझुना १९४०
६४ भगत जी — झुनझुना १९४०
६५ रामकुमार 'स्नातक' — झुनझुना १९४०
६६ लीलावती डी० सिंह — बालसखा १९३९
६७ कुमारी सौन्दर्यलता माहेश — बालसखा १९३९
६८ सुन्दरमल — बालसखा १९४१
६९ कुमारी शान्ति कपूर — बालसखा १९४१
७० शिवनन्दन कपूर — बालसखा १९४२
७१ मदन मोहन — बालसखा १९४२
७२ श्रीमती मनसुधा गुप्ता — बालसखा १९४५
७३ श्रीनिवास सोना — बालसखा १९४५
७४ धर्मेन्द्र कुमार — बालसखा १९४६
७५ भानुप्रताप बी० ए० — बालसखा १९४७
७६ सुश्री लक्ष्मीदेवी वर्मा — बालसखा १९४७
७७ वीरेन्द्र प्रकाश — बालसखा १९५०
७८ नरेन्द्र — बालसखा १९५०
७९ देवेन्द्रकुमार बक्शी 'देव' — बालसखा १९५२
८० अनन्त — बालसखा १९५४
८१ हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि' — बालसखा १९५५
८२ लीला दुबे — साप्ताहिक हिन्दुस्तान १९५५

ग्रन्थ-सूची

संस्कृत-ग्रन्थ

१ अभिनव भारती (भरत के नाट्य शास्त्र की टीका) अभिनवगुप्त गायकवाड ओरियण्टल सीरीज बड़ौदा।

२ अभिज्ञान शाकुन्तलम कालिदास, द्वितीय संस्करण सं० २००५ भार्गव पुस्तकालय गायघाट काशी।

३ उत्तर रामचरित भवभूति, स्टूडेंटस पब्लिशिंग कम्पनी भावनगर।

४ उभयाभिसारिका वररुचि।

५ कंसवधम शेषकृष्ण द्वितीय संस्करण संवत १८९४ निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

६ कादम्बरी बाणभट्ट।

७ कुन्दमाला दिङ्नाग द्वितीय संस्करण, सन् १९३७ मोतीलाल बनारसीदास ओरियण्टल बुकसेलर्स लाहौर।

८ कुमारसम्भवम कालिदास।

९ काव्यप्रकाश मम्मट द्वितीय संस्करण सन् १९२९ आनन्दाश्रम मुद्रणालय।

१० काव्यप्रदीप गोविन्द द्वितीय संस्करण सन १९१२ तुकाराम जीवाजी आदर्स, बम्बई।

११ काव्यादर्श दण्डी सन् १९३६ तिरवाडि श्रीनिवास मुद्रणालय।

१२ काव्यालंकार-सार संग्रह उद्भट प्रथम संस्करण सन् १९२५ प्राच्यविद्या संशोधन मन्दिर।

१३ काव्यालंकारसूत्राणि वामन प्रथम संस्करण सन १९०७, व्रजवासीदास एण्ड कम्पनी, बनारस।

१४ दशकुमार चरितम दण्डी पंचादश संस्करण, सन १९५१ निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

१५ दशरूपक धनंजय सन् १९४१ निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

१६ नयराजयशोभूषण अभिनव कालिदास सन १९३० ओरिण्टल इंस्टीटयूट बड़ौदा।

१७ नाट्यशास्त्र भरत मुनि, ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ौदा।

१८ नाट्यशास्त्र भरत मुनि निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

१९- नारदभक्तिसूत्र (प्रेमदर्शन षष्ठ संस्करण सम्वत २००६) गीता प्रेस गोरखपुर।

२० भगवद्भक्तिरसायन मधुसूदन सरस्वती, प्रथम संस्करण सम्वत् १९८४ अच्युत ग्रन्थ माला कार्यालय काशी।

२१ भागवत पुराण भागवतकार तृतीय संस्करण सम्वत २०१३, गीता प्रेस गोरखपुर।

२२ भाव प्रकाश शारदातनय सन १९३० ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ौदा।

२३ मन्दारमरन्दचम्पू श्रीकृष्ण कवि सन १९२४ पाण्डुरंग जावजी निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

२४ मनोविज्ञान मीमांसा आचार्य विश्वेश्वर आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली।

२५ महाभारत व्यास अनुवादक रामनारायणदत्त शास्त्री, गीताप्रेस गोरखपुर।

२६ रघुवंश कालिदास, तृतीय संस्करण सम्वत २००९ चौखम्बा संस्कृत सीरीज बनारस।

२७ रसगंगाधर (काव्यमाला १२) पंडितराज जगन्नाथ तृतीय संस्करण, सन् १९१६ निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

२८ रसमंजरी भानुदत्त।

२९ रसरत्नप्रदीपिका अल्लराज सम्पादक रा० ना० दांडेकर सन् १९४५ भारतीय विद्याभवन, बम्बई।

३० वाल्मीकि रामायण वाल्मीकि अनुवादक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा द्वितीय संस्करण सन १९५० रामनारायणलाल इलाहाबाद।

३१ शृंगार प्रकाश (प्रथम आठ अध्याय) भोजराज सम्पादक जी० आर० जोशयर सन् १९५५, कोरोनेशन प्रेस मसूर।

३२ सरस्वती कंठाभरण भोजराज, सन् १९३४ निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

३३ साहित्य-कौमुदी विद्याभूषण निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

३४ साहित्य दर्पण (विमलाविभूषित) आचार्य विश्वनाथ द्वितीय संस्करण, श्री मृत्युंजय औषधालय, लखनऊ।

३५ हरिभक्तिरसामृतसिंधु रूपगोस्वामी, प्रथम संस्करण सम्वत् १९८८, विद्या विलास मुद्रणालय काशी।

३६ हर्ष चरितम बाणभट्ट, तृतीय संस्करण शाके १८३४, निर्णयसागर प्रेस बम्बई।

३७ हिन्दी अभिनव भारती आचार्य विश्वेश्वर, सम्पादक डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण सन् १९६० हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

३८ हिंदी ध्वन्यालोक आचार्य विश्वेश्वर, सम्पादक डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण, सन् १९५२ गौतम बुक डिपो दिल्ली।

अपभ्रंश-ग्रन्थ

१ ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह सम्पादक अगरचन्द नाहटा भंवरचन्द नाहटा, प्रथम संस्करण संवत १९९४ प्र० शंकरदान शुभैराज नाहटा आरमोनियम स्ट्रीट कलकत्ता।

२ पउम चरिउ स्वयम्भूदेव प्रथम संस्करण १९५८ भारतीय ज्ञानपीठ काशी।

हिन्दी-ग्रंथ

१ अंगराज आनन्दकुमार, प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज, नई सड़क, दिल्ली।

२ अंजलि मैथिलीशरण गुप्त प्रथम संस्करण, संवत २००३ साहित्य सदन, चिरगांव झांसी।

३ अनघ मैथिलीशरण गुप्त षष्ठावृत्ति संवत २००६ साहित्य प्रेस चिरगांव, झांसी।

४ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय दीनदयालु गुप्त, प्रथम संस्करण सम्वत् २००४ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

५ अष्टछाप परिचय प्रभुदयाल मीतल प्रथम संस्करण सम्वत् २००४ अग्रवाल प्रेस मथुरा।

६ अनुराग रत्न नाथूराम शंकर शर्मा सम्वत १९९१।

७ आँगन के फूल सुमित्राकुमारी सिनहा प्रथम संस्करण सन १९५६ आराधना प्रकाशन, वाराणसी।

८ आधुनिक कवि डा०गोपालशरण सिंह सम्वत् २००३ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

९ आधुनिक कवि रामकुमार वर्मा सम्वत् २००३, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

१० अन्तर्वेदना पुरुषार्थवती, प्रथमावृत्ति विश्वसाहित्य ग्रन्थमाला लाहौर।

११ अनाथ सियारामशरण गुप्त, द्वितीयावृत्ति सम्वत १९८१, साहित्य सदन, चिरगांव झांसी।

१२ आपका मुन्ना प्रथम भाग सावित्री देवी वर्मा, सन् १९५३ आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली।

१३ आपका मुन्ना द्वितीय भाग सावित्री देवी वर्मा सन् १९५३, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली।

१४ आलम केलि आलम, सम्पादक लाला भगवानदीन, प्रथमावृत्ति, संवत् १९७६, प्रकाशक उमाशंकर मेहता।

१५ आग्मी आरसीप्रसाद सिंह, प्रथम सस्करण सन १९४२ तारामण्डल, मुजफ्फरपुर।

१६ उन्मुक्त सियारामशरण गुप्त द्वितीयावृत्ति सवत २००७ साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी।

१७ ऊर्मिला बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' प्रथम सस्करण ग्रतरचन्द कपूर एण्ड सस दिल्ली।

१८ एकलव्य रामकुमार वर्मा, प्रथम सस्करण सवत् २०१५, भारती भडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद।

१९ करुण रस (मध्ययुगीन हिन्दी राम काव्य के परिवेश म) ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव, प्रथम सस्करण सन १९६१, हिन्दी साहित्य ससार, दिल्ली।

२० कृष्णायन द्वारकाप्रसाद मिश्र, हिन्दी विश्वभारती कार्यालय चारबाग, लखनऊ।

२१ करुणालय जयशकर प्रसाद, तृतीय सस्करण लीडर प्रस, प्रयाग।

२२ कल्लोलिनी हितपी, सन १९३७ शारदासेवक सदन कानपुर।

२३ काबा और कबला मथिलीशरण गुप्त, द्वितीय सस्करण, सवत् २००४ साहित्य सदन चिरगाव, झासी।

२४ काव्यदर्पण रामदहिन मिश्र द्वितीय सस्करण सन् १९५१, ग्रन्थमाला कार्यालय पटना।

२५ काव्य निर्णय भिखारीदास, सम्पादक बाबू रामकृष्ण वर्मा सवत् १९६६ भारत जीवन प्रेस, बनारस।

२६ कविकुल कल्पतरु चिन्तामणि त्रिपाठी १८७५ का सस्करण।

२७ कविता कुसुम अम्बिकादत्त व्यास सपादक रामवक्ष शर्मा बेनीपुरी, तृतीय सस्करण पुस्तक भडार लहेरिया सराय, बिहार।

२८ कविता कुसुम जगन्नाथकिशोर, पुस्तक भडार लहेरिया सराय, बिहार।

२९ कविता कुसुम हरिश्चन्द्र, सम्पादक रामवक्ष शर्मा, पुस्तक भडार लहेरिया सराय बिहार।

३० कवितावली तुलसीदास, चतुर्दश सस्करण सवत् २०१४, गीताप्रेस गोरखपुर।

३१ कान्ली शैलेन्द्र, द्वितीयवार, सन् १९३३ चतुर्वेदी साहित्य मडल, मैनपुरी।

३२ कानन कुसुम जयशकर प्रसाद, पचम सस्करण सवत २००७, भारती भडार, लीडर प्रस इलाहाबाद।

३३ कामायनी जयशकर प्रसाद सवत २००३ भारती भडार, इलाहाबाद।

३४. किसान मथिलीशरण गुप्त, चतुर्थावृत्ति, संवत् १९८९ साहित्य सदन, चिरगाव झासी।

३५ कुणाल सोहनलाल द्विवेदी, सन १९४५, इडियन प्रेस लिमिटेड इलाहाबाद।

३६ कुणालगीत मथिलीशरण गुप्त, सवत २००६ साहित्य सदन चिरगाव झासी।

३७ केशव ग्रथावली केशवदास प्रथम सस्करण, सन १९५५ हिदुस्तानी एकेडमी उत्तर प्रदेश इलाहाबाद।

३८ कैकेयी (महाकाव्य) केदारनाथ मिश्र प्रभात सवत २००७ श्री अजन्ता प्रेस, नया टोला, पटना।

३९ गीतावली तुलसीदास सप्तम सस्करण सवत २०१० गीताप्रेस गोरखपुर।

४० गुरुकुल मथिलीशरण गुप्त प्रथमावृत्ति सवत १९९५ साहित्यसदन चिरगाव, झासी।

४१ घन आनन्द ग्रथावली घनआनन्द सम्पादक प० विश्वनाथ मिश्र सवत २००८ वाणी वितान ब्रह्मनाल बनारस।

४२ बदरी का जौहर आनन्द मिश्र सन १९५७ आत्माराम एड सस दिल्ली।

४३ चले चलो रामेश्वरदयाल दुबे प्रथमावृत्ति सन १९५२ मयूर प्रकाशन झासी।

४४ चित्रावली उसमान सम्पादक जगमोहन वर्मा सन १९१२ काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित इडियन प्रेस लिमिटेड इलाहाबाद।

४५ चित्तौड की चिता रामकुमार वर्मा प्रथम सस्करण सन १९२९ चाँद कार्यालय इलाहाबाद।

४६ चोखे चौपदे अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध प्रथम सस्करण सन् १९२४ खड्गविलास प्रेस पटना।

४७ छत्रसाल लालधर त्रिपाठी प्रवासी प्रथम आवृत्ति सवत २०१२ जनता साहित्य प्रकाशन बनारस।

४८ जननायक रघुवीरशरण मित्र प्रथम सस्करण अखिल भारतीय राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन परिषद मेरठ।

४९ जयमानव ब्रह्मदत्त दीक्षित ललाम यूनीवर्सल प्रेस प्रयाग।

५० जयभारत मथिलीशरण गुप्त प्रथम सस्करण सवत २००९ साहित्य सदन चिरगाव झासी।

५१ जौहर श्यामनारायण पाण्डेय द्वितीय सस्करण सरस्वती मदिर काशी।

५२ झासी की रानी श्याम नारायण प्रसाद प्रथम आवृत्ति प्रकाशगृह बनारस।

५३ तप्तगृह केदारनाथ मिश्र प्रभात सन १९५४ अजता प्रेस पटना।

५४ तक्षशिला उदयशकर भट्ट प्रथम सस्करण सन् १९३१ इडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग।

५५ तथागत कुमुद विद्यालकार प्रथम सस्करण सवत २०११ रीगल बुक डिपो, दिल्ली।

५६ तुमुल श्यामनारायण पाण्डेय इडियन प्रेस प्रयाग।

५७ तारकवध गिरजादत्त शुक्ल 'गिरीश', प्रथम संस्करण, सन् १६५८, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

५८ तुलसी-दर्शन मीमांसा डा० उदयभानु सिंह, प्रथम संस्करण, सं० २०१८, लखनऊ विश्वविद्यालय।

५६ द्वापर मैथिलीशरण गुप्त, द्वितीय बार संवत् १६६६, साहित्य सदन चिरगांव, झांसी।

६० दानी का सपना सुमित्रा कुमारी सिनहा, प्रथम संस्करण १६६०, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

६१ देवायन श्री 'वकील', प्रथम संस्करण संवत २००६, साहित्य रत्न भंडार, आगरा।

६२ दैत्यवंश हरदयालुसिंह प्रथम आवृत्ति संवत १६६६, इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग।

६३ धरती और स्वर्ग डा० देवराज सन १६४६ राजकमल, प्रकाशन, दिल्ली।

६४ ध्रुव चरित सूर्यदेव मिश्र, प्रथम संस्करण, सन १६४६, दीक्षित पब्लिशिंग हाउस, बनारस।

६५ धूप और धुआं रामधारीसिंह दिनकर' संवत १६५१, अजन्ता प्रेस, पटना।

६६ नकुल सियारामशरण गुप्त प्रथमावृत्ति संवत २००३ साहित्य सदन चिरगांव झांसी।

६७ नरनरेन्द्र ताजीमी सरदार प्रथम संस्करण संवत् १६६० गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ।

६८ नवरस गुलाबराय संवत १६६० नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा।

६६ नारी प्रतुलकृष्ण गोस्वामी, आत्माराम एंड संस दिल्ली।

७० नूरजहां गुरुभक्तसिंह 'भक्त', छठी आवृत्ति, कालका सदन बलिया।

७१ पथिक रामनरेश त्रिपाठी, चौबीसवां संस्करण सन १६५०, साधना सदन, इलाहाबाद।

७२ प्रतापसिंह का प्रताप शंकरशरण गुप्त, प्रथम बार सन् १६१५, रामादतगंज लखनऊ।

७३ पदमावत मलिक मुहम्मद जायसी सम्पादक वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन चिरगांव, झांसी।

७४ पद्य प्रमोद अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' सन् १६५५, कल्याणदास एंड ब्रदस बनारस।

७५ पद्य प्रसून अयोध्यासिंह उपाध्याय' हरिऔध प्रथम संस्करण, संवत् १६८२, हिन्दी पुस्तक भंडार लहेरिया सराय।

७६ पन्नादाई श्यामनारायण प्रसाद, संवत् २०१३, जयप्रकाशन, कबीरचौरा, बनारस।

७७ परमानन्द सागर परमानन्द दास, सम्पादक गोवर्धननाथ शुक्ल, सन् १९५८, भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़।

७८ परिछाया दिनेश नन्दिनी, सन् १९४६, टाइम्स ग्राफ इंडिया प्रेस।

७९ पल्लव सुमित्रानन्दन पंत पांचवां संस्करण लीडर प्रेस प्रयाग।

८० पल्लविनी सुमित्रानन्दन पंत, तृतीय संस्करण लीडर प्रेस प्रयाग।

८१ पृथिवी पुत्र मैथिलीशरण गुप्त प्रथमावृत्ति, संवत् २००७ साहित्य सदन चिरगांव झाँसी।

८२ पृथ्वीराज रासो चन्दवरदाई, सम्पादक मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या और श्यामसुंदर दास सन् १९०७ २३ नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

८३ प्रदक्षिणा मैथिलीशरण गुप्त, प्रथमावृत्ति, संवत् २००७ साहित्य सदन चिरगांव झाँसी।

८४ प्रारम्भिक रचनाएं हरिवंशराय बच्चन, द्वितीय संस्करण सन् १९४६, भारती भंडार, इलाहाबाद।

८५ पालना शम्भुदयाल सक्सेना, प्रथम संस्करण, बाल मंदिर बीकानेर।

८६ पार्वती रामानन्द तिवारी शास्त्री 'भारतीनन्दन' प्रथम बार सन १९५५, नयापुरा कोटा, राजस्थान।

८७ पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त लीलाधर गुप्त प्रथम संस्करण सन १९५२, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद।

८८ प्रिय प्रवास अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, षष्ठ संस्करण संवत् २००६, हिन्दी साहित्य कुटीर, बनारस।

८९ पुरुषोत्तम तुलसीराम शर्मा 'दिनेश' प्रथम बार मीरा मंदिर बम्बई।

९० पोद्दार अभिनन्दन ग्रंथ सम्पादक वासुदेवशरण अग्रवाल ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा।

९१ बृहत हिन्दी-कोष कालिकाप्रसाद प्रथम संस्करण संवत २००६ ज्ञान मंडल बनारस।

९२ ब्रजविलास ब्रजवासीदास, सन् १८६०, मतबा मुंशीदसलायक शिवनारायण, आगरा।

९३ बालक का भाव विकास ए० पी० कनल, सन् १९५०, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली।

९४ बुद्ध और नाचघर हरिवंशराय 'बच्चन', सन १९५८, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली।

९५ भारतेन्दु ग्रंथावली भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, संकलनकर्ता ब्रजरत्नदास दूसरा संस्करण संवत २०१० नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

९६ भिखारिणी महेन्द्रसिंह 'प्रेमघन', प्रथम संस्करण सन् १९५२, कवि कुटीर विलथरा रोड,बलिया।

९७ मंगलघट मैथिलीशरण गुप्त, प्रथम आवृत्ति, संवत् १९९८, साहित्य सदन चिरगाँव, झाँसी।

९८ मनोविनोद श्रीधर पाठक, माडन प्रेस, इलाहाबाद।

९९ मनोविज्ञान व शिक्षा डा० सरयूप्रसाद चौबे।

१०० मर्मस्पर्श अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध,, प्रथम आवृत्ति, राजपाल एंड संस दिल्ली।

१०१ मृण्मयी सियारामशरण गुप्त प्रथम बार संवत १९९३, साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी।

१०२ महारानी दुर्गावती देवीदयाल चतुर्वेदी, प्रथम आवृत्ति संवत् १९९६ महाकोशल साहित्य सदन जबलपुर।

१०३ माधव माधुरी पं० रामसेवक चौबे प्रथम आवृत्ति, संवत् १९९२, सरस्वती साहित्य सदन, बनारस।

१०४ माधवी डा० गोपालशरण सिंह सन १९३८,इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग।

१०५ मीरा परमेश्वर द्विरेफ संस्करण सन १९४७ श्री लच्छीराम केडिये का वास चिड़ावा, राजस्थान।

१०६ मुकुल सुभद्राकुमारी चौहान, षष्ठम संस्करण भारत प्रकाशन जबलपुर।

१०७ यशोधरा मैथिलीशरण गुप्त संवत २०१३ साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी।

१०८ युगपथ सुमित्रानन्दन पंत, प्रथम संस्करण संवत २००६ लीडर प्रेस इलाहाबाद।

१०९ रसकलस अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध , तृतीय संस्करण, संवत २००८ हिन्दी साहित्य कुटीर, बनारस।

११० रस मंजरी कन्हैयालाल पोद्दार, छठा संशोधित संस्करण संवत २०१२ चूड़ी वालों का मकान, मथुरा।

१११ रस रत्नाकर हरिशंकर शर्मा, प्रथम संस्करण, सन् १९४५, रामनारायण लाल, इलाहाबाद।

११२ रश्मि बन्ध सुमित्रानन्दन पंत प्रथम संस्करण सन् १९५८। राजकमल प्रकाशन दिल्ली।

११३ रश्मिरथी रामधारी सिंह दिनकर, प्रथम संस्करण, सन १९५२ अजन्ता प्रेस लिमिटेड, पटना।

११४ रश्मिरेखा बालकृष्ण शर्मा नवीन', संवत् २००८ साधना प्रकाशन, कानपुर।

१ वीर पचरत्न लाला भगवानदीन द्वितीय सस्करण, सवत् १९७८, रामलाल वर्मा कलकत्ता ।

वैदेही वनवास अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', चतुर्थ सस्करण, सवत २००७ हिन्दी साहित्य कुटीर, बनारस ।

५ शकुन्तला मैथिलीशरण गुप्त सवत् १९७१, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

८ शब्दार्थ चिन्तामणि सुखानन्द नाथ सवत् १९२१, घासीराम कन्हैया लाल सस्कृत यन्त्रालय ।

९ श्रीकृष्ण गीतावली तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर ।

० साकेत मैथिलीशरण गुप्त सवत् १९८८, साहित्य सदन चिरगाँव, झासी ।

१ साकेत सत डा० बलदेवप्रसाद मिश्र प्रथम सस्करण सन् १९४६, विद्या मदिर लिमिटेड दिल्ली ।

२ सिद्धराज मैथिलीशरण गुप्त ततीय बार सवत २००३, साहित्य सदन चिरगाव, झासी ।

३ सिद्धार्थ अनूप शर्मा, प्रथम सस्करण हिन्दी ग्रथ रत्नाकर कार्यालय ।

४ सिद्धान्त और अध्ययन गुलाबराय पाँचवाँ सस्करण, सवत २०१७, आत्मा राम एड सस, दिल्ली ।

५ सुहराब और रुस्तम विद्याभूषण विभु प्रथम बार सवत् १९८० कला कार्यालय प्रयाग ।

६ सूरदास रामचन्द्र शुक्ल, सरस्वती मन्दिर, बनारस ।

७ सूरसागर (प्रथम भाग) सूरदास द्वितीय सस्करण, सवत २००६, सूर समिति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

८ सूरसागर (द्वितीय भाग) सूरदास, द्वितीय सस्करण, सवत् २००६,सूर समिति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

९ सूर साहित्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सशोधित सस्करण, सन् १९५६ हिन्दी ग्रथ रत्नाकर लिमिटेड, बम्बई ।

० सूर सौरभ डा० मुन्शीराम शर्मा, चतुर्थ सस्करण, साधना सदन पटकापुर, कानपुर ।

११ सूर और उनका साहित्य डा० हरवशलाल शर्मा सशोधित सस्करण, भारत प्रकाशन मदिर अलीगढ ।

१२ सागरिका ठा० गोपालशरण सिंह, प्रथम सस्करण, सवत २००१, लीडर प्रेस, प्रयाग ।

३ सारथी राजेन्द्रदेव सैंग द्वितीय सस्करण, सन् १९५५, विनोद प्रकाशन, आगरा ।

४ सेवाग्राम सोहनलाल द्विवेदी प्रथम सस्करण, सन् १९४६ इंडियन प्रेस लिमिटेड इलाहाबाद ।

१५५ स्वप्न रामनरेश त्रिपाठी, पहला सस्करण, सवत १६८५ हिन्दी मन्दिर, प्रयाग।

१५६ स्वर्ण किरण सुमित्रानन्दन पत, प्रथम सस्करण, सवत् २००४, लीडर प्रेस, प्रयाग।

१५७ हुकार रामधारीसिंह 'दिनकर सप्तम सस्करण सन १६५१ अजन्ता प्रेस, पटना।

१५८ हल्दीघाटी श्यामनारायण पाडे सन १६२६, इडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग।

१५६ हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास सम्पादक डा० नगेन्द्र सवत २०१५ नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

१६० हिन्दी काव्य-शास्त्र का इतिहास डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय सस्करण, सवत् २००५ लखनऊ विश्व विद्यालय लखनऊ।

१६१ हिन्दी शब्दसागर श्यामसुन्दर दास, सन् १६२८ नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

१६२ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा, द्वितीय सस्करण, सन् १६४८ रामनारायणलाल प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता, इलाहाबाद।

१६३ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

१६३ हिन्दी साहित्य-कोष धीरेन्द्र वर्मा प्रथम सस्करण, सवत २०१५, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस।

१६५ हिमतरगिनी माखनलाल चतुर्वेदी प्रथम सस्करण सवत् २००५, लीडर प्रेस प्रयाग।

अप्रकाशित-ग्रन्थ

२ तुलसीदास की दार्शनिक विचारधारा डा० उदयभानुसिंह लखनऊ विश्व विद्यालय की डी० लिट की उपाधि के लिए स्वीकृत शोधप्रबन्ध।

अग्रेजी ग्रन्थ

1 Bhoja s Shringar Praka a by V Raghavan Karnatak Pubushing House Bombay (India)

2 History of the Theory of Rasa by A Sankarın University of Madras 1929

3 Kavyanushasana by Achar a Hem Chandra Ist Ed 1938, Part I

Introduction by Rashik Lal C Parikh,
Shri Mahavir Jain Vidyalaya, Bombay

4 Poem of Words Worth
Ed by Mathew Arnold
Macmillian and Co Limited,
London 1929

5 Psycho Analysis Today
Edited by Sandor Lorand
George Allen Unwin L d London

6 Psychoanalysis and Social Work, by David Beres M D
Edited by Marcel Heimun M D 1953
International University Press I N C New York

7 Social Psychology by William M C Dougall
Thirtieth Edition 19_0
Mathuen & Co Ltd London

8 The Number of Rasas by V Raghavan,
Adyar Library Adyar 940

9 The Psycho Analytic Study of the Family by J C Flugel
5th Edition 1935,
Lowe And Bydone Printers Ltd, London

पत्र-पत्रिकाएं

१ सितौना—सम्पादक रघुनन्दन शर्मा, सितम्बर १९२७, मार्च १९२८, जनवरी १९२९, जनवरी १९३३, अप्रल १९३३ जुलाई १९३३, अप्रल १९३४, सितम्बर १९३४, अप्रल १९३६, जुलाई १९३६, जनवरी १९३७, अक्टूबर १९३७, दिसम्बर १९३७, जुलाई १९३८, दिसम्बर १९३९, मई १९४१ हिन्दी प्रेस प्रयाग।

२ चांद—सम्पादक मुंशी नवजादिक लाल श्रीवास्तव, नवम्बर १९२४, दिसम्बर १९२४, सितम्बर १९२५, नवम्बर १९२६, जुलाई १९२७, जुलाई १९२८' दिसम्बर १९३१, दिसम्बर १९३४, मई अक्टूबर १९३५, १९४१, चन्द्र प्रेस लि० चन्द्रलोक इलाहाबाद।

३ झुनझुना—अक्टूबर १९४०, नवम्बर १९४०, दिसम्बर १९४०, मैनेजर झुनझुना महावीर प्रेस प्रयाग।

४ बालक—सम्पादक रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी, सावन संवत् १९८५, माघ १९८२, कार्तिक संवत १९८९, अगहन संवत् १९..

ग्रन्थ सूची

Introduction by Rashik Lal C. Parikh
Shri Mahavir Jain Vidyalaya, Bombay

4 Poem of Words Worth
Ed by Mathew Arnold,
Macmillan and Co Limited,
London 1929

5 Psycho Analysis Today
Edited by Sandor Lorand
George Allen Unwin L d London

6 Psychoanalysis and So ial Wo k by David B MD
Edited by Marcel Heiman M D 193
International University Press I. N C. New York

7 Social Psychology by William M C Do gall
Thirtieth Edition 19 0
Mathuen & Co Ltd Lo don

8 The Number of Rasas by V Raghavan
Adyar Library Adyar 940

9 The Psycho Analytic Study of the Family by J. C. Flugel
5th Edition 1935,
Lowe And Brydone Printers Ltd London